श्री जैन सिद्धान्त ग्रन्थमाला का तीसरा पुष्प

पूजन रत्नाकर

[पूजनविधि, सहस्रनाम, पंचमंगल, अभिषेक पाठ,
नित्यनियम पूजा संस्कृत (सार्थ) व भाषा,
चौबीस तीर्थंकरों की पूजायें, समस्त पर्वों की
संस्कृत व भाषा पूजायें, समस्त नित्य व
नैमित्तिक पूजायें, सिद्धक्षेत्र पूजायें,
नवग्रह अरिष्ट निवारक विधान,
कलिकुण्ड पार्श्वनाथपूजा, ऋषि-
मंडल पूजा आदि १२१
पूजनों का संग्रह]

❀

सम्पादक—
अजितकुमार जैन शास्त्री

❀

प्रकाशक—
मन्त्री—श्री जैनसिद्धान्त ग्रन्थमाला
पहाड़ी धीरज, देहली।

❀

प्रथमबार २००० } चैत्र सुदी १३ वीर सं० २४७७ वि० सं० २००८ { मूल्य पांच रुपये

मुद्रक—अजितकुमार जैन, अकलंक प्रेस, [illegible], देहली।

आद्य वक्तव्य

•••○○•••

भारत धर्म प्राण देश है और यहां समय २ पर अनेक धर्मों की उत्पत्ति होती रही है। यों तो भगवान ऋषभदेव के समय से ही ३६३ मतों की उत्पत्ति बतलाई गई है परन्तु भगवान महावीर के समय मे प्रचलित धर्मों को दो प्रधान श्रेणियों मे रखा जासकता है १ वैदिक २ अवैदिक। भगवान महावीर के समय में भारत में वेदों का सर्वत्र प्रचार था, यत्र तत्र यूपों (याज्ञिक खम्भों) की भरमार थी तथा वेदविहित हिंसा अधर्म नहीं समझी जाती थी। लोग हिंसामयी याज्ञिक विधि विधानों से घबरा उठे थे, सर्वत्र त्राहि २ मची हुई थी। उस समय, भगवान महावीर ने इस मान्यता का खण्डन कर भारत मे अहिंसा का साम्राज्य स्थापित किया। बौद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध भी उसी समय हुये और उन्होंने भी हिंसा पूर्ण विधि विधानो का दृढ़ता के साथ खन्डन किया पर वे हिंसा का पूर्ण त्याग न करसके।

धीरे २ भगवान महावीर और गौतम बुद्ध के अनुयायियों की संख्या बढ़ने लगी। छोटे-बड़े, गरीब अमीर और वैभवशाली अनेक राजागण भी उनकी छत्रछायामे आये तथा वातावरण ऐसा बदला कि भारत से याज्ञिक हिंसा का नाम निशान ही उठगया। परन्तु उसके कट्टर अनुयायी इस बात को सहन न कर सके और उन्होंने अपने भोले भक्तों को भड़काना प्रारम्भ किया। जैन व बौद्धों को 'नास्तिक' कहकर बदनाम किया जाने लगा तथा उसी समय 'हस्तिना पीड्यमानेऽपि न गच्छेज्जैनमन्दिरम्' अर्थात् हाथी के पैर के नीचे कुचले जाने (का अवसर आने) पर भी जैन मन्दिर में नहीं जाना चाहिये, जैसी बातें प्रचलित हुई।

वर्तमान में समय की गतिविधि को गम्भीरता से समझने वाले लोग यह जानते हैं कि प्रचार का प्रभाव अवश्य पड़ता है। प्रचार में विरोधी के विषय में अनेक असंगत और तथ्यहीन बातें कही जाती हैं पर वे भी अपना प्रभाव डालती है और लोगों के मन में अनेक सन्देह उत्पन्न कर देती हैं। जैन व बौद्धों के विरुद्ध किया जाने वाला प्रचार भी व्यर्थ नहीं गया। धीरे २ उनके प्रति लोगों में अश्रद्धा उत्पन्न होने लगी और कई जगह तो वह घृणा की सीमा तक पहुंच गई। उसके पश्चात अनेक कारणों से आठवीं शताब्दी के लगभग भारत में बौद्ध धर्म के ह्रास होजाने से विरोध में सिर्फ जैनधर्म ही रहगया। उस समय उसके ऊपर अनेक अमानुषिक अत्याचार किये गये तथा यत्र तत्र उसके अनुयायियों का तिरस्कार किया गया। यद्यपि जैन धर्म अपनी लोकोत्तर विशेषताओं के कारण आज भी अपना मस्तक, ऊंचा किये हुये है, भारत की संस्कृति पर उसका पर्याप्त प्रभाव है और अनेक क्षेत्रों मे जैनियों का अधिकार व प्रमुखता है परन्तु विरोधी प्रचार का प्रभाव अबतक यत्र तत्र किसी न किसी रूप में दृष्टिगोचर हो जाता है। 'नास्तिक' शब्द के अर्थ को न जानकर भी बहुत से लोग अपनी धारणा के अनुसार अबतक जैनियों को नास्तिक ही समझते व कह देते हैं। आस्तिक और नास्तिक का असली अर्थ क्या है यहां संक्षेप मे इसका ज्ञान लेना आवश्यक है।

जैनधर्म परम आस्तिक है

व्याकरण से ही शब्दों की सिद्धि होती है। वैयाकरणों में शाकटायन अति प्राचीन हैं। वे इस शब्द की इस प्रकार सिद्धि करते हैं—"दैष्टिकास्तिकनास्तिकः" (३–२–६१) वृत्तिकार श्री अभयचन्द्र सूरि ने इसका अर्थ किया है 'अस्ति परलोकादिमतिरस्य आस्तिकः। तद्विपरीतो नास्तिकः' अर्थात् परलोक, पुण्य पाप

आदि को मानने वाला आस्तिक और उससे उल्टे विचार वाला नास्तिक है।

आचार्य पाणिनि जो सबसे बड़े वैयाकरण माने जाते हैं, अपने ग्रन्थ में लिखते हैं कि 'अस्तिनास्तिदिष्टं मति.' (४-४ ६०) कौमुदीकार भट्टोजि दीक्षित ने इसकी वृत्ति लिखी है 'तदस्येत्येव' अस्ति परलोक इत्येव मतिर्यस्य स आस्तिक'। नास्तीति मतिर्यस्य सः नास्तिक.। अर्थात् परलोक को माननेवाला मनुष्य आस्तिक और न माननेवाला नास्तिक है। श्री हेमचन्द्राचायने अपने सिद्ध-हेमशब्दानुशासन नामक प्रसिद्ध व्याकरण ग्रन्थ में भी यही अर्थ माना है। जैन धर्म नरक स्वर्गादि गतिया (७ नरक, १६ स्वग) तथा पाप पुण्यरूप कर्मानुसार उनमे उत्पत्ति मानाता है यह सर्व-विदित है। अत. व्याकरण के अनुसार जैनधम आस्तिक धर्म है।

कोष (D ctionary) से शब्दों का अथ ज्ञान होता है। 'शब्दस्तोममहानिधि प्र० १८५ पृष्ठ ६३४ 'अभिधानचिन्तामणि' काण्ड ३ श्लोक ५२६ आदि सब सुप्रसिद्ध कोष उपर्युक्त अथ को ही बताते हैं। अभिधानचिन्तामणि म नास्तिक के पर्यायवाची इस प्रकार बतलाये है—"बार्हस्पत्य. नास्तिकः, चार्वाकः, लौकायतिकः इति तन्नामानि।" अर्थात बार्हस्पत्य, नास्तिक, चार्वाक और लोकायतिक ये चार नास्तिक के नाम हैं। इस प्रकार कोष के अनुसार जैनधर्म नास्तिक नहीं।

किसी भी दार्शनिक विद्वान् ने जैन धर्म को नास्तिक नहीं बताया है। नास्तिक के सिद्धान्त भी जैनधम को मान्य नहीं। जैन शास्त्रकारों ने प्रमेयकमलमार्तण्ड, अष्ट सहस्री आदि ग्रन्थों में अन्य मतो के साथ नास्तिक मत का भी सयुक्तिक और जोर-दार खण्डन किया है।

यद्यपि मनुस्मृतिकार ने नास्तिको वेदनिन्दकः' अर्थात् जो

वेदों को नहीं मानता, उनकी निन्दा करता है वह नास्तिक है ऐसा लिखा है पर यह उनकी अपनी कल्पना है। यदि ऐसा माना जाय तो आज ईसाई, मुसलमान, सिख, पारसी आदि के साथ-साथ स्वयं वेदानुयायी भी नास्तिक कहलाने से नहीं बच सकते। ऋक्, यजुः, साम और अथर्व इन चारों वेदों में से एक वेद मानने वाले बाकी तीन वेदों की, द्विवेदी बाकी दो वेदों की तथा त्रिवेदी बाकी एक वेद को न मानकर उसकी निन्दा करते हैं। विभिन्न टीकाकार अलग-अलग अर्थ लगाकर दूसरे के अर्थ को नहीं मानते। सनातन धर्मी वेदों में हिंसा बताने वाले महीधर भाष्य को ठीक बताते हैं पर आर्य समाजी सायण और महीधर को नहीं मानते हैं।

फिर वेद को मानने वालों को नास्तिक कहने का दूसरों पर जबरन अपनी बात लादने से अधिक कोई मूल्य नहीं। जब दो भिन्न २ धर्म हैं तो एक के शास्त्रों को दूसरा मान्यता की कोटि में कैसे रख सकता है!

साहित्यकार भी वेद को ईश्वरकृत स्वीकार नहीं करते। आचार्य महावीरप्रसादजी द्विवेदी ने अपनी 'साहित्य सीकर' पुस्तक में इस बात को स्पष्ट कर दिया है।

कुछ लोग कहते हैं कि जैनधर्म परमात्मा को सृष्टिकर्ता नहीं मानता, इसलिये वह नास्तिक है। पर जैसा कि पहिले स्पष्ट किया जाचुका है परलोक न मानने वाला नास्तिक कहलाता है, ईश्वर को सृष्टि कर्ता न माननेवाला नहीं। नास्तिक शब्द रूढ़ यौगिक शक्ति से भी उसका वाचक नहीं है। फिर प्रमाणों से भी ईश्वर सृष्टिकर्ता नहीं ठहरता। उसे सृष्टिकर्ता मानने पर अनेक दोषों का प्रादुर्भाव होने से उसमें ईश्वरत्व नहीं रह सकता। आप्तपरीक्षा, प्रमेयकमलमार्तण्ड, अष्टसहस्री आदि

जैन ग्रन्थ इस से भरे हुये हैं। इसके अलावा सांख्यदर्शन प्रकृति और पुरुष की सत्ता स्वीकार कर सृष्टि रचना का कार्य जड़ रूप प्रकृति द्वारा होना बताता है। मीमांसक भी ईश्वर को सृष्टिकर्ता नहीं मानते पर फिर भी विद्वानों ने अब तक उनको नास्तिक नहीं लिखा क्यों कि जैसा पहिले बताया जाचुका है, इस बात का आस्तिक व नास्तिक से कोई सम्बन्ध ही नहीं है।

इस विषय में पाश्चात्य तर्कविद्या के पिता अरस्तू जैसे शान्त, विचारवान और चिन्तक के विचार देखिये—

"ईश्वर किसी भी दृष्टि से विश्व का निर्माता नहीं है। सब अविनाशी पदार्थ परमार्थिक हैं। सूर्य, चन्द्र तथा दृश्यमान आकाश सब सक्रिय हैं। ऐसा कभी नहीं होगा कि उनकी गति अवरुद्ध हो जाए। यदि हम उन्हें परमात्मा के द्वारा प्राप्त पुरस्कार मानें तो या तो हम उसे अयोग्य न्यायाधीश अथवा अन्यायी न्याय-कर्ता बना डालेंगे। यह बात परमात्मा के स्वभाव के विरुद्ध है। जिस आनन्द की अनुभूति परमात्मा को होती है वह इतना महान है कि हम उसका कभी रसास्वाद कर सकते हैं। वह आनन्द आश्चर्यप्रद है।"

God is in no sense the Creator of the Universe. All imperishable things are actual. Sun, moon, while visible heaven is always active. There is no time that they will stop. If we attribute these gifts to God, we shall make him either an incompetent judge or an unjust one and it is alien to his nature. Happiness which God enjoys is as great as that, which we can enjoy sometimes. It is marvellous.

—*Aristotle*.

वैज्ञानिक जूलियन हक्सले कहते हैं—"इस विश्व पर शासन करने वाला कौन या क्या है ? जहां तक हमारी दृष्टि जाती है, वहां तक हम यही देखते हैं कि विश्वका नियन्त्रण स्वयं अपनी ही शक्ति से होरहा है। यथार्थ में देश और उसके शासक की उपमा इस विश्व के विषय में लगाना मिथ्या है।"

श्री जवाहरलाल नेहरू अपने आत्म चरित्र 'मेरी कहानी' में अपने हृदय के मार्मिक उद्‌गारों को व्यक्त करते हुये लिखते हैं—"परमात्मा की कृपालुता में लोगों की जो श्रद्धा है, उस पर कभी २ आश्चर्य होता है कि किस प्रकार यह श्रद्धा चोट पर चोट खाकर जीवित है और किस तरह घोर विपत्ति और कृपालुता का उल्टा सुबूत भी उस श्रद्धा की दृढ़ता की परीक्षायें मान ली जाता हैं।"

बिहार के भूकम्प पीड़ित प्रदेश में पर्यटन द्वारा दुःखी व्यक्तियों का प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त कर नेहरू जी लिखते हैं—"हमें इस पर भी ताज्जुब होता है, कि ईश्वर ने हमारे साथ ऐसी निर्दयतापूर्ण दिल्लगी क्यों की कि पहिले तो हमको त्रुटियों से पूर्ण बनाया, हमारे चारों ओर जाल और गड्ढे बिछा दिये, हमारे लिये कठोर और दुःखपूर्ण संसार की रचना कर दी, चीता भी बनाया और भेड़ भी। और हमको सजा भी देता है।"

धर्म के विषय में नेहरू जी के विचारों से कितनी ही मत-भिन्नता क्यों न हो, किन्तु निष्पक्ष विचारक व्यक्ति की आत्मा उनके द्वारा आन्तरिक तथा सत्यता से पूर्ण विचारधारा का समर्थन किये बिना न रहेगा।

Who and what rules the Universe ? So far as you can see, it rules itself and indeed the whole analogy with a country and its ruler is false. —*Julian Huxley.*

देखिये, मृत्यु की गोद में जाते-जाते पंजाबकेशरी ला० लाजपतराय इस विषय में कितनी सजीव और अमर बात कह गये हैं—"क्या मुसीबतों, विषमताओं और क्रूरताओं से परिपूर्ण यह जगत एक भद्र परमात्मा की कृति हो सकता है? जब कि हजारों मस्तिष्कहीन, विचार तथा विवेकशून्य, अनैतिक, निर्दय अत्याचारी, जालिम, लुटेरे, स्वार्थी मनुष्य विलासिता का जीवन बिता रहे हैं और अपने अधीन व्यक्तियों को हर प्रकार से अपमानित, पददलित करते हैं और मिट्टी में मिलाते हैं, इतना ही नहीं, चिढ़ाते भी हैं। ये दुःखी लोग अवर्णनीय कष्ट, घृणा तथा निर्दयतापूर्ण अपमान सहित जीवन व्यतीत करते हैं, उन्हें जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक वस्तुएं भी नहीं मिल पातीं। भला, ये सब विषमताएं क्यों हैं? क्या ये न्यायशील और ईमानदार ईश्वर के कार्य हो सकते हैं?"

"Can this world full of miseries, inequalities, cruelities and barbarities be the handiwork of a good God, while hundreds and thousands of wicked people, people withaut brains, without head or heart, immord and crud people, tyrant, oppressors, exploiters and selfish people living in luxury, and in every possible way insulting trampling under foot, grinding into dust and also mocking their victims, these latter are lives of untold misery, degradition, disgrace of sheer want? They do not even get the necessities of life. Why all this inequality? Can this be the handiwork of a just and true God?"

आगे चलकर पंजाबकेशरी कहते हैं—"मुझे बताओ तुम्हारा ईश्वर कहां है। मैं तो इस निस्सार जगत में उसका कोई भी निशान नहीं पाता।" (जैन शासन)

इतिहास पर दृष्टि डालने से भी यही विदित होता है कि किसी भी निष्पक्ष इतिहासकार ने जैनधर्म को नास्तिक नहीं लिखा बल्कि अनेक सुप्रसिद्ध इतिहासकारों ने इसका खंडन किया है।

इसप्रकार यह बात स्पष्ट है कि व्याकरण, कोष, दर्शन, इतिहास किसीभी दृष्टि से विचार करने पर जैनधर्म परम आस्तिक सिद्ध होता है। उसके सिद्धान्त अत्यन्त व्यवस्थित और अपने हैं। उसकी मान्यता है कि जीव अपने ही भावों से शुभाशुभ कर्म बान्धता है तथा स्वयं उसका फल भोगता है।

जैनधर्म और ईश्वर

जैनधर्म की यह एक विशेष मान्यता है कि वह ईश्वर की सत्ताको स्वीकार करते हुये भी उसे किसी व्यक्ति विशेष में ही केन्द्रित नहीं मानता है बल्कि प्रत्येक आत्मामें ईश्वरत्व शक्ति स्वीकार करता है। वह किसी एक अनादि सिद्ध परमात्मा को तो नहीं मानता परन्तु अबतक कर्मरूपी मैल को अलग करके जितने आत्मा मुक्त (परम आत्मा) होचुके हैं और आगे भी होते रहेंगे, जैनसिद्धान्त के अनुसार वे सभी मुक्तात्मा, सिद्धात्मा, परमात्मा, भगवान या ईश्वर हैं। वे रागद्वेषादि १८ दोषों से छूट जाते हैं तथा उनके अनन्त दर्शन, ज्ञान, सुख वीर्य आदि आत्मिक गुण प्रकट हो जाते हैं। वे लोकके अग्रभागमें स्थित सिद्धालय स्थान में जा विराजते हैं। संसार के किसी भी कार्यसे उनका कोई सम्बन्ध

"Where is they God ? I find no trace of him in this absurd world."

— *Lala Lajpatrai in Mahratta 1933.*

नहीं रहता तथा जिसप्रकार धानसे छिलका अलग होजाने पर चावलों में उगने की शक्ति नहीं रहती उसीप्रकार संसार में उत्पन्न होने का कारण, कर्म रूप बीज नष्ट होजाने पर सिद्धात्माओं को संसार में फिर कभी भी जन्म नहीं लेना पड़ता और वे सदा अपने निराकुल आत्मिक सुख में लीन रहते हैं। कर्मशत्रुओं को जीतने के कारण उनको जिन या जिनेन्द्र भी कहते हैं।

उनमें से कुछ मुक्तात्माओं को जिन्होंने मुक्त होने से पूर्व प्राणियों को संसार के दुःखों से छूटने और मुक्ति प्राप्त करने का मार्ग बतलाया था, जैनधर्म में तीर्थङ्कर माना गया है। प्रत्येक उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी में ऐसे तीर्थङ्करों की संख्या २४ होती है। उन्हीं की अरहंत (मोक्ष जाने से पूर्व) अवस्था की मूर्तियां जैन-मंदिरों में विराजमान होती हैं।

जैन-पूजा

जब जैन धर्म किसी अनादि ईश्वर की सत्ता को स्वीकार नहीं करता, सृष्टि की उत्पत्ति से ईश्वर का कोई सम्बन्ध नहीं माना जाता और माने हुये ईश्वर—सिद्धात्मा रागद्वेषादि रहित होने के कारण किसी का कोई लाभ नहीं करते तो उनकी स्तुति-पूजा करने से लाभ ही क्या है, ये प्रश्न अनायास ही प्रत्येक पाठक के हृदय में उठने लगते हैं और इनके समाधान को मन व्यग्र हो उठता है।

संसारी प्राणी प्रत्येक क्षण अपनी मन वचन काय की प्रवृत्ति के अनुसार शुभ या अशुभ कर्मों का बन्ध करते रहते हैं। ऐसी दशा जितनी देर पूजा करते हैं संसार के अन्य कार्यों के त्याग तथा मन वचन काय की पवित्रता के कारण शुभ कर्म का बन्ध होता है। जिसका फल सुख के रूप में प्राप्त होता है।

जब कोई व्यक्ति इत्र वाले की दुकान पर जाता है तो वहाँ पहुँचने पर वह इत्र न भी प्राप्त करे तो भी उसे सुगन्ध तो आती ही है और उतनी देर के लिये मन प्रसन्नता व सुगन्ध से भर जाता है। उसी प्रकार जितनी देर तक हम भगवान् के समक्ष रहते हैं, सांसारिक व गृहजीवन के वातावरण से दूर रहकर भगवान् के गुणरूप सुगन्ध को प्राप्त करते हैं जिससे पवित्रता आती है।

पूजन के समय भगवान् के गुण-स्मरण और गुणगान से सांसारिक अहंकार भाव क्षीण होकर विनय-गुण का संचार होता है तथा यह भाव जाग्रत होता है कि—

तुममें हममें भेद यह, और भेद कछु नाहिं।
तुम तन तज परब्रह्म भये, हम दुखिया जग माहिं॥

इस भांति भगवान यद्यपि साक्षात् कुछ भी नहीं देते परन्तु पूजन के द्वारा पुण्य कर्म की प्राप्ति होने से सांसारिक सुख प्राप्त हो जाता है, आत्मा में पवित्रता आती है तथा आत्मा की वास्तविकता का ज्ञान होकर संसार से छूटने व अपनी शुद्धावस्था को प्राप्त करने का भाव जाग्रत हो जाता है। इस प्रकार हमारा वास्तविक उद्देश्य सब पूर्ण हो जाता है और उसमें निमित्त कारण परमात्मा है। वैसे परमात्मा ने स्वयं कुछ नहीं दिया है। परमात्म-दशा की प्राप्ति संसारी जीव का प्रधान लक्ष्य है और वह दशा अपने पुरुषार्थ से स्वयं प्राप्त की जाती है पर भगवान की पूजा उसमें एक व्यवहारिक निमित्त अवश्य है।

इस बात को भली भांति समझकर तथा उस उद्देश्य रखकर ही पूजा करनी चाहिये। सांसारिक सुख तो साधारण वस्तु हैं और पुण्य कर्म से अनायास ही उनकी प्राप्ति भी हो जाती है। अतः मात्र उनकी प्राप्ति की भावना से वीतराग भगवान् की पूजा करना अपने धर्म व संस्कृति की अनभिज्ञता का द्योतक है।

जैन-मूर्ति-पूजा

इस्लाम में मूर्तिपूजा को नहीं माना गया है तथा मुस्लिम युग में कुछ कट्टर बादशाहों ने भारत में मन्दिर व मूर्तियों का विध्वंस भी किया था। तात्कालिक परिस्थिति के प्रभाव के कारण उस समय कुछ सम्प्रदायों ने मूर्तिपूजा का विरोध भी किया। हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल (वि० सं० १३७५ से १७०० तक) में निर्गुण भक्ति धारा के कबीर, रैदास, पलटू, मलूकदास आदि कवियों ने मूर्ति की पूजा करने का निषेध किया है। वे परमात्मा को निराकार परन्तु सर्वव्यापी मानकर उसका ध्यान लगाने का उपदेश देते रहे है। यहां पाठक देखेंगे कि उन सच ने मूर्ति को पत्थर समझकर उसका निषेध किया है परन्तु जैनधर्म की मूर्ति-पूजा और उसका उद्देश्य अत्यन्त मनोवैज्ञानिक है।

जैनधर्म मूर्ति-पूजा शब्द मे षष्ठी तत्पुरुष (मूर्तेः पूजा=मूर्ति पूजा) अर्थात् मूर्ति की पूजा=मूर्ति पूजा न मानकर तृतीया तत्पुरुष (मूर्तया पूजा=मूर्ति पूजा) यानी मूर्ति के द्वारा मूर्तिमान

दुनिया ऐसी बावरा, पत्थर पूजन जाय।
घर की चक्की कोई न पूजे, जाका पीसा खाय॥
पाहन पूजे हरि मिलै, तो मै पूजों पहार।
ताते या चाकी भली, पीस खाय ससार॥ (कबीर)

तोड़ूं न पाती पूजूं न देवा (मूर्ति),
सहज समाधि करूं हरि सेवा। (रैदास)

जल पषान ने पूजते, सरा न एको काम।
पलटू तन कर देहरा, काहे पूजे पषान॥ (पलटू)

माधो दुनिया बावरी, पत्थर पूजन जाय।
मलूक पूजै आतमा, कछु मागै कछु खाय॥ (मलूकदास)

की पूजा=मूर्ति पूजा मानता है। यदि मूर्ति पूजा शब्द का अर्थ मूर्ति की पूजा माना जाता होता तो जिस धातु या पत्थर की वह मूर्ति बनी है उसके अथवा मूर्ति (आकार) के गुण गाये जाते कि, "हे मूर्ति ! तू इस चीज की बनी हुई है, काली है या सफेद है, तेरा अमुक अंग सुन्दर है, तुझे अमुक व्यक्ति ने बनाया है" परन्तु सभी जानते हैं कि जैन मन्दिरों में यह कुछ नहीं होता बल्कि तदाकार ध्यानस्थ सौम्य तथा वीतरागता की प्रतीक मूर्ति में भक्त साक्षात् तीर्थङ्कर भगवान की कल्पना करके उनके गुण गाते हैं। पंच कल्याणक तथा जयमाल में जीवन की विशेष घटनाओं का वर्णन कर भगवान के गुणों में अपने को तन्मय करने का भाव रखते हैं। उनको मूर्ति में धातु या पत्थर के नहीं साक्षात् भगवान के दर्शन होते हैं। कहा भी है कि:—

जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन तैसी।

बच्चों की पुस्तकों में हम प्रारम्भ से वर्णमाला चित्रों में पाते हैं। बड़ी बड़ी पुस्तकों में भी बीच २ में कुछ चित्र होते हैं जिनसे उस विषय का बोध सुगमता से हो जाता है। मानचित्र (नक़शा) ज्ञान का बहुत बड़ा साधन है और उसके बिना भूगोल पढ़ाया ही नहीं जा सकता।

बनारस में भारतमाता के संगमर्मर के मन्दिर में प्रत्येक स्थान की ऊंचाई दिखाई गई है। सन् १६५१ के प्रारम्भ में देहली में होने वाली इंजीनियरिंग की विशाल प्रदर्शिनी में भारत का एक बहुत बड़ा मानचित्र लगभग ८० हजार रुपया लगाकर बनाया गया था जिस में सभी स्थानों की ऊंचाई स्पष्ट दिखती थी और दर्शकों पर जिसका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता था। इन सब बातों से यह तो स्पष्ट है कि मूर्ति या चित्र से उस विषय

का ज्ञान सरलतापूर्वक हो जाता है तथा उसका प्रभाव भी पड़े बिना नहीं रहता।

हम लोक में भी देखते हैं कि जो चित्रकला सीखना चाहता है उसे प्रारम्भ से ही चित्र बनाना नहीं आजाता। वह पहिले लकीरें खींचकर साधारण आकृतियां बनाना और रंग भरना सीखता है। धीरे धीरे वह सामने रखी हुई वस्तु का चित्र बनाने लगता है जिसको मोडल ड्राइंग (Model drawing) कहते हैं। अभ्यास करते २ वह बढ़िया चित्र बनाने लगता हैं तथा एक समय ऐसा भी आता है जब वह बिना देखे अपनी कल्पना से ही अनेक नये २ दृश्यों का चित्रण करता है। परन्तु वह कला उसे एकदम ही नहीं आगई। यह सब सतत प्रयत्न तथा सामने रखी हुई चीजों के चित्र बनाते २ ही प्राप्त की गई है।

इसी प्रकार हम सब सांसारिक विषय वासनाओं में फंसे प्राणी बिना मूर्त्ति के आश्रय के अपने मन को स्थिर करने तथा ध्यान लगाने में समर्थ नहीं हो सकते और वीतराग भगवान की मूर्ति हमारे लिये बहुत बड़े साधन का काम देती है। यदि भगवान के गुणों का स्मरण व गान करते हुये ध्यान पूर्वक उनकी मुख-मुद्रा को निहारा जाय तो मन पर अपूर्व प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता।

आचार्य सोमदेव सूरि ने भगवान की अनुपस्थिति में भगवान की मूर्ति के द्वारा उनके गुण स्मरण के लाभ का जो सुन्दर वर्णन किया है वह हमारे लिये पर्याप्त है।

आप्तस्यासन्निधानेऽपि पुण्यायाकृतिपूजनम्।
तार्क्ष्यमुद्रा न किं कुर्यात् विषसामर्थ्यसूदनम्॥
(सोमदेव सूरि)

हमें यह विचारना चाहिये कि यदि आज भगवान समवशरण में साक्षात् विराजमान होते तो हम वहाँ पहुँचकर क्या २ करते ? उनकी शान्ति छवि के दर्शन पूजन करके अपने जीवन को धन्य मानते तथा वहाँ बैठकर उनके उपदेश से लाभ उठाते। हम चाहें तो वही सारे लाभ आज भी मन्दिर में प्राप्त हो सकते हैं। भगवान की मूर्ति को साक्षात् भगवान मानकर दर्शन पूजन करके अक्षय पुण्य और वीतरागता प्राप्त कर सकते है तथा भगवान् की वाणी जो शास्त्रों मे विद्यमान है उसके अध्ययन से हृदय के अन्धकार को भगाकर आत्मा को परम पवित्र बनाने का मार्ग भी प्रशस्त कर सकते है। पर यह सब हमारी दृष्टि और विचारों पर निर्भर है। इस विषय पर सम्पादक जी ने भी पर्याप्त प्रकाश डाला है।

प्रस्तुत ग्रन्थ

जैनपूजा की साथकता तथा उसकी विधि को पूर्णतया समझाने वाले साहित्य का अभाव लोगों को बहुत समय के खटक रहा था। यह विषय परम्परा से उपासकों को ज्ञात होता रहा है पर इसका सर्वाङ्ग विवेचन करने वाली कोई खास पुस्तक देखने में नहीं आई। मन्दिरों मे जो पूजायें होती हैं उनके लिये कई भिन्न २ पुस्तकों का उपयोग करना पड़ता था तथा एक ऐसे संग्रह की आवश्यकता प्रतीत होरही थी जिसमें उपयोग में आने वाली भिन्न २ कवियो की सभी आवश्यक पूजाओं का संकलन हो। इन्हीं दो उद्देश्यों स यह 'पूजन रत्नाकर' जैन सिद्धान्त ग्रन्थमाला के तीसरे पुष्प के रूप में आपके सम्मुख है।

इसके सम्पादक श्रीमान पं० अजितकुमारजी शास्त्री (मुलतान-वाले) समाज के सुप्रतिष्ठित, सुपरिचित व उच्चकोटि के विद्वान हैं। आपने पूजन और उसकी विधिका सर्वाङ्ग सुन्दर विवेचन किया है जो पाठकों को पूजन विषयक जैन दृष्टिकोण को समझने में

पर्याप्त सहायक होगा। स्वस्ति व ऋद्धियों आदि को स्पष्ट करके संस्कृत की नित्य पूजाओं का हिन्दी मे भली । अर्थ समझाया गया है जिससे पाठकों के ज्ञान मे भी अवश्य वृद्धि होगी। पं० जी ग्रन्थमाला के विशेष अग (उपसभापति) है और आपने इस कार्य को बड़ी तत्परता से उसी रूप में निभाया है। इसके लिये मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ।

जहा तक पूजनो के संग्रह की बात है, उनके संग्रह मे यह पूर्ण ध्यान रखा गया है कि उपयोग मे आनेवाली कोई भी पूजा छूटने न पाये। इसके लिये सम्पादकजी के साथ ग्रन्थमाला के मत्री श्री डाक्टर फूलचन्दजी जैन का प्रयत्न अत्यन्त प्रशंसनीय है। आपने संग्रह के लिये पूजा की पुस्तको के जुटाने, छपाई की व्यवस्था तथा धन सग्रह मे अपना काफी समय लगाकर इस कार्य को बड़ी लगन से पूर्ण किया है। इसके लिये उनको हार्दिक धन्यवाद है।

इस विषय का यह एक प्रयास है तथा इसमें कितनी सफलता प्राप्त हुई है इसका निर्णय विद्वानो व पाठकों पर निर्भर है। इस मे जो त्रुटि या कमी प्रतीत हो उसे विद्वान् अवश्य सूचित करने की कृपा करें जिससे अगले संस्करण मे उस विषय का संशोधन और परिवर्द्धन हा सके।

विनीत,

हीरालाल जैन "कौशल"
(साहित्यरत्न, शास्त्री, न्यायतीर्थ)
प्रकाशन-मंत्री।

दहली
ता० १६-४-५१

सम्पादकीय

श्रीसमन्तभद्राचार्य ने 'धर्म' का लक्षण करते हुए रत्नकरण्ड-श्रावकाचार में लिखा है—

'संसारदुःखतः सत्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे।'

यानी-जन्म, मरण, भूख, प्यास, चिन्ता, रोग शोक आदि दुःखों से दुखी संसारी जीवों का उद्धार करके निराकुल सुख में जो पहुँचा देता है वह धर्म है। अर्थात् जैन सिद्धान्त की दृष्टि में सांसारिक सुख—वह चाहे चक्रवर्तीका साम्राज्यपद हो अथवा दिव्य विभूति इन्द्रासन ही क्यों न हो—त्याज्य या हेय हैं क्योंकि उनसे जीव की व्याकुलता, तृष्णा या जन्म मरण की जंजीर नहीं टूटती, आत्मा स्वतंत्र नहीं हो पाता।

अत एव जैनधर्म का लक्ष्य वीतराग पद (संसार बंधन के मूल कारण रागद्वेष मोह आदि दुर्भावों का नाश होना) प्राप्त करना है। इसी मूल लक्ष्य के साधनके लिये जघन्य (सबसे नीचे) श्रेणी के जैन के भी आदरणीय पदार्थ 'वीतराग अर्हन्त देव, निर्ग्रन्थ (संसार, शरीर, विषय-भोगों से विरक्त नग्न साधु) गुरु तथा वीतराग के उपदेशों का संकलनरूप शास्त्र' माने गये हैं। उनके सिवाय किसी भी अन्य व्यक्ति को वह चाहे सम्राट् (राजाओं का राजा) हो या इन्द्र (देवों का राजा) हो; पूज्य नहीं माना गया क्योंकि वह भी हम जैसा ही राग, द्वेष, जन्म, मरण का रोगी है।

जिस प्रकार एक साधारण विद्यार्थी गुरु सेवा और अध्ययन (पढ़ने लिखने का अभ्यास) से एक दिन आप स्वयं अपने अध्यापक गुरु के बराबर हो जाता है उसी प्रकार एक साधारण संसारी आत्मा अपने परम गुरु अर्हन्त भगवान की सेवा भक्ति

करता हुआ और उनके मार्ग पर चलता हुआ किसी दिन उन जैसा ही जगत्पूज्य परमात्मा बन जाता है।

धर्म के मार्ग पर आया हुआ संसारी जीव पहले 'दासोऽहं' यानी—'हे भगवन् मैं आपका सेवक हूँ' की श्रेणी में होता है।

उसके बाद वह अपने आराध्यदेव के रूप को अपने में लाने के लिये अभ्यास करता हुआ पहले अक्षर 'दा' को त्यागकर 'सोऽहं' यानी—'उस आराध्य वीतराग परमात्मा जैसा ही मैं हूं' रूप में जा पहुँचता है। अर्थात् आत्मध्यान में बैठा हुआ व्यक्ति 'सोऽहं' का पाठ अभ्यास करता है।

जब वह 'सोऽहं' का यथार्थ, पूर्ण-अभ्यासी हो जाता है तब एक दिन कर्मजंजाल को तोड़कर स्वतंत्र, निर्मल, पूर्णविकसित आत्मा यानी—'परमात्मा' बन जाता है। उस समय 'सोऽहं' का 'सो' (सः) हट जाता है केवल 'अहं' यानी—'मैं परमात्मा हूं' रह जाता है। अर्थात् सेवक सेवा करता हुआ एक दिन स्वयं सेवनीय या भगवान परमात्मा बन जाता है।

इस 'दासोऽहं' वाली प्रथम श्रेणी मे 'भक्तिभाव' आता है सेवा, पूजा, दर्शन, उपासना आदि नाम उसी भक्तिभाव के हैं उनके ढंग में कुछ-कुछ अन्तर है किन्तु अभिप्राय प्रायः सबका एक है। तदनुसार नृत्य, गान, स्तवन, दर्शन, अभिषेक, पूजन आदि सब भक्ति के अंग हैं। अतः यह सभी कार्य भक्त को भगवान् के समीप पहुँचाने के सरल साधन हैं। योगी अपने ध्यान बल से परमात्मपद पाने की कठिन तपस्या करता है और भक्त अपने सरल सीधे भक्तिभाव से भगवान की समीपता प्राप्त करता है।

जिस प्रकार आत्मध्यान में मानसिक वृत्ति आत्मा की ओर तन्मय होनी चाहिये ठीक, उसी प्रकार भक्त श्रावक की मानसिक वृत्ति भी सब ओर से हटकर भगवान की ओर होनी चाहिये।

बिना मन लगाये जिस प्रकार योगी का ध्यान आत्मा की शुद्धि नहीं करता उसी प्रकार भगवान् की ओर बिना मन लगाये भक्ति-भाव भी कुछ फलदायक नहीं होता।

श्री कुमुदचन्द्राचार्य ने कल्याणमंदिर स्तोत्र में यही कहा है 'यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्याः ?

यानी—बिना भावलगाये बाहरी पूजन, स्तवन आदि करना निष्फल होता है।

ऐसा होते हुए भी पूजा के दो भेद किये हैं, १—द्रव्यपूजा (अष्ट द्रव्यों द्वारा, शारीरिक क्रिया-नमस्कार, धोक देना आदि से, वाचनिक क्रिया—स्तुति पढ़ना आदि), २—भावपूजा (अष्ट द्रव्यों के बिना-अपने मानसिक भावों से पूजा करना)।

इनमे यद्यपि भावपूजा मुख्य है किन्तु वह सबके लिये नहीं है।

द्रव्यपूजा म पुजारी अपने मन, वचन, काय को भगवान की आर लगाकर आठ द्रव्यों को क्रम से चढ़ाता हुआ पूजन करता है। आठ द्रव्यों के सहारे पुजारी के योग अपने पूज्य भगवान की ओर लगे रहते है। किन्तु आरम्भ-परिग्रह-त्यागी श्रावक (आठवीं, नौवीं, दशवीं, ग्यारहवीं प्रतिमाधारक) तथा मुनि जो कि पूजन के अष्ट द्रव्य तैयार नहीं कर सकते—वे भावपूजा किया करते हैं अर्थात् अपने भक्तियुक्त परिणामों के द्वारा बिना जल आदि द्रव्य चढ़ाये भगवान का पूजन करते हैं।

अपने वचनों से गुणगान करना, हाथ जोड़कर शिर झुकाकर नमस्कार करना भी पूजा का ही एक प्रकार है। अतः जो गृहस्थ रोग, सूतक, पातक आदि के कारणवश पूजन सामग्री नहीं चढ़ा सकता, भगवान का अभिषेक नहीं कर सकता वह भी अष्ट द्रव्यों के बिना मन, वचन, काय से पूजा (स्तवन, नमस्कार आदि)

करे। योगों की अपेक्षा मानसिक पूजा को भावपूजा और वचन, शरीर द्वारा की गई पूजा को भी द्रव्यपूजा कहते हैं। द्रव्यपूजाका प्रधान लक्ष्य अष्टद्रव्यों द्वारा पूजा करना है। घर से जो लोग, चावल आदि दो एक द्रव्य ले जाकर भगवान के आगे चढ़ाते हैं यह भी द्रव्यपूजा का एक प्रकार है।

पूजन करते समय पूजा के छन्दों को अच्छे ताल, स्वर, बाजे के साथ बोलना चाहिये जिससे दूसरे सुनने वाले व्यक्तियों का मन भी उस ओर आकर्षित हो। मुलतान में अष्टाह्निका, दशलक्षण, दिवाली आदि पर्वों के समय पूजा ऐसे सम्मिलित मधुर स्वर, ताल से हारमोनियम, मृदंग के साथ पढ़ी जाती थी जिसको सुनने के लिये अजैन जनता भी आकर्षित होकर बिना बुलाये आ जाती थी और पूजन का एक एक अक्षर स्पष्ट सुन, समझ पड़ता था। इसी तरह का आयोजन सब जगह होना चाहिये।

भगवान का अभिषेक तीर्थंकर के जन्मकल्याणक के अभिषेक की प्रतिकृति (नकल) नहीं है जैसा कि कुछ भाई समझते हैं और इसी कारण उस समय वे जन्मकल्याणक वाला मंगल— "सहस अठोतर कलशा प्रभु के शिर ढरे। पुनि शृङ्गार प्रमुख आचार सबै करे" इत्यादि पढ़ते हैं। हम अर्हन्त प्रतिमा का पूजन करते हैं और अभिषेक पूजन का पहला अंग बतलाया गया है, अतः उस समय अभिषेक पाठ पढ़ना चाहिये जो कि नित्यनियम-पूजा तथा सहस्रनाम पाठ से पहले ८५ वें पृष्ठ पर दिया गया है।

यहां एक बात और ध्यान रखनी चाहिये कि पूजनार्थी जिसकी पूजा करना चाहता है वह पदार्थ उसके सामने हो या न हो किन्तु पुजारी अपनी उत्कट पवित्र भावना से अपने पूज्य देव को अपने सामने विराजा हुआ प्रत्यक्ष देखता है। इसी नियम के अनुसार यद्यपि भगवान ऋषभदेव आदि पूज्य देव हमसे बहुत

दूर सिद्धालय में हैं किन्तु हम तो अपनी पवित्र पूजन की भावना से पूजन करते समय अपने सामने ठौने पर विराजा हुआ ऐसा देखते हैं जैसे कि साक्षात् उनके समवशरण में खड़े हुए उनका दर्शन पूजन कर रहे हों। जिन लोगों की दृष्टि (नजर) में प्रतिमा एक पत्थर है उनको फल भी पत्थर की भावना का मिलता है और जिनकी दृष्टि में वह प्रतिमा भगवान की समवशरणवाली जैसी ही मूर्ति है उनको अपनी भावना के अनुसार भगवान की भक्ति का फल मिलता है।

स्वास्थ्य ठीक रहते हुए, समय निकालकर प्रत्येक भाई को पूजा अवश्य करनी चाहिये, या पूजा करनेवालों के साथ मिलकर पूजन पढ़वाना चाहिये।

पूज्य देव के लिये समर्पण की हुई सामग्री को गृहस्थों को न तो बेचना चाहिये, न अपने काम में लेना चाहिये, या तो उसे अग्नि में जला देवे अथवा जल मे बहा देवे। चावल नारियल के चटके आदि जो वस्तु फिर बिक्री में न आ सके, केवल खाने के काम ही आ सकें उन चीजों को मंदिर के नौकर माली आदि या भिखारियों को भी दे सकते हैं। साराश यह है कि अपने काम में न लेते हुए उस चढ़ाई हुई सामग्री का जैसा उचित उपयोग प्रतीत हो वैसा करना चाहिये।

मंदिर एक धर्मसाधन का पवित्र स्थान है अत. जब तक मंदिर में रहें धर्मसाधनसम्बन्धी कार्य—दर्शन, पूजन, सामायिक, स्वाध्याय, धर्मचर्चा आदि—ही करते रहे। उसके सिवाय घर-गृहस्थी की चर्चा, किसी की निन्दा, प्रशंसा, खेल, विसंवाद (झगड़ा) आदि कार्य न करने चाहिये, क्योंकि पवित्र स्थान में ऐसे काम करने से महान पाप का बन्ध होता है।

तथा मंदिरजी में असत्यभाषण भी न करना चाहिये। एवं हिंसा, चोरी, मैथुन आदि निन्द्य पाप मंदिर की सीमा में कदापि न होने चाहिये। जो व्यक्ति इन बातों का ध्यान नहीं रखते वे बर्बाद हो जाते हैं।

इसी प्रकार मंदिर की द्रव्य को पवित्र धार्मिक धरोहर समझ कर उसको पूर्ण सुरक्षित रखना चाहिये और उसका हिसाब पंचायत को बताते रहना चाहिये।

आज कल केशर के नाम पर नकली अशुद्ध केशर मिलने लगी है ऐसी दशा में केशर के स्थान पर हारसिंगार के फूल भी काम में लाये जा सकते हैं।

इस पूजन ग्रन्थ के सम्पादन का कार्य मुझे दिया गया था मैंने यथाशक्ति इसका निर्वाह किया है। पूजन विधान के जो मैंने ५२ पृष्ठ लिखे हैं उसमें मैंने अपनी समझ के अनुसार पूजन दर्शन, अभिषेक आदि करने का संक्षिप्त ढंग लिखा है मैं क्रियाकाण्ड का मर्मज्ञ विद्वान नहीं अतः उसमें जिन महानुभावों को जो त्रुटि जान पड़े मुझे सूचित करने की कृपा करें।

पुस्तक छपाकर तैयार करने की शीघ्रता थी और पूजन की यथेष्ट प्रतियां मौजूद न थीं अतः कुछ स्थल ऐसे रह गये हैं जिनका सन्तोषजनक संशोधन नहीं हो सका, कुछ कवियों की बनाई कुछ ऐसी भाषा पूजायें हैं जिनमें समर्पण मंत्र (ॐ ह्रीं) अपनी हिन्दी भाषा और संस्कृत भाषा की खिचड़ी बनाकर लिखे हैं मैंने उसको वैसा ही रहने दिया है। प्रूफ संशोधन में सावधान रहा हूं किन्तु देवनागरी लिपि, कलकतिया टाईप (जिसकी अनेक मात्रायें पोली होने के कारण मशीन पर टूट जाया करती हैं) का संशोधन कैसी टेढ़ी खीर है इसको भुक्तभोगी अच्छी तरह जानते हैं। फिर

'समय की कमी, अन्य किसी व्यक्ति का सहारा न मिलना' ऐसी कठिनाई हैं जिनसे प्रूफसंशोधनमें त्रुटि रहना संभव है। फिर भी अपने कर्तव्य में प्रमादी नहीं रहा। पहली छपी हुई पूजन पुस्तकों में जो त्रुटियां मुझे प्रतीत हुई उन्हें निकाल दिया है। संस्कृत अकृत्रिम चैत्यालयों के अर्घों को तथा संस्कृत रत्नत्रय पूजा को पाठकमहानुभाव देखें।

ग्रन्थमाला की समिति ने मुझे कुछ सेवा सौंपी तथा श्रीमान् पं० हीरालाल जी कौशल न्यायतीर्थ और डा० फूलचन्द जी ने मुझे सहयोग दिया एतदर्थ मैं उनका आभारी हूं।

निवेदक—

अजितकुमार जैन शास्त्री

दो शब्द

'देवपूजा' गृहस्थ का सर्वप्रथम आवश्यक कर्तव्य है तथा इस के पश्चात ही अन्य गृहकार्यों में लगने पर गृहस्थ-जीवन की सफलता बतलाई है। मन्दिरों में प्रातः काल से ही जाकर दर्शन पूजनादि की परिपाटी प्रचलित है तथा लोग जाकर अत्यन्त भक्ति भाव से इन दैनिक कर्तव्यों को करते हैं। समय के परिवर्तन के अनुसार कुछ लोगों में धार्मिक शिथिलता भी स्थान करने लगी है तथा कुछ लोग चाहते हुए भी प्रक्षाल पूजनादि न कर सिर्फ भगवान के दर्शन करके ही सन्तोष कर लेते हैं क्योंकि उनको उसकी विधि का यथावत ज्ञान नहीं है। इस विषय में श्री० महावीरप्रसाद जी बी० एससी. सुपरिटेन्डेन्ट कृषि मंत्रालय भारत सरकार देहली आदि कुछ मित्रों का यह विचार हुआ कि पूजन विषयक एक ऐसा ग्रन्थ तैयार कराया जाय जिस में आवश्यक सभी पूजन विधानों के संग्रह के साथ ही प्रारम्भ से लेकर अन्त तक की समस्त पूजन विधि का भी अच्छा विवेचन हो इस विषय की जिस किसी से भी चर्चा हुई उन सभी सज्जनों ने इसकी आवश्यकता अनुभव कर सिर्फ इस विचार का समर्थन ही नहीं किया बल्कि हर प्रकार ये सहयोग देने की भी इच्छा प्रकट की। फलतः इस विषय को ग्रन्थमाला की प्रबन्धकारिणी समिति के समक्ष उपस्थित किया गया जिसने सहर्ष इसको स्वीकार कर लिया।

सर्वप्रथम ४०० पृष्ठ का ग्रन्थ तैयार करने का विचार निश्चित हुआ जिसके लिये दुर्लभ पूजाओं के संग्रह, पूजन विधि आदि लिखने तथा सम्पादन का काय श्रीमान् पं० अजितकुमार जी शास्त्री को सोंपा गया जिसे उन्होंने कृपापूर्वक सहर्ष स्वीकार कर

लिया। उस कार्य को आपने अत्यन्त सुन्दरता से सम्पन्न किया है। ज्यों २ ग्रंथ छपता गया उसको बड़ा बनाने का विचार भी बढ़ता गया तथा फलस्वरूप विचार से दुगुने आकार अर्थात् ८०० से भी अधिक पृष्ठों के रूप में यह ग्रन्थ आपके सम्मुख प्रस्तुत है। इसके लिये पण्डितजी को हार्दिक धन्यवाद है।

ग्रन्थमाला की स्थिति को देखते हुये इतने बड़े कार्य का प्रारम्भ करना अत्यन्त कठिन कार्य था, परन्तु ग्रन्थमाला समिति के उत्साह तथा मित्र वर्ग के सहयोग से आर्थिक सहायता के लिये कार्य चालू किया। श्री महावीरप्रसादजी, दयादीपकप्रकाश-जी, सुजानसिंहजी, प्रेमचन्दजी, राजेन्द्रप्रसादजी, विशेशरनाथजी आदि सज्जनों ने इस कार्य में जो परिश्रम किया तथा समय लगा कर आर्थिक सहायता संग्रह कराने मे पूर्ण सहयोग दिया, उसी से यह कार्य इतने अच्छे रूप मे सम्पन्न हो सका। मुझे प्रसन्नता है कि इस पवित्र कार्य के लिये हम लोगों ने जिन से भी चर्चा की उन महानुभावों ने सहर्ष हमें सहायता प्रदान की है। इसके लिये सभी सज्जनों को हार्दिक धन्यवाद है।

श्रीमान पं० हीरालाल जी 'कौशल' की अमूल्य सम्मति तथा देखभाल ने हमें जो सहायता दी है वह स्मरणीय और प्रशंसनीय है। वे ग्रन्थमाला के एक प्रमुख अंग हैं फिर भी मैं उनको हार्दिक धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता।

श्रीमान् ला० राजेन्द्रप्रसाद जी जैन बैंकर्स नई देहली ने इस ग्रन्थ मे हमें कुछ बहुमूल्य परामर्श देने की कृपा की है इसके लिये उनको हार्दिक धन्यवाद है।

वर्तमान मंहगाई के समय में जब कि प्रत्येक वस्तु के लिये कई गुना खर्च करना पड़ता है तथा कागज का बाजार में अभाव

सा हो रहा है इतने बड़े ग्रन्थ का प्रकाशित होना अत्यन्त कठिन कार्य था इस कार्य में जिन २ महानुभावों ने हमें जिस किसी रूप में भी सहायता दी है मैं ग्रन्थमाला की ओर से उनका अत्यन्त आभारी हू।

इस ग्रन्थमाला का प्रधान उद्देश यह है कि जैन, अजैन जनता मे जैन धर्म के पवित्र व हितकर सिद्धान्तों का प्रचार किया जाय। जिससे जनता में फैली हुई अशान्ति व क्षोभ दूर होकर सुख शान्ति का प्रसार हो।

इसके लिये तन, मन, धन सभी की आवश्यकता होती है। मानसिक शक्ति विद्वानों से चाहिये कि वे उपयोगी धार्मिक साहित्य सृजन करके देने की कृपा करें। आर्थिक सहायता उदार दानी महानुभावों से चाहिये जिससे कि उस साहित्य का प्रकाशन व प्रचार हो सके।

जो महानुभाव जिस रूप मे भी ग्रन्थमाला की सहायता करेंगे, सम्मान से उनकी सहायता का स्वागत किया जायगा।

निवेदक

पहाड़ी धीरज, देहली (डा०) फूलचन्द जैन,

मंत्री, जैन सिद्धान्त ग्रन्थमाला

विषय-सूची

"नित्य नियम पूजा"

(हिन्दी अनुवाद सहित)

भाषा नित्यनियम पूजा

नैमित्तिक पूजायें

वर्तमान चौबीसी पूजा

(कविवर वृन्दावन कृत)

पर्व पूजायें

अर्घावली

सलूनापर्व पूजा

श्री सिद्ध क्षेत्र पूजायें

अमूल्य रत्न

१—जिन्होंने गहनतपस्या करके आत्माके दोष दूर किये वे तो परमात्मा बन गये यदि तुम भी प्रयत्न करो तो तुम भी उस श्रेणीमें पहुचसकते हो।

२—आप यदि महान पुरुष बनना चाहते है तो दीन दुखी जीवों के दुख दूर करने की [illegible], धन, से चेष्टा करो।

३—प्रत्येक प्राणी—वह चाहे छोटा हो या बड़ा मनुष्य हो पशु—तुम्हारे समान ही सुख दुख का अनुभव करता है।

४—जब तुम स्वयं सुख शान्ति से जीना चाहते हो तो दूसरे प्राणियों को भी सुख शान्ति से जीने दो। दूसरो को दुख देकर आप सुखी नहीं रह सकते।

५—सदा भगवानको स्मरण [illegible] और मृत्युको कदापि न भूलो।

६—धन सचय गृहस्थाश्रमके लिये यदि आवश्यक है तो वह न्यायपूर्वक होना चाहिये।

७—परउपकार, धर्मप्रचार, ज्ञानप्रसार, दीनदुखी सेवा, लोककल्याण में धनका खर्च करना ही उपयोगी है।

सेठजी को फिक्र थी एक एक के दस दस कीजये।
मौत आ पहुँची कि हजरत जान वापिस कीजये॥

—अजितकुमार जैन

भगवान महावीर
(चाँदन गाँव)

पूजन विधान।

आत्मा के परिणमन

जग तो लोक मे अनन्तानन्त प्राणी हैं जिनको जीव, आत्मा आदि विभिन्न नामों से पुकारते हैं (यद्यपि उन शब्दों के नाम में कुछ अन्तर है परन्तु उन सबका वाच्य-अर्थ एक ही हैं) इस कारण उनके परिणमन (हालत बदलना) भी उतने ही तरह के हैं क्योंकि प्रत्येक आत्माकी पर्याय (दशा) प्रतिक्षण स्वतन्त्र रूप से अलग अलग बदलती है। यह बात दूसरी है कि जो आत्माएं कर्मजाल से मुक्त हो चुकी हैं उन सबका स्वाभाविक परिणमन होता है और नियमानुसार स्वाभाविक परिणमन एक सरीखा ही हो सकता है, क्योंकि उसमें भेदभाव डालनेका अन्य कोई कारण नहीं रहता है, इसलिये अनन्तों मुक्त आत्माएं (जिनको परमात्मा भी कहते है) पृथक् पृथक् रूप से अपनी पर्याय बदलती हैं किन्तु उनकी पर्याय एक जैसी हुआ करती है।

परन्तु संसार-चक्र में घूमने वाले प्राणियों मे कर्मबन्ध के कारण अनन्तों भेद है इसी कारण प्रत्येक संसारी जीव की दशा भिन्न भिन्न होती है प्राय: दूसरे से नहीं मिलती फिर भी मोटे रूप से उनके परिणमनों (पर्यायों-हालतों) को तीन तरह से विभक्त किया गया है।

१-अशुभ, २-शुभ, और ३- शुद्ध

हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार, ठगी, अन्याय, अत्याचार, अशुभ प्रेम आदि काम करने में जीवों की अशुभ परिणति होती है। क्योंकि ऐसे कार्य करते समय जीव के विचार, वचन और शरीर की क्रिया शुभ (अच्छी-स्वपरलाभदायक) नहीं होती, अशुभ यानी-खराब-हानिकारक होती है।

दया, क्षमा, शान्ति, सत्यभाषण, दान, रक्षा, परोपकार, शुभ राग आदि कार्य शुभ परिणामों के होते हैं क्योंकि ऐसे विचारों, वचनों और शारीरिक क्रिया से अपने आपको तथा अन्य जीवों को सुख शांति मिलती है।

संसार, शरीर, तथा विषय भोगों से विरक्त होकर, समस्त पदार्थों से सब प्रकार के (शुभ तथा अशुभ) राग द्वेष, भाव त्यागकर आत्मध्यान में लीन होना शुद्ध परिणति है। यानी सब अच्छी-बुरी सांसारिक क्रिया छोडकर शुद्ध आत्म कार्य में लगना।

इन तीनों परिणतियों में शुद्ध परिणति सबसे उत्तम है क्योंकि इसी परिणति के द्वारा जीव कर्मबन्धन से मुक्त होता है किन्तु साधारण जीव जोकि सहसा राग द्वेष भावों से नहीं छूट सकते उनके लिये जगत्-हितैषी ऋषियों ने अशुभ राग द्वेष छोड़कर शुभ राग रूप दान, परोपकार, सत्य बोलना आदि काम करने का विधान किया है। यानी-जिन कामों के करने से अशुभ परिणाम न होकर शुभ परिणाम हों ऐसे काम करने का उपदेश दिया है।

शुभ परिणामों के लिये अहिंसा, सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य आदि व्रत आचरण करने का मार्ग बतलाया है जो कि महाव्रतों के रूप में गृहत्यागी साधु पालते हैं और अणुव्रतों के रूप में गृहस्थ आचरण किया करते हैं। इनके सिवाय परिणामों की कालिमा घटाने के लिये या शुभ परिणाम उत्पन्न करने के लिये गृहस्थों का प्रतिदिन करने के ६ आवश्यक कार्य और भी बतलाये हैं।

देवपूजा गुरूपास्तिः स्वाध्यायः संयमस्तपः ।
दानं चेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिने दिने ॥

यानी १-देवपूजा (जिनेन्द्र भगवान का दर्शन, अभिषेक पूर्वक पूजन करना), २-गुरुउपासना (मुनि, ऐलक क्षुल्लक आदि का विनय सत्कार करना, उनका उपदेश सुनना, भक्तिपूर्वक उनको

आहार उपकरण दान करना आदि) ३–स्वाध्याय (शास्त्र पढ़ना, सुनना, सुनाना आदि), ४–संयम (जीवरक्षा तथा इन्द्रियनिग्रह करना), ५– तप (उपवास, एकाशन, रस त्याग आदि करना), ६–दान (व्रती, तथा दीन दुखी जीवों को भोजन कराना आदि), ये छह कार्य गृहस्थों को प्रतिदिन अवश्य करने चाहिये।

प्रतिमा का प्रभाव

प्रत्येक संसारी नेत्रधारी जीव–वह चाहे मनुष्य हो या पशु छोटा हो या बड़ा, पुरुष हो या स्त्री–अपने नेत्रों के द्वारा प्रायः अपने अच्छे बुरे परिणामों को बनाता है। अर्थात् बाहरी चीजें वे चाहे जड हो या चेतन; जीव के विचारों पर अच्छा या बुरा प्रभाव डाला करती है।

छोटा सा अबोध बच्चा भी सुन्दर, रंगदार, चमकदार खिलौनों को देखकर प्रसन्न होता है और असुन्दर (बदसूरत) चीजों की ओर देखना भी नहीं चाहता। यदि छोटे बच्चे को हंसते हुए आप चप्पत भी लगाते रहेंगे तो वह हसता खेलता रहेगा और यदि क्रोधभरी दृष्टि से उसको देखेंगे तो विना मारे भी वह भयभीत हो जावेगा और रोने लगेगा।

कभी कभी भेड़िया मनुष्य के बच्चों को उठा ले जाता है और अपने स्थान पर ले जाकर उसे बिठाकर उससे खेलता है उस समय बच्चा यदि हंसता रहता है तो भेड़िया उसको नहीं मारता बल्कि भेड़िया की माता उसको अपना दूध पिला कर पाल लेती है। (भेड़ियों द्वारा पाले गये ऐसे लड़के लड़कियां अनेक बार भेड़ियों के भिटों से पाये गये है। कुछ पहले बंगाल में ८-६ वर्ष की दो लड़कियां भेड़ियों के से भिटों पकड़ कर लाई गई थी जो कि कुछ दिन बाद मर गई।)

गर्भिणी स्त्री यदि सुन्दर, शिक्षित, सच्चरित्र वीर पुरुषों के चित्रों का देखती रहे तो उसके गर्भस्थ बच्चे मे सुन्दरता, सच्चरित्रता आदि गुण आ जाते हैं, विषयी पुरुष वेश्या आदि नग्न दुश्चरित्र स्त्रियों के चित्र अपने कमरे में लगाकर उनसे मानसिक व्यभिचार करते हैं और वीर पुरुष वीरों के चित्र लगाकर अपनी वीरता को बढ़ाने की भावना किया करते हैं। देशभक्त देशभक्तों के चित्रों को अपने घर में सजाकर प्रसन्नता प्राप्त करते हैं।

महाभारत की कथाके अनुसार एकलव्य भील न गुरु द्रोणकी मिट्टी की मूर्ति बनाकर उस मूर्ति के द्वारा धनुर्विद्या सीखी थी और अर्जुन जसी निपुणता प्राप्त की थी। अभिमन्यु ने चक्रव्यूह तोड़ने की शिक्षा गर्भ मे ग्रहण की थी।

इन सब दृष्टान्तो से यह बात सहज ही समझ मे आ जाती है कि बाहरी पदार्थ व चाहे जीते जागते हों या धातु, पत्थर, मिट्टी की मूर्ति हों अथवा कागज, भींत कपड़े आदि पर बने हुए चित्र हों—आंखों द्वारा देखे जाने पर अपने अच्छे बुरे प्रभाव मन पर अंकित करते रहते है।' यह एक स्वाभाविक नियम है इसको कोई उलटा नहीं कर सकता।

यदि कोई मनुष्य संसार की अशान्ति दूर करके वीतराग (राग, द्वेष, क्रोध, दंभ आदि दुर्भावों से रहित) बनना चाहता है तो उसको निर्विकार (छोटे बच्चे के समान काम वासनादि से रहित) शान्त, धीर, वीतराग की मूर्ति प्रतिमा या चित्र अपने नेत्रों के सामने रखना चाहिये। जिससे उस मूर्ति को देख कर मन में शांति, वीतरागता के भाव जाग्रत हो उठे।

इसी वैज्ञानिक सिद्धान्त क अनुसार जैनदर्शन में देव मन्दिर का निर्माण कराकर उस में वीतराग अर्हन्त देवकी मूर्ति विराज-

मान करने का विधान है। जो कि समवशरण की प्रतिकृति (नकल) है।

प्रतिमापूजा पर आक्षेप

कुछ भाई (जैन तथा अजैन) प्रतिमा को पत्थर आदि जड़ पदार्थों की बनी होने के कारण प्रतिमापूजन के इस वैज्ञानिक उपयोगी सिद्धान्त पर आक्षेप करके उसको अनुपयोगी बतलाते हैं। उनका कहना है कि—

१—मूर्ति ज्ञानरहित जड़ है, उसके दर्शन पूजन से हमको कुछ शिक्षा नहीं मिल सकती क्योंकि न वह कुछ बोलती है और न कोई संकेत (इशारा) करती है।

२—पत्थर पत्थर सब एक समान है तब पत्थर की मूर्ति को ही क्यों पूजते हो, दूसरे पत्थरों को भी पूजो।

३—मूर्ति जब अपने ऊपर बैठी हुई मक्खी, चूहे आदि को भी नहीं हटा सकती तब तुम्हारा क्या कल्याण करेगी?

४—जिस मूर्ति को तुम देव मानकर पूजते हो उसी को दुष्ट विधर्मी लोग तोड़ फोड़ कर तुम्हारे पूज्य देव का अपमान करते है। यदि मूर्ति न बनाओ तो धमका यह अपमान न हो सके।

५—मन्दिर बनाकर, छत्र, चंवर आदि सामान बनवा कर जो द्रव्य खर्च करते हो यदि उसी द्रव्य से पाठशाला खोलो, दीन दरिद्री जनता का दुख मिटाओ तो द्रव्यका अधिक सदुपयोग हो।

६—जब वीतराग देव को पूजना चाहते हो तो छत्र, चंवर, भामंडल, चंदोवे आदि की सजावट करके राग उत्पादक सामग्री मन्दिर में क्यों संचित करते हो?

७—मुक्त परमात्मा जब अपमान करने पर अप्रसन्न (नाराज) होकर हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते और पूजा, दर्शन से प्रसन्न

होकर हमारा भला नही कर सकते तब उनकी पूजा करना व्यर्थ है उसमे कुछ लाभ नहीं।

इन आक्षेपो का सक्षेप मे क्रम से यह उत्तर है—

१—आत्मा पर अच्छा बुरा असर जड़ पदार्थ भी डाला करते हैं। गंदे चित्र हृदय पर गंदगी और अच्छे चित्र अच्छे भाव उत्पन्न करते है।

स्थानकवासी साधुओ का उनके आगम का उपदेश है कि ऐसे स्थान मे न ठहरो जहा पर वश्या आदि के चित्र हों। क्योंकि वहा पर साधु का ब्रह्मचर्य सुरक्षित नहीं रह सकता। तथा साध्वी साबित (पूरा) केला न खाव (क्योकि उसका आकार पुरुषाग जैसा होने से वह विकार भावका निमित्त हो सकता है)

आर्य समाज भाई स्वामी दयानन्द जी सरस्वती व स्वामी श्रद्धानन्द जी आदि के चित्र आर्य समाजी मन्दिर मे ऊचे स्थान पर टाग कर बडी श्रद्धा से उनको देखकर अपना मन हर्षयुक्त करते है।

हैदराबाद मे सनातन-धर्मियों के साथ शास्त्रार्थ करते हुए आर्य समाजी विद्वान पं० बुधदेव जी विद्यालंकार ने आर्य समाज की मूर्ति पूजानिषेध का प्रमाण देते हुए सनातनधर्मी विद्वान के अनुरोध पर स्वामी दयानन्द जी के चित्र पर जूता मारा था। इस पर आर्यसमाज ने पं० बुधदेव जी को बहुत फटकार बताई थी। क्या यह आर्यसमाज की मूर्ति-पूजा नहीं ?

आचाराग सूत्रआदि आगमग्रन्थ, वेद, कुरान ग्रन्थ भी जड़ पदार्थ है वे भी अक्षर, पद, वाक्यो की मूर्तिरूप ही तो है उनके हाथ जोड़ना, नमस्कार करना क्या जडपूजा नहीं है ? वे चित्र वा ग्रन्थ जिस तरह जड़ होकर भी सतमार्ग का उपदेश देते है।

इसी प्रकार मूर्ति यद्यपि जड़ है किन्तु अपनी शक्ल सूरत से देखने वाले के मन पर अपने अनुरूप प्रभाव डालती है। सिनेमा के जड़ चलचित्रों का प्रभाव मन पर जो पड़ता है उससे तो स्थानकवासी भाई, आर्यसमाजी, मुसलमान आदि कोई भी मूर्तिपूजा-निषेधक सम्प्रदाय इनकार नहीं कर सकता।

अतः संसार में कोई भी पंथ या मनुष्य जड़ मूर्ति के असर मानने से अछूता नहीं, केवल उनकी मान्यता के ढंगमें अन्तर है।

२—जब कागज कागज सब एक से है तो जिस पर आचाराग सूत्र, ऋग्वेद या कुरान लिखा है वही क्यो आदरणीय (आदर सत्कार-विनय करने योग्य) माना जाता है अन्य कागजो का वह सत्कार क्यो नहीं किया जाता? नोट का कागज अन्य कागजो की अपेक्षा क्यों मूल्यवान माना जाता है? जो बात आपको अन्य कागजो की अपेक्षा अपने धर्मग्रन्थ मे या नोट मे प्रतीत होती है वैसी ही बात हमको अन्य पत्थरो की अपेक्षा अपनी देवमूर्ति मे अनुभव होती है। इसलिये सब पत्थरो को समान समझना गलती है।

३—वीतराग मूर्ति का तो आदश यही है कि 'जिस समय आत्मध्यान मे बैठो तब चाहे जैसे प्रबल, भयानक विघ्न उपद्रव आवे किन्तु तुम उनसे जरा भी विचलित न होवो तब ही बाहुबली, सुकुमाल, गजकुमार, सुकोशल आदि साधुओं के समान सिद्धि पाओगे। मक्खी बैठने आदि से विचलित हो जाने वाले आत्मसिद्धि नहीं पा सकते।" मूर्ति के इस आदर्श का विचार करो। जड़ मूर्ति से भी हमको धीरता, निश्चलध्यानवृत्ति का पाठ पढ़ना है जो कि हमको वहां से मिलता है यदि अपने ऊपर बैठी हुई मक्खियों आदि को यन्त्रद्वारा उड़ा देने योग्य अगोपांगो को बना दिया जाय तो हम उस मूर्ति से निश्चलता, धीरता वा

आदर्श पाठ नहीं सीख सकते। बाहुबली जैसे निश्चलध्यानी बनने की शिक्षा हमको वैसी निश्चल वृत्ति दिखलाने वाली मूर्ति से ही मिल सकती है।

४—यदि कोई मूर्ख किसी सज्जन साधु का अपमान करे अथवा किसी धर्मग्रन्थ को फाड़ देवे तो उससे वह साधु या ग्रंथ अमान्य या अनुपयोगी नहीं हो जाता। इसी प्रकार अगर कोई दुर्जन देवमूर्ति का अपमान करता है तो उससे देवप्रतिमा अनुपयोगी नहीं हो जाती। बन्दर अदरख का स्वाद न समझे या भैंस वीणा का स्वर न समझे तो उससे अदरख और वीणा की विशेषता नष्ट नहीं हो जाती। यदि कोई मूर्ख शिर पर जूता और पैर मे मुकुट बांध ले, या कौवा उड़ाने के लिये बहुमूल्य रत्नको समुद्र मे फेंक दे तो उस मुकुट, रत्न का मूल्य कम नहीं हो जाता और न उस जूते का मूल्य बढ़ जाता है ऐसी ही बात देव मूर्ति के विषय मे है।

५—अपने संचित धन को अपने विषय भोगों में खर्च करने की अपेक्षा आत्मकल्याण के अभिलाषी असंख्य की पुरुषों के धर्मसाधन के लिये जिन-मन्दिर तथा उसके अन्य सामान को बनाने में खर्च करना बहुत उत्तम और उपयोगी है जब तक वह मन्दिर रहेगा लोग उससे लाभ लेते रहेंगे। विद्याप्रचार, दयापालन आदि कार्यों में भी द्रव्य खर्च करना चाहिये किन्तु मन्दिर बनाकर धर्मसाधन का पथ निर्माण करना भी बहुत उपयोगी है। जिस व्यक्ति को जिस काम की अधिक उपयोगिता प्रतीत होती है वह उसी काम मे अपना द्रव्य खर्च करता है। ऐसा करने से यदि वह दूसरे काम मे खर्च नहीं कर पाता तो लोक कल्याण के लिये किया गया उसका वह काम व्यर्थ नहीं हो जाता। मन्दिर बनवाना स्वार्थ साधन के लिये नहीं किन्तु उसमे असंख्यगुणे परोपकार

के लिये है, उस में आने वाले लोग दया, क्षमा, शान्ति, दान आदि सदाचार का तब तक पाठ पढ़कर बाहर निकलेंगे जब तक वह मन्दिर रहेगा। अतः पांचवां आक्षेप निराधार है।

६—मन्दिर का निर्माण समवशरण के अनुकरण रूप है। समवशरण का सौन्दर्य दिव्य (देव कृत) रचना का परिणाम है अतः वहां पर जिस तरह रत्न सुवर्णमय कोट, खाई, मानस्तम्भ सिंहासन, चंवर, छत्र, भामंडल आदि विभूति होती है, वैसी विभूति वाली रचना तो मनुष्यों द्वारा बनाये गये मन्दिर में आ नहीं सकती किन्तु फिर भी जितनी सुन्दरता लाइ जा सकती है मन्दिर मे लाई जाती है।

जिस प्रकार समवशरण मे मनोहारिणी विभूति के रहते हुए भी श्री अर्हन्त भगवान सबसे निर्लिप्त रहते हैं, सिंहासन से चार अंगुल ऊपर रहते हैं उनका वह रूप वीतरागता का प्रतीक है और आदर्श है इस बात का कि संसार की सुन्दर विभूतियां वीर स्वस्थ, वीतराग, वीर आत्मा को रंचमात्र भी विचलित नहीं कर सकतीं।

यही बात मन्दिर में पाइ जाती है छत्र, चंवर, सिंहासन आदि विभूति के रहते हुए भी पूज्य, दर्शनीय अर्हन्त प्रतिमा सब से अलिप्त अपने वीतराग रूप मे विराजमान है और अपनी आकृति से यह मौन उपदेश देती है कि सांसारिक विभूति, आध्यात्मिक विभूति—वीतरागता की तुलना में हेच एवं हेय है, शान्ति, निश्चलता, निराकुलता प्राप्त करने के लिये संसार की जड़माया छोड़ना आवश्यक है। अतः मन्दिर की सुन्दरता रचना किसी विशेष उद्देश्य को लेकर है—वह राग बढ़ाने के लिये नहीं बल्कि रागभाव घटाने के लिये है। वीतरागता तक पहुंचाने का एक साधन है।

७—संसार के प्राय: समस्त धर्मों का अभीष्ट उद्देश सासारिक सुख-राज्य, धन, स्वर्ग आदि-प्राप्त करना है। किन्तु जैन धर्म का उद्देश सासारिक विभूति को छोड़ कर वीतराग पद प्राप्त करना है। तदनुसार जैनधर्मानुयायियों का उपास्य देव भी 'वीतराग' है, उनका गुरु भी संसार, शरीर और भोगों से विरक्त नग्न दिगम्बर होता है।

जो अपनी प्रशंसा सुनकर किसी पर प्रसन्न नहीं होता और न अपनी निन्दा करने वाले पर अप्रसन्न होता है। जिसका आत्मा राग, द्वेष, मान, दम्भ, ईर्ष्या, लोभ, आशा आदि समस्त विकार मैलों से सवथा धुलकर निर्मल हो चुका है उसको वीतराग कहते है। ऐसा वीतराग न अपनी पूजा उपासना, प्रशंसा कराना चाहता है और न ऐसा करने वाले से प्रसन्न होता है। तथा अपने निन्दक प्राणी पर उसको क्रोध भी नहीं आता। अत: यह बात बिलकुल ठीक है कि अर्हन्त भगवान की पूजा दर्शन उपासना करने से उपासना करने वालों को उनकी कोई कृपा प्राप्त नहीं होती किन्तु वीतराग की पूजा उपासना करते समय पुजारी के मन, वचन, काय मे क्रोध, मान, माया, दम्भ, ईर्ष्या आदि दुर्भाव नहीं होते, शुभराग होता है इस कारण उस भक्त पुजारी को अनायास-वीतराग देव के प्रसन्न न होने पर भी-शुभ कर्म का उपार्जन होता है जोकि वर्तमान तथा भविष्य मे उस पुजारी का सुख शान्ति प्रदान करता है, वीतराग देव की शान्त निर्विकार मुद्रा का दर्शन, स्मरण, गुणकीर्तन करने से आत्मा मे राग द्वेष आदि विकारों का दमन शमन होता है इस कारण आत्मा मे स्वच्छता आती है, दुर्भावनाएे लुप्त होती है। इस ढंग से आत्म-उन्नति में वीतराग भगवान निमित्त हो जाते है। अत: वीतराग देवकी उपासना निष्फल नहीं होती। जिस तरह पेड़ किसी को छाया

देने की इच्छा नहीं रखता है फिर भी जो कोई उसके नीचे बठता है उसको छाया मिल ही जाती है। इसी प्रकार वीतराग देव किसी को सुख सामग्री नहीं देना चाहते (क्योंकि उनमें किसी भी प्रकार की इच्छा नहीं है) फिर भी उनकी उपासना से नेत्र और मन के द्वारा शुभ प्रवृत्ति होने से सुख का कारण पुण्यबध हो ही जाता है।

इस प्रकार अर्हन्त भगवान की प्रतिमा की भक्ति, पूजा करने में जो शंकाऐं की जाती हैं, वे सब व्यथ हैं।

प्रतिमा का स्वरूप

तीर्थङ्कर का शरीर समचतुरस्र संस्थान (शरीर के समस्त अंग उपांग ठीक नापवाले) का होता है। तदनुसार उनकी प्रतिमा भी समचतुरस्र रूप बनाई जाती है। यदि शिल्पकार (सिलावट) प्रतिमा का कोई अग उपांग कम या अधिक नापवाला बना दे तो वह प्रतिमा अमान्य होती है।

इसके सिवाय उस प्रतिमा मे सौम्यता, शान्तिता, प्रसन्नता, निर्भयता की छटा होनी चाहिये। वक्रता, क्रूरता आदि की झलक प्रतिमा मे न होनी चाहिये। किसी वस्त्र, आभूषण का चिह्न न होना चाहिये। प्रतिष्ठाशास्त्र मे जो निषिद्ध दोष बतलाये गये है वे उसमे न होने चाहिये। जिसके दर्शन करने से मन मे शान्ति, वीतरागताका स्रोत खुल जावे वह आभा प्रतिमामे होनी चाहिये।

अर्हन्त की प्रतिमा आठ प्रातिहार्ययुक्त होती है, अतः छत्र आदि सहित अर्हन्त प्रतिमा का निर्माण होना चाहिये।

प्रतिमा का लक्षण प्रतिष्ठासारोद्धारमे भी ऐसा ही लिखा है—

> शान्तप्रसन्नमध्यस्थनासाग्रस्थाविकारदृक्।
> सम्पूर्णभावरूपानुविद्धांगं लक्षणान्वितम ॥ ६१ ॥

रौद्रादिदोषनिर्मुक्तं प्रातिहार्याङ्कयक्षयुक् ।
निर्माप्य विधिना पीठे जिनबिम्बं निवेशयेत् ॥६२॥

इन श्लोकों का अभिप्राय ऊपर लिखे अनुसार ही है।

प्रतिमा पूज्य कब होती है

प्रतिमा बन जाने पर भी तब तक पूज्य वह नहीं होती जब तक कि उसकी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा न हो जावे। जो प्रतिष्ठाचार्य प्रतिष्ठाविधि का अच्छा जानकार हो उसके द्वारा ठीक मुहूर्त में प्रतिष्ठाशास्त्र के अनुसार ठीक विधान से प्रतिष्ठा होने के बाद ही प्रतिमा पूजा करने योग्य होती है। प्रतिष्ठा होने से पहले वह पूज्य नहीं होती। जैसे कि ठीक विधि से जब तक राजअभिषेक न हो, राजगद्दी न मिले तब तक राजपुत्र राजा नहीं माना जाता। इसलिये अप्रतिष्ठित मूर्ति को नमस्कार, विनय, पूजन नहीं करना चाहिये।

इसी तरह चित्रों में अंकित, दीवालों पर बनी हुई अर्हन्त की, साधु, आचार्य आदि की तसवीरों को नमस्कार आदि करना भी उचित नहीं। उनको उच्चस्थान में रखना, उनका अपमान, अविनय न होने देना इत्यादि उपचार विनय तो करना चाहिये किन्तु अर्हन्त प्रतिमा के समान उनको पूज्य समझकर नमस्कार आदि न करना चाहिये।

अपवाद

कोई अप्रतिष्ठित प्रतिमा भी यदि बहुत समय से पुजती चली आ रही हो तो वह भी प्रतिष्ठित प्रतिमा के समान पूज्य हो जाती है।

वेदी, चरणपादुका, मंदिर की भी प्रतिष्ठा होती है अतः विधि अनुसार वेदी की प्रतिष्ठा कराकर ही उसमें प्रतिमा विराज-

मान करनी चाहिये। वेदी बनवाकर उसको अधिक समय तक खाली नहीं रखना चाहिये। यानी प्रतिष्ठा कराके प्रतिमा विराजमान करने मे अधिक दिन न लगाने चाहिये।

वेदी का मुख पूर्व या उत्तर की ओर होना चाहिये। यदि कदाचित् ऐसा किसी स्थान पर न हो सके तो वहां चतुर्मुख प्रतिमा विराजमान करके वह दोष निकाला जा सकता है। मंदिर का द्वार पूर्व या उत्तर दिशा की ओर होना चाहिये।

वेदी के ऊपर शिखर होना चाहिये और शिखर पर कलश (सुवर्ण या पाषाण के) तथा ध्वजा होनी चाहिये।

शिखर मे चारों ओर प्रतिमाओं का रखना भी बहुत उपयोगी रहता है जिनका दर्शन मंदिर के बाहर से भी हो सके जिससे मंदिर मे भीतर न जा सकने वाला भक्त व्यक्ति भी उनका दर्शन कर सके। जहा तक हो मंदिर के बाहर मानस्तम्भ भी बनाना चाहिये जिसमें चारो ओर प्रतिमाएँ हों जिनका बाहर से ही दर्शन किया जा सके।

पूजन का अर्थ

आदरणीय व्यक्ति का उसके योग्य आदर सत्कार करना पूजा या पूजन कहा जाता है। तदनुसार माता पिता व शिक्षा गुरु, बड़े भाई आदि का भिन्न भिन्न प्रकार से आदर सत्कार हुआ करता है। धर्म-गुरु मुनि आदि की पूजा उससे भिन्न प्रकार से होती है। विद्यागुरु की पूजा करते समय उनको वस्त्र, सुवर्ण फल आदि भी भेंट किये जा सकते हैं किन्तु दीक्षागुरु या धर्मगुरु धन सम्पत्ति वस्त्र आदि के त्यागी होते हैं अतः उनकी पूजा करते समय वैसी वस्तुओं की भेंट नहीं किया जाता।

परमेष्ठी

आदरणीय या पूज्य व्यक्तियों मे सबसे अधिक पूज्य पाच परमेष्ठी होते है (परमे पदे तिष्ठति इति परमेष्ठी) उनके प्रसिद्ध नाम अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्वसाधु हैं। इन पाचों को मनुष्य, राजा, देव, इन्द्र आदि बड़े से बड़े सासारिक व्यक्ति भी पूजते है। अतः सबसे अधिक आदरणीय होने से इन पाचों को 'परमेष्ठी' कहते हैं।

परमेष्ठियों का क्रम

इन पाचो परमेष्ठियो मे आचार्य, उपाध्याय, साधु गुरु कहलाते है। गृहस्थवर्ग इनसे धार्मिक शिक्षा, दीक्षा, ग्रहण करता है। मुनिसंघ के व्यवस्थापक या शासक होने के कारण आचार्य का पद गुरुवर्ग मे सबसे ऊंचा है। अपने स्वाध्याय ध्यान आदि आत्महित-उपयोगी समय को जनकल्याण (मुनिसंघ व्यवस्था करने, शिक्षा, दीक्षा प्रायश्चित्त आद देने रूप) के लिये लगाते है जिससे सघ मे धमाचरण ठीक चलता रहता है। अत. आचाय का पद मुनियों मे सबसे ऊंचा है।

आचार्य की आज्ञानुसार अन्य साधुओं को शिक्षा देने वाले 'उपाध्याय' होते हैं उनका त्याग आचार्य की अपेक्षा कम और अन्य मुनियों की अपेक्षा अधिक है। अतः उपाध्याय को साधु से उंचा तथा आचार्य से नीचे रक्खा गया है।

आचार्य, उपाध्याय के सिवाय शेष समस्त मुनि किसी व्यवस्था सम्बन्धी कार्य मे कुछ भी भाग न लेकर केवल स्वाथसाधन (सामायिक आदि) करते है, अतः लोक कल्याण की दृष्टि से गुरुवर्ग मे उनका तीसरा स्थान है। आत्मशुद्धि की अपेक्षा प्रथम स्थान है।

मुक्ति साधु पद से ही प्राप्त होती है अत. आचार्य उपाध्याय को भी अपना पद अन्य सुयोग्य साधु को सौंपकर साधु पद लेकर ही मुक्ति प्राप्ति के लिये तपस्या करनी पड़ती है।

अर्हन्त और सिद्ध परमेष्ठी 'परमात्मा' या 'देव' कहलाते हैं। इनमे आत्म-शुद्धि की अपेक्षा यद्यपि सिद्ध परमेष्ठी अधिक हैं क्योंकि वे समस्त कर्ममल से पूर्ण मुक्त हैं, आत्मगुणों का पूर्ण विकास उन में विद्यमान है, और अर्हन्त अभी ४ अघाती कर्मों से नहीं छूट पाये है, मुक्ति का अभी बहुत सा मार्ग उनको तय करना है। अतः इस-आत्मशुद्धि की अपेक्षा प्रथम पद सिद्ध परमेष्ठी का है। किन्तु लोक-कल्याण अर्हन्त परमेष्ठी से ही होता है। अर्हन्त ही अपनी जीवन्मुक्त-कैवल्य अवस्था में अपने दिव्य उपदेश द्वारा सासारिक प्राणियों को सुमार्ग दिखाते हैं अत ससार के व अधिक हितकारक है, इसी कारण लोककल्याण की दृष्टि से उनका पद भी सर्वोच्च है।

इस तरह सर्वसाधारण संसारवर्ती प्राणी 'आत्मा' हैं, आचार्य उपाध्याय, सर्वसाधु ये तीन परमेष्ठी 'महात्मा' (महत्वशाली आत्मा है और अर्हन्त, सिद्ध ये दो परमेष्ठी 'परमात्मा' (सबसे उच्च आत्मा) हैं।

यद्यपि देवगढ़ आदि कई स्थानों पर आचार्य, उपाध्याय, साधु की मूर्तियां (पाषाण स्तम्भों पर उकेरी हुई) भी पाई जाती हैं। इन्दौर मे आचार्य चन्द्रसागर जी की मूर्ति भी एक मन्दिर में है किन्तु अधिकतर इन तीनों परमेष्ठियों के चरणचिन्ह ही बनाकर पूजे जाते हैं। प्रतिष्ठापाठ मे भी मुनियों के चरणचिन्हों की प्रतिष्ठा का विधान पाया जाता है।

आचार्य उपाध्याय साधु की प्रत्यक्ष में सेवा करना (नमस्कार, चरण छूना, उनके अंगउपांग दबाना आदि) विधिपूर्वक आहार

कराना, अष्ट द्रव्य से पूजा करना, स्तुति पढ़ना आदि गुरुपूजन है। गुरुओं के विद्यमान (मौजूद) न होने पर उनके चरण चिन्हों का अभिषेक, पूजन नमस्कार, स्तुति करना अथवा चरणचिन्ह न होने पर उनकी ठोने मे स्थापना करके पूजन करना परोक्ष गुरु पूजन है।

अर्हन्त परमेष्ठी की साक्षात् पूजा तो समवशरण मे होती है और परोक्ष पूजा उनकी प्रतिमा बनाकर अथवा ठौने मे स्थापना करके की जाती है।

सिद्ध परमेष्ठी की परोक्ष पूजा ही होती है क्योंकि वे उपासकों (भक्तों) को कभी प्रत्यक्ष नहीं दीखते।

—हाथ जोड़ कर, शिर झुकाकर, पंचाग (घुटने टेक कर) तथा अष्टांग (सामने लेटकर) नमस्कार करना, प्रदक्षिणा देना, स्तुति पढ़ना भी पूजा ही है क्योंकि यह सब भी भक्ति-आदर का एक ढग है।

भक्ति और सिद्धान्त

किसी भी विषय को यथार्थ बतलाना 'सिद्धान्त' है। तदनुसार "अर्हन्त, सिद्ध परमेष्ठी पूर्ण वीतराग हैं इसी कारण वे किसी भी सासारिक हलचल मे रंचमात्र भी भाग नहीं लेते। समस्त इच्छाओं से रहित होने के कारण उनको न तो यह अभिलाषा होती है कि अपनी सेवा, प्रशंसा करने वाले प्राणी को कुछ लाभ हो जावे, उसका सकट दूर हो जावे, उसको देवगति मे पहुचा दें, उसे धन पुत्र आदि पदार्थ दिला दें। तथा न ऐसी इच्छा होती है कि जो मनुष्य हमको नमस्कार आदि नहीं करता या हमारी निन्दा करता है उसके ऊपर आपत्ति वर्षा दें, उसके धन, पुत्र, मित्र का नाश कर दें, उसको दुख भोगने के लिये नरक भेज दें।

परमात्मा कभी ऐसा करता नहीं, उसकी समस्त जीवों में समान दृष्टि होती है तथा जो किसी के भला, बुरा करने का विचार या प्रयत्न (कोशिश) करता है वह परमात्मा नहीं हो सकता।

परन्तु अर्हन्त, सिद्ध परमात्मा (जीवन्मुक्त–सशरीर परमात्मा, पूर्णमुक्त अशरीर परमात्मा) की जो व्यक्ति सेवा, प्रशंसा करता है उसके मन के विचार, मुख के वचन और शरीर की चेष्टा अच्छे शुभ कार्य में लगे होने के कारण उस जीव के पुण्यकर्म का (अच्छे भाग्य) बन्ध अपने आप होता है। और जो पवित्र परमात्मा की निन्दा करता है उसके परिणाम, वचन अशुभ बुराई में सने हुए–होते हैं इस लिये उसको पापबन्ध होता है।"

श्री समन्तभद्राचार्य ने श्री वासुपूज्य तीर्थङ्कर की स्तुति में कहा है —

'न पूजयार्थस्त्वयि वीतरागे, न निन्दया नाथ विवान्तवैरे।
तथापि तं पुण्यगुणस्मृतिर्नः पुनाति चित्तं दुरिताञ्जनेभ्यः॥'

इस श्लोक का अभिप्राय ऊपर लिखे अनुसार ही है।
यह कथन यथार्थ (बिल्कुल ठीक) है अतः सिद्धान्त है।

परन्तु अपने पूज्य परमात्मा के साथ गहरा अनुराग (प्रेम) रखने वाला पुरुष जब उसकी भक्ति में लीन हो जाता है तब वह अपने आपको, भगवान के यथार्थ रूप को तथा सिद्धान्त को भूल जाता है। वह परमात्मा के साथ निकट सम्पर्क (नजदीकी रिश्ता) स्थापित (कायम) करने के लिये प्रेमवश सिद्धान्त से बाहर की भी बातें बोल जाता है। जैसे कि—

"हे भगवन्! तुम तीन लोक के स्वामी हो, सबके दुखहर्ता सुखकर्ता हो, आपने सीता, अंजना, चन्दना, श्रीपाल आदि के दुख दूर किये मैं भी आपका सेवक हूं मेरे भी कष्ट मिटा दो, मेरे

दोषों का विचार मत करो, मैं महा दुर्जन, पतित पापी हूं, आप पतित पावन हैं मुझे दुख सागर से पार लगा दो। आदि"—

भक्ति-भाव मे कही हुई ये बाते सत्य नहीं है, गलत है क्योंकि परमात्मा ने किसी का भला बुरा नहीं किया, भला बुरा अपने कमाये पुण्य पापके अनुसार ही होता है। किन्तु भगवान की भक्ति करने वाले का मन, वचन, काय संसार की अन्य बातों की ओर से हटकर अच्छी बात की ओर लगा हुआ होता है इसलिये भक्ति से निकले हुए वे शब्द अशुद्ध (गलत) होते हुए भी पुण्य कर्म का बंध करा देते हैं। जिससे संकट दूर होते हैं, सुख सम्पत्ति मिलती है।

सिद्धान्त और भक्ति मे यही अन्तर है।

मन्दिर में आने का ढंग

प्रातः सूर्योदय से पहले उठकर, पहले हाथ पैर धोकर सामायिक करनी चाहिये कम से कम २७ या ६ बार णमोकार मंत्र पढ़ना चाहिये। उसके पीछे शौच (टट्टी, पेशाब) से निबट कर दन्तधावन (दान्तौन) करके मुख धोना चाहिये। इसके बाद यदि धुला हुआ पवित्र धोती दुपट्टा घरपर हो तो उसे पहन कर, खड़ाऊं पहन कर मन्दिर जी मे जाना चाहिये। जो व्यक्ति पूजन न करना चाहे उसे भी नहा धोकर शुद्ध वस्त्र पहन कर हाथ में लौंग चावल आदि लेकर दर्शन करने के लिये बड़ी भक्ति और विनय से मन्दिर मे आना चाहिये। अपने आपको धन्य समझना चाहिये कि मेरे नेत्र, पैर हाथ आदि इस योग्य हैं कि मैं मन्दिर जी में आकर भगवान का दर्शन कर सकता हूं।

पांच परमेष्ठी ५, जिनप्रतिमा (चैत्य) ६, चैत्यालय (मंदिर) ७, जिनधर्म ८, और जिनवाणी (शास्त्र) ६, ये ६ देवता माने

गये है। अत: धर्मस्थान मंदिर को भी नमस्कार करना चाहिये अकृत्रिम, कृत्रिम चैत्यालयों (मनुष्य के बनाये हुये मंदिरों) की भी पूजा की जाती है। मन्दिर की पवित्रता स्थिर (कायम) रखना, मन्दिर मे अशुद्ध दशा मे नहीं जाना, वहा पर अविनय का कोई काम न करना, चैत्यालय भक्ति का अंग है। इस कारण मन्दिर मे शारीरिक शुद्धता करके जाना चाहिये। मन्दिर मे पहुंच कर बाहर जूते (यदि जुराबें पहनी हुई हों तो वे भी) उतार दे फिर हाथ पैर धोकर भीतर जाना चाहिये। सूतक पातक के समय भी नहा धोकर मन्दिर जाना चाहिये किन्तु उस दशा मे न तो मन्दिर जी के भीतर वेदी मे जाना चाहिये, न शास्त्रों का, गन्धोदक का स्पर्श करना चाहिये। रजस्वला स्त्री को मन्दिर जी में न आना चाहिये। इसके सिवाय मासभक्षी, मद्यपायी, गलित-कुष्ठी, रक्तस्रावी (जिसके शरीर से खून बह रहा हो) पागल व्यक्ति को भी मन्दिर मे न आना चाहिये।

दर्शनार्थी (दर्शन करने वाले) को श्री जिनेन्द्र देव के सामने पहुचते हुए 'निःसहि निःसहि नि सहि' कहना चाहिये (इसका अभिप्राय यह है कि यदि कोई व्यक्ति (देव, मनुष्य) दर्शन कर रहा हो तो 'निःसहि' शब्द सुनकर एक ओर हट जावे, दर्शन करने के लिये स्थान दे देवे)। तदनन्तर भगवान के सामने पहुचकर बहुत विनय से हाथ जोड कर तीन आवर्त (जोडे हुए हाथों को गोल रूप से घुमाना) करके मस्तक झुकाकर नमस्कार करे और णमोकार मत्र पढे। तथा—

'उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले, जिनगृहे जिननाथमहं यजे॥'

अथवा अन्य कोई पद्य पढ़कर हाथ में लिये हुए चावल आदि को भगवान के सामने चढ़ावे। फिर धोक देने के लिये

अष्टांग (भगवान के सामने दंडाकार लेट कर) अथवा पंचांग (घुटने के बल, जोड़े हुए हाथों और मस्तक पृथ्वी को छूता हुआ) नमस्कार करे ।

उसके बाद खड़ा होकर किसी स्तोत्र को पढ़ना प्रारम्भ करे और हाथ जोड़कर वेदी के चारों ओर अपने बांये ओर से तीन परिक्रमा दे । जहां ऐसी वेदी न हो वहां भगवान के सामने ही स्तोत्र पढ़ता रहे ।

मन्दिर समवशरण की ही प्रतिकृति (नकल) है समवशरण में श्री अर्हन्त भगवान का मुख चारों ओर दीखता है। और वेदी के चारों ओर प्रदक्षिणा देने के लिये खुला हुआ स्थान होता है अतः दर्शनार्थी समवशरण मे चतुर्मुख भगवान का वेदी के चारों ओर घूम कर दर्शन करता है। तीन वार प्रदक्षिणा देने का अभिप्राय मन, वचन, काय तीनों योगों की विनय को प्रगट करना है ।

समवशरण के अनुरूप ही मन्दिर जी मे वेदी की तीन प्रदक्षिणा की जाती है ।

प्रदक्षिणा देने से बाद भगवान के सामने आकर पूर्वोक्त रूप से धोक देवे । फिर मन्दिर जी में यदि और भी वेदियां हों तो उनके दर्शन भी इसी ढंग मे करे। दर्शन कर लेने के बाद भगवान के अभिषेक का गन्धोदक

"निर्मलं निर्मलीकारं, पवित्रं पापनाशकम् ।
जिनगन्धोदकं वंदे, अष्टकर्मविनाशकम् ।।"

अथवा

निर्मल से निर्मल अती, अघनाशक सुखसीर ।
वंदूं जिन अभिषेक कृत, यह गंधोदक नीर ।।

पढ़कर अपने शिर, मस्तक, नेत्र आदि उत्तम अंगों (नाभि से ऊपर) से लगावे।

गन्धोदक नाम क्यों हुआ

तीर्थङ्कर देव का शरीर सुगंधित होता है, अतः उनके अभिषेक का जल भी सुगंधित हो जाता है। उसी के अनुरूप इस प्रक्षाल जल को भी गन्धोदक (गंध=सुगंधित,+उदक (जल)= गन्धोदक) कहते हैं।

तदनन्तर जहां शास्त्र विराजमान हों वहां पर बहुत विनय से शास्त्रों को नमस्कार करे।

फिर किसी एकान्त स्थान में पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके खड़े होकर या बैठ कर सामायिक करे।

सामायिक करने का संक्षेप ढंग यह है कि पूर्व दिशा की ओर मुख करके खड़ा होवे, ६ बार णमोकार मंत्र पढ़े फिर धोक देवे पश्चात् खड़ा होकर फिर शिरोनति (जोड़े हुए हाथों पर शिर झुकाना) करे फिर दाहिने ओर घूमकर दक्षिण दिशा की ओर मुख करके तीन बार णमोकार मंत्र पढ़कर तीन आवर्त, एक शिरोनति करे फिर दाहिनी ओर घूमकर पश्चिम दिशा की ओर मुख करके ३ बार णमोकार मंत्र पढ़कर तीन आवर्त और एक शिरोनति करे। फिर दाहिनी ओर घूमकर उत्तर दिशा की ओर मुख करके उसी प्रकार तीन बार णमोकार मंत्र पढ़कर तीन आवर्त और एक शिरोनति करे। इसके पीछे पूर्व दिशा की ओर खड़े होकर या पद्मासन में बैठकर सामायिक करे।

सामायिक क्या वस्तु है

संसार के सब पदार्थों से तथा अपने शरीर से भी मोह (राग द्वेष) त्यागकर, तथा पांचों पापों का त्याग करके समताभाव धारण

करना सामायिक कहलाता है। सामायिक के समय परिणामों को मोहभाव से दूर रखने के लिये सामायिक पाठ, वैराग्य भावना बारह भावनाओं का चिन्तवन, आत्मस्वरूप का मनन, पंच परमेष्ठी का विचार आदि में अपने मन की परिणति लगानी चाहिये।

सामायिक करते समय यों विचारना चाहिये कि—

"मैं एक चेतन आत्मा हूं, संसार के सब जड़ पदार्थ धन, घर आदि, चेतन पदार्थ पुत्र स्त्री मित्र आदि यहां तक कि मेरा शरीर भी अपना नहीं है, मुझसे अलग है।

मैं अकेला सुख दुख भोगता हूं उसमें कोई भी सम्मिलित नहीं होता, अपना मतलब सिद्ध करने के लिये मेरे मित्र, संबंधी मुझ से प्रेम करते हैं किंतु उनका मतलब बनाने के लिये मैं जो झूठ, कूट कपट से रुपया पैसा कमाता हूं उस पाप का जब मुझे दुखदायक फल मिलेगा तब मेरा मित्र पुत्र स्त्री आदि उस दुख में भाग (हिस्सा) लेने नहीं आवेंगे, मरकर मैं अकेला ही नरक जाऊंगा।

इस जीवन का कुछ विश्वास नहीं कब समाप्त हो जावे इसलिये मुझे धर्मसाधन करने में देर न करनी चाहिये। मेरा सच्चा मित्र धर्म है और सच्चा बैरी पाप है और कोई शत्रु मित्र नहीं है। धर्म ही दुख में बचाता है और पाप ही दुख में डुबाता है।

अर्हन्त, सिद्ध, तीर्थङ्कर भी मेरे समान ही प्राणी थे उन्होंने दोष, पापों, से बचकर अपने कल्याण की ओर ध्यान लगाया तभी वे संसार के पूज्य बन गये यदि मैं भी ऐसा करूं तो मैं भी संसार का पूज्य तीर्थङ्कर, अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु बन सकता हूं। इत्यादि।"

णमोकार मंत्र आदि मंत्र का जाप देना चाहिये। शरीर का हलन चलन बंद रखकर, मौन भाव से सामायिक करना चाहिये।

अपने हाथों में जाप देने का ढंग यह है पहले मध्यमा (बीच की) उङ्गली के बीच के पोरुए पर, फिर उसी उङ्गली के ऊपरी पोरुए पर, फिर तर्जनी (अंगूठे के पास वाली) उङ्गली के ऊपर के, फिर उसी उङ्गली के बीच के, फिर नीचे के पोरुए पर अंगूठा रखता हुआ मंत्र पढ़ता जावे, इसके बाद बीच की उङ्गलीके निचले पोरुए पर मंत्र पढ़े, फिर अनामिका (सबसे छोटी उङ्गली के साथ वाली) उङ्गली के निचले पोरुए, बीचके तथा ऊपरले पोरुए पर क्रमसे अंगूठा रखकर मंत्र पढ़े। इसी प्रकार फिर बीच की उङ्गली के बीच के पोरुए से प्रारम्भ करे। इस तरह ९-९ बार मंत्र जपता रहे ऐसे १२ बार जपने से १०८ बार की पूरी जाप हो जाती है।

हृदयमें कल्पित आंठ पांखुरी और कर्णिका का यह अनुरूप है।

जाप करने के लिये कुछ मन्त्र ये हैं

१ अक्षर का मन्त्र—ॐ

२ „ „ —ॐ ह्रीं, सिद्ध, अर्हं

४ „ „ —अरहंत, असिसाहू, आदिनाथ, महावीर

५ „ „ असिआउसा

६ „ „ अरहंतसिद्ध

९ „ „ ॐ ह्रीं असिआउसा नमः

१० „ „ ॐ ह्रीं क्लीं असिआउसा नमः

११ „ „ ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः

१६ „ „ अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः

३५ „ „ णमोकार मन्त्र (इत्यादि)

समस्त मन्त्रों में मुख्य णमोकार मन्त्र है इस मन्त्र के श्रद्धा पूर्वक जाप से सब संकट टल जाते हैं। यह अनुभूत बात है।

अन्त में खड़े होकर ६ बार णमोकार मन्त्र पढ़कर उसी पूर्व दिशा में धोक देनी चाहिये।

आत्मशुद्धि का सबसे प्रधान कारण सामायिक है।

सामायिक कर लेने पर शास्त्रस्वाध्याय करना चाहिये। प्रथमानुयोग (पुराण कथा), चरणानुयोग (मुनि, गृहस्थ का आचार सम्बन्धी), द्रव्यानुयोग (जीव अजीव आदि द्रव्यों का निरूपण करने वाले), करणानुयोग (लोक अलोक, काल निरूपक) शास्त्रों में से अपनी रुचि के अनुसार किसी भी शास्त्र को स्वयं पढ़ना, पढ़ाना, सुनना सुनाना या पाठ करना स्वाध्याय कहलाता है। स्वाध्याय करने से आत्मा, अनात्मा, परमात्मा, संसार, मोक्ष, पाप पुण्य आदि अवश्य जानने योग्य बातों का ज्ञान सहज में हो जाता है। हृदय का अन्धकार हट जाता है, प्रकाश फैलता जाता है।

इसलिये जिन युवक, वृद्ध पुरुष स्त्रियों को पुस्तक पढ़ने का अभ्यास हो उनको अपनी रुचि के अनुसार पद्मपुराण, रत्नकरंडश्रावकाचार, मोक्षमार्गप्रकाश, पद्मनंदिपंचविंशतिका आदि शास्त्र स्वयं पढ़ना चाहिये जो न पढ़े हों उनको शास्त्र सुनना चाहिये।

शास्त्र स्वाध्याय करके अन्त में फिर श्री जिनेन्द्र देव को नमस्कार करके मन्दिर से जाना चाहिये।

पूजनार्थी

जो भाई पूजन करना चाहते हों वे या तो अपने घर पर शुद्ध धुले धोती दुपट्टे, बनियान का प्रबन्ध रक्खें और प्रातःकालीन नित्य नियम (शौच) दन्तधावन, तैलमर्दन आदि से निवृत्त होकर शुद्ध छने हुए जल से स्नान करके उन शुद्ध वस्त्रों को पहनें।

यदि पूजन सामग्री उनके घर पर हो तो उसको भी शुद्धता के साथ बनाकर, उसको वस्त्र से ढककर, लकड़ी की खड़ाऊं पहन कर मन्दिर जी में आवें। यदि घर पर सामग्री का प्रबन्ध न हो तो पूजन सामग्री मन्दिर जी में आकर तयार करें। तथा यदि घर पर शुद्ध वस्त्रों की व्यवस्था न हो तो स्नान की व्यवस्था भी मंदिर जी में रक्खें जैसा कि आज कल प्रायः होता है।

मन्दिर जी में या मन्दिर के आस पास जलकूप (कुवां) होना आवश्यक है जिससे जल भर कर मन्दिर में लाया जावे और और उस जल की जिवानी तले में कुण्डेदार बालटी या लोटे में डालकर उस कुएं में पहुँचा दी जावे।

स्नान करने का जल मन्दिर का नौकर भी ला सकता है। उसको छानकर स्नान के काम में लाना चाहिये। पूजा करने वाले को मन्दिर में आकर पहले स्नान करना चाहिये। कुछ भाई मन्दिर में कुरला दांतन भी किया करते हैं किन्तु ऐसा करना उचित नहीं क्योंकि मन्दिर एक पवित्र स्थान है वहां पर थूक, नासिकामल आदि डालना अनुचित है।

स्नान करके मन्दिर में रखे हुए शुद्ध धोती चादर पहने। बहुत से भाई धोती का आधा भाग पहन कर उसी का शेष आधा भाग ओढ़ लेते हैं सो अनुचित है क्योंकि अधोवस्त्र (धोती) शरीर के निचले अंग उपांग ढांकने का वस्त्र है, वे अंग अशुद्ध माने गये है, उन अंगों के आच्छादन वस्त्र को शिर पर रखना योग्य नहीं। अतः शिर पर ओढ़ने का दुपट्टा अलग होना चाहिये।

वस्त्र पहनकर यदि मुकुट हार हों तो वह भी पहन लेने चाहिये क्योंकि पुजारी सौ धर्म इन्द्र का प्रतिरूप माना जाता है। इन्द्र खूब सज धज कर सुन्दर आकर्षक रूप में भगवान की भक्ति पूजन करता है उसीका यथासंभव अनुकरण पुजारी को करना

चाहिये। तिलक, कुंडल, कंकण, हार अंगूठी के सूचक चंदन की रेखा माथे कान, कलाई, गले, उंगली पर लगाना चाहिये। शिर पर चादर ओढ़ लेनी चाहिये—नंगे शिर न रहना चाहिये।

वस्त्र पहन लेने के बाद पूजन सामग्री तयार करनी चाहिये। सामग्री धोने के लिये पुजारी को मन्दिर के लोटा डोल आदि शुद्ध बर्तन में कुए से जल भर कर लाना चाहिये। जल को शुद्ध साफ दुहरे वस्त्र से या तो कुएं पर छान कर लेना चाहिये और उसकी जिवानी वहीं कुएं में डाल आना चाहिये अथवा वहां सुविधा न हो तो मन्दिर में जल लाकर छान लेना चाहिये और उसकी जिवानी उसी कुएं में कुण्डेदार बालटी से डाल देनी चाहिये। छने हुये जल में दोघड़ी (४८ मिनट) बाद फिर त्रसजीव पैदा हो जाते हैं यदि उस छने जल में लोंग डाली जावे तो कई घंटे तक जीव उत्पन्न नहीं होते हैं अतः छने हुए जल में लोंग डाल देनी चाहिये।

पूजन के अष्ट द्रव्य

देव शास्त्र गुरु की पूजा करने के लिये आठ द्रव्य होते हैं— १ जल, २ चन्दन, ३ अक्षत (बिनाटूटे हुए सफेद चावल), ४ पुष्प (फूल), ५ नैवेद्य (पकवान), ६ दीप ७ धूप, और ८ फल। इन आठों द्रव्यों को मिलाकर अर्घ बनता है अतः उसको अलग द्रव्य नहीं माना गया।

तेरह पंथ और बीस पंथ

प्रसंग अनुसार यहां संक्षेप में तेरह पंथ और बीस पंथ का उल्लेख कर देना आवश्यक है।

लगभग वि० सं० १२०४ में जबकि भारतवर्ष पर मुसलमानों का शासन था। देहली में एक महासेन नामक दिगम्बर (नग्न) जैन

मुनि थे, वे बड़े विद्वान् प्रभावशाली साधु थे। उस समय का मुसलमान बादशाह, उसके मंत्री आदि भी उनके दर्शन किया करते थे।

एक बार बादशाह की बेगमों ने भी उन मुनि महाराज के दर्शन करने की इच्छा प्रगट की किन्तु नग्न होने के कारण वे दर्शन नहीं कर पाईं। तब बादशाह ने मुनि महाराज से प्रेरणा की कि आप एक कपड़ा ओढ़ लें जिससे हमारी बेगमें आपका दर्शन कर सकें।

इस पर उन मुनि महाराज ने स्वयं तो वस्त्र न पहना और इसी कारण वे वन में चले गये किन्तु अपने शिष्य को कह गये कि 'यह समय बहुत विकट है इस समय नग्न वेश में रहना कठिन है। अतः धर्मरक्षा के उद्देश से जैन संघ को संगठित रखने के लिये तुम वस्त्र पहन करके जैन गुरु बनो।' उनके शिष्य ने ऐसा ही किया।

तदनुसार उस नग्न वेश को छोडकर, कपड़ पहन कर जैनगुरु बनने वाले का नाम 'भट्टारक' रक्खा गया। और उसने देहली में अपना पट्ट (गद्दी) स्थापित किया। देहली के अनुसार गुजरात, दक्षिण भारत आदि अन्य प्रान्तों तथा नगरों में भी भट्टारकों की गद्दी स्थापित हुई।

भट्टारक बनने का ढंग वैसा ही रहा। यानी भट्टारक बनने से पहले वे नग्न होते थे फिर उनके शिष्य कहते थे कि 'महाराज! यह समय बहुत विकट है, इस समय नग्न साधुचर्या नहीं हो सकती अतः आप वस्त्र पहन लीजिये।' ऐसा निवेदन सुनकर वे कपड़े पहन लेते थे। इस तरह पट्टधर वस्त्रधारक, बालब्रह्मचारी जैनगुरु 'भट्टारक' नाम से प्रचलित हुए।

भट्टारक अखंड ब्रह्मचारी, बड़े विद्वान, प्रभावशाली होते रहे

उन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की है किन्तु उनमें कहीं भी ऐसा विधान नहीं किया है कि 'महाव्रती साधु वस्त्रधारक भी हो सकता है।' जैनसंघ की रक्षा के लिये वे अपने समय में पूर्ण सावधान रहे। जैन मन्दिरों, शास्त्र भंडारों की रक्षा करते रहे और मंत्र तंत्रादि के वेत्ता (जानकार) होते रहे। अनेक प्रकार के चमत्कार दिखला-कर तत्कालीन राजाओं, बादशाहों को प्रभावित करते रहे।

किन्तु लगभग ५०० वर्ष बीत जाने पर उनका आचार शिथिल होने लगा और वे अपने भक्त श्रावकों को तंग करने लगे। यहाँ तक कि कोड़ों से मार लगवाकर अपने भक्तों से कर (टैक्स) के रूप में द्रव्य एकत्र करने लगे। परिग्रह में बहुत आसक्त हो गये, आत्म तेज उनमें न रहा।

तब सं० १७०० में कामा (मथुरा) में भट्टारकों के विरुद्ध गृहस्थ जैनों का एक दल उठ खड़ा हुआ। उस दल ने घोषणा कर दी कि "पंच महाव्रतधारी, नग्न दिगम्बर साधु ही जैन गुरु हो सकता है, भ्रष्ट रूप में रहने वाले वस्त्र, धन आदि परिग्रहलिप्त भट्टारक जैनगुरु नहीं हैं।"

यह विद्रोह उत्तर भारत में प्रायः सर्वत्र फैल गया और वहाँ सब स्थानों पर भट्टारकों की अमान्यता तेजी से फैलने लगी। कुछ लोग उस समय भी भट्टारकों के अनुयायी बने रहे।

जो लोग भट्टारकों को गुरु मानते थे वे 'बीस पंथी' कहलाये और जिन्होंने भट्टारकों को गुरु मानने का निषेध कर दिया वे 'तेरहपंथी' कहलाये।

"पांच महाव्रत, पांच समिति और तीन गुप्ति इन तेरह प्रकार के चारित्र धारक निर्ग्रन्थ मुनि को अपना गुरु मानने वाला दल तेरह पंथ कहलाता है।" ऐसी एक बात कही जाती है किन्तु यह बात ठीक नहीं जंचती क्योंकि एक तो निर्ग्रन्थ साधु को बीसपंथ

समुदाय भी अपना गुरु मानता है। दूसरे तेरहपंथ का यदि यही अभिप्राय है तो बीसपन्थ का क्या अभिप्राय है? इसका कुछ समाधान नहीं। अतः तेरहपंथ बीसपंथ शब्द का यौगिकअर्थ क्या है यह बात अभी तक अज्ञात है।

तेरहपंथी समुदाय ने भट्टारकों को गुरु न मानने के सिवाय पूजाविधि में कुछ परिवर्तन किया जो कि संक्षेप में यह है—

१—प्रतिमा का पंचामृत अभिषेक (घी दूध, दही, अमृत (ईख का रस) और सर्वौषध—सुगंधित द्रव्यों का जल) से नहीं करना, केवल जल से अभिषेक करना।

२—प्रतिमा का चंदन से विलेपन न करना, न उस पर चंदन की टिकी लगाना, न प्रतिमा के ऊपर फूल आदि रखना।

३—पूजन सामग्री में सचित्त (हरे) फल, फूल उपयोग में न लाना।

४—दीपक जलाकर न चढ़ाना

५—पकवान न चढ़ाना।

६—खड़े होकर पूजन करना।

बीस-पंथी समुदाय इसके विरुद्ध ढंग से पूजन करता रहा।

तेरह पंथ को पुष्ट करने वाले आगरा, जयपुर में अनेक विद्वान हुये और उन्होंने अनेक युक्तियों से उपर्युक्त बातों का बलवान समर्थन किया।

१—पंचामृत अभिषेक को भट्टारकों द्वारा संचालित प्रथा बताया और इसके विरोध में यह युक्ति दी कि घी, दूध, ईख रस आदि से अभिषेक करने पर प्रतिमा के ऊपर चींटियां आदि जन्तु आ जाते हैं, आरम्भ अधिक होता है इस कारण केवल जल से ही अभिषेक करना चाहिये।

२—प्रतिमा पर टिकी लगानें तथा विलेपन करने से प्रतिमा की वीतराग छवि में अन्तर आता है, प्रतिमा का शृङ्गार हो जाता है अतः विलेपन, टिकी न लगाना चाहिये।

३—फूलों में सूक्ष्म जन्तु होते हैं, हरित फलों में कीड़ं पड़ने आदि की संभावना रहती है, कुछ समय बाद वे सड़ने लगते हैं अतः फूलों के स्थान पर या तो सूखे प्रासुक फल अथवा केसर से रंगे हुए चावलों को फूल मानकर उनका उपयोग करना अच्छा है। फलों के लिये सूखे फल (मेवा) काम में लाना चाहिये।

४—दीपक जलाने में उसके ऊपर आये हुए या आसपास उड़ने वाले मक्खी आदि जन्तुओं के घात की संभावना है अतः दीपक के स्थान पर रंगे हुए नारियल के छोटे छोटे टुकड़े (चटके) काम में लेना उपयोगी है।

५—पकवान बनाने में आग जलाना, कढ़ाई चढ़ाना, खांड गलाना आदि बहुत आरम्भ करना पड़ता है अतः उसके स्थान पर बिना रंगे नारियल की गिरी के टुकड़े काम में लाना चाहिये।

६—बैठ कर पूजा करने से विनय भाव में कमी होती है, सुखासन होने से बैठकर पूजन करने में प्रमाद भी आता है अतः खड़े होकर पूजन करना उचित है। इत्यादि।

'तेरहपंथ ठीक है या बीसपंथ' हम इस विवाद को यहां नहीं लेते इसका निर्णय पाठकों के ऊपर छोड़ते हैं, किन्तु इतना लिखना अनुचित भी नहीं समझते कि पूजन ग्रन्थों में–वे चाहे प्राचीन हों अथवा तेरहपंथी विद्वानों की बनाई भाषा पूजन पाठ हों–बेला, चमेली, कमल आदि के फूल चढ़ाने एवं आम, केला आदि फलों के चढ़ाने का विधान पाया जाता है, कपूर को जला कर अथवा घी के दीपक चढ़ाने के छन्द भी प्रायः प्रत्येक पूजा में विद्यमान हैं। ऐसी ही बात नैवेद्य के विषयमें हैं घेवर, खाजा,

फैनी, लाडू आदि पकवान चढ़ाने का उल्लेख सब पूजाओं में मिलता है।

इसके विपक्ष-लोगों में प्रमाद बहुत आ गया है अन्य सांसारिक कार्यों की अपेक्षा धर्म कार्य में समय थोड़े लगाने की आदत पड़ गई है अतः लोग सचित्त फल, फूल नवेद्य लाने में शुद्धता प्रासुकता का विचार बहुत कम रखते हैं, जैसा हाथ लगा वैसा फल फूल खरीद लाये उन में जीव जन्तु आदि का विचार न किया, मिठाई तयार कराने में पवित्रता का विचार न रक्खा।

इन सब बातों के प्रकाश में तेरहपंथ और वीसपंथ को विचार करके हठवाद, खींचतान, विवाद को छोड़कर शुद्ध, शान्त मार्ग अपनाना चाहिये, अपनी त्रुटियों का संशोधन करना चाहिये, गतानुगतिक (लकीर का फकीर) न बनना चाहिये। विवेक (गुण दोष का विचार) को काम में लेकर तेरहपंथ और वीसपंथ को अपनी त्रुटि का सुधार करके प्रेम और शांति से एक दूसरे के निकट आना चाहिये।

पूजा की सामग्री

हम यहां तेरहपंथ आम्नाय के अनुसार अष्ट द्रव्यों का संक्षेपमें विवरण देते हैं।

१—जल-छना हुआ शुद्ध 'जल' पूजा करने की पहली द्रव्य है।

२—चंदन-केसर या हार सिंगार के साथ घिसे हुए चंदन को जल में मिलाकर रखना 'चंदन' द्रव्य है।

३—अक्षत-शुद्ध जल से धोये हुए सफेद चावल 'अक्षत' द्रव्य है।

४—पुष्प-केसर चंदन से रंगे हुए चावल अथवा त्रस जीवों से रहित शुद्ध फूल 'पुष्प' द्रव्य है।

५—नैवेद्य—छीले हुए नारियल की गिरी के टुकड़े जो कि जल से धो लिये जावें 'नैवेद्य' है। अथवा दिवाली के दिन चढ़ाये जाने वाले लाडू की तरह शुद्धता से तयार कराये हुए पकवान को 'नैवेद्य' कहते हैं।

६—दीप—नारियल के चटकों को—जिनको नैवेद्य के लिये काम में लेते हैं—यदि चंदन केसर से रंग लिया जावे तो वे 'दीप' कहलाते हैं। अथवा कपूर जला कर भी दीप होता है।

७—धूप—चन्दन चूरा, कूटी हुई लोंग, अगर, तगर आदि को 'धूप' कहते हैं। उसे भी जल से धो लेते हैं।

८—फल—बादाम किशमिश, पिश्ता आदि सूखे मेवा 'फल' हैं। उन्हें जल से धो लेना चाहिये। अथवा अंगूर आम आदि निर्दोष फल भी फल द्रव्य है।

उक्त आठों द्रव्यों को मिलाकर जो संग्रह द्रव्य होता है उसको अर्घ कहते हैं।

जल और चन्दन अलग अलग झारियों (छोटे कलशों या गिलासों) में रखना चाहिये और अक्षत, पुष्प, नैवेद्य (चरु), दीप, धूप, फल एक थाल में क्रमशः (नम्बरवार) रख लेने चाहिये थाल के बीच में जो स्थान खाली रहे वहां सब द्रव्यों को मिला कर अर्घ बना रखना चाहिये। पूजन सामग्री ठीक बना लेने पर श्री जिनेन्द्र देव का अभिषेक करना चाहिये।

अभिषेक

स्नान करने को 'अभिषेक' कहते हैं। श्री अर्हन्त देव की प्रतिमा का अभिषेक करना पूजन विधान का प्रथम अंग है। बिना अभिषेक किये द्रव्यपूजा का प्रारम्भ नहीं होता। अतः पूजा प्रारम्भ करने से पहले अभिषेक अवश्य करना चाहिये।

अभिषेक करने के लिये जिस मन्दिर में या जिस वेदी में केवल अचल प्रतिमा (बड़ी, भारी प्रतिमा-जो कि उस स्थान से हटाई न जा सके) हो उसका अभिषेक तो वहीं पर करना चाहिये, और जो प्रतिमाएँ हलकी छोटी हों उनको थाल में विराजमान करके अभिषेक करना चाहिये।

अभिषेक करने से पहले चल, अचल प्रतिमाओं को साफ शुद्ध, कोमल, सूखे वस्त्र से पोंछ लेना चाहिये जिससे प्रतिमा के ऊपर यदि धूलि-गर्द या कोई छोटे जीव जन्तु हों तो वे वहां न रहने पावें। फिर अचल प्रतिमा के शिर पर छोटे कलश या झारी से जल धारा देनी चाहिये जिससे प्रतिमा के समस्त शरीर पर जल पहुंच जावे। फिर धुले हुए, साफ शुद्ध वस्त्र से उस जल को अच्छी तरह पोंछ लेना चाहिये फिर उस वस्त्र को किसी थाल या कटोरे में निचोड़ लेना चाहिये तथा उस वस्त्र को अन्य जल से धो लेना चाहिये और उसको सुखाने के लिये किसी ऐसे स्थान में फै देना चाहिये जहां पर कोई अन्य अपवित्र व्यक्ति छू न सके, वस्त्र पवित्र बना रहे।

चल प्रतिमाओं (जो हलकी, छोटी प्रतिमाएं हैं एक स्थान से उठाकर सहज में दूसरे स्थान पर रक्खी जा सकती हैं) का अभिषेक करने के लिये वेदी के सामने मेज या चौकी को-जिस पर कि ।.९ करना हो-पहले जल से धोकर पवित्र कर लेना चाहिये उस पर थाल रखना चाहिये, थाल में एक सांथिया (स्वस्तिक) और उस सांथिये के ऊपरी भाग में आधे चन्द्र के समान आकार घिसे हुए केसर चन्दन से बना लेना चाहिये। फिर उस थाल में उन चल प्रतिमाओं को बहुत विनय और सावधानी से विराजमान करना चाहिये जब सब प्रतिमाएँ थाल में विराजमान हो जावें तब मंगल पाठ, अभिषेक पाठ पढ़ते हुए

बड़े हर्ष के साथ कलश, झारी के पवित्र जल की धारा उन प्रतिमाओंके शिरपर छोड़नी चाहिये। उस समय घंटा, घड़ियाल आदि मंगलवाद्य बजने चाहिये। अभिषेक करते समय अपने आपको धन्य समझना चाहिये कि 'मैं आज इस योग्य हूं कि अर्हन्त देव की सेवा भक्ति उनका अंग स्पर्श करते हुए कर रहा हूं।'

अभिषेक कर लेने पर प्रतिमाओं को शुद्ध सूखे वस्त्र से अच्छी तरह पोंछ लेना चाहिये और उस वस्त्र को शुद्ध जल से धो कर सुखा देना चाहिये। तथा प्रतिमाओं को यथास्थान वेदी में विराजमान कर देना चाहिये।

अभिषेक के जल को 'गन्धोदक' कहते हैं उस गन्धोदक को पवित्र और पवित्रकारक मान कर बड़े विनय और भक्ति से अपने शिर, मस्तक, नेत्र, कंठ आदि उत्तम अंगों पर लगाना चाहिये तथा उस गन्धोदक को ऐसे स्थान पर रख देना चाहिये जहां पर अन्य दर्शनार्थी भी उसको ले सकें।

पूजा का प्रारम्भ

अभिषेक कर लेने के पीछे पूजन का प्रारम्भ करना चाहिये। पूजन के लिये जो अष्ट द्रव्य तयार किये हों उनको वेदी के सामने मेज पर ला कर रखे। प्रतिमा के वाम (बांए) हाथ की ओर यानी पूर्व अथवा उत्तर दिशा की ओर मुख करके खड़ा होवे। सामग्री के पास एक थाल सामग्री चढ़ाने के लिये रक्खे उस थाल में एक सांथिया (स्वस्तिक) बनावे। थाल के ऊपर शिरोभाग में एक ठौना (ऊंची रकाबी) रक्खे उस में भी चन्दन का सांथिया बना देवे। जल, चन्दन चढ़ाने के लिये एक अन्य कलश, कटोरी आदि कोई बर्तन थाल के पास रक्खे तथा जलते हुए कोयले वाली एक धूपदानी भी वहां पर रक्खे। द्रव्य चढ़ाने के लिये (जितने पूजा करने वाले, हों उतनी) रकाबी रक्खे। जल चन्दन चढ़ाने के

लिये छोटी कटोरी रक्खे। जल चन्दन लेने के लिये जल चन्दन के कलशों में छोटी चमची रक्खे। रकाबी पोंछने के लिये एक वस्त्र भी रक्खे।

चन्दोवा

यह ध्यान रखना चाहिये कि पूजन, अभिषेक करने के स्थान पर, सामग्री बनाने के स्थान पर तथा शास्त्र बांचने के स्थान पर चन्दोवा अवश्य लगा रहना चाहिये जिससे वहां ऊपर से कोई जीव जन्तु आदि न गिरने पावे।

पूजन करने से पहले पूजा करने वाला मन वचन से यह संकल्प करे कि 'मैं इन्द्र हूं और श्रीजिनेन्द्रदेव की पूजन करता हूं। निम्नलिखित वाक्य पढ़े।

श्रीमन्त भगवन्तं अर्हन्तं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतखंडे आर्यक्षेत्रे..........नगरे मासोत्तममासे..........मासे..........तिथौ ....वासरे इन्द्रोहं पूजयामि।

फिर 'ॐ जय जय जय, नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु' आदि पढ़ता हुआ पूजन शुरू करे।

यदि समय हो तो 'विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति' आदि श्लोक पढ़ लेने पर भगवान का सहस्रनाम पाठ पढ़ना चाहिये। यदि समय न हो तो 'उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैः' आदि श्लोक पढ़कर भगवान के सहस्र (हजार) नामों को अर्घ चढ़ावे।

फिर स्वस्ति मंगल पाठ 'क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो' आदि श्लोक तक पढ़े और पुष्प चढ़ाता जावे। स्वस्तिमंगल विधानके बाद अपनी रुचि और सुविधा के अनुसार देवशास्त्र गुरु की संस्कृत या भाषा पूजा करे। उसके बाद विद्यमान (मौजूदा) वीस तीर्थङ्करों (विदेह क्षेत्र में इस समय मौजूद) की पूजा करे फिर

कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालयों की पजा करे या उनको अघ चढ़ावे। फिर सिद्ध पूजा करे।

ये चार पूजाऐं तो प्रतिदिन अवश्य करनी चाहिये इसी कारण इनको 'नित्यनियम पूजाऐं' कहते हैं। नित्यनियम पजा के बाद जैसी सुविधा हो तदनुसार चौवीस तीर्थङ्करों की समुच्चय पूजा, मूलनायक प्रतिमा की पूजा वा किसी अन्य तीर्थङ्कर की पूजा, सप्त ऋषि पूजा, या कोई और नैमित्तिक पजा करे। पर्व दिनों में पव पूजा अवश्य करे।

पूजा के पांच अग होते हैं १– आह्वान (पूज्य देव आदि को 'अत्र अवतर अवतर संवौषट्' कहते हुए बुलाना) २–स्थापन (पूज्य–जिसकी पूजा करनी है उसको 'अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः कहते हुए स्थापन करना) ३–सन्निधिकरण 'अत्र मम सन्निहितो भव भव' करते हुए पूज्य को अपने हृदय के निकट करना (ये तीनों क्रियाऐं ठौना में पुष्प क्षेपण करते हुए की जाती है) ४– पूजन (आठों द्रव्य चढ़ाते हुए पूजा करना) ५–विसर्जन (पूजा कर चुकने पर शांति पाठ पढ़कर 'ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि' आदि विसर्जन पाठ पढ़ते हुए पूजन विधि समाप्त करना)। तदनुसार पूजा कर लेने के बाद पुष्प वर्षाते हुए शान्ति पाठ पढ़ना चाहिये शान्ति पाठ में 'करोतु शांति भगवान् जिनेन्द्रः' वाक्य तीन वार बोलते हुए बचे हुए जल चंदन को चढ़ा देना चाहिए।

विसर्जन के बाद भगवान की स्तुति पढ़नी चाहिये अन्य वेदियों पर अर्घ चढ़ाना चाहिये। अंत में ठौना के पुष्पों को पवित्र समझते हुए।

"श्रीजिनवर की आशिका, लीजे शीश चढ़ाय।
भव भवके पातक कटें, विघन दूर हो जांय॥"

पढ़कर उन पुष्पों को मस्तक से लगावे। और चावलों को

किसी पवित्र स्थान पर रखदे अथवा धूपदानी के अँगारों में रख देवे जिससे उनका अविनय न होने पावे।

पूजन कर लेने पर सामायिक, स्वाध्याय करे फिर पूजन के वस्त्र उतारकर अपने घर के वस्त्र पहने और पूजन के धोती डुपट्टे धोकर सुखा देवे।

आठद्रव्य समर्पण करने (चढ़ाने) का अभिप्राय।

१—जल चढ़ाते हुए अपना यह अभिप्राय प्रगट किया जाता है कि जिस प्रकार जल स्वयं उज्ज्वल निर्मल पदार्थ है और दूसरे मैले पदार्थों का (वस्त्र शरीर आदि का) मैल हटा देता है, उनको निर्मल कर देता है, उसी प्रकार मेरे जन्म, जरा (बुढ़ापा) और मृत्यु रूप आत्मा के मैल दूर हो जावें, मैं निर्मल अजर अमर बन जाऊं। अतः आपको जल समर्पण करता हूँ।

२—चन्दन एक शीतल (ठंडा) पदार्थ है, शरीर की गर्मी दूर करने के लिये चन्दन को घिसकर शरीर पर लेप किया करते हैं। यह आत्मा सांसारिकसंताप—आकुलता, अनेकप्रकारकी चिन्ताओं की गर्मी से सदा व्याकुल रहता है। वह सांसारिक सन्ताप दूर करने के अभिप्राय से मैं आपके सामने चन्दन समर्पण करता हूं।

३—धान से निकले हुए चावल जिस प्रकार फिर नहीं उग सकते, अक्षय रहते हैं उसी प्रकार मुझे भी अक्षय पद मिल जावे, कर्म मुझे किसी भी तरह क्षति-हानि न पहुँचाने पावें इस अभिप्राय से मैं अक्षतों (बिना टूटे चावलों) को चढ़ाता हूं।

४—संसार में कामवासना सबसे प्रचंड अदम्य (न रुक सकने वाली) वासना है। फूलों की सुगंधि (खुशबू) से काम विकार (काम की मस्ती) अधिक बढ़ता है इसी कारण फूलों को कामदेव का बाण (तीर) कहते हैं। मैं अपनी कामवासना (मैथुन संज्ञा) नष्ट करने के लिये फूलों को चढ़ाता हूं।

५—संसार में क्षुधा (भूख) एक भयानक रोग है इसी को शांत करने के लिये संसारी जीव अन्न, फल, पकवान आदि अनेक तरह के पदार्थ खाते हैं किन्तु उनसे कुछ देर की शान्ति होती है फिर भूख सताने लगती है, यह भूख फिर कभी न सतावे। इस अभिप्राय से मैं नैवेद्य चढ़ाता हूं।

६—जिस प्रकार बाहरी अन्धकार (अंधेरे) से बाहरी पदार्थ नहीं दीख पड़ते उसी प्रकार मोह भाव के कारण आत्मा नहीं दीख पड़ता, यानी मोह से आत्मा संसारी पदार्थों में फँसा रहता है अपनी ओर दृष्टि नहीं डालता। उस मोह रूपी अँधेरे को दूर करने के लिये मैं प्रकाश करने वाले दीपक को चढ़ाता हूं।

७- संसार में अग्नि समस्त पदार्थों को भष्म कर देती है मैं अपने आठों कर्मों को भष्म (नष्ट) करना चाहता हूं इस कारण अग्नि में धूप के रूप में अपने कर्म जलाने के अभिप्राय से धूप चढ़ाता हूं।

८—फल कुछ समय तक आनन्द देते हैं मुझे ये फल नहीं चाहियें मैं मोक्षरूपी फल चाहता हूं उस मोक्षरूपी फल को पाने के अभिप्राय से मैं फल चढ़ाता हूं।

इस प्रकार आठ द्रव्य चढ़ाने का पृथक्-पृथक् अभिप्राय है। आठों द्रव्यों को मिलाकर जो अर्घ बनाया जाता है वह अनर्घ (अमूल्य) पद यानी मुक्तिपद पाने के मतलब से चढ़ाया जाता है।

विभिन्न पूजाओं का संक्षिप्त विवरण

अर्हन्त देव रागद्वेष रहित वीतराग होते हैं अतः वे पूजा करने से किसी पर न प्रसन्न होते हैं और न, पूजा न करने वाले पर अथवा निन्दा करने वाले पर अप्रसन्न–रुष्ट होते है। यानी न वे किसी का कोई कार्य सिद्ध करते है और न किसी का कुछ विगाड़ते हैं किन्तु उनका दर्शन, अभिषेक, पूजन, भक्ति करते समय भक्त के वचन काय की क्रिया शुभ होती है उस शुभ परिणति के कारण उसके शुभ—पुण्यकर्मों का वंध होता है और उन शुभ कर्मों का उदय होने पर उस भक्त जीव को सुख शांति की सामग्री प्राप्त होती है, परभव में अच्छा ऊंचा सुख-सम्पन्न परिवार मिलता है-यानी भगवान की भक्ति से उपार्जित शुभकर्मों में के उदय से इस भव में तथा परभव में दुख संकट दूर होकर सुखसम्पत्ति प्राप्त होती है। यदि इस भव में वह शुभ कर्म उदय न आया तो परभव में अवश्य आता है।

इसके सिवाय कुछ ऐसी अतिशय-युक्त प्रतिमायें भी होती हैं जिनके भक्त देव भी होते हैं वे देव भी कभी कभी उस प्रतिमा की भक्ति करने वाले स्त्री पुरुषों को उनकी मनःकामना पूर्ण करने में सहायता देते हैं जैसे कि कलिकुण्ड के पार्श्वनाथ, महावीर जी के भगवान महावीर आदि।

किन्तु पूजा भक्ति करते समय कोई इच्छा न रखनी चाहिये क्योंकि सुखसम्पत्ति-दायक पुण्य कर्म का बंध विना कुछ इच्छा किये भी अवश्य होगा। अतः जैसे पेड़ के नीचे जाकर पेड़ से छाया मांगना व्यर्थ है उसी तरह पूजा करके सुखसम्पत्ति मांगना भी व्यर्थ है वह तो विना मांगे भी मिलेगी ही।

अतः जब कोई कष्ट, विपत्ति, व्याकुलता, क्लेश, चिंता आदि

हो तब बड़ी शांति और श्रद्धा से अपनी रुचि के अनुसार भग-वान की पूजा करे। मिथ्या कुदेवों की भक्ति पूजा मनौती से न तो पुण्य बंध होता है, न शांति प्राप्त होती है उलटा मिथ्यात्व के कारण पापबंध होता है।

इस कारण रक्षाबंधन, दीपावली (दिवाली) आदि त्यौहारों के चालू होने का ठीक कारण समझ कर (जैसा कि आगे लिखा गया है) उन त्यौहारों पर मिथ्यात्व-वर्द्धक कोई काम न करने चाहिये। उस समय जिस प्रकार जिसकी पूजा करना बतलाया है वही पूजा करनी चाहिये।

रक्षाबंधन के समय अकम्पनाचार्य संघ के ७०० मुनियों की तथा विष्णुकुमार मुनि की पूजा करके और उनकी कथा सुनकर रक्षा सूत्र (मुनिसंघ की रक्षा की याद दिलाने वाला सूत) हाथमें बांधना चाहिये। सेमरियों का भोजन करना चाहिये किंतु इसके सिवाय भींत पर लकीरें खींच कर उनको पूजना–जैसा कि कुछ स्त्रियां करती हैं–मिथ्यात्व है ऐसा न करना चाहिये।

इसी प्रकार दीपावली के समय अमावस के प्रात: समय भगवान महावीर, पावापुर क्षेत्र तथा गौतम गणधार की पूजन करना चाहिये और शुभमुहूर्त में बही खाते रख लेने चाहिये। इसके सिवाय लक्ष्मी की पूजा करना आदि मिथ्यात्व है। लक्ष्मी की प्राप्ति यानी धन का समागम शुभकर्म के उदय से होता है, न कि लक्ष्मीकी पूजा करने से। तथा लक्ष्मी देनेवाली लक्ष्मी नामक कोई देवी भी नहीं है।

तथा–हाथी, घोड़ा, मछली, चिड़िया आदि के रूप में बने हुए खांड के खिलौने भी न खाने चाहिये और न खिलाने चाहिये।

षोडशकारण पूजा

कर्मों की १४८ प्रकृतियों में तीर्थङ्कर प्रकृति सबसे अधिक पुण्य प्रकृति है। तीर्थङ्कर प्रकृति का उदय यद्यपि १३ वें गुणस्थानमें होता है किन्तु उसकी शुभछाया बहुत पहले से पड़ जाती है जिससे तीर्थङ्कर प्रकृति वाले जीवको अनेक असाधारण शांति, सुखदायक पदार्थ स्वयं प्राप्त होते हैं। जैसे कि गर्भ में आने से ६ मास पहले से तीर्थङ्कर के पिता के घर में रत्नवर्षा होना फिर तीर्थङ्कर के गर्भ, जन्म, तप तथा केवल ज्ञान प्राप्त होने पर देव, इन्द्रों द्वारा असाधारण अनुपम उत्सव होना, तीर्थङ्कर का उपदेशलाभ लेने के लिये समवशरण नामक अनुपम वैभवसम्पन्न, अनुपम सुन्दर सभा मंडप का देवों द्वारा बनना, मुक्त होने पर देवों द्वारा महाउत्सव होना आदि।

इस तीर्थङ्कर प्रकृति को प्राप्त कराने वाले सोलह विशेष कारण हैं १–दर्शनविशुद्धि (निर्मल सम्यग्दर्शन), २–विनय-सम्पन्नता (देव गुरु शास्त्र की विनय), ३–अनतिचार शील-व्रत (निर्दोष शील, व्रतों का पालन), ४–अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग (सदा ज्ञानाभ्यास करना) ५–संवेग (संसार से भय तथा धर्म से प्रेम), ६–शक्तितस्त्याग (शक्ति अनुसार दान करना), ७–शक्तितस्तप (शक्ति अनुसार तप करना), ८–साधुसमाधि (समाधि से शरीर त्याग करना—समाधि मरण), ९–वैयावृत्य (रोगी वृद्ध मुनि की सेवा करना, दीन दुखी की सेवा), १०–अर्हन्त भक्ति (अर्हन्त भगवान की भक्ति करना), ११–आचार्य भक्ति (संघ के सर्वोच्च नायक आचार्य की भक्ति करना), १२–बहुश्रुत भक्ति (बहुत ज्ञानी-उपाध्याय की भक्ति करना), १३ प्रवचन भक्ति (शास्त्र की भक्ति करना), १४–आवश्यकापरिहाणि (छह आवश्यक कार्यों में कमी न आने देना), १५–मार्ग प्रभावना (जैनधर्म का प्रभाव फैलाना), १६–प्रवचनवा-

त्सल्य (साधर्मी से गहरा प्रेम करना)। इन सोलह कारणों से तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्धरूप कार्य होता है। इस कारण इनको षोडश (सोलह) कारण भावना कहते हैं।

तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्धन इन में से १६ या इससे कम भावनाओं के द्वारा भी हो जाता है किन्तु दर्शन-विशुद्धि अवश्य होनी चाहिये उसके साथ में १-२ आदि भावनाएँ और होनी आवश्यक हैं।

षोडशकारण पर्व भाद्रपद, माघ और चैत्र मास में वदी १४ से सुदी १४ तक १६ दिन का होता है। इन १६ दिन तक

दर्शनविशुद्धि भावना भाय,
सोलह तीर्थङ्कर पददाय' परमगुरु हो'

आदि षोडशकारण पूजा की जाती है।

किन ही आचार्यों के मतानुसार यह पर्व एक मास का भी होता है तदनुसार माघवदी १ से फागुनवदी १ तक, चैत्रवदी १ से वैसाख वदी १ तक और भाद्रपद वदी १ आसोज वदी १ तक होता है।

पंचमेरु पूजा

जम्बू द्वीप के बीचमें एक लाख योजन ऊंचा एक गोल पर्वत है जिसका नाम 'सुदर्शन' मेरु' है। जम्बू द्वीपवर्ती दो सूर्य दो चन्द्र वाला ज्योतिषचक्र इसी पर्वत के चारों ओर सदा घूमता रहता है। धातकी खंड द्वीप में पूर्व तथा पश्चिम दिशा में विजय और अचल नामों के दो गोलाकार पर्वत हैं जो कि ८४-८४ हजार योजन ऊंचे हैं। तीसरे पुष्कर द्वीप में पूर्व में मन्दर और पश्चिम में विद्युन्माली नाम के दो पर्वत हैं वे भी ८४-८४ हजार योजन ऊंचे हैं। जम्बू द्वीप की तरह धातकी खंड तथा पुष्कर द्वीप के सूर्य चन्द्र आदि ज्योतिष विमान इन पर्वतों के चारों ओर सदा घूमा करते हैं।

इन पांचों मेरु पर्वतों की तलहटी में 'भद्रशाल' नामक वन है, कुछ ऊपर पहली कटनी पर 'नंदन' वन है, उससे कुछ ऊपर दूसरी कटनी पर 'सौमनस' वन है और पांचों ही मेरु पर्वतों के ऊपर जो वन है उसका नाम 'पांडुक' वन है। जिस में पांडुक शिला है जिस पर कि तीर्थङ्कर का अभिषेक होता है।

इन चारों वनों में पूर्व, पश्चिम उत्तर, दक्षिण दिशा में पर्वत में बने हुए एक एक अकृत्रिम चैत्यालय हैं, सदा से चले आ रहे हैं। इस प्रकार प्रत्येक पर्वत के चारों वनों में चारों दिशाओं में एक एक चैत्यालय होने से प्रत्येक पर्वत पर सोलह सोलह चैत्यालय हैं अतः पांच पर्वतों के ८० चैत्यालय हैं। पंचमेरु पूजा में

"पांचों मेरु असी (८०) जिनधाम,
सब प्रतिमा को करों प्रणाम"

आदि रूप से इन ही ८० चैत्यालयों की, उन में विराजमान अकृत्रिम प्रतिमाओं की पूजा की जाती है।

नन्दीश्वरद्वीप पूजा

जम्बूद्वीप से आगे ६ द्वीपों के बाद आठवां द्वीप नंदीश्वर है। उस नंदीश्वर द्वीप की चारों दिशाओं में काले रंग के ८४-८४ हजार योजन ऊंचे 'अंजनगिरि' नामक गोल पर्वत हैं। उन पर्वतों के चारों ओर एक एक लाख योजन लम्बी चौड़ी चार चार झीलें (बावड़ी) है, उन १६ झीलों (वावड़ियों) में दश हजार योजन ऊंचे एक एक 'दधिमुख' नामक सफेद गोल पर्वत हैं। तथा उन झीलों (वावड़ियों के बाहरी दो दो कोनों पर एक एक हजार ऊंचे लाल रंग के 'रतिकर' नामक दो दो गोल पर्वत हैं। यानी-प्रत्येक दिशा में १ अंजनगिरि, चार दधिमुख और आठ रतिकर इस प्रकार कुल तेरह तेरह पर्वत हैं अर्थात् चारों दिशाओंमें नदीश्वर द्वीप में

सब ५२ बावन पर्वत हैं। इन प्रत्येक पर्वत के ऊपर एक एक अकृत्रिम मन्दिर हैं तदनुसार नन्दीश्वर द्वीपमें ५२ अकृत्रिम मंदिर है। उनमें १०८-१०८ रत्नमय सुन्दर पांच २ सौ धनुष अवगाहना की मनोहर प्रतिमाएं हैं।

कार्तिक, फागुन और आषाढ़ मास में सुदी अष्टमी से पूर्णमासी तक ८-८ दिन तक नन्दीश्वर द्वीप में देव, इन्द्र जाकर बड़े उत्सव के साथ पूजन करते हैं। इसी के अनुरूप यहां भी उक्त तीनों महीनों के अन्तिम आठ दिनों में

'नन्दीश्वर श्री जिनधाम बावन (५२) पूज करों,
वसु (८) दिन प्रतिमा अभिराम आनन्द भाव धरों।'

इत्यादि छन्दों में रची हुई पूजन करते हैं। इन ही आठ दिनों को अष्टान्हिका (अष्ट=आठ, अह्न=दिन यानी-आठदिन) कहते हैं, अष्टान्हिका में नन्दीश्वर द्वीप की पूजा के सिवाय सिद्धचक्र-विधान भी किया जाता है। और पंचमेरु की पूजा भी की जाती है।

दशलक्षण पर्व

जैनसिद्धान्तानुसार भरत, ऐरावत खण्ड में दुःषम-दुःषम नामक छठे काल के अन्त में आर्यखण्ड में प्रकृति के प्रकोप से ४९ दिन तक अनुपम, भयानक अग्नि, आंधी, वर्षा आदि से प्रलय हो जाती है। जो जीव यहां से भागकर या देवों द्वारा इन क्षेत्रों से बाहर चले जाते हैं वे तो बच जाते हैं शेष सभी मर जाते हैं, घर, बाग आदि सब नष्ट हो जाते हैं। फिर ४९ दिन तक ऐसी अच्छी वर्षा होती रहती है जिससे वह प्रलय कालीन भयानक वातावरण दूर हो जाता है और यह क्षेत्र फिर मनुष्य पशु पक्षियों के रहने योग्य हो जाता है। इसी कारण फिर यहां जीव बसने लगते हैं।

उस नवीन सृष्टि का शुभदिन भाद्रपद सुदी पंचमीसे होता है। उसी दिन से इधर उधर आस पास के प्रदेशों में प्राण बचाने के लिये गये हुये मनुष्य पशु पक्षी स्वयं आकर अथवा दैवी सहायता पाकर यहां आकर फिर बसने लगते हैं।

आर्य खण्ड की इस पुनः-स्थापन के स्मरणरूप भाद्रपद सुदी ५ से पूर्णिमा तक १० दिन 'दशलक्षण पर्व' रक्खा है [यह एक आनुमानिक कल्पना है, इसका कोई सैद्धान्तिक आधार नहीं है।] इन दिनों में वैसे तो और भी अनेक व्रत किये जाते हैं। किन्तु उन सब में प्रधान दशलक्षण व्रत है। यानी-धर्म के जो उत्तमक्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन और ब्रह्मचर्य ये जो दश भेद किये हैं प्रलय के बाद इन ही दशधर्मों के उपदेश से मनुष्यों को शान्तिमय जीवन बिताने का उपदेश दिया गया था। इन दशधर्मों का पालन भी इन १० दिनों में विशेष रूप से किया जाता है। दशधर्मों की पूजा भी प्रतिदिन इन दिनों में की जाती है। तत्वार्थसूत्र के १० अध्यायों का विवेचन इन दिनों में हुआ करता है। तथा रत्नत्रय, पुष्पांजलि, अनन्तचतुर्दशी, षोडशकारण आदि अनेक प्रकार के व्रत, तप संयम इन दिनों में किये जाते हैं। दश धर्मों के नाम पर इस पर्व को दशलक्षण पर्व' कहते हैं।

यह दशलक्षण पर्व भाद्रपद, माघ तथा चैत्र मास में यानी एक वर्ष में ३ बार होता है। ऐसा शास्त्रीय विधान है किन्तु भाद्रपद में वार्षिक प्रतिक्रमण होता है तथा क्षमावणी भी भाद्रपद में ही होती है; अतः सब स्थानों पर यह दशलक्षण पर्व जिसका दूसरा नाम 'पर्युषण' पर्व भी है भाद्रपद मास में ही मनाया जाता ।

इस पर्व के अन्त में आसोज वदी १ को क्षमावणी की पूजन

होकर क्षमावणी (समस्त जीवों से क्षमा मांगना, स्वयं सबको क्षमा करना) का कार्य किया जाता है।

रत्नत्रय पूजा

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीन गुणों को रत्नत्रय कहते हैं। उत्कृष्ट वस्तु को 'रत्न' कहते हैं जैसे श्रेष्ठ मनुष्य को 'नररत्न' कहते हैं। सम्यग्दर्शन (सत्यश्रद्धा), सम्यग्ज्ञान (यथार्थ ज्ञान) और सम्यक्चारित्र (सच्चा आचरण) इन तीनों गुणों से आत्मा कर्मबन्धन से मुक्त हो जाता है अतः मुक्ति का कारण होने से इन तीनों गुणों को 'रत्नत्रय' (तीन रत्न) शब्द से कहते हैं।

भाद्रपद, माघ और चैत्र मास में सुदी १३ से सुदी १५ तक तीन दिन रत्नत्रय पर्व होता है उन ही तीनों दिन रत्नत्रय पूजा की जाती है। प्रति दिन सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र की पूजा करनी चाहिये।

बाहुबली पूजा

भगवान ऋषभदेव के ज्येष्ठ पुत्र, भरतक्षेत्र के आद्य चक्रवर्ती भरत को जब उनके लघु किन्तु बलवान भ्राता बाहुबली ने तीनों प्रकार के युद्ध में हरा दिया तब भरत ने अपने अपमानका बदला लेने के लिये अपना अमोघ अस्त्र चक्र बाहुबली का प्राण हरण करने के लिये बाहुबली पर चलाया किन्तु नियमानुसार चक्र स्वगोत्र (चक्रवर्ती के कुल के किसी व्यक्ति) का घात नहीं कर सकता अतः चक्र अस्त्र विफल हुआ। इस पर क्रुद्ध होकर भरत ने बाहुबली को अपने राज्य में से बाहर निकल जाने की आज्ञा दी।

यह सुनकर बाहुबली को संसार से वैराग्य हो गया और राज्यपद छोड़ कर साधु बन गये। उन्होंने एक अडिग आसन से

खड़े होकर एक वर्ष तक तपस्या की। आस पास की बेलें उनके शरीर पर चढ़ गईं उनके पैरों के निकट सर्प रहने लगे, वर्षा, धूप, शर्दी उन्होंने अपने नग्न शरीर पर झेली।

अन्त में भरत चक्रवर्ती ने आकर उनको नमस्कार किया तब उनको केवल ज्ञान हुआ और कुछ समय के बाद भगवान ऋषभदेव से भी पहले मुक्त हो गये।

श्रवणबेलगोला में 'गोम्मटेश्वर' नाम से उनकी ५७ फीट ऊंची संसारप्रसिद्ध मूर्ति है।

उन ही बाहुबली की पूजा की जाती है।

रक्षाबन्धन या श्रावणी पर्व

आज से हजारों वर्ष पहले की बात है जब बलि आदि ४ ब्राह्मण मंत्रियों ने धार्मिक द्वेषवश श्री अकम्पनाचार्य को ७०० मुनियों के संघ सहित जीवित जला देने की इच्छा से हस्तिनापुर के बाहर मुनि संघ के चारों ओर धुएंदार अग्नि जला दी, साधुगण अपने ऊपर महा-विपत्ति समझकर आत्मध्यान में लीन हो गये। तब श्री विष्णुकुमार मुनि जो कि विक्रियाऋद्धि धारक थे। धार्मिक प्रेम वश तुरन्त हस्तिनापुर आये और उन्होंने विक्रिया (अपने शरीर को अपनी इच्छानुसार छोटा बड़ा बना लेने की आत्मशक्ति) ऋद्धि से बौने ब्राह्मण का रूप बना कर बलिमंत्री से अपने लिये ३ पैंड़ (कदम) पृथ्वी मांगी। उसने देना स्वीकार कर लिया तब उन्होंने विक्रिया से बड़ा रूप बना कर दो पैंड (कदम) में ही मानुषोत्तर पर्वत तक समस्त पृथ्वी नाप ली। तीसरा चरण बलि की पीठ पर रक्खा।

इस प्रकार पृथ्वी पर अधिकार पाकर उन्होंने तुरन्त अकम्पनाचार्य के संघ के चारों ओर की अग्नि हटवाकर उनकी विपत्ति

दूर की। जनता को इससे शान्ति-संतोष हुआ और उसने आटे की सेमरियों का आहार उन मुनियों को दिया क्योंकि धुएं से उनके गले भी भर गये थे इस कारण सेमरियों के आहार से उनको आराम मिला।

वह दिन श्रावण शुक्ल १५ का था अतः उस दिन से प्रति वर्ष उनके स्मरण में 'श्रावणीपर्व' चालू हुआ है सलूना पूजन भी इसी कारण उस दिन होती है और मुनिरक्षा का स्मरण रूप रक्षासूत्र हाथ में बांधा जाता है।

इस दिन भीतों पर लकीरें खींच कर स्त्रियां जो उनकी पूजा करती है सो मिथ्यात्व है। ऐसा न करना चाहिये।

दीपावली पूजन

विक्रम सं० से ४७० वर्ष पहले कार्तिक वदी अमावस्या के प्रातः से कुछ समय पहले अंतिम तीर्थङ्कर श्री भगवान महावीर पावापुरी से मुक्त हुये थे उस समय रात्रि का कुछ अन्धकार शेष था अतएव देवों ने तथा मनुष्यों ने वहां पर अगणित दीपक जलाकर, प्रकाश करके मोक्ष उत्सव मनाया था।

तदनुसार तब से ही प्रतिवर्ष भारतवर्ष में कार्तिक वदी अमावस को अनेक दीपकों का प्रकाश करके दीपावली उत्सव मनाया जाता है। चतुर्दशीकी रात्रिके अंतसमय भगवान महावीर की पूजा करके उनको निर्वाण लाडू चढ़ाया जाता है।

इस दिन भगवान महावीर की मोक्ष-लक्ष्मी तथा गौतम गणेश (गणधर) की पूजा के सिवाय अन्य लक्ष्मी, गणेश की पूजा करना मिथ्यात्व है।

गुणावा क्षेत्र

जिस समय अन्तिम तीर्थङ्कर भगवान महावीर का निर्वाण हुआ उसी समय श्री गौतम गणधर को केवल ज्ञान हुआ था।

कुछ दिन बाद श्री गौतमगणधर नवादा के निकट गुणावा से मुक्त हुए। गुणावा मे तालाब के भीतर एक प्राचीन मन्दिर में उनके चरणचिन्ह हैं जिनको दिगम्बर श्वेताम्बर दोनों पूजते है। सड़क के किनारे भी एक दि० जैन मन्दिर बना हुआ है।

पटना क्षेत्र

पटना मे नगर के बाहर एक पुरानी धर्मशाला है उसके सामने वृक्षों की छाया मे सुदर्शन सेठ के चरण-चिन्ह हैं। यहा से सुदर्शन सेठ को मुक्ति प्राप्त हुई थी,

सुदर्शन सेठकी कथा प्रसिद्ध है वे बहुत सुन्दर युवक थे। उस नगर की रानी उन पर आसक्त हो गई थी। उसने सेठ सुदर्शन के साथ अपनी कामवासना तृप्त करने की अपनी ओर से पूर्ण शारीरिक चेष्टा की किन्तु सुदर्शन सेठ अपने ब्रह्मचर्य अणुव्रत (पत्नीव्रत) के रंचमात्र भी विचलित न हुए रानी ने अपने प्रयत्नों में सफलता न पाकर, सुदर्शन सेठ पर बलात्कार व्यभिचार करने का दोष आरोपण किया। राजा ने ठीक बात का पता न चलाकर उत्तेजनावश सुदर्शन सेठ को प्राणदण्ड सुना दिया।

किन्तु दैवी प्रभाव से सुदर्शन सेठ की शूली सिंहासन के रूप म हो गई। फिर सुदर्शन सेठ मुनि होकर तपस्या कर पटना से मुक्ति पधारे।

जम्बूस्वामी पूजा

भगवान महावीर के समय मे राजगृह नगर में एक सेठ के पुत्र का नाम 'जम्बूकुमार' था वे बडे शूरवीर थे। उन्होंने युद्ध में शत्रु पर विजय पाई थी। उनका ४ सुन्दरी कन्याओं के साथ विवाह हुआ। उन सुन्दरियों ने रसीली काम कथाओं द्वारा पहली सुहागरात को जम्बू कुमार का मन विषय-भोगों में फंसाना चाहा किन्तु जम्बूकुमार न फसे बल्कि उन्होंने ससार, विषयभोगों

से विरक्ति उत्पन्न करनेवाली ऐसी प्रभावशालिनी बातें की जिससे वे तत्काल विवाहित नवयुवती वधुऐ भी संसार से विरक्त हो गई, इतना ही नहीं किन्तु चोरी करने के लिये आया हुआ विद्युच्चर चोर भी उन बातोंको सुनकर संसारसे विरक्त हो गया और जैसे ही जम्बूकुमार ने साधुदीक्षा ली उसी तरह विद्युच्चर ने भी प्रातः होते अपने ५०० वीरों के साथ साधुदीक्षा ग्रहण की।

जम्बूस्वामी तपस्या करते हुए केवलज्ञानी हो गये और मथुरा के निकट चौरासी स्थान से मुक्ति पधारे। जम्बूस्वामी अन्तिम केवलज्ञानी थे उनके पीछे फिर और कोई केवलज्ञानी नहीं हुआ। उन ही जम्बूस्वामी की पूजा की जाती है।

कलिकुण्ड पार्श्वनाथ पूजा

भगवान पार्श्वनाथ की अतिशययुक्त प्रसिद्ध प्रतिमाए मक्सी, शिरपुर आदि अनेक स्थानों में है उनको मक्सी पार्श्वनाथ, श्रीपुर पार्श्वनाथ आदि कहते हैं। तदनुसार दक्षिण भारत मे कलिकुण्ड एक स्थान है वहा पर भगवान पार्श्वनाथ की एक सातिशय प्रतिमा है जिसके पूजन से विघ्न, विपत्ति, रोग मिट जाते है। उस पार्श्वनाथ मूर्ति की पूजा का नाम 'कलिकुण्ड पार्श्वनाथ' पूजा है।

श्रुतपंचमी

भगवान महावीर के मुक्त हो जाने पर लगभग ६०० वर्ष तक जैन सिद्धान्तग्रन्थों का पठन पाठन मौखिक रूप से-विना किसी ग्रंथ के सहारे-चलता रहा गुरु अपने शिष्यों को पढ़ा देते थे और शिष्य सुनकर विना कुछ लिखे याद कर लेते थे।

इसके पीछे धरसेन आचार्य ने (जो कि गिरनार की चंद्र-गुफा में तपस्या करते थे) निमित्तज्ञान से यह निश्चय किया कि मनुष्यों की स्मरणशक्ति क्षीण हो गई है, आगे इससे भी कम हो

जायगी। यह विचार कर तथा अपनी आयु थोड़ी जानकर यह निश्चय किया कि 'कम से कम दो बुद्धिमान शिष्यों को जितना सिद्धान्त मुझे उपस्थित (याद) है उतना पढ़ा दूं और उनसे कह दूं कि मैंने जो कुछ पढ़ाया है उसको शास्त्ररूप में लिख दो जिससे सिद्धान्त ज्ञान आगामी समय के लिये स्थिर रह सके।'

तदनुसार उन्होंने महिमा नगरी के मुनि सम्मेलन को पत्र लिख कर दो बुद्धिमान मुनियों को अपने पास बुलाया। वहां से पुष्पदत, भूतबलि नामक दो मुनि धरसेनाचार्य के पास आये। धरसेनआचार्य ने उनकी बुद्धिमानी की परीक्षा हीनाक्षर, अधिकाक्षर वाला मत्र देकर की। तदनन्तर उन्होंने उन दोनों को सिद्धान्त पढ़ाया।

आषाढ़ सुदी एकादशी का यह पढ़ाना समाप्त हुआ उसी समय चातुर्मास (वर्षायोग) निकट जानकर तथा अपनी मृत्यु निकट समझकर धरसेनाचार्य ने पुष्पदन्त भूतबलि को अपने पास से विदा कर दिया ताकि उनको मोहजनित दुख न होवे।

श्री पुष्पदन्त भूतबलि आचार्य ने षट्खंड आगम लिखना प्रारम्भ किया और विक्रम सं० १४४ के ज्येष्ठ सुदी पंचमी को समाप्त किया। जैनग्रन्थों में यह सबसे पहला ग्रन्थ है।

उस दिन बहुत उत्सव मनाया गया और तभी से प्रतिवर्ष जेठ सुदी पंचमी को 'श्रुतपंचमी' का उत्सव मनाया जाने लगा। इस दिन शास्त्रों की पूजा की जाती है, शास्त्रों को धूप दी जाती है तथा वेष्ठन बदले जाते हैं।

शेष पर्व

पुष्पांजलि— भाद्रपद सुदी ५ से ९ तक—पंचमेरु पूजा
लब्धिविधान— भाद्रपद सुदी १ से ३ तक, चौबीस तीर्थङ्कर पूजा

रोट तीज— भाद्रपद सुदी ३—चौबीस तीर्थङ्कर पूजा
शीलसप्तमी— भाद्रपद सुदी ७—
सुगन्धदशमी— भाद्रपद सुदी १०—शीतलनाथ पूजा
अनन्तव्रत— भाद्रपदसुदी ११ से १४ तक अनन्तनाथ पूजा
क्षमावाणी— आसोज वदी १—क्षमावणी पूजा
ऋषभनिर्वाण— माघ वदी १४—आदिनाथ पूजा
महावीर जयन्ती – चैत्र सुदी १३—वर्द्धमान पूजा
अक्षयतृतीया— वैशाख सुदी ३—आदिनाथ पूजा
श्रुत पंचमी— जेठ सुदी ५—शास्त्र पूजा
मोक्षसप्तमी— श्रावण सुदी ७—पार्श्वनाथ पूजा
रोहिणीव्रत— जिस तिथिको रोहिणी—वासु-
नक्षत्र हो पूज्य पूजा
रविव्रत— आषाढ़ सुदी ८ से भाद्रपद सुदी—
१५ तक प्रत्येक रविवार—पार्श्वनाथ पूजा
(६ वर्ष तक)

ऊपर लिखे अनुसार पुष्पांजलि आदि व्रत नियत तिथि को बताई गई पूजन करके करने चाहिये।

चैत्रवदी १०
वी० सं० २४७७
१-४-५१

अजितकुमार जैन शास्त्री
अकलंक प्रेस,
सदरबाजार, देहली।

बुधजनकृत स्तुति

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरन आयो सरनजी। या विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरनजी ॥ १ ॥ तुम ना पिछान्यो आन मान्यो, देव विविधप्रकारजी । या बुद्धि सेती निज न जाण्यो, भ्रम गिण्यो हितकारजी ॥२॥ भवविकट बनमें करम वैरी, ज्ञान धन मेरो हर्यो । तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिर्यो ॥ ३ ॥ धन घड़ी यो धन दिवस यो ही, धन जनम मेरो भयो । अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुको लख लयो ॥४॥ छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासापै धरैं । वसु प्रातिहार्य अनंत गुण जुत, कोटि रवि छविको हरैं ॥ ५ ॥ मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदयरवि आतम भयो । मो उर हरष ऐसो भया, मनु रंक चिंतामणि लयो ॥ ६ ॥ मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, बीनऊं तुम चरन जी । सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारन तरन जी ॥ ७ ॥ जाचूं नहीं सुरवास पुनि, नरराज परिजन साथजी । बुध जाचहूं तुम भक्ति भव भव, दीजिये शिवनाथ जी ॥ ८ ॥

दौलतरामकृत स्तुति

दोहा—सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्दरसलीन ।
सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरिरजरहसविहीन ॥१॥

जय वीतराग विज्ञानपूर, जय मोहतिमिरको हरनसूर। जय ज्ञान अनंतानंतधार, दृग सुख वीरजमण्डित अपार ॥ २ ॥ जय परमशांत मुद्रा समेत, भविजनको निज अनुभूति हेत। भविभागनवश जोगेवशाय, तुमधुनि ह्वै सुनि विभ्रम नशाय ॥३॥ तुम गुण चिंतत निजपरविवेक, प्रगटै बिघटै आपद अनेक। तुम जगभूषण दूषणवियुक्त, सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥ ४ ॥ अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप, परमात्म परम पावन अनूप। शुभअशुभविभाव अभाव कीन, स्वाभाविकपरिणतिमयअछीन ॥ ५ ॥ अष्टादशदोषविमुक्त धीर, स्वचतुष्टयमय राजत गभीर। मुनिगणधरादि सेवत महंत, नवकेवललब्धिरमा धरत ॥ ६ ॥ तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहिं जैहैं सदीव। भवसागरमें दुख छार वारि, तारनको अवर न आप टारि ॥ ७ ॥ यह लखि निज दुखगदहरणकाज, तुमही निमित्तकारण इलाज। जाने तातैं मैं शरण आय, उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥ ८ ॥ मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप, अपनाये विधिफल पुण्य पाप। निजको परको करता पिछान, परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥ ९ ॥ आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि। तनपरणतिमें आपो चितार, कबहूँ न अनुभवो स्वपदसार ॥१०॥ तुमको विन जाने जो कलेश, पाये सो तुम जानत जिनेश। पशुनारकनरसुरगतिमझार,

भव धर धर मर्यो अनंत बार ॥११॥ अब काललब्धिबलतैं दयाल, तुम दर्शन पाल भयो खुश्याल। मन शांत भयो मिटि सकल द्वन्द, चाख्यो स्वातमरस दुखनिकंद ॥ १२ ॥ तातैं अब ऐसी करहु नाथ, बिछुरै न कभी तुअ चरण साथ। तुम गुणगणको नहिं छेव देव, जग तारनको तुअ विरद एव ॥ १३ ॥ आतमके अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाय। मैं रहूं आपमें आप लीन, सो करो होउ ज्यों निजाधीन ॥ १४ ॥ मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रयनिधि दीजै मुनीश। मुझ कारजके कारन सु आप, शिव करहु हरहु मम मोहताप ॥१५॥ शशि शांतिकरन तप हरन हेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवतपियूष ज्यों रोग जाय, त्यों तुम अनुभवतैं भव नशाय ॥१६॥ त्रिभुवन तिहुंकाल मंझार कोय, नहिं तुम विन निज सुखदाय होय ॥ मो उर यह निश्चय भयो आज, दुखजलधि उतारन तुम जिहाज ॥ १७ ॥

दोहा—तुम गुणगणमणि गणपती, गणत न पावहिं पार।
'दौल' स्वल्पमति किमि कहै, नमूं त्रियोग संभार ॥

पार्श्वनाथ स्तुति।

भुजङ्गप्रयात छन्द।

नरेन्द्रं फणींद्रं सुरेन्द्रं अधीसं, शतेन्द्रं सु पूजैं भजैं नाय शीशं। मुनींद्रं गणेंद्रं नमें जोड़ि हाथं, नमें देवदेवं सदा

पाश्वनाथं ॥ १ ॥ गजेंद्रं मृगेन्द्रं गह्यो तू छुड़ावै, महा-आगतैं नागतें तू बचावै । महावीरतैं युद्धमें तू जितावै, महा रोगतैं बंधतैं तू छुड़ावै ॥२॥ दुखीदु:खहर्ता सुखीसुखकर्ता, सदा सेवकोंको महानन्दभर्ता । हरे यक्ष राक्षस भूतं पिशाचं विषं डाकिनी विघ्नके भय अवाचं ॥३॥ दरिद्रीनको द्रव्यके दान दीनं, अपुत्रीनकौं तू भले पुत्र कीनं । महासंकटोंसे निकारै विधाता, सबै संपदा सर्वको देहि दाता ॥४ ॥ महा-चोरको वज्रको भय निवारे, महापौनके पुंजतैं तू उबारै । महाक्रोधकी अग्निका मेघधारा, महालोभशैलेशको वज्र मारा ॥ ५ ॥ महामोह अंधेरको ज्ञानभानं, महाकर्मकांतारको दौ प्रधानं। किये नाग नागिनि अधोलोकस्वामी, हर्यो मान तू दैत्यको हो अकामी ॥ ६ ॥ तुही कल्पवृक्षं तुही कामधेनं तुही दिव्यचिंतामणी नाग एनं । पशू नर्कके दुखतैं तू छुड़ावै, महास्वर्गतैं मुक्तिमें तू बसावै ॥७॥ करै लोहका हेमपाषाण नामी, रटै नाम सो क्यों न हो मोक्षगामी । करै सेव ताकी करैं देव सेवा, सुनै वैन सोही लहै ज्ञान मेवा ॥८॥ जपै जाप ताकों नहीं पाप लागै, धरे ध्यान ताके सबै दोष भागै । बिना तोहि जाने धरे भव घनेरे, तुम्हारी कृपातैं सरैं काज मेरे ॥

दोहा—गणधर इन्द्र न कर सकैं, तुम विनती भगवान ।
'द्यानत' प्रीति निहारिकें, कीजे आप समान ॥१॥

पंच मंगल।

पणविवि पंच परमगुरु, गुरु जिन सासनो,
सकलसिद्धिदातार सु बिघनविनासनो।
सारद अरु गुरु गौतम सुमति प्रकाशनो,
मंगल कर चउ-संघहि पापपणासनो॥

पापहिपणासन गुणहिं गरुवा दोष अष्टादश—रहिउ।
धरि ध्यान करमविनाश केवल, ज्ञान अविचल जिन लहिउ।
प्रभु पञ्चकल्याणक विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं।
त्रैलोकनाथ सु देव जिनवर, जगत मङ्गल गावहीं॥ १॥

गर्भकल्याणक।

जाके गरभकल्याणक धनपति आइयो।
अवधिज्ञान-परवान सु इंद्र पठाइयो॥
रचि नव बारह जोजन, नयरि सुहावनी।
कनकरयणमणिमंडित, मंदिर अति बनो॥

अति बनी पौरि पगारि परिखा, सुवन उपवन सोहए।
नर नारि सुन्दर चतुरभेष सु देख जनमन मोहए॥
तहं जनकगृह छहमास प्रथमहिं रतनधारा बरसियो।
पुनि रुचिकवासिनि जननिसेवा करहिं सब विधि हरषियो॥

सुकुजरसम कुंजर, धवल धुरंधरो।
केहरि-केशरशोभित, नख शिखसुन्दरो॥
कमलाकलश- न्हवन, दुइदाम सुहावनी।
रविशशि मंडल मधुर, मीन जुग पावनी॥

पावनिकनक घट जुगम पूरन, कमलकलित सरोवरो।
कल्लोलमालाकुलितसागर सिंहपीठ मनोहरो।।
रमणीक अमरविमान फणिपति-भुवन भवि छवि छाजई।
रुचि रतनराशि दिपंत, दहन सु तेजपुञ्ज विराजई।। ३ ।।

ये सखि सोलह सुपने सूती सयनही।
देखे माय मनोहर, पश्चिम रयनही।।
उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकाशियो।
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहुं भासियो।।

भासियो फल तिहि चिंत दम्पति परम आनंदित भये।
छहमासपरि नवमास पुनि तहं, रैन दिन सुखसों गये।।
गर्भावतार महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं ।।४।।

जन्मकल्याणक।

मतिश्रुत अवधिविराजित, जिन जब जनमियो।
तिहुँलोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो।।
कल्पवासि घर घंट, अनाहद बज्जियो।
जोतिष घर हरिनाद सहजगल गज्जियो।।

गज्जियो सहजहिं संख भावन, भुवन सबद सुहावने।
वितरनिलय पटु पटह बज्जहिं, कहत महिमा क्यों बने।।
कंपित सुरासन अवधिबल जिन जनम निहचै जानियो।
धनराज तब गजराज माया मयी निरमय आनियो।।५।।

जोजन लाख गयंद वदन सौ निरमये।
वदन वदन वसुदंत दंत सर संठये।।

सरवर सौ पनवीस कमलिनी छाजहीं ।
कमलिनि कमलिनि कमल पचीस विराजहीं ॥
सजहीं कमलिनि कमलऽठोतर सौ मनोहर दल बने ।
दल दलहिं अपछर नटहिं नवरस, हाव भाव सुहावने ॥
मणि कनककिंकिणि वर विचित्र सु अमरमण्डप सोहये ।
घनघंट चंवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहये ॥६॥
तिहिं करि हरि चढि आयउ सुरपरिवारियो ।
पुरहिं प्रदच्छन दे त्रय जिन जयकारियो ॥
गुप्तजाय जिन जननिहिं सुखनिद्रा रची ।
मायामयि सिसु राखि तौ जिन आन्यो सची ॥
आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपति न हूजिये ।
तब परम हरषित हृदय हरिने सहस लोचन पूजिये ॥
पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इन्द्र, उछंग धरि प्रभु लीनऊ ।
ईशान इन्द्र सु चन्द्र छवि सिर, छत्र प्रभुके दीनऊ ॥७॥
सनतकुमार महेंद्र चमर दुइ ढारहीं ।
सेस सक्र जयकार सबद उच्चारहीं ॥
उच्छवसहित चतुरविधि सुर हरषित भये ।
जोजन सहस निन्यानवे गगन उलँघि गये ॥
लंघिगये सुरगिरि जहां पाडुक, वन विचित्र विराजहीं ।
पांडुक शिला तहं अर्द्ध चन्द्र समान, मणि छवि छाजहीं ।
जोजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊंची गनी ।
वर अष्ट-मंगल-कनक कलशनि सिंहपीठ सुहावनी ॥८॥
रचि मणिमंडप सोभित मध्य सिंहासनो ।
थाप्यो पूरब मुख तहँ, प्रभु कमलासनो ॥

बाजहि ताल मृदंग बेणु बीणा घने ।
दुन्दुभि प्रमुख मधुरधुनि, अवर जु बाजने ॥
बाजने बाजहिं सची सब मिलि, धवल मंगल गावहीं ।
पुनि करहिं नृत्य सुरागना सब, देव कौतुक धावहीं ।
भरि छीरसागर जल जु हाथहिं, हाथ सुरगिरि ल्यावहीं ।
सौधर्म अरु ईशान इन्द्र सु कलश ले प्रभु न्हावहीं ॥९॥

वदन उदर अवगाह, कलसगत जानिये ।
एक चार वसु जोजन, मान प्रमानिये ॥
सहस-अठोतर कलसा, प्रभुके सिर ढरइँ ।
पुनि सिंगार प्रमुख, आचार सबै करइँ ॥
करि प्रगट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि पुनि मातहिं दयो ।
धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गयो ।
जनमाभिषेक महत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।
भणि रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगतमंगल गावहीं ॥१०॥

तपकल्याणक ।

श्रमजलरहित सरीर, सदा सब मलरहिउ ।
छीर वरन वर रुधिर, प्रथम आकृति लहिउ ॥
प्रथम सार सहनन, सरूप विराजही ।
सहज सुगंध सुलच्छन, मंडित छाजही ॥
छाजहिं अतुलबल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने ।
दस सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने ॥
आबाल काल त्रिलोकपति मन, रुचिर उचित जु नित नये ।
अमरोपनीत पुनीत अनुपम सकल भोग विभोगये ॥११॥

भवतन-भोग-विरत्त,कदाचित चितए ।
धन जोवन पिय पुत्त, कलत्त अनित्तए ॥
कोउ न सरन मरनदिन, दुख चहुँगति भर्यो ।
सुखदुख एकहि भोगत, जिय विधिवसि पर्यो ॥
पर्यो विधिवसि आन चेतन, आन जड़ जु कलेवरो ।
तन असुचि परतैं होय आस्रव, परिहरेतैं संवरो ॥
निरजरा तपबल होय समकित, बिन सदा त्रिभुवन भम्यो ।
दुर्लभ विवेक बिना न कबहूं, परम धरमविषै रम्यो ॥१२॥
ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया ।
लौकांतिक वर देव, नियोगी आइया ॥
कुसुमांजलि दे चरन, कमल सिर नाइया ।
स्वयंबुद्ध प्रभु थुतिकर, तिन समुझाइया ॥
समुझाय प्रभुको गये निजपुर, पुनि महोच्छव हरि कियो ।
रुचिरुचिर चित्र विचित्र सिविका, करसु नंदन बन लियो ॥
तहं पंचमुट्ठी लोंच कीनों, प्रथम सिद्धनि थुति करी ।
मंडिय महाव्रत पंच दुद्धर सकल परिगह परिहरी ॥ १३ ॥
मणिमयभाजन केश परिट्ठिय सुरपती ।
छीरसमुद्द-जल खिपकरि, गयो अमरावती ॥
तपसंयमबल प्रभुको, मनपरजय भयो ।
मौनसहित तप करत, काल कछु तहँ गयो ॥
गयो कछु तहं काल तपबल, ऋद्धि वसुविधि सिद्धिया ।
जसु धर्मध्यानबलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया ।
खिपि सातवें गुण जतनबिन तहं, तीन प्रकृति जु बुधि बढिउ ।
करि करण तीन प्रथम सुकलबल, खिपकसेनी प्रभु चढिउ ॥१४॥

प्रकृति छतीस नवें-गुण, थान विनासिया।
दसवें सूच्छमलोभ, प्रकृति तहँ नासिया॥
सुकल ध्यानपद दूजो, पुनि प्रभु पूरियो।
बारहवें-गुण सोरह, प्रकृति जु चूरियौ॥
चूरियौ त्रेसठ प्रकृति इहविधि, घातिया करमनितणी।
तप कियो ध्यानपर्यन्त बारह-विधि त्रिलोकसिरोमणी॥
निःक्रमणकल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥१४॥

ज्ञानकल्याणक।

तेरहवें गुण-थान सयोगि जिनेसुरो।
अनंतचतुष्टयमंडिय, भयो परमेसुरो॥
समवसरन तब धनपति, बहुविधि निरमयो।
आगमजुगति प्रमान, गगनतल परिठयो॥
परिठयो चित्र विचित्र मणिमय, सभामण्डप सोहये।
तिहिंमध्य बारह बने कोठे, कनक सुरनर मोहये।
मुनि कलपवासिनि अरजिका पुनि ज्योति भौमि-भवनत्रिया।
पुनि भवनव्यंतर नभग सुरनर पशुनि कोठे बठिया॥१६॥
मध्यप्रदेश तीन, मणिपीठ तहां बने।
गंधकुटी सिंहासन, कमल सुहावने॥
तीन छत्र सिर सोहत त्रिभुवन मोहए।
अंतरीच्छ कमलासन, प्रभुतन सोहए॥
सोहये चौसठ चमर ढरत, अशोकतरुतल छाजए।
पुनि दिव्यधुनि प्रतिसबदजुत तहं, देव दुंदभि बाजए।

सरपुहुपवृष्टि सुप्रभामण्डल, कोटि रवि छवि छाजए।
इम अष्ट अनुपम प्रातिहारज, वर विभूति विराजए ॥१७॥

दुइसै जोजनमान सुभिच्छ चहूँ दिसी।
गगनगमन अरु प्राणी, वध नह अहनिसी ॥
निरुपसर्ग निरहार, सदा जगदीशए।
आनन चार चहूँदिसि, सोभित दीसए ॥

दीसय असेस विसेस विद्या, विभव वर ईसुरपना।
छायाविवर्जित सुद्ध फटिक समान तन प्रभुका बना ॥
नहिं नयनपलकपतन कदाचित, केस नख सम छाजहीं।
ये घातियाछयजनित अतिशय, दस विचित्र विराजहीं ॥१७॥

सकल अरथमय मागधि-भाषा जानिए।
सकल जीवगत मैत्री-भाव बखानिए ॥
सकलऋतुज फलफूल, वनस्पति मन हरै।
दरपनसम मनि अवनि, पवनगति अनुसरै ॥

अनुसरै परमानंद सबको, नार नारि जे सेवता।
जोजन प्रमान धरा सुमाजहिं, जहां मारुत देवता ॥
पुनि करहिं मेघकुमार गंधोदक सुवृष्टि सुहावनी।
पदकमलतर सुर खिपहिं कमलसु धरणि ससिसोभा बनी ॥१८॥

अमलगगनतल अरु दिसि, तहँ अनुहारहीं।
चतुरनिकाय देवगण, जय जयकारहीं ॥
धर्मचक्र चल आगैं, रविजहँ लाजहीं।
पुनि भृंगार-प्रमुख वसु मंगल राजहीं ॥

राजहीं चौदह चारु अतिशय, देव रचित सुहावने।
जिनराज केवलज्ञानमहिमा, अवर कहत कहा बने।
तब इन्द्र आय कियो महोच्छव, सभा सोभा अति बनी।
धर्मोपदेश दियो तहां, उचरिय वानी जिनतनी ॥२०॥

क्षुधातृषा अरु रोग, रोष असुहावने।
जनम जरा अरु मरण, त्रिदोष भयावने॥
रोग सोग भय विस्मय, अरु निद्रा घनी।
खेद स्वेद मद मोह, अरति चिंता गनी॥

गनिये अठारह दोष तिनकरि रहित देव निरंजनो।
नव परम केवललब्धिमंडिय सिवरमनि-मनरंजनो॥
श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥२१॥

निर्वाणकल्याणक।

केवलदृष्टि चराचर, देख्यो जारिसो।
भव्यनिप्रति उपदेस्यो, जिनवर तारिसो॥
भवभयभीत भविकजन, सरणै आइया।
रत्नत्रयलच्छन सिवपंथ लगाइया॥

लगाइया पंथ जु भव्य पुनि प्रभु तृतिय सुकल जु पूरियो।
तजि तेरवां गुणथान जोग अजोगपथपग धारियो॥
पुनि चौदहें चौथे सुकलबल, बहत्तर तेरह हती।
इमि घाति वसुविध कर्म पहुंच्यो, समयमें पंचमगती ॥२२॥

लोकसिखर तनुवात, वलयमहँ संठियो।
धर्मद्रव्यबिन गमन न जिहिं आगें कियो॥

मथनरहित मूषोदर, अंबर जारिसो।
किमपि हीन निजतनुतें, भयो प्रभु तारिसो॥
तारिसो पर्जय नित्य अविचल, अर्थपर्जय छनछयी।
निश्चयनयेन अनंतगुण, विवहार नय वसुगुणमयी।
वस्तुस्वभाव विभावविरहित, सुद्ध परिणति परिणयो।
चिदरूपपरमानंद मन्दिर, सिद्ध परमातम भयो॥२३॥

तनुपरमाणू दामिनिवत, सब खिरगए।
रहे सेस नखकेश-रूप, जे परिणए॥
तब हरिप्रमुख चतुरविधि, सुरगण शुभ सच्या।
मायामयि नख केशरहित, जिनतनु रच्या॥

रचि अगरचन्दन प्रमुख परिमल, द्रव्य जिन जयकारियो।
पदपतित अगनिकुमार मुकुटानल, सुविध सस्कारियो।
निर्वाण कल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥२४॥

मैं मतिहीन भगतिवस भावन भाइया।
मंगल गीतप्रबंध, सु जिनगुण गाइया॥
जो नर सुनहि, बखानहि सुर धरि गावहीं।
मनवांछित फल सो नर, निहचै पावही॥

पावहीं आठों सिद्धि नवनिधि, मन प्रतीत जो लावहीं।
भ्रम भाव छूटै सकल मनके निजस्वरूप लखावहीं॥
पुनि हरहिं पातक टरहि विघन सु होहिं मंगल नितनये।
भणि 'रूपचन्द' त्रिलोकपति, जिनदेव चउसंघहिं जये॥२५॥

———

अभिषेक पाठ।

दोहा।

जय जय भगवंते सदा, मंगल मूल महान।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमों जोरि जुगपान॥

ढाल मंगलकी छन्द अडिल्ल और गीता।

श्रीजिन जगमें ऐसो, को बुधवंत जू। जो तुम गुण वरनिनि करि पावें अंत जू॥ इन्द्रादिक सुर चार ज्ञानधारी मुनी। कहि न सकें तुम गुणगण हे त्रिभुवनधनी॥ अनुपम अमित तुम गुणनिवारिधि, ज्यों अलोकाकाश है। किमि धरें हम उर कोषमें सो अकथगुणमणिराश है॥ पै निजप्रयोजन सिद्धिकी तुम नाममें ही शक्ति है। यह चित्तमें सरधान यातें नाम हीमें भक्ति है॥१॥ ज्ञानावरणी दर्शन आवरणी भने। कर्ममोहनी अंतराय चारों हने॥ लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञानमें। इन्द्रादिकके मुकुट नये सुरथानमें॥ तब इन्द्र जान्यो अवधित, उठि सुरनयुत बन्दत भयो। तुम पुण्यको प्रेर्यो हरी है मुदित धनपतिसों चयो। अब बेगि जाय रचो समवसृति सफल सुरपदको करो। साक्षात् श्रीअरहंतके दर्शन करो कल्मष हरो॥२॥ ऐसे वचन सुने सुरपतिके धनपती। चल आयो ततकाल मोद धारै अती। वीतराग छबि देखि शब्द जय जय चयौ। दे परदच्छिना बार बार वंदत भयो॥

अति भक्ति भीनो नम्रचित ह्वै समवशरण रच्यो सही। ताकी अनूपम शुभगतीको, कहन समरथ कोउ नहीं ।। प्राकार तारण सभामंडप कनकमणिमय छाजही । नगजडित गंध-कुटी मनोहर मध्यभाग विराजही ।। ३ ।। सिंहासन तामध्य बन्यो अदभुत दिपै । तापर वारिज रच्यो प्रभा दिनकर छिपै ।। तीनछत्र सिरशोभित चोसठचमरजी । महाभक्तियुत ढोरत हैं तहां अमरजी ।। प्रभु तरनतारन कमल ऊपर अन्तरीक्ष विराजिया । यह वीतरागदशा प्रतच्छ विलोकि भविजन सुख लिया ।। मुनि आदि द्वादश सभाके भवि जीव मस्तक नायकैं । बहु-भांति बारंबार पूजैं, नमैं गुणगण गायकैं । ४ । परमौ-दारिक दिव्य देह पावन सही । क्षुधा तृषा चिंता भय गद दूपण नहीं । जन्म जरा मृति अरति शोक विस्मय नसे । राग रोष निद्रा मद मोह सबै खसे ।। श्रमविना श्रमजलरहित पावन अमल ज्योतिस्वरूपजो । शरणागतनिकी अशुचिता हरि, करत विमल अनूपजी ।। ऐसे प्रभूकी शांतिमुद्राको न्हवन जलतैं करं । जस भक्तिवश मन उक्तितें हम, भानु ढिगदीपक धरं ।।५।। तुमतो सहज पवित्र यही निश्चय भयो । तुम पवित्रताहेत नहीं मज्जन ठयो ।। मैं मलीन रागादिक मलतैं ह्वै रह्यो । महामलिन तनमें वसुविधिवश दुख सह्यो ।। बीत्यो अनन्तो काल यह, मेरी अशुचिता ना गई । तिस अशुचिताहर एक तुम ही भरहु बांछा चित ठई ।। अब अष्ट-

कर्म विनाश मव मल रागरागादिक हरौ । तनरूप कारागेहतें उद्धार शिववासा करौ ॥ ६ ॥ मैं जानत तुम अष्टकर्म हरि शिव गये । आवागमन विमुक्त रागवर्जित भये ॥ पर तथापि मेरो मनरथ पूरत सही । नयप्रमानतें जानि महा साता लही ॥ पापाचरण तजि न्हवन करता चित्तमें ऐसे धरूं । साक्षात् श्रीअरहतका माना न्हवन परसन करूं ॥ ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभबन्धतै । विधि अशुभ नसि शुभबधतें ह्वै शर्म सब विधि तासतैं ।. ७ ॥ पावन मेरे नयन, भय तुम दरसतैं । पावन पान भये तुम चरनानि परसतै ॥ पावन मन ह्वै गयो तिहार ध्यानतैं । पावन रसना मानी, तुम गुण गानतें ॥ पावन भई परजाय मेरी, भयो मैं पूरणधनी । मै शक्तिपूर्वक भक्ति कीनी, पूर्णभक्ति नहा बनी ॥ धन्य ते बड़भागि भवि तिन नीव शिवघरकी धरा । वर क्षीरसागर आदि जल मणिकुम्भ भरि भक्ती करी ॥ ८ ॥ विघनसघन वनदाहन-दहन प्रचंड हो । मोहमहातम दलन प्रबल मारतड हो ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश, आदि संज्ञा धरो । जगविजयी यमराज नाश ताको करो ॥ आनन्दकारण दुखनिवारण, परममंगलय सही । मोसो पतित नहिं और तोसौ, पतिततार सुन्यौ नहीं ॥ चिंतामणी पारस कलपतरु, एकभव सुखकार ही । तुम भक्तिनवका जे चढे ते, भये भवदधि पार जी ॥ ६ ॥

दोहा।

तुम भक्तिदधितें तरि गये, भये निकल अविकार।
तारतम्य इस भक्तिको, हमें उतारो पार ॥ १ ॥

श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रं।

(श्रीभगवज्जिनसेनाचार्यकृत)

स्वयंभुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि। स्वात्मनैव तथोद्भूत-वृत्तयेऽचिन्त्यवृत्तये ॥१॥ नमस्ते जगतां पत्ये लक्ष्मीभर्त्रे नमो नमः। विदांवर नमस्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर ॥ २ ॥ कामशत्रुहणं देवमामनन्ति मनीषिणः। त्वामानमत्सुरेण्मौलिभामालाभ्यर्चितक्रमम् ॥३॥ ध्यानदुर्घणनिर्भिन्नघनघातिमहातरुः। अनन्तभवसंतानजयोप्यासीरनन्तजित् ॥४॥ त्रैलोक्यनिर्जयाव्याप्तदुर्दर्प्पमतिदुर्जयम्। मृत्युराजं विजित्यासीज्जन्ममृत्युञ्जयो भवान् ॥५॥ विधूताशेषसंसारो बन्धुर्नो भव्यबान्धवः। त्रिपुरारिस्त्वमीशोसि जन्ममृत्युजरान्तकृत् ॥६॥ त्रिकालविषयाशेषतत्त्वभेदात् त्रिधोच्छ्रितम्। केवलाख्यं दधच्चक्षुस्त्रिनेत्रोसि त्वमीशिता ॥ ७ ॥ त्वामन्धकान्तकं प्राहुर्मोहान्धासुरमर्दनात्। अर्द्धन्ते नारयो यस्मादर्धनारीश्वरोस्युत ॥ ८ ॥ शिवः शिवपदाध्यासाद् दुरितारिहरो हरः। शंकरः कृतशं लोके संभवस्त्वं भवन्सुखे ॥९॥ वृषभोसि जगज्ज्येष्ठः गुरुर्गुरुगुणोदयैः। नाभेयो नाभिसंभूतेरिक्ष्वाकुकुलनन्दनः ॥ १० ॥ त्वमेकः पुरुषस्कंन्धस्त्वं द्वे लोकस्य लोचने। त्वं त्रिधाबुधसन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञानधारकः ॥११॥ चतुःशरणमांगल्यमूर्तिस्त्वं चतुरः सुधीः। पञ्चब्रह्ममयो देवः पावनस्त्वं पुनीहि माम् ॥ १२ ॥ स्वर्गावतारिणे तुभ्यं सद्योजातात्मनेनमः। जन्माभिषेकवामाय वामदेव नमोस्तुते ॥१३॥ सुनिःक्रांताय घोराय परं प्रशममीयुषे। केवलज्ञानसंसिद्धावीशानाय

नमोस्तु ते ॥ १४ ॥ पुरुस्तत्पुरुषत्वेन विमुक्तिपदभागिने । नमस्त-
त्पुरुषावस्थां भाविनीं तेऽद्य बिभ्रते ॥ १५ ॥ ज्ञानावरणनिर्ह्रास
नमस्तेऽनन्तचक्षुषे । दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदर्शिने ॥१६॥
नमो दर्शनमोहादिक्षायिकामलदृष्टये । नमश्चारित्रमोहघ्ने विरागाय
महौजसे ॥ १७ ॥ नमस्तेऽनन्तवीर्याय नमोनन्तसुखाय ते । नमस्ते-
ऽनंतलोकाय लोकालोकविलोकिने ॥ १८ ॥ नमस्तेऽनंतदानाय
नमस्तेऽनंतलब्धये । नमस्तेऽनंतभोगाय नमोऽनंताय भोगिने ॥१९॥
नमः परमयोगाय नमस्तुभ्यमयोनये । नमः परमपूताय नमस्ते
परमर्षये ॥ २० ॥ नमः परमविद्याय नमः परमतच्छिदे । नमः
परमतत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ॥ २१ ॥ नमः परमरूपाय नमः
परमतेजसे । नमः परममार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥२२॥ परमर्द्धिजुषे
धाम्ने परमज्योतिषे नमः । नमः पारेतमःप्राप्तधाम्ने ते परमात्मने
॥ २३ ॥ नमः क्षीणकलंकाय क्षीणबंध नमोस्तु ते । नमस्ते क्षीण-
मोहाय क्षीणदोषाय ते नमः ॥२४॥ नमःसुगतये तुभ्यं शोभनाग-
तमीयुषे । नमस्तेऽतीन्द्रियज्ञानसुखायानिन्द्रियात्मने ॥ २५ ॥
कायबंधननिर्मोक्षादकायाय नमोस्तु ते । नमस्तुभ्यमयोगाय योगि-
नामपि योगिने ॥ २६ ॥ अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः ।
नमः परमयोगीन्द्रवंदितांघ्रिद्वयाय ते ॥ २७ ॥ नमः परमविज्ञान
नमः परमसंयम । नमः परमदृग्दृष्टपरमार्थाय ते नमः ॥ २८ ॥
नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्ललेश्यांशकस्पृशे । नमो भव्येतरावस्थाव्य-
तीताय विमोक्षणे ॥ २९ ॥ संज्ञासंज्ञिद्वयावस्थातिरिक्तामलात्मने ।
नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः क्षायिकदृष्टये ॥ ३० ॥ अनाहाराय तृप्ताय
नमः परमभाजुषे । व्यतीताशेषदोषाय भवाब्धेः पारमीयुषे ॥ ३१ ॥
अजराय नमस्तुभ्यं नमस्तेऽतीतजन्मने । अमृत्यवे नमस्तुभ्यम-
चलायाक्षरात्मने ॥३२॥ अलमास्तां गुणस्तोत्रमनन्तास्तावका गुणाः ।
त्वन्नामस्मृतिमात्रेण परमं शं प्रशास्महे ॥ ३३ ॥

इति प्रस्तावना ।

प्रसिद्धाष्टसहस्रे द्धलक्षणस्त्वां गिरांपतिं । नाम्नामष्टसहस्र ए त्वां स्तुमोऽभीष्टसिद्धये ॥१॥ एवं स्तुत्वा जिनं देवं भक्त्या परमया सुधीः । पठेदष्टोत्तरं नाम्नां सहस्रं पापशान्तये ॥ श्रीमान्स्वयंभूर्वृषभः शंभवः शंभुरात्मभूः । स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥२॥ विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः । विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनीश्वरः ॥ ३ ॥ विश्वदृश्वाविभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः । विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ।४। विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिजिनेश्वरः । विश्वदृक् विश्वभूतेशोविश्वज्योतिरनीश्वरः ।५। जिनो जिष्णुरमेयात्मा जगदीशो जगत्पतिः । अनंतचिदचिंत्यात्मा भव्यबंधुरबंधनः ॥ ६ ॥ युगादिपुरुषो ब्रह्मा पंचब्रह्ममयः शिवः । परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥ ७ ॥ स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः । मोहारिविजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ८ ॥ प्रशांतारिरनंतात्मा योगी योगीश्वरार्चितः । ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मद्याविद्यतीश्वरः ॥९॥ शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः । सिद्धः सिद्धांतविद् ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥ १० ॥ सहिष्णुरच्युतोऽनंतः प्रभाविष्णुर्भवोद्भवः । प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥ ११ ॥ विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः । परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

(यहां "उदकचंदनतंदुल" आदि श्लोक पढ़कर अर्घ चढ़ाना चाहिये)

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः । पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥१॥ श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाःशुचिः । तीर्थकृत्केवली शान्तः पूजार्हःस्नातकोऽमलः ॥ २ ॥ अनंतदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः । मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥३॥ निरंजनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः । अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥ ४ ॥ अग्रणीर्ग्रामिणीर्नेता

प्रणेता न्यायशास्त्रकृत्। शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥ ७ ॥ वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः। वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभांको वृषोद्भवः ॥ ६ ॥ हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद् भूतभावनः। प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवांतकः ॥७॥ हिरण्यगर्भःश्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः। स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः ॥८॥ सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः। सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ९ ॥ सुगतः सुश्रुतः सुश्रुक् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः। विश्रुतो विश्वतःपादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥ १० ॥ सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात्। भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥ ६ ॥ अथ ।

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः। स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः श्रेष्ठो निष्ठो गरिष्ठगीः ॥ १ ॥ विश्वभृद्विश्वसृट् विश्वेट विश्वभुग्विश्वनायकः। विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितांतकः ॥ २ ॥ विभवो विभयो वीरो विशोको विजरो जरन्। विरागो विरतोऽसंगो विविक्तो वीतमत्सरः ॥ ३ ॥ विनेयजनताबंधुर्विलीनाशेषकल्मषः। वियोगो योगविद्विद्वान्विधातासुविधिः सुधीः ॥ ४ ॥ क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्तिः शान्तिभाक् सलिलात्मकः। वायुमूर्तिरसंगात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधृक् ॥ ५ ॥ सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्रामपूजितः। ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञांगममृतं हविः ॥६॥ व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः। सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्त्तिर्महाप्रभः ॥ ७ ॥ मंत्रविन्मंत्रकृन्मंत्री मंत्रमूर्तिरनन्तकः। स्वतंत्रस्तंत्रकृत्स्वांतः कृतांतांतः कृतांतकृत् ॥ ८ ॥ कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः। नित्यो मृत्युञ्जयो मृत्युरमृतात्मामृतोद्भवः ॥ ९ ॥ ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसंभवः। महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥ १० ॥ सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञान-

धर्मद्दमप्रभु । प्रशमात्मा प्रशातात्मा पुराणपुरुषात्तम ॥ ११ ॥
इति स्थविष्ठादिशतम् ॥ ३ ॥ अघ

महाशोकध्वजोऽशोक क स्रष्टा पद्मविष्टर । पद्मेश पद्म सभूति पद्मनाभिरनुत्तर ॥ १ ॥ पद्मयोनिजगद्योनिरित्य स्तुत्य स्तुतीश्वर । स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेय कृतक्रिय ॥२॥ गणाधिपो गणज्येष्ठो गरय पुण्यो गणाग्रणी । गुणाकरो गुणाभोधिर्गुणज्ञो गुणनायक ॥ ३ ॥ गुणादरी गुणोच्छदी निर्गुण पुण्यगीर्गुण । शरण्य पुण्यवाक्पूतो वरेण्य पुण्यनायक ॥४॥ अगण्य पुण्य धीगण्य पुण्यकृत्पुण्यशासन । धमारामो गुणग्राम पुण्यापुण्य निरोधक ॥ ५ ॥ पापापतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मष । निर्द्वंद्वो निमद शातो निर्मोहो निरुपद्रव ॥ ६ ॥ निर्निमेषो निराहारो निष्क्रियो निरुपप्लव । निष्कलको निरस्तैना निर्धूतागो निराश्रय ॥ ७ ॥ विशालोविपुलज्योतिरतुलाचिंत्यवैभव । सुसवृत सुगुप्तात्मा सुबुत्सुनयतत्त्ववित् ॥ ८ ॥ एकावद्यो महाविद्यो मुनि परिवृढ पति । धीशो विद्यानिधि साक्षी विनेता विहतातक ॥ ९ ॥ पिता पितामह पाता पवित्र पावनो गति । त्राता भिषग्वरो वर्यो वरद परम पुमान ॥ १० ॥ कवि पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभ पुरु । प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामह ॥ ११ ॥

इति महाशोकध्वजादिशतम् ॥ ४ ॥ अघ ।

श्रीवृक्षलक्षण श्लक्ष्णो लक्षण्य शुभलक्षण । निरक्ष पुण्डरीकाक्ष पुष्कल पुष्करेक्षण ॥ १ ॥ सिद्धिद सिद्धसकल्प सिद्धात्मा सिद्धसाधन । बुद्धबोध्यो महाबोधिवर्धमानो महर्द्धिक ॥ २ ॥ वदागा वदविद्वेद्यो जातरूपो विदावर । वदवद्य स्वयवद्यो विवदो बदतावर ॥ ३ ॥ अनादिनिधनो व्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासन । युगादिकृद्युगाधारो युगादिजगदादिज ॥ ४ ॥ अतींद्रोऽतींद्रियो धींद्रो महेंद्रोऽतींद्रियार्थदृक । अनिंद्रियोऽहमिंद्रार्च्यो महद्रमहितो

महान् ॥५॥ उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भवतारकः । अग्राह्यो गहनं गुह्यं परार्ध्यं परमेश्वरः॥६॥ अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिन्त्यर्द्धिः समग्रधीः । प्राग्र्यः प्राग्रहरोऽभ्यग्र्यः प्रत्यग्रोग्र्योग्रिमोग्रजः ॥ ७ ॥ महातपा महातेजा महोदर्को महोदयः । महायशो महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ॥ ८ ॥ महाधैर्यो महावीर्यो महासंपन्महाबलः । महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥ ९ ॥ महामतिर्महानीतिर्महाक्षांतिर्महोदयः । महाप्राज्ञो महाभागो महानंदो महाकविः ॥ १० ॥ महामहामहाकीर्तिर्महाकांतिर्महावपुः । महादानो महाज्ञानो महायोगो महागुणः ॥ ११ ॥ महामहपतिः प्राप्तमहाकल्याणपंचकः । महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्री वृक्षादिशतम् ॥ ४ ॥ अर्घं ।

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः । महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥ १ ॥ महाव्रतपतिर्मह्यो महाकांतिधरोऽधिपः महामैत्रीमयोऽमेयो महोपायो महोदयः ॥ २ ॥ महाकारुण्यको मंता महामंत्रो महायतिः । महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपतिः ॥ ३ ॥ महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महेष्टवाक् । महात्मा महसांधाम महर्षिर्महितोदयः ॥ ४ ॥ महाक्लेशांकुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः । महापराक्रमोऽनंतो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥ ५ ॥ महाभवाब्धिसंतारिमहामोहाद्रिसूदनः । महागुणाकरः क्षांतो महायोगीश्वरः शमी ॥ ६ ॥ महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मा महाव्रतः । महाकर्मारिहात्मज्ञो महादेवो महेशिता ॥ ७ ॥ सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः । असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥ ८ ॥ सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः । दांतात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥ ९ ॥ प्रधानमात्मा प्रकृतिः परमः परमोदयः । प्रक्षीणबंधः कामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥ १० ॥ प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्रणतेश्वरः । प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो

दक्षिणोऽध्वर्यु रध्वरः ॥११॥ आनंदो नंदनो नंदो वंद्योऽनिन्द्योऽभिनंदनः। कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिंजयः ॥ १२ ॥

इति महामुन्यादिशतम् ॥ ६ ॥ अर्घं।

असंस्कृतः सुसंस्कारः प्रसंकृतो वै कृतांतकृत्। अंतकृत्कांतिगुः कांतश्चिंतामणिरभीष्टदः ॥ १ ॥ अजितो जितकामारिरमितोऽमितशासनः। जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितांतकः।२। जिनेन्द्रः परमानंदो मुनींद्रो दुंदुभिस्वनः। महेंद्रवंद्यो योगींद्रोयतींद्रो नाभिनंदनः ॥ ३ ॥ नाभेयो नाभिजो जातः सुव्रतो मनुरुत्तमः। अभेद्योऽनत्ययोनाश्वानधिकोऽधिगुरुः सुधीः।४। सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः। विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ॥ ५ ॥ क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी। अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ॥६॥ सुकृती धातुरिज्याहः सनयश्चतुराननः। श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥ ७ ॥ सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः। सत्याशीः सत्यसंधानः सत्यः सत्यपरायणः ॥ ८ ॥ स्थेयान्स्थवीयान्नदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः। अणारणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसां ॥ ९ ॥ सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः। सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥ १० ॥ सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत्। सुगुप्तो गुप्तिभृद् गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥ ११ ॥

इति असंस्कृतादिशतम् ॥ ७ ॥ अर्घं

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः। मनीषी धिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिरांपतिः ॥१॥ नैकरूपो नयस्तुंगो नैकात्मानैकधमकृत्। अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥ २ ॥ ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः। पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ॥ ३ ॥ लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता। मनोहरो मनोज्ञांगो धीरो गंभीरशासनः ॥ ४ ॥ धर्मयूपो दयायागो धर्म-

नेमिर्मुनीश्वरः धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः ॥ ५ ॥ अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः। सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥६॥ सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो निरजस्को निरुद्धवः अलेपो निष्कलंकात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥ ७ ॥ वश्येंद्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेंद्रियः। प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्मंगलं मलहानघः ॥८॥ अनीदृगुपमाभूतो दृष्टिर्दैवमगोचरः। अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ॥ ९ ॥ अध्यात्मगम्यो गम्यात्मा योगविद्योगिवंदितः। सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥ १० ॥ शंकरः शंवदो दांतो दमी क्षांतिपरायणः। अधिपः परमानंदः परात्मज्ञः परात्परः ॥ ११ ॥ त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्य स्त्रिजगन्मंगलोदयः। त्रिजगत्पतिपूज्यांघ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥ १२ ॥

इति बृहदादिशतम् ॥ ८ ॥ अर्घं

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः। सर्वलोकातिगःपूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥ १ ॥ पुराणपुरुषः पूर्वः कृतपूर्वांगविस्तरः। आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥ २ ॥ युगमुख्यो युगज्येष्ठो युगादिस्थितदेशकः। कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ॥ ३ ॥ कल्याणः प्रकृतिर्दीप्तः कल्याणात्मा विकल्मषः। विकलंकः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ॥ ४ ॥ देवदेवो जगन्नाथो जगद्बंधुर्जगद्विभुः। जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ॥ ५ ॥ चराचरगुरुर्गोप्योगूढात्मा गूढगोचरः। सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥ ६ ॥ आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः। सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥ ७ ॥ तपनीयनिभस्तुंगो बालार्काभोऽनलप्रभः। संध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः ॥८॥ निष्टप्तकनकच्छायः कनत्कांचनसंनिभः। हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुम्भनिभप्रभः ॥ ९ ॥ द्युम्नभाजातरूपाभो दीप्तजांबूनदद्युतिः। सुधौतकलधौतश्रीप्रदीप्तो हाटकद्युतिः ॥ १०॥

शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरक्षमः । शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥ ११ ॥ शांतनिष्ठो मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः । शांतिदः शांतिकृच्छांतिः कांतमान्कामितप्रदः ॥ १२ ॥ श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः । सुस्थिरः स्थावरः स्थाणुः प्रथीयान्प्रथित पृथुः ॥ १३ ॥

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम ॥ ६ ॥ अर्घं ।

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रंथेशो निरंबरः । निष्किंचनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥ १ ॥ तेजोराशिरनंतौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः । तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ॥ २ ॥ जगच्चूडामणिर्दीप्रः सर्वविघ्नविनायकः । कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशकः ॥ ३ ॥ अनिद्रालुरतंद्रालुर्जागरूकः प्रभामयः । लक्ष्मीपतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥ ४ ॥ मुमुक्षुर्बंधमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथः । प्रशांतरसशैलूषो भव्यपेटकनायकः ॥ ५ ॥ मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः । आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥ ६ ॥ प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित् । सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ॥ ७ ॥ श्रीशः श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयंकरः । उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ॥ ८ ॥ लोकोत्तरो लोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः । धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनृतपूतवाक् ॥ ९ ॥ प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेंद्रियः । भदंतो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षो वरप्रदः ॥ १० ॥ समुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः । कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ॥ ११ ॥ अनंतशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः । त्रिनेत्रस्त्र्यंबकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥ १२ ॥ समंतभद्रः शांतारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः । सूक्ष्मदर्शीजितानंगः कृपालुर्धर्मदेशकः ॥ १३ ॥ शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः । धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ॥ १४ ॥

इति दिग्वासादि शतं ॥ १० ॥

इत्यष्टाधिकसहस्रनामावली समाप्ता। अर्घं ।

धाम्नापते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः। समुच्चितान्यनुध्याय-न्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥१॥ गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः। स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफलं लभेत् ॥ २ ॥ त्वम-तोऽसि जगद्बंधुस्त्वमतोऽसि जगद्भिषक्। त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ॥ ३ ॥ त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोप-योगभाक्। त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यंगं स्वोत्थानंतचतुष्टयः ॥ ४ ॥ त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्चकल्याणनायकः। षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ॥ ५ ॥ दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः। दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ॥ ६ ॥ युष्मन्नामावलीदृब्धा-विलसत्स्तोत्रमालया। भवंतं वरिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥ ७ ॥ इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः। यः स पाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याणभाजनः ॥ ८ ॥ ततः सदेदं पुण्यार्थी पुमा-न्पठति पुण्यधीः। पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥ ९ ॥ स्तुत्वेति मघवा देवं चराचरजगद्गुरुं। ततस्तीर्थविहारस्य व्यधा-त्प्रस्तावनामिमां ॥ १० ॥ स्तुतिः पुण्यगुणोत्कीर्तिः स्तोता भव्यः प्रसन्नधीः। निष्ठितार्थो भवांस्तुत्यः फलं नैश्रेयसं सुखं ॥ यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वयं कस्यचित्। ध्येयो योगिजन-स्य यश्च नितरां ध्याता स्वयं कस्यचित् ॥ यो नेतृन् नयते नम-स्कृतिमलं नंतव्यपक्षेक्षणः। स श्रीमान् जगतांत्रयस्य च गुरुर्देवः पुरुः पावनः ॥ १२ ॥ तं देवं त्रिदशाधिपार्चितपदं घातिक्षयानंतरं, प्रोत्थानतचतुष्टयं जिनमिमं भव्याब्जनीनामिनं। मानस्तंभविलो-कनानतजगन्मान्यं त्रिलोकीपतिं,प्राप्ताचिंत्यबहिर्विभूतिमनघं भक्त्या प्रवन्दामहे ॥ ३ ॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

इतिश्रीभगवाञ्जिनसेनाचार्यविरचितजिनसहस्रनामस्तवनं।

स्तुति

श्री जी मैं तुम पूजन आयो, मेरी अरज सुनो दीनानाथ जी ॥ मैं
जल चंदन अक्षत शुभ लेके, तामे पुष्प मिलायो ॥श्रीजी० ॥ १ ॥
चरु और दीप धूप फल लेकर, सुन्दर अर्घ बनायो ॥श्रीजी० ॥ २ ॥
अर्घ बनाय गाय गुणमाला, तेरे चरणन शीश झुकायो ॥ श्रीजी० ॥३॥
आठपहर की चौसठ घड़ियाँ, शान्ति शरण तेरी आयो ॥ श्रीजी०॥४॥
मुझ सेवक की अर्ज यही है, जामन मरण मिटाओ ॥ श्रीजी० ॥५॥

सिद्धचक्र मंत्र (लघु)

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः ।

अष्टान्हिकाव्रत की जापें

समुच्चय—ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरसंज्ञाय नमः ।

१ ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरसंज्ञाय नम , २ ॐ ह्रीं अष्टमहाविभूति-संज्ञाय नम , ३ ॐ ह्रीं त्रिलोकसागरसंज्ञाय नमः, ४ ॐ ह्रीं चतुर्मुखसंज्ञाय नमः. ५ ॐ ह्रीं पंचमहालक्षणसंज्ञाय नमः, ६ ॐ ह्रीं स्वर्गसोपानसंज्ञाय नम', ७ ॐ ह्रीं सिद्धचक्रसंज्ञाय नमः, ८ ॐ ह्रीं इन्द्रध्वजसंज्ञाय नमः, ।

श्रीषोडशकारणव्रत की जापें

समुच्चय—ॐ ह्रीं श्रीषोडशकारणभावनाभ्यो नमः ।

१ ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धये नमः, २ ॐ ह्रीं श्रीविनयसम्पन्नतायै नमः, ३ ॐ ह्रीं श्रीशीलव्रतेष्वनतिचाराय नमः, ४ ॐ ह्रीं श्रीअभीक्ष्णज्ञानोपयोगाय नमः, ५ ॐ ह्रीं श्रीसंवेगाय नमः, ६ ॐ ह्रीं श्रीशक्तितस्त्यागाय नमः, ७ ॐ ह्रीं श्रीशक्तितस्तपसे नमः, ८ ॐ ह्रीं श्रीसाधुसमाधये नमः, ९ ॐ ह्रीं श्रीवैयावृत्यकरणाय नम., १० ॐ ह्रीं श्रीअर्हद्भक्त्यै नमः, ११ ॐ ह्रीं श्रीआचार्यभक्त्यै नमः, १२ ॐ ह्रीं श्रीबहुश्रुतभक्त्यै नमः, १३ ॐ ह्रीं श्रीप्रवचनभक्त्यै नमः, १४ ॐ ह्रीं आवश्यकापरिहाणाय नमः

१५ ॐ ह्रीं श्रीमार्गप्रभावनायै नमः, १६ ॐ ह्रीं श्रीप्रवचनवत्सलत्वाय नमः, ।

श्रीदशलक्षणव्रत की जापें

समुच्चय–ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्यधर्मांगाय नमः ।

१ ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमाधर्मांगाय नमः, २ ॐ ह्रीं श्रीउत्तममार्दवधर्मांगाय नमः, ३ ॐ ह्रीं श्रीउत्तमार्जवधर्मांगाय नमः, ४ ॐ ह्रीं श्रीउत्तमसत्यधर्मांगाय नमः, ५ ॐ ह्रीं श्रीउत्तमशौचधर्मांगाय नमः, ६ ॐ ह्रीं श्रीउत्तमसंयमधर्मांगाय नमः, ७ ॐ ह्रीं श्रीउत्तमतपोधर्मांगाय नमः, ८ ॐ ह्रीं श्रीउत्तमत्यागधर्मांगाय नमः, ९ ॐ ह्रीं श्रीउत्तमआकिञ्चन्यधर्मांगाय नमः, १० ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय नमः ।

श्रीपंचमेरुव्रत की जापें

१ ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुजिनचैत्यालयेभ्यो नमः, २ ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुजिनचैत्यालयेभ्यो नमः, ३ ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुजिनचैत्यालयेभ्यो नमः, ४ ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीजिनचैत्यालयेभ्यो नमः, ५ ॐ ह्रीं श्रीमन्दरमेरुजिनचैत्यालयेभ्यो नमः ।

श्रीरत्नत्रयव्रत जापें

१ ॐ ह्रीं श्रीअष्टांगसम्यग्दर्शनाय नमः, २ ॐ ह्रीं श्रीअष्टांगसम्यग्ज्ञानाय नमः, ३ ॐ ह्रीं श्रीत्रयोदशप्रकारसम्यक्चारित्राय नमः ।

रविव्रत जाप्य मंत्र

ॐ नमो भगवते चिन्तामणिपार्श्वनाथाय सप्तफणमंडिताय श्रीधरणीन्द्रपद्मावतीसहिताय मम ऋद्धिं सिद्धिं वृद्धिं सौख्यं कुरु-कुरु स्वाहा ।

अनन्त चतुर्दशी मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं हंसं अनन्तकेवलिभगवन् अनन्तदानलाभभोगोपभोगवीर्याभिवृद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ।

नित्यनियमपूजा।

(हिन्दी अनुवाद सहित)

देवशास्त्रगुरु पूजा।

ओं जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।

अर्थ—हे जिनेंद्र भगवन् ! आप जयवन्त होवो, जयवन्त होवो, जयवन्त होवो। आपके लिये हमारा नमस्कार हो, नमस्कार हो, नमस्कार हो।

विशेष—जयकारको तीनबार उच्चारण करनेसे जिनेंद्रभगवानकी सर्वोत्तमता तथा उनके लिये अपना उच्च आदरभाव प्रगट होता है और नमस्कारको तीनबार कहनेसे अन्तरंग विनयके साथ २ वचन तथा कायकी बहिरंग विनय भी प्रगट होती है। इसके सिवाय यह भी प्रगट होता है कि हमारे वन्दनीय आप ही हैं अन्य कोई नहीं है।

आर्या।

णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

अर्थ—मैं अरहंतोंके लिये नमस्कार करता हूं। मैं सिद्धोंके लिये नमस्कार करता हूं। मैं आचार्य परमेष्ठी को नमस्कार करता हूं, मैं उपाध्याय परमेष्ठीके लिये नमस्कार करता हूं तथा लोक-वर्ती सर्व साधुओंको नमस्कार करता हूं।

विशेष—ज्ञानावरणादि चार घातिया कर्मोंको नष्ट करके वीतराग तथा सर्वज्ञ पद पानेवाले अरहंत परमेष्ठी हैं। इनको ही परम हितोपदेशक भी कहते हैं क्योंकि केवलज्ञानसे लोक, अलोकवर्ती समस्त पदार्थोंको युगपत् जानकर जीवोंको यथार्थ उपदेश अरहंत ही देते हैं। अरहंत परमेष्ठी ही जिस समय बचे हुए चार अघातीकर्मोंको भी नाश कर देते हैं तब वे सिद्ध परमेष्ठी कहलाते हैं और उसी समय वे शरीरसे छूटकर लोकके ऊपरी भागमें विराजमान हो जाते हैं। मुनियोंके संघकी ठीक व्यवस्था रखनेवाले आचार्य होते हैं। वे प्रायश्चित्त आदि देकर मुनियोंके आचारसंबंधी सर्व दोषोंको पृथक् किया करते हैं तथा स्वयं भी पांच आचारोंको पालते है। मुनियोंको पढ़ानेवाले, धर्मका उपदेश देनेवाले उपाध्याय परमेष्ठी होते है और उपदेश आदि कार्योंको न करते हुए केवल मोक्षमार्गको साधनेवाले साधु परमेष्ठी होते हैं।

शंका—आठकर्मोंको नष्ट करनेवाले सिद्ध परमेष्ठी जब कि चार घातीकर्मोंके नाशक अरहंत परमेष्ठीसे परमविशुद्ध हैं तब मंत्रमें उनका पद दूसरा क्यों रक्खा? उनका नाम अरहंत परमेष्ठीके पहले होना चाहिये। इसी प्रकार उपदेश आदि बाह्य क्रियाओंको—जो कि रागआदि विकारों अथवा सूक्ष्म मलिनताको उत्पन्न करनेवाली हैं, छोड़कर परम विशुद्धताके कारणभूत आत्म-ध्यानमें लवलीन रहनेवाले साधु परमेष्ठी जब कि आचार्य तथा उपाध्याय परमेष्ठीसे भावोंकी विशुद्धतामें अधिक बड़े-चढ़े हैं तब

उनका पद आचार्य तथा उपाध्यायके पीछे क्यों रक्खा ?

उत्तर—यद्यपि विशुद्धतामें सिद्ध परमेष्ठी अरहंत परमेष्ठीसे तथा साधु परमेष्ठी आचार्य और उपाध्यायसे विशुद्धि मे अधिक है तो भी उनके द्वारा सांसारिक जीवोंको कल्याणकी प्राप्ति वा विशुद्धता नहीं मिलती है। जिस प्रकार अरहंतके उपदेशको पाकर संसारी जीव अजर अमर हो जाते है उस प्रकार सिद्धोंके द्वारा वे अपनी आत्मशुद्धि नहीं कर सकते है क्योंकि सिद्ध परमेष्ठी न तो इस संसारमे ठहरते ही है न शरीरधारी ही होते है जिससे कि जीवोंका उपदेशादिसे कुछ कल्याण कर सके। इस कारण अरहंत परमेष्ठीको पहला स्थान दिया है। इसी प्रकार जिस तरह आचार्य तथा उपाध्याय परमेष्ठी अपने पवित्र उपदेशोंसे तथा वाद-विवाद, संघव्यवस्था आदि द्वारा जीवोंका कल्याण तथा धर्मरक्षण करते है उस प्रकार साधु परमेष्ठी नहीं करते है। अतः आचार्य तथा उपाध्याय परमेष्ठीको साधु परमेष्ठीसे उच्चपद दिया है।

ओं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः ।

अर्थ—मै अनादिकालीन इस मूलमंत्रको नमस्कार करता हूं।

(यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना)

चत्तारि मंगलं[1]—अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं. साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा— अरहंता

---

१ मं=पापं, गालयतीति मंगल—अर्थात् पापको नाश करनेवाला मंगल होता है। अथवा मंग=सुख लातीति मंगल अर्थात् सुख-शांतिका लानेवाला मंगल होता है। सो पापके नाशक तथा सुख-शांतिके करनेवाले संसारमें उक्त चार पदार्थ ही है।

लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपरणत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलिपरणत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

इस संसारमें चार ही मंगल हैं। प्रथम तो अरहंत भगवान हैं। दूसरे सिद्धपरमेष्ठी मंगलरूप हैं। तीसरे साधु महाराज मंगलकारक हैं और चौथे केवली भगवानका कहा हुआ धर्म मंगलरूप है।

इस लोकमें चार पदार्थ ही सबसे उत्तम हैं। प्रथम तो अरहंत-परमेष्ठी सर्वोत्तम हैं। दूसरे समस्त कर्ममलसे रहित सिद्ध भगवान संसारमें सबसे उत्तम हैं। तीसरे साधु परमेष्ठी हैं। चौथे सर्वज्ञ-रचित धर्म परम उत्तम है।

सांसारिक दुःखसे बचनेके लिये मैं चारकी शरण लेता हूं। अर्हन्तकी शरण लेता हूं, सिद्धकी शरण लेता हूं, साधुपरमेष्ठीकी शरण लेता हूं तथा केवली भगवानसे उपदिष्ट धर्मकी शरण लेता हूं।

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पंचनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यंतरे शुचिः ॥२॥
अपराजितमंत्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥

एसो पंचणमोयारो सव्वपापपणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं ॥ ४ ॥
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥५॥
कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥६॥
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनीभूतपन्नगाः ।
विषो निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥७॥

जीव यदि इस पंच परमेष्ठीके नमस्कार-मंत्रका ध्यान करे तो वह सब पापोंसे छूट जाता है। ध्यान करते समय वह चाहे पवित्र हो या अपवित्र हो, चाहे अच्छी जगह हो अथवा बुरी जगह हो ॥ १ ॥

शरीर चाहे तो स्नानादि द्वारा पवित्र हो अथवा किसी अशुचि पदार्थके स्पर्शसे अपवित्र हो, इसके सिवाय सोती, जागती, उठती, बैठती, चलती आदि कोई भी दशा हो इन सभी दशाओं में जो पुरुष परमात्माका स्मरण करता है वह उस समय बाह्य और अभ्यन्तरसे (शरीरसे तथा मनसे) पवित्र है ॥ अर्थात् अपनी पवित्रता वास्तविकमें आत्मासे संबन्ध रखती है, सात कुधातुमय शरीर तो सर्वथा अपवित्र है। उसकी पवित्रता किसी भी प्रकार नहीं हो सकती। आत्माकी पवित्रता शुभ परिणामोंसे ही होती है और पंचपरमेष्ठीको स्मरण करते समय परिणामोंकी विशुद्धता अवश्य ही होती है। इसलिये परम पवित्रताको करने वाला नमस्कार मन्त्र (णमोकार मन्त्र) है ॥ इस श्लोकमें

परमात्मा शब्दसे पंच परमेष्ठी लिये हैं क्योंकि उत्कृष्ट आत्मा (परम उत्कृष्ट आत्मा) संसारमें इन्हींकी है ॥ २ ॥ यह णमोकार मन्त्र अन्य किसी मन्त्रसे प्रतिहत (खंडित-रुका हुआ) नहीं हो सकता इसलिये यह मन्त्र अपराजित है (किसीसे पराजित नहीं है) और सब विघ्नोंको हरनेवाला है तथा सभी मंगलोंमें यह प्रधान मंगल माना गया है ॥ ३ ॥ यह नमस्कार मन्त्र सर्व पापकर्मोंको नष्ट करनेवाला है और सभी मंगलोंमें मुख्य मंगल है ॥ ४ ॥ 'अर्हं' ऐसे जो दो अक्षर हैं वे ब्रह्म अर्थात् अरहंतके वाचक (कहनेवाले) हैं, तथा परम इष्ट जो सिद्धचक्र है उसको उत्पन्न करनेके लिये बीजके समान है, इसलिये 'अर्हं' को मैं मन, वचन, कायसे, सर्वदा नमस्कार करता हूं ॥ ५ ॥ आठ कर्मोंसे छूटे हुए तथा मोक्ष संपत्तिका घर और सम्यक्त्व, दर्शन, ज्ञान, अगुरुलघु, अव्याबाध, अवगाहन, सूक्ष्म, वीर्य, इन आठ गुणों सहित सिद्धसमूहको मैं नमस्कार करता हूं ॥ ६ ॥ जिनेन्द्र भगवानका स्तवन करनेसे शाकिनी, डाकिनी, भूत, पिशाच, सर्प, सिंह, अग्नि आदि समस्त विघ्न दूर हो जाते हैं। बड़े हलाहल विष भी अपना असर त्याग देते हैं ॥ ७ ॥

(यहां पुष्पांजलि चढ़ाना चाहिये)

(यदि अवकाश हो तो यहां पर सहस्रनाम पढ़कर दश अर्घ देना चाहिये अन्यथा निम्न लिखित श्लोक पढ़कर एक अर्घ चढ़ाना चाहिये)

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥७॥

मैं निर्मल अथवा उच्च मंगलगान (मंगलीक जिनेन्द्रस्तवन पूजनादि) के शब्दोंसे गुंजायमान इस जिनमंदिरमें जिनेन्द्र देवका

जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल तथा अर्घके द्वारा पूजन करता हूं।

ओं ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंत चतुष्टय तथा समवसरण, आठ प्रतिहार्य आदि लक्ष्मी से सहित जिनेन्द्रभगवानके एक हजार आठ नामोंके लिये मैं अर्घ चढ़ाता हूं।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं, स्याद्वादनायकमनंत-चतुष्टयार्हम्। श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतुर्जैनेंद्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥ ८ ॥

स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुंगवाय, स्वस्ति स्वभावमहि-मोदयसुस्थिताय। स्वस्ति प्रकाशसहजोर्जितदङ्मयाय, स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥ ९ ॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय, स्वस्ति स्वभावपर-भावविभासकाय। स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥ १० ॥

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिका-मधिगंतुकामः। आलंबनानि विविधान्यवलंब्यवल्गन्, भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥ ११ ॥

अर्हन् पुराणपुरुषोत्तम पावनानि वस्तून्यनूनमखिलान्यय-मेक एव। अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवलबोधवन्हौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥ १२ ॥

मैं तीन लोकके स्वामी, स्याद्वाद विद्याके नायक—पदार्थोंके अनेकान्तको प्रकट करनेमें अग्रेसर, अनंतदर्शन, अनंतज्ञान, अनंतसुख और अनंतवीर्य धारक तथा अनंतचतुष्टयादि अंतरंग एवं प्रातिहार्य समवशरणादि बहिरंग लक्ष्मीसे युक्त, जिनेन्द्र भगवानको नमस्कार करके जिनेश देवकी पूजनकी विधिको कहता हूं जो कि पूजन मूलसंघ (कुन्दकुन्दस्वामीकी परम्परा अथवा जैनसंघ) के सम्यग्दृष्टी पुरुषोंके लिये पुण्यबंधका प्रधान कारण है ॥ ८ ॥

तीन लोकके गुरु (प्रधान–गौरवशाली) तथा जिनप्रधान (कषायोंको जीतनेवाले मुनीश्वरोंके स्वामी) के लिये कल्याण होवे। स्वाभाविक महिमा (अनंतज्ञानादि) के उदयमें भले प्रकार ठहरे हुए भगवानके लिये मंगल होवे। स्वाभाविक प्रकाशसे (केवलज्ञानसे) बढ़े हुए, केवल दर्शनसे सहित जिनेन्द्रके लिये क्षेम होवे। उज्ज्वल, सुन्दर, तथा अद्भुत समवशरणादि वैभवके लिये कुशल होवे ॥ ६ ॥

विशेष—नमस्कार तीन प्रकारका होता है। एक स्तवनात्मक जैसे विनती स्तुति आदि रीतिसे नमस्कार। दूसरा आशीर्वादात्मक जैसे तुम्हारी जय होय, आपकी वृद्धि होय आदि। तीसरा स्वरूप-कथनात्मक जैसे तत्त्वार्थसूत्र, परीक्षामुखका मंगलाचरण। इन तीनोंमेंसे यहां मध्यका आशीर्वादात्मक नमस्कार है।

उछलते हुये निर्मल केवलज्ञानरूपी अमृतके प्रवाहवाले एवं स्वभाव और परभावके प्रकाशक और तीन लोकको जाननेवाले केवलज्ञानके स्वामी तथा त्रिकालवर्ती सर्व पदार्थों में ज्ञानके द्वारा फैले हुए जिनेन्द्र भगवानके लिये मंगल होवे ॥ १० ॥

अपने भावोंकी परमशुद्धताको पानेका अथवा जाननेका अभि-लाषी मैं देश कालके अनुकूल जलचन्दनादि द्रव्योंकी शुद्धताको

पाकर अथवा जानकर जिनस्तवन, जिनबिम्बदर्शन, ध्यान, आदि अनेक अवलंबनोंका आश्रय लेकर पूज्यपुरुष अरहंतादिका पूजन करता हूं ॥ ११ ॥

हे अर्हन्! हे पुरातन प्राचीन पुरुष! हे उत्तमपुरुष! यह असहाय दीन एक मनुष्य (पूजा करनेवाला) मैं इन पवित्र समस्त जलादि द्रव्योंको, दैदीप्यमान, निर्मल केवलज्ञानरूपी इस अग्निमें सम्पूर्ण पुण्यरूप जैसे बन सके तैसे एकाग्रचित्त होकर हवन करता हूं। भावार्थ—घृत, कपूर, धूप आदि द्रव्योंसे अग्निकुण्डमें हवन किया जाता है उसीके अनुसार यहां केवलज्ञानको अग्निकुण्ड कल्पित करके जलादि द्रव्य द्वारा हवनरूपसे अरहंतके पूजनकी प्रतिज्ञा बतलाई है ॥ १२ ॥

ओं ह्रीं विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

इस प्रकार पुजारी अरहंत प्रतिमाके सन्मुख विधिपूर्वक पूजन की प्रतिज्ञाके निमित्त पुष्पोंकी अंजलि क्षेपण करे।

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः। श्रीसंभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः। श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः। श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः। श्रीपुष्पदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः। श्रीश्रेयान्स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः। श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनंतः। श्री धर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशांतिः, श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अरनाथः। श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः। श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः। श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः ॥

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अनंतचतुष्टयादि अंतरंग तथा आठ प्रातिहार्य और अतिशय, समवशरणादि बाह्य लक्ष्मीसे युक्त श्रीऋषभनाथजी प्रथम तीर्थंकर हमारे कल्याणके लिये होओ। इसी रीतिसे प्रत्येक तीर्थंकरके लिये नमस्कार है।

स्वस्ति शब्दके कल्याण, क्षेम, मंगल, कुशल आदि अनेक शुभ अर्थ हैं। प्रत्येक नमस्कारके अंतमें पुष्पांजलि क्षेपण करनी चाहिये।

अब मुनीश्वरों का स्तवन किया जाता है।

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः॥

भाषा—अब ऋद्धिधारी महाऋषीश्वरोंको नमस्कार करते हैं—कोई मुनीश्वर अविनाशी, अचल, अद्भुत केवलज्ञानके धारक हैं। किन्हीं यतीश्वरोंके दैदीप्यमान मनःपर्ययज्ञान है तथा कोई ऋषीश्वर दिव्य अवधिज्ञानके बलसे प्रबुद्ध (जागृत) हैं ऐसे महाऋषि हमारे लिये कल्याण करें॥ १॥

विशेष—ऋद्धिका अर्थ शक्ति है। ये शक्तियां आत्मामें अनन्त हैं। उनमेंसे मुनीश्वरोंमें तपके बलसे कर्मोंका क्षयोपशम होनेके कारण ये ऋद्धियां प्रगट होती है। उनमेंसे बुद्धिसंबंधी ऋद्धियां अठारह प्रकारकी हैं जिनमेंसे इस श्लोकमें तीन ऋद्धियोंको बतलाया है

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः॥

कोष्ठस्थधान्योपम, एकबीज, सभिन्नसंश्रोतृत्व पदानुसारित्व इन चार प्रकारकी बुद्धि ऋद्धिको धारण करनेवाले ऋषिराज हमारे लिये मंगल करें॥ २॥

विशेष—जिस प्रकार भंडारमें हीरा, पन्ना, पुखराज, चांदी, सोना, धान्य आदि अनेक पदार्थ जहां जैसे रख दिए जावें पश्चात् बहुत समय बीत जानेपर यदि वे निकालें जांय तो जैसेके तैसे (न तो कम, न अधिक) भिन्न २ उसी स्थानपर रक्खे हुए मिलते हैं। तैसे ही सिद्धांत, न्याय व्याकरणादिके सूत्र, गद्य, पद्य ग्रन्थ जिस प्रकार पढ़े थे, सुने थे, पढ़ाये अथवा मनन किये थे, बहुत समय बीत जानेपर भी यदि पूछा जावे तो न तो एक भी अक्षर घटकर न बढ़कर तथा न पलटकर भिन्न २ ग्रंथोंको सुना दें। ऐसी शक्तिका नाम कोष्ठस्थधान्योपम ऋद्धि है। ग्रंथोंके एक बीज (मूल) पदके द्वारा उसके अनेक प्रकारके अनेक अर्थोंको जान लेना एक-बीज ऋद्धि है। बारह योजन लंबे, नौ योजन चौड़े क्षेत्रमें ठहरने वाली चक्रवर्तीकी सेनाके हाथी, ऊँट, घोड़, बैल, पक्षी, मनुष्य आदि सभीके अक्षर तथा अनक्षररूप नाना प्रकारके शब्दोंको एक साथ अलग २ सुननेकी शक्तिको संभिन्नसंश्रोतृत्व ऋद्धि कहते है। ग्रंथकी आदिके अथवा मध्यके या अंतके केवल पदको सुनकर सम्पूर्ण ग्रंथको कह देनेकी शक्तिको पदानुसारित्व ऋद्धि कहते हैं॥ २॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि ।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहन्तः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥

यद्यपि मनुष्योंमें स्पर्शन, रसना, घ्राण इन तीन इन्द्रियोंका उत्कृष्ट विषय नौ योजन है। अर्थात् मनुष्य यदि दूरसे स्पर्श करना चाहें तो अधिकसे अधिक नौ योजन दूरीके पदार्थोंका स्पर्श जान सकते हैं। इसी प्रकार अधिकसे अधिक दूर-स्थित पदार्थके रस तथा गंधको जाननेकी शक्ति होय तो नौ योजन दूरवाले पदार्थका रस तथा गंध जान सकते हैं। अधिक नहीं। इसी प्रकार यदि

अधिकसे अधिक दूरवाले पदार्थको यदि देखनेकी शक्ति होवे तो सैंतालिस हजार दोसौ त्रेसठ ४७२६३ योजन दूर स्थित पदार्थको देख सकते हैं और यदि अधिकसे अधिक दूरवर्ती शब्दको सुन सके तो बारह योजनके दूरवर्ती शब्दको सुन सकते हैं इससे अधिक नहीं। किन्तु दिव्य मतिज्ञानके बलसे मुनिराज सैकड़ों योजन दूरवर्ती पदार्थोंके स्पर्श, रस तथा रूपको स्पष्ट जान लेते हैं तथा शब्दको सुन लेते हैं। नेत्रके उत्कृष्ट विषयसे बहुत अधिक दूरवर्ती पदार्थोंको देख लेते हैं। ऐसे १ दूर संस्पर्शन, २ दूर संश्रवण, ३ दूर आस्वादन, ४ दूर आघ्राण तथा ५ दूर विलोकन ऋद्धिधारी मुनि हमारे लिये क्षेम करें॥ ३॥

प्रज्ञाप्रधानाः श्रवणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः॥

प्रज्ञाश्रमणत्व, प्रत्येकबुद्धता, दशपूर्वित्व, चतुर्दशपूर्वित्व, प्रवादित्व और अष्टांगमहानिमित्तज्ञता ऋद्धियोंको धारण करने वाले मुनिवर हमारी कुशलता करें। विशेष—पदार्थोंके अत्यन्त सूक्ष्म तत्वोंको जिनको कि केवली श्रुतकेवली ही बतला सकते हैं। द्वादशांग चौदह पूर्व बिना पढ़े ही प्रज्ञा ऋद्धिके प्रभाव से निःसंशय बतला देना प्रज्ञाश्रमणत्व ऋद्धि है। अन्य किसीके उपदेशके बिना ही केवल अपनी शक्तिसे ही ज्ञान संयम विधान निरूपण करना प्रत्येकबुद्धिता ऋद्धि है। अपने-अपने नाना स्वरूप तथा अनेक सामर्थ्य प्रकट करनेवालीं महावेगवालीं महा-रोहिणी आदि आई हुई अनेक विद्याओंके द्वारा भी चारित्रसे चलायमान न होना अर्थात् दश-पूर्वरूपी दुस्तर समुद्रको पार कर जाना दशपूर्वित्व ऋद्धि है। संपूर्ण श्रुतज्ञानका प्राप्त हो जाना चतुर्दशपूर्वित्व ऋद्धि है। अन्य क्षुद्रवादियोंकी तो क्या? यदि इन्द्र भी आकर शास्त्रार्थ करे तो उसको भी निरुत्तर कर दें यह

प्रवादित्व ऋद्धि है॥ १ अन्तरिक्ष २ भौम ३ अंग ४ स्वर ५ व्यंजन ६ लक्षण ७ छिन्न ८ स्वप्न इन आठ महा निमित्तोंके जानने को अष्टांगनिमित्तज्ञता ऋद्धि कहते हैं। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्रादिके उदय, अस्तादि द्वारा भूत, भविष्यत् वर्तमान काल-सम्बन्धी होने वाले हानि लाभको जानना अन्तरीक्ष निमित्तज्ञता है। पृथ्वीकी कठिनता, चिक्कणता, छिद्र आदिको देखनेसे ही होनेवाले हानि, लाभ, जय, पराजय तथा गढ़े हुये सोने चांदी आदि वस्तुओंको जान लेना भौम निमित्तज्ञता है। शरीर के अंग, प्रत्यंगादिको देखकर त्रिकाल सम्बन्धी शुभ, अशुभ जान लेना अंगनिमित्तज्ञता है। अक्षरात्मक तथा अनक्षरात्मक, शब्दको सुन लेनेसे ही होनेवाले हानि लाभको जान लेना स्वरनिमित्तज्ञता है। शिर, मुख, कंठादि स्थानोंमें तिल, मशे आदिको देख लेनेसे त्रिकालवर्ती हित, अहितको जान लेना व्यंजननिमित्तज्ञता है। श्रीवृक्ष, ध्वजा, कलश, सांथिया आदि चिन्होंको शरीरमें देख लेनेसे त्रिकालसम्बन्धी इष्ट, अनिष्टादिको जान लेना लक्षणनिमित्तज्ञता है। वस्त्र, शस्त्र, छत्र, जूता, आसन आदि पदार्थोंके शस्त्र, कांटे, चूहे आदिके द्वारा कटे हुए अंशको देखकर होनेवाले सुख, दुःख, हानि, लाभ आदिको जान लेना छिन्ननिमित्तज्ञता है। वात पित्त कफके आधिक्यसे रहित पुरुषके रात्रिके पिछले भागमें देखे स्वप्न द्वारा सूर्य, चन्द्र, समुद्र, गधा, ऊँट आदिको देखकर आगामी जीवन, मरण, सुख, दुःखादिको मालूम कर लेना स्वप्न निमित्तज्ञता है। इन आठों महानिमित्तोंको जानना अष्ट महानिमित्तज्ञता ऋद्धि है। इस प्रकार बुद्धि ऋद्धिके १८ भेद चार श्लोकों में बतला दिये हैं। अब यतीश्वरोंकी क्रिया ऋद्धिको बतलाते हैं:—

जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तुप्रसूनबीजाङ्कुरचारणाह्वाः ।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥

जंघा, श्रेणी, फल, जल, तन्तु, पुष्प, बीज, अंकुर, अग्नि-शिखा पर चलनेवाले चारण ऋद्धिके धारक ऋषिवर तथा आकाशगामिनी ऋद्धिके बलसे आकाशरूपी आंगनमें विहार करनेवाले मुनिवर हमको आनन्द प्रदान करें ॥ ५ ॥

विशेष—पृथ्वीसे चार अंगुल ऊंचे आकाशमें जंघाको शीघ्र उठाने रखनेसे सैकड़ों योजन गमन करनेकी शक्तिको जंघाचारण ऋद्धि कहते हैं। आकाश श्रेणीमें, वृक्षोंके फल, फूल, अंकुर, बीज आदि पर तथा जल पर एवं अग्निकी शिखा पर गमन करें किन्तु फूल, अंकुर आदि न टूटें और न उनके सूक्ष्म जीवों का ही घात हो ऐसी जलचारण, अग्निचारण, फलचारणादि ऋद्धियां हैं। पद्मासन, खड्गासन आदि आसनोंमें ठहरे हुए पैरोंको बिना उठाये, रक्खे ही आकाशमें विहार करना आकाशगामित्व ऋद्धि है। इस प्रकार मुनीश्वरोंकी दो प्रकारकी (चारण, आकाशगामित्व) क्रिया ऋद्धियोंको बतलाया है ॥ ५ ॥

अणिम्न दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि
मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥६॥

अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा ऋद्धिमें पूर्णतया कुशल तथा मनोबल, वचनबल और कायबल ऋद्धिके धारक योगीश्वर हमारे लिये मंगल करें ॥ ६ ॥

विशेष—विक्रिया ऋद्धि वैसे तो अनेक प्रकार है किन्तु उसके प्रधान चार ही भेद हैं। उनमेंसे परमाणुके समान अपने शरीरको छोटा बनाकर कमल नल सूक्ष्म छिद्रमें भी घुसकर वहां बैठने आदिके योग्य शरीरको सूक्ष्म कर लेना अणिमा ऋद्धि है। सुमेरु पर्वतसे भी बड़ा शरीर बना लेना महिमा ऋद्धि है। वायुसे भी हलकी अपनी देहको कर लेना लघिमा ऋद्धि है। वज्रसे भी

भारी अपने शरीरको कर लेना गरिमा ऋद्धि है। बल ऋद्धि तीन प्रकार है। १–अंतर्मुहूर्तमें समस्त द्वादशांगके पदार्थोंको विचार लेना मनोबल ऋद्धि है। २–सम्पूर्ण श्रुतज्ञानका अंतर्मुहूर्तमें ही पाठ कर जाना फिर भी जिह्वा कंठ आदिमें कुछ भी शुष्कता तथा थकावट न होना और न पसीनेका आना वचन बल ऋद्धि है। ३–छह मास, एक वर्ष, आदि बहुत समय तक उपवास करने पर भी शरीरका बल, कांति आदि थोड़ा भी कम न होना, शरीरमें किसी प्रकार भी खेद न होना कायबल ऋद्धि है॥ ६॥

विक्रिया ऋद्धिके चार प्रकार ऊपर बतला दिये हैं उनके सिवा सात भेदोंको अब और बतलाते हैं—

सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥

सकामरूपित्व, वशित्व, ईशित्व, प्राकाम्य, अन्तर्धान, आप्ति और अप्रतिघात ऋद्धियोंमें प्रधानता रखनेवाले ऋषिपुंगव हमारे लिये क्षेम करें॥ ७॥

विशेष—एक साथ अनेक आकारवाले अनेक शरीरोंको बना लेनेकी शक्ति सकामरूपित्व ऋद्धि है। सभी जीवोंको अपने वशमें कर लेना वशित्व ऋद्धिका कार्य है। तीन लोककी प्रभुता (ऐश्वर्य) करनेकी शक्ति ईशित्व ऋद्धि है। जलमें पृथ्वीके समान चलना तथा पृथ्वी पर जलके समान निमज्जन (डूबना) उन्मज्जन (डूबनेके पश्चात् ऊपर आनेके लिये उछलना) करनेकी सामर्थ्य को प्राकाम्य ऋद्धि कहते हैं। तुरंत ही अदृश्य (नहीं दिखाई देना) होनेकी शक्तिको अंतर्धान ऋद्धि कहते हैं। भूमिपर बैठे हुए ही अंगुलीसे सुमेरु पर्वतकी चोटी, सूर्य, चन्द्रादिको छू लेना आप्ति ऋद्धि है। पर्वतोंके बीचमेंसे किसी गुफा आदिके बिना ही

खुले मैदानके समान जाना आना और किसी प्रकार भी रुकावट न आना अप्रतिघात ऋद्धिकी महिमा है ॥ ७ ॥

तपकी अतिशय रूप सात ऋद्धियां हैं। उनका अब वर्णन करते हैं—

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपोघोरपराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥

१ दीप्ति, २ तप्त, ३ महोग्र, ४ महाघोर, ५ तपोघोर, ६ पराक्रमघोर और ७ ब्रह्मचर्य ऋद्धिधारी मुनिराज हमको मंगल प्रदान करें।

विशेष—बड़े २ उपवास करते हुए भी, मनोबल, वचनबल तथा कायबलका बढ़ना, शरीरमें सुगंधि आना, कमलकी सुगंधि वाली वायुके समान निःश्वासका निकलना तथा शरीरमें म्लानता न होकर महाकांतिका होना दीप्त ऋद्धि है। तपी हुई लोहेकी कड़ाहीमें जलके समान किये हुए भोजनका तुरंत सूख जाना अर्थात् उस भोजनमे मल, मूत्र, रक्त, मांस आदिका न बनना तप्त ऋद्धि है। एक उपवास, दो, चार, छह, दश, पक्ष, मास आदिके उपवासोंमेंसे किसी एकको धारण करके मरणपर्यंत उसको न छोड़ना महोग्र तप ऋद्धि है। सिंहनिःक्रीडित आदि महाउपवासों को करते रहना महाघोर नामक तप ऋद्धि है। वात, पित्त, कफ, संनिपातसे उत्पन्न ज्वर, कास, श्वास शूल आदि रोगोंसे पीड़ित होने पर भी उपवास, कायक्लेश आदिसे नहीं हटनेवाले तथा दुष्ट यक्ष, राक्षस, पिशाचके निवास स्थान, सिंह, हाथी, गीदड़, भेड़िया, सर्प आदिके शब्दोंसे व्याप्त भयानक, पर्वत, गुफा, श्मशान, सूने गांव आदिमें निवास करनेवाले मुनीश्वर तपोघोर ऋद्धिके धारक होते हैं। अत्यन्त पीड़ाकारक रोग सहित

होते हुए भी भयानक स्थानोंमें उपवासको बढ़ाते ही जांय ऐसे परम ऋषि पराक्रमघोर नामक ऋद्धिधारी होते है। चिरकालके तपश्चरण करनेके कारण स्वप्नमेंभी ब्रह्मचर्यसे नहीं डिगना, अति-विकारकारिणी परिस्थिति मिलने पर भी ब्रह्मचर्यमें दृढ़ बने रहना ब्रह्मचर्य नामक ऋद्धि है ॥ ८ ॥

आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीर्विषंविषा दृष्टिविषंविषाश्च ।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥

१ आमर्षौषधि, २ सर्वौषधि, ३ आशीर्विषंविष, ४ दृष्टिविषंविष ५ क्ष्वेलौषधि, ६ विडौषधि, ७ जल्लौषधि, ८ मलौषधि ऋद्धिधारी परमऋषि हमारा कल्याण करें ॥ ६ ॥

विशेष—जिनके हाथ, पैर आदिको छूनेसे ही सब रोग दूर हो जांय वे मुनिवर आमर्षौषधि ऋद्धिधारी हैं। जिनके शरीरका अंग प्रत्यंग तथा नख, केश आदिका छूना ही अथवा उन समस्त अवयवोंसे स्पर्श करनेवाली वायु ही समस्त रोगोंको दूर कर देती है, उन मुनीश्वरोंके सर्वौषधि ऋद्धि होती है। महाविषमयी भोजन भी जिनके मुखमें जाते ही अमृत समान हो जाय तथा जिनके आशीर्वाद (शब्द सुनने) से ही महाविषव्याप्त पुरुष भी नीरोग हो जाय वे मुनीश्वर आशीर्विष या आशीर्विषंविष ऋद्धिके धारक हैं। जिनके देखनेसे ही विषग्रस्त पुरुष भी स्वस्थ हो जाते हैं उन ऋषिवरोंके दृष्टिविष या दृष्टिविषंविष ऋद्धि होती है। जिनके निष्ठीवन (थूक) कफ आदिसे लगी हुई हवाके स्पर्शसे ही रोग दूर हो जांय उनके क्ष्वेल ऋद्धि होती है। जिनके मल (विष्ठा) की वायु ही रोगनाशक होती है वे मुनीश्वर विडौषधि ऋद्धिधारी होते हैं। जिनके शरीरका मैल (पसीनेमें लगी हुई धूलि) महा-रोगोंको दूर कर दे उनके जल्लौषधि समझनी चाहिये। जिनके

दांत, कान, नाक, नेत्र आदिका मैल सर्वरोगोंको नष्ट कर दे उन ऋषीश्वरोंके मलौषधि होती है। इस प्रकार औषधि ऋद्धिके आठ भेद हैं ॥ ६ ॥

क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥

क्षीरस्रावी, घृतस्रावी, मधुस्रावी, अमृतस्रावी, तथा अक्षीण-संवास और अक्षीणमहानस ऋद्धिधारी मुनिवर हमको मंगल प्रदान करें ॥ १० ॥

विशेष—नीरस भोजन भी जिनके पाणिपात्र (हाथों) में आते ही दूधके समान गुणकारी हो जाय अथवा जिनके वचन सुननेसे क्षीण पुरुष भी दूधके समान बलको प्राप्त करें उन मुनीश्वरोंके क्षीरस्राविणी ऋद्धि होती है। जिनके पाणिपुटमें आते ही रूखा भोजन भी घीके समान बलबर्द्धक हो जाय अथवा जिनके वचन घृतके समान तृप्ति करें वे यतीश्वर घृतस्राविणी ऋद्धिके धारक हैं जिनके हाथमें आया हुआ नीरस भोजन भी मधुर हो जाय अथवा जिनके वचन सुनते ही दुःखित, पीड़ित पुरुष भी साता लाभ करें वे योगीश्वर मधुस्राविणी ऋद्धिके धारक होते हैं। जिनके लिये दिया गया सामान्य आहार भी अमृतके समान पुष्टिकारी होय अथवा जिनके वचन अमृतके समान आरोग्यकारी होंय उन ऋषीश्वरोंके अमृतस्राविणी ऋद्धि होती है। इस प्रकार रसऋद्धि चार प्रकारकी है।

अक्षीण ऋद्धिके दो भेद हैं एक संवास, दूसरी महानस।

जिन मुनीश्वरोंके अक्षीण संवास नामक ऋद्धि होती है उनके निवासस्थानमें समस्त देव, मनुष्य आदि बिना किसी पारस्परिक बाधाके ठहर सकते हैं। एवं जिन ऋषीश्वरोंके अक्षीणमहानस

ऋद्धि होती है उन मुनीश्वरोंको जिस भोजनपात्रसे भोजन दिया जाता है उस दिन वह पात्र खाली नहीं होता है। अर्थात् उस दिन यदि चक्रवर्तीका समस्त कटक भी भोजन करे तब भी वह पात्र खाली न होगा—भरा ही रहेगा। इस प्रकार अक्षीण ऋद्धिके दो भेद हैं ॥ १० ॥

ये ऋद्धियां यतीश्वरोंको तपके प्रभावसे प्राप्त होती हैं।

इति स्वस्ति-मंगलविधानं।

इसप्रकार स्वस्तिमंगलका विधान समाप्त हुआ।

अथ देवशास्त्रगुरुपूजा।

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पापसंतापहर्ता,
त्रैलोक्याक्रान्तकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्घातिकर्मप्रणाशः।
श्रीमान्निर्वाणसम्पद्वरयुवतिकरालीढकण्ठः सुकंठ-
र्देवेन्द्रैर्वन्द्यपादो जयति जिनपतिः प्राप्तकल्याणपूजः ॥

जो जिनेंद्रदेव सब जीवोंके लिये कल्याणरूप हैं, त्रिलोकवर्ती समस्तपदार्थोंको जाननेवाले तथा समस्तप्राणियोंके पापरूपी संतापके नाशक हैं, जिनका निर्मल यश तीन लोकमें फैला हुआ है, जिनने कामदेवको नष्ट कर दिया है एवं जिनने चार घातिया-कर्मोंका नाश कर दिया है और जो अविनश्वर अनुपम विभूतिसे सहित हैं, मुक्तिरूपी सुन्दरीने अपनी बाहुओंसे जिनके कंठका आलिंगन किया है तथा जिनके चरण कमल सुन्दरकंठवाले

इंद्रोंने पूजे हैं और जो जन्म, दीक्षा आदि कल्याणकोंमें देवोंद्वारा पूजित हैं वे भगवान सर्वदा जयवंत हैं ॥ १ ॥

जय जय जय श्रीसत्कान्तिप्रभो ! जगतां पते !
जय जय भवानेव स्वामी भवाम्भसि मज्जताम् ।
जय जय महामोहध्वांतप्रभाकर तेऽर्चनम्
जय जय जिनेश ! त्वं नाथ ! प्रसीद करोम्यहम् ॥२॥

असाधारण लक्ष्मी तथा कांतिके धारक हे जिनेश्वर ! भो संसारके स्वामी ! आपकी जय होय, जय होय, क्योंकि संसार-सागरमें डूबनेवाले जीवोंके आप ही रक्षक हैं इसलिये आप जयशाली होवें, जयशाली होवें। हे भगवन् ! आप जयशील होओ, जयशील होओ। हे मोहरूपी गाढ़ अंधकारके नाशक सूर्य ! मैं आपकी पूजा करता हूं। हे जिनेश ! मुझपर प्रसन्न होवो ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (इत्याह्वानं)

हे जिनेंद्र भगवन ! यहां (वेदीपर) आइये !! आइये !!!

(इस प्रकार आह्वान अर्थात जिनेंद्रदेवको बुलानेकी प्रार्थना है)

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ ठः ठः (इति स्थापनम्)

हे जिनेंद्रभगवन ! यहां तिष्ठिये !! तिष्ठिये !!! (ठहरिये)

(इस प्रकार उनकी स्थापना करना है)

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

(इति सन्निधीकरणम्)

हे जिनेंद्र भगवन् ! यहां मेरे समीप हूजिये !! हूजिये !!!

(इस प्रकार जिनवरदेवको अपने समीप बुलानेका मंत्र है)

देवि ! श्रीश्रुतदेवते ! भगवति ! त्वत्पादपंकेरुह-
द्वन्द्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्या मया प्रार्थ्यते ।
मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा त्राहि मां
दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं संपूजयामोऽधुना ॥३॥

हे देवि ! हे श्रुतदेवते ! (श्रुतज्ञान या शास्त्ररूपिणी सरस्वती) भो भगवति ! आपके युगल (दो) चरणकमलोंका मैं भ्रमर (भौंरा) हूं। भक्तिपूर्वक मैं यह प्रार्थना करता हूं कि जिनेंद्रमुख-कमलसे उत्पन्न होनेवाली हे माता ! मेरे चित्तमें आप सदा निवास करो तथा सम्यग्दर्शन देकर मेरी रक्षा करो एवं मुझपर प्रसन्न होवो। मैं अब आपका पूजन करता हूं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं जिनेंद्रमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान !
अत्र अवतरावतर संवौषट्

जिनेंद्रदेवके मुखकमलसे उत्पन्न हे द्वादशांगरूप श्रुतज्ञान ! यहां आइये !! आइये !!!

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान !
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः

जिनेन्द्रदेवके मुख कमलसे उत्पन्न हे द्वादशांग श्रुतज्ञान ! यहां ठहरिये !! ठहरिये !!!

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान ! अत्र
मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

जिनेन्द्रदेवके मुखकमलसे उत्पन्न हे द्वादशांगरूप श्रुतज्ञान ! यहां मेरे समीप हूजिये !! हूजिये !!!

विशेष—आचारांग १, सूत्रकृतांग २, स्थानांग ३, समवायांग ४, व्याख्याप्रज्ञप्ति ५, ज्ञातृकथांग ६, उपासकाध्ययनांग ७, अंतःकृतदशांग ८, अनुत्तरोत्पाददशांग ९, प्रश्नव्याकरणांग १०, विपाकसूत्रांग ११ तथा पूर्व १२, ये श्रुतज्ञानके बारह अंग हैं अर्थात् ये बारह अंग ही पूर्णश्रुतज्ञान है। अन्तका पूर्वनामक जो अंग है उसके चौदह भेद है। इसलिये श्रुतज्ञानको ग्यारह अंग, चौदह पूर्व स्वरूप भी कहते हैं।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः ।
तपःप्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

अर्थ—जो महापुरुष पवित्र चारित्रका धारक होनेसे समस्त जीवोंका पूज्य है तथा जिसने अपने निर्दोष घोर तपश्चरणसे संसारमें प्रतिष्ठा पाई है, एवं निःसंगता, समता, अखण्ड ब्रह्मचर्यादि असाधारण गुणोंके कारण जो समस्त जीवोंमें गुरु (गौरवशाली) है। ऐसे परमपावन गुरुके चरण कमल युगलका मैं भले प्रकार पूजन करता हूं ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र
अवतरावतर संवौषट् ।

हे आचार्य, उपाध्याय सर्वसाधुके समूह ! यहां आइये ! आइये !!

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र
तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

हे आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुके समूह ! यहां तिष्ठिये ! तिष्ठिये !!

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र
मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

हे आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुसमूह ! यहां मेरे समीप हूजिये !! हूजिये !!!

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रवन्द्यान् शुम्भत्पदान् शोभितसारवर्णान् ।
दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलौघैर्जिनेंद्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

अर्थ—देवेन्द्र, धरणेन्द्र तथा नरेन्द्रों (चक्रवर्ती) द्वारा वन्दनीय तथा शोभनीय पदवीको धारण करनेवाले (अर्थात् संसारी जीवोंको कल्याण मार्गके असाधारणरूपसे उपदेशक होनेके कारण और समस्तदोषोंसे रहित होनेके कारण जिनेन्द्रभगवान, साक्षात् उपदेशकके अभावमें मोक्षमार्गका उपदेश देनेसे तथा अखण्डनीय सत्यसिद्धान्तमयी होनेसे शास्त्र एवं परम पवित्र चारित्रका प्रचार करनेसे और पूज्य गुणोंके धारण करनेसे गुरु शोभित पदके धारक हैं) एवं शोभित उत्तम वर्णवाले (अर्थात्—करोड़ों सूर्य, चन्द्रोंसे भी बढकर संसारमें अन्धकारको नाश करके वास्तविक प्रकाश करने वाला, संसारकी सर्वोत्तम परमाणुओंसे बना हुआ परमौदारिकस्वरूप अरहंतदेवका शरीर उत्तम वर्णवाला है और शास्त्र भी उत्तम वर्णमयी यानी अक्षरमयी है अथवा एकान्तरूपी अन्धकारको नाश करके पदार्थोंका वास्तविकस्वरूप बतलानेके कारण और प्रकाशमयी स्याद्वादस्वरूप होनेसे उत्कृष्टवर्णवाला है । एवं षट्कायके जीवोंको अभयदान देनेवाला, परमशांति वरसानेवाला गुरुका शरीर तो सारवर्णका धारक है ही) जिनेन्द्रभगवान, तथा शास्त्र और गुरुओंका, क्षीरसागरके

समान निर्मलता पवित्रता आदि गुणोंको रखनेवाले जलसमूहके द्वारा मैं पूजन करता हूं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोष-रहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्म-जरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनन्तज्ञान, अनन्तवीर्यके धारक और जन्ममरणादि अठारह दोषोंसे रहित, तथा चौंतीस अतिशय, आठ प्रातिहार्य और चार अनन्तचतुष्टय इसप्रकार ४६ गुणोंसे सहित परमब्रह्म श्री-अरहंत परमेष्ठीके लिये मैं जन्म जरा तथा मरणको नष्ट करनेके लिये जलको समर्पण करता हूं ।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांग-श्रुतज्ञानाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जिनेन्द्रभगवानके मुखकमलसे उत्पन्न, स्याद्वादनयसे (अनेकान्तवादसे) भरे हुए तथा आचारादि बारह अंगोंस्वरूप श्रुतज्ञानको जन्म जरा और मरणको विनाश करनेके लिये जल समर्पण करता हूं ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचा-र्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व-पामीति स्वाहा ।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान तथा सम्यक्चारित्रादि अनेक गुणों-से शोभायमान आचार्य उपाध्याय और समस्त साधुवर्गको मैं जन्म, जरा, मरणको नाश करनेके लिये जल समर्पण करता हूं ।

ताऽभ्यस्त्रिलोकोदरमध्यवर्तिसमस्तसत्वाहितहारिवाक्यान् ।
श्रीचंदनैर्गन्धविलुब्धभृंगैर्जिनेंद्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहं ॥२॥

अनेक प्रकारके सांसारिक संतापसे पीड़ित त्रिलोकवर्ती समस्त जीवोंके दुःखको दूर करनेवाले जिनके वाक्य (उपदेश) हैं ऐसे जिनेश्वरदेव तथा शास्त्र और गुरुओंका चंदनके द्वारा अर्चन करता हूं। जिस चंदनकी सुगंधतासे भ्रमर लोभी होगये हैं अर्थात् गंधको ग्रहण करनकेलिये जिस चंदन पर भौंरे आ गये हैं।

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

संसारके दुःखमयी संतापको विनष्ट करनेकेलिये मैं चन्दन अर्पण करता हूं। (शेष सभी अर्थ पहलेके समान है)

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन् सुभक्त्या ।
दीर्घाक्षतांगैर्धवलाक्षतौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥३॥

अर्थ—अपार संसाररूपी महासागरसे जीवोंको पार करनेके लिये बड़ी नौकाके समान श्रीजिनेंद्रदेव, शास्त्र तथा गुरु महाराज

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान् ।
फलैरलं मोक्षफलाभिसारं जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥८॥

क्षुब्ध (क्षोभसहित–उद्वेगवाले) तथा लुब्ध (लोभी) जीवों को अगम्य (नहीं जानने योग्य) तथा कुवादियोंके साथ वाद (शास्त्रार्थ) करनेमें अस्खलित प्रभावशाली (अर्थात् वाद करनेमें किसी प्रकार भी हीनशक्ति नहीं हैं) ऐसे जिनेंद्र भगवान, शास्त्र तथा गुरुको मोक्षरूपी फल देनेके कारण सारभूत (उत्तम) फलों से पूजता हूं ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

मोक्ष फल पानेके लिये मैं फलको समर्पण करता हूं । (शेष पूर्ववत्)

सद्वारिगंधाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।
फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोगान् जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥

निर्मल जल, चंदन अक्षत और पुष्पोंद्वारा तथा नैवेद्य, दीप, सुगंध धुआं छोड़नेवाली निर्मल धूप तथा अनेक प्रकारके फलों द्वारा पुण्यबंध करानेवाले जिनेंद्रदेव, शास्त्र तथा गुरुका मैं पूजन करता हूं ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घं नि० ।

मैं मुक्तिपद पानेके लिये अर्घ समर्पण करता हूं । (शेष प्रथमके समान है ।)

विशेष—गृहस्थ अष्टद्रव्य द्वारा पूजन करता है । किन्तु मुनिवर केवल भाव-पूजन करते हैं । उसके दो कारण हैं मुनि एक तो निष्परिग्रह हैं इसलिये पूजनके लिये द्रव्य कहांसे लावें । इसके

सिवाय दूसरा कारण यह भी है कि भावोंकी उत्कृष्ट निर्मलताके कारण मुनियोंको पूजनीय—अरहंतदेवादिके साथ एक प्रकारसे साक्षात् सम्बन्ध है क्योंकि उन्होंने जब प्रतिसमय जप, ध्यान द्वारा प्रतिदिनके स्तवनादि द्वारा अरहंतदेवको अपने हृदयमें विराजमान कर लिया है फिर जलादि द्रव्योंके आश्रयसे सम्बन्ध करनेकी क्या आवश्यकता ? जिन पुरुषों (मन्त्री आदि) का राजासे साक्षात् सम्बन्ध है उनको यह आवश्यकता नहीं रहती कि वह कुछ द्रव्य भेट करके राजासे मिलें किन्तु साधारण पुरुष कुछ न कुछ द्रव्य भेट करके राजासे मिल सकेगा। यही बात गृहस्थके लिये है अभी तक उसने इतनी योग्यता प्राप्त नहीं की है कि वह अपने मनको अरहंतादि देवोंके पास बिना किसी सहारेके पहुँचा सके उसके लिये मन्दिर होना चाहिये, उसमें अरहंत प्रतिमाका होना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त अन्य भी कारण उसको चाहिये तब अरहंतदेवसे मिल सकेगा। इसी प्रकार पूजन करते समय भी केवल प्रतिविम्ब दर्शनसे ही उस ऊँचे ध्येय पर नहीं पहुंच सकता है किन्तु यहां भी उसको कुछ अन्य आलम्बन चाहिये। इसलिये उसके पास इन अष्टद्रव्योंका होना आवश्यक है इसलिये पूजनमें गृहस्थ कहता है कि मैं जलके द्वारा, फल आदिके द्वारा आपका पूजन करता हूं। अर्थात् साक्षात् (बिना किसी सहारेके) पूजन करनेमें असमर्थ हूं।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते ।
त्रैसंध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयंतो नराः ॥
पुण्याढ्या मुनिराजकीर्तिसहिता भूत्वा तपोभूषणाः ।
ते भव्याः सकलावबोधरुचिरां सिद्धिं लभंते परां ॥१॥

इत्याशीर्वादः ।

भाषा—जो पुरुष जिनेन्द्रदेव, शास्त्र तथा गुरुओंकी सर्वदा भक्तिपूर्वक अनेक प्रकारके छन्द, अलंकारादि परिपूर्ण वाक्योंका उच्चारण करते हुए तीन समय—प्रातःकाल, मध्याह्न काल तथा सांयकाल पूजन करते हैं वे पुण्यशाली भव्य जीव स्वर्गादिगतियोंसे आकर तपरूपी भूषणसे भूषित होकर मुनीश्वरोंकी निर्मल कीर्तिको धारण करके केवल-ज्ञानसे रमणीय उत्कृष्ट सिद्धिको (मुक्तिको) पाते हैं।

(ये आशीर्वाद वाक्य हैं। यहां पर पुष्पांजलिक्षेपण करना चाहिये)

अब चौवीस तीर्थंकरोंका स्तवन करते हैं—

वृषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनंदनः ।
सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥
चन्द्राभः पुष्पदंतश्च शीतलो भगवान्मुनिः ।
श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥
अनंतो धर्मनामा च शांतिः कुंथुर्जिनोत्तमः ।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३ ॥
हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।
ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥ ४ ॥
कर्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसम्भवः ।
एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥
पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः ।
चर्विंतुधस्य संघस्य शांतिं कुर्वन्तु शाश्वतीम् ॥ ६ ॥

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् । ७ ॥

अर्थ— श्री ऋषभनाथजी, अजितनाथजी, सम्भवनाथजी, अभिनन्दननाथजी, सुमतिनाथजी, पद्मप्रभजी, सुपार्श्वनाथजी, चन्द्रप्रभजी, पुष्पदंतजी, शीतलनाथजी, श्रेयांसनाथजी, वासुपूज्यजी, निर्मलकांतिके धारक विमलनाथजी, अनन्तनाथजी, धर्मनाथजी, शांतिनाथजी, कुंथुनाथजी, अरनाथजी, मल्लिनाथजी, मुनिसुव्रतनाथजी, नमिनाथजी, हरिवंशमें उत्पन्न अरिष्टनेमिनाथजी तथा धरणेन्द्र द्वारा पूजित और यक्ष शरीरके धारक कमठके द्वारा किये हुए उपसर्गको अचल आत्मध्यानके द्वारा नष्ट करनेवाले श्रीपार्श्वनाथ एवं सिद्धार्थराजाके यहां जन्म लेनेवाले तथा कर्म जंजालका अन्त (नाश) करनेवाले श्रीमहावीर जिनेश्वर इसप्रकार मनोहर कांतिके धारक देवों तथा असुरों के समूह द्वारा पूजित तथा अपार विभूतिके धारक भरत, श्रेणिकादि अनेक सम्राटों (राजाओंके राजा) द्वारा पूजित ये चौवीस तीर्थंकर चार प्रकारके संघ (श्रावक, श्राविका, मुनि, आर्यिका) के लिये अविनश्वर शांतिको करें ॥ ६ ॥

जिनेन्द्रभगवानमें सर्वदा मेरी परमभक्ति हो । क्योंकि जिनेन्द्रदेवकी वास्तविक भक्ति (श्रद्धा) रूप सम्यग्दर्शन ही वास्तवमें संसारको निवारण करनेवाला एवं मोक्षको करनेवाला है ॥ ७ ॥

(यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सम्यग्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ॥ ८ ॥

अर्थ—सर्वज्ञकथित शास्त्रमें मेरी सर्वदा भक्ति होवे क्योंकि

संसारको नाश करनेवाला तथा मोक्षको देनेवाला सम्यग्ज्ञान ही है अर्थात् सम्यग्ज्ञान मोक्षका कारण है, और वह शास्त्रों द्वारा उत्पन्न होता है। इसलिये ज्ञान उत्पन्न करनेके लिये शास्त्रमें पूज्य-भावका होना परम आवश्यक है जो कि मुझमें सर्वदा विद्यमान रहो।

यहां पुष्पोंकी अंजलि चढ़ाना चाहिये।

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे।
चारित्रमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ॥ ६ ॥

अर्थ—निर्दोष तपश्चरणको करनेवाले गुरुओं—आचार्य, उपाध्याय तथा साधुवर्गमें मेरा सर्वदा भक्तिभाव उत्पन्न होवे, क्योंकि संसारको नष्ट करनेवाला तथा मोक्षको करनेवाला सम्यक्चारित्र ही है अर्थात् क्षायिकसम्यक्त्व तथा क्षायिकज्ञानके होजाने पर भी क्षायिकचारित्रके बिना कर्मोंसे मुक्ति नहीं होती है इसलिये सम्यक्चारित्र इस अपेक्षा मोक्षका प्रधान कारण है वह चारित्र मुख्यतया निःसंग मुनीश्वरोंको प्राप्त होता है इसलिये गुरुओंमें विनीत पूज्यभावोंका होना आवश्यक है। अतः मुझको गुरु भक्ति प्राप्त हो।

यहां पुष्पांजलि चढ़ाना चाहिये।

अथ देवजयमाला।

वत्ताणुट्ठाणे जणधणुदाणे पइपोसिउ तुहु खत्तधरु।
तव चरणविहाणे केवलणाणे तुहु परमप्पउ परमपरु ॥१॥

अर्थ—हे भगवन् ! आपने सांसारिक प्रजाको (संसारी जीवोंको) ब्रह्मानुष्ठान तथा परमसुखको करनेवाले रत्नत्रयको देकर पुष्ट किया इसलिये आप ही वास्तवमें क्षत्रिय (छत्रधर) हैं क्योंकि क्षत-दुःखित जीवका रक्षक ही क्षत्रिय कहलाता है और तपश्चरण करने पर आप केवलज्ञानधारी हुए इसलिये आप मुनीश्वर, गणधरादिक उत्तम पुरुषोंमें भी उत्तम हो गये ॥ १ ॥

पद्धरी छंद ।

जय रिसह रिसीसरणमियपाय, जय अजिय जियंगमरोसराय।
जय संभवसंभवकयविओय, जय अहिणंदण णंदियपओय ॥

अर्थ—ऋषीश्वरों (गणधरादिकों) द्वारा जिनके चरणकमल नमित (पूजित) हैं ऐसे हे ऋषभनाथ ! आप जयवंते हों। कामदेव, तथा रागको जीतनेवाले हे अजितनाथ जिनेश्वर ! आप जयशाली हों। जिन्होंने दुःखमयी सांसारिक दुःखको हटा दिया है ऐसे हे सम्भवनाथ ! आप जयवान हों। दर्शनोपयोग तथा ज्ञानोपयोगके बढ़ानेवाले, हे अभिनंदननाथ ! आपकी जय होय ॥ २ ॥

जय सुमइ सुमइसम्मयपयास, जय पउमप्पउ पउमाणिवास ।
जय जयहि सुपास सुपासगत्त, जय चंदप्पह चंदाहवत्त ॥३॥

अर्थ—सत्यमतका प्रकाश करनेवाले, केवलज्ञानधारी हे सुमतिनाथ भगवन् ! आप जयशील हों। केवलज्ञान, केवलदर्शनादिक तथा कीर्ति कांति आदि लक्ष्मीके निवासालय हे पद्मप्रभ जिनेश ! आप जयधारी हों। समचतुरस्रसंस्थान तथा वज्रवृषभनाराचसंहननके कारण असाधारण सुन्दरता युक्त हैं पार्श्वभाग (पसबाड़े) जिसमें, ऐसे सुन्दर शरीरवाले अथवा

कमरूपी जालमें दृढ़ बंधे हुए संसारी जीवोंकी रक्षा करनेवाले (सुष्ठुतया पार्श्वगान् आ समन्तात् त्रायते) हे सुपार्श्वनाथ भगवन्! आपकी सदा जय हो। चन्द्रप्रभा (चांदनी) के समान जीवोंको सुख, शांति, तथा आल्हादका देनेवाला एवं अज्ञानान्धकारको भगानेवाला है मुख जिनका, ऐसे हे चन्द्रप्रभ जिनेश! आप सर्वदा जयवंत हों।

जयपुप्फयंत दंतंतरंग, जय सीयल सीयल वयणभंग।
जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज, जय वासुपुज्ज पुज्जाणपुज्ज ॥४॥

अर्थ—जिन्होंने अन्तरंगको दमन किया है अर्थात् मनका अथवा उसके सम्बन्धसे होनेवाले क्रोध, मान लोभादि विकारोंका क्षय करनेवाले हे पुष्पदंत जिन! आप जयशील हों। संसारके असह्य संतापसे तड़फड़ाते हुए जीवोंके लिये शीतल-बचनशैलीके धारक अथवा एकान्तवादोंके अज्ञानतापसे इधर उधर छटपटाने वाले जीवोंके लिये शीतल, सप्तभंगी (स्याद्वाद) के धारक हे शीतलनाथ भगवन्! आप सदा जयवंत हों। सूर्यके समान कल्याण स्वरूप किरणोंके धारण करनेवाले (अर्थात् जिस प्रकार लोकमें प्रकाश करनेवाली सूर्यकी किरणें हैं उसी प्रकार संसारका कल्याण करनेवाली आपकी किरणें हैं) हे श्रेयांसनाथ स्वामिन्! आप सर्वदा जयवान हों। देव मनुष्य तिर्यंचोंसे पूज्य इन्द्र, अहमिन्द्र, नरेन्द्र चक्रवर्ती, गणधर, मुनीश्वर तथा सिंहादिकोंके द्वारा पूजनीय हे वासुपूज्य जिनपते! आप सर्वदा जयधारक हों॥ ४॥

जय विमल विमलगुणसेढिठाण, जय जयहि अणंताणंतणाण।
जय धम्म धम्मतित्थयर संत, जय संति संति विहियायपत्त॥

अर्थ—क्षुधादिक दोषोंसे रहित निर्मल गुणोंको पानेके लिये

श्रेणीके समान (अर्थात्—मरण क्षुधादिक मैलसे रहित निर्मल गुण आपके आश्रयसे मिलते हैं इसलिये उच्च मोक्ष महलमें रक्खे हुए केवलज्ञान आदि निर्मल गुणोंके प्राप्त करानेके लिये आप श्रेणी–जीनाके समान हो) हे विमलनाथ देव ! आप सदा जयशील रहो। त्रिलोकवर्ती जीव, पुद्गलादि छह द्रव्योंके अनन्तानन्त भेदोंको तथा उनकी अनन्तानन्त पर्यायोंको एक साथ प्रत्यक्ष जाननेवाले अनन्तज्ञानधारी श्रीअनन्तनाथ जिनेश्वर ! आप बारम्बार जयशाली हों। नरक निगोद तथा तिर्यञ्चादि योनियोंमें दुःखमें व्याकुल संसारसागरके कायिक, मानसिक दुःखरूपी भवरोंके चक्करमें पड़े हुए तथा जन्म, मरणादिरूपी कुम्भीर, मगरादि दुष्ट जीवोंसे रोंदे हुए एवं पार करनेकेलिये भुजबल, नौका घाट आदि आश्रयोंसे रहित जीवोंका उद्धार करनेके लिये सम्यग्दर्शनादिरूपी अथवा क्षमा, शौच, दया आदि स्वरूप धर्मतीर्थके (धर्मरूपी घाट) करनेवाले श्रीधर्मनाथ तीर्थंकर सर्वदा जयवंत हों। आहारादिक संज्ञाओंके अथवा ज्ञानावरणादि कर्मोंके प्रचण्ड संतापको दूर करनेकेलिये छत्रके धारक अथवा दुष्कर्मोंके असह्यसंतापसे संतप्त जीवोंकी रक्षा करनेके लिये सदुपदेशरूपी छत्रको (छातेको) प्रदान करनेवाले श्रीशांतिनाथ महाराज हमारे हृदय में जयशाली रहें।

जय कुन्थु कुन्थुपहुअंगि सदय, जय अर अरमाहर विहियसमय।
जय मल्लि मल्लि आदामगंध, जय मुणिसुव्वय सुव्वयणिबंध ॥

अर्थ—कुन्थु आदिक समस्त संसारवर्ती जीवों पर परमदयालु श्रीकुन्थुनाथ जिनवर जयकारको प्राप्त हों। तृप्तिकारक अपार अलौकिक निराकुल सुखको प्रदान करनेवाली मुक्ति सुन्दरीके वर, दरिद्र जीवोंकी दरिद्रता नष्ट करनेके लिये (अर्थात् मुक्ति प्राप्त करानेके लिये) अनुकूल शासनके बनानेवाले श्रीअरनाथ-

तीर्थंकर ! आपकी सर्वदा जय हो। रोग शोकादिरूपी दुर्गंधिके नष्ट करनेवाले तथा मालती पुष्पोंकी मालाके समान आनन्दकारिणी धार्मिक सुगन्धिके फैलानेवाले अथवा मालती पुष्पमालाके समान प्रमोदकारी यश अथवा सुगन्धिके धारक श्रीमल्लिनाथ भगवन् ! आपका सर्वदा जयकार जयकार हो। ऋषीश्वरोंके पवित्र चारित्र को उत्पन्न करनेवाले हे मुनिसुव्रतनाथ तीर्थेश्वर ! आप जयवन्त हों।

जय णमि णमियामरणियरसामि, जय णेमि धम्मरहचक्कणेमि
जय पास पासछिंदणकिवाण, जय वड्ढमाण जसवड्ढमाण ॥

अर्थ—देव समूहके स्वामी-इन्द्रों द्वारा पूजित हे नमिनाथ जिनवर ! आप जयशाली रहो। धर्मरूपी रथको चलानेके लिये चक्रनेमि (पहियोंके धुरा) के समान हे नेमिनाथ जिनेश्वर ! आप जयशील हों। संसार जालको काटनेके लिये खड्गके समान श्रीपार्श्वनाथ जिनराज ! आप जयवन्त हों। एवं तीन लोकमें निर्मलकीर्तिसे बढ़े हुए श्रीवर्द्धमान तीर्थेश्वर ! आपकी सर्वदा जय हो ॥ ७ ॥

घत्ता ।

इह जाणिय णामहिं दुरियविरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावलिहिं ।
अणहणहिं अणाइहि समियकुवाइहिं, पणविवि अरंहतावलिहिं ॥

अर्थ—इस प्रकार दुष्कर्मोंको नाश करनेवाले, देवसमूह द्वारा परिपूजित, अनिधन (अविनाशी) तथा अनादि (आदिरहित) पर कुवादियोंको शान्त करनेवाले, प्रसिद्ध नामधारक ऋषभ आदि अरहंतोंके समूहको नमस्कार करता हूं ।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—श्रीऋषभनाथ जिनेश्वरसे लेकर श्रीवीरनाथ जिनवर पर्यंत चौबीस तीर्थंकरोंको महार्घ अर्पण करता हूं।

(पूजनके तथा जयमालाके अन्तिम अर्घको ही प्रायः महार्घ कहते हैं।)

अथ शास्त्र जयमाला।

संपइसुहकारण कम्मवियारण, भवसमुद्दतारणतरणं।
जिणवाणि णमस्समि सत्तिपयासमि, सग्गमोक्खसंगमकरणं॥

अर्थ—हे जिनेन्द्रभगवानके मुखसे विनिर्गत सरस्वती देवी! सुख सम्पत्तिकी दाता तुम्हीं हो, कर्मोंकी जड़ काटनेवाले सच्चे उपदेशको प्रदान करनेसे वर्तमान समयमें कर्मोंको भेदनेवाली तुम्हीं हो, तथा धर्मतीर्थके चलानेवाले—तीर्थंकरोंके अभावमें असारसंसार सागरसे जीवोंको पार लगानेके लिये तुम्हीं नौका हो, एवं स्वर्ग तथा मोक्षका संगम करानेवाली तुम ही हो। इसलिये जिनवाणी! तुमको नमस्कार करता हूं तथा तुम्हारी सुखमयी पवित्र आराधनामें अपनी वाचनिक, शारीरिक तथा मानसिक शक्तिको प्रकट करता हूं॥ १॥

जिणंदमुहाओ विणिग्गयतार, गणिंदविगुंफिय गंथपयार।
तिलोयहिमंडण धम्महखाणि, सया पणमामि जिणिंदहवाणि।

अर्थ—जिनेंद्रके मुखकमलसे जिसका जन्म हुआ और फिर गणधरदेवने जिसकी शास्त्र रूपमें (द्वादशांग रूपमें) रचना की ऐसी सत्य संयम, शौचादि धर्मरत्नोंको उत्पन्न करनेवाली खानि तथा तीन लोककी भूषणस्वरूप हे जिनवरवाणि! आपको सदा नमस्कार करता हूं।

अवग्गह ईह अवाय जुएहि, सुधारणभेयहिं तिण्णिसएहिं ।
मई छत्तीस बहुप्पमुहाणि, सया पणमामि जिणिंदहवाणि ॥

अर्थ—अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा तथा बहु बहुविधादिक भेदोंमे मतिज्ञानके ३३६ तीनसौ छत्तीस भेद हैं। उस मतिज्ञान-स्वरूप हे जिनवाणि ! तुमको सदा प्रणाम है ॥ ३ ॥

सुदं पुण दोण्णि अणेयपयार, सुबारहभेय जगत्तयसार ।
सुरिंदणरिंदसमुच्चिअो जाणि, सया पणमामि जिणिंदहवाणि ॥

अर्थ—तीन लोकमें सर्वोत्तम श्रुतज्ञानके अंगवाह्य तथा अंग-प्रविष्ट ये दो भेद हैं इनमें से अंगप्रविष्टके बारह भेद हैं और अंगवाह्य अनेक प्रकारका है। ऐसी श्रुतज्ञानस्वरूप, इन्द्र तथा चक्रवर्तियोंमे पूजित हे जिनभारती ! तुमको मेरा सदा नमस्कार है ॥ ४ ॥

जिणिंदग णदणरिंदह रिद्धि, पयासइ पुण्ण पुराकिउलद्धि ।
णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि, सया पणमामि जिणिंदहवाणि

अर्थ—तीर्थंकर, गणधर तथा चक्रवर्त्यादिक महापुरुषोंकी ऋद्धिका तथा पूर्वभवमें तीर्थंकरादिक होनेके लिये उपार्जन किये हुए पुण्यकर्मको प्रकट करनेवाले प्रथमानुयोगस्वरूप तुमको जानकर हे जिनेंद्रवाणि ! तुम्हारे लिये सदा नमस्कार करता हूं ॥ ५ ॥

जु लोयअलोयह जुत्ति जणेइ, जु तिण्णि वि कालसरूव भणेइ।
चउग्गइ लक्खण दुज्जउ जाणि, सया पणमामि जिणिंदहवाणि

अर्थ—जो लोक तथा अलोककी रचना विस्तार आदिको प्रगट करता है तथा जो भूत, भविष्यत, वर्तमान कालोंका स्वरूप बतलाता है और मनुष्य, देव, नरक, तिर्यंच गतियोंका चित्र

स्पष्ट दिखलाता है ऐसे दूसरे करणानुयोगस्वरूप हे वाणि ! तुमको मेरा नमस्कार है ॥ ६ ॥

जणिंदचरित्तविचित्त मुणेइ, सुसावइधम्मह जुत्ति जणेइ ।
णिउग्गु वि णिज्जउ इत्थु वियाणि, सया पणमामि जिणिंदहवाणि

अर्थ—जिसके द्वारा मुनीश्वरोंका विचित्र चारित्र जाना जाता है तथा जो श्रावक धर्मका प्रगट करनेवाला है ऐसे तीसरे करणानुयोगस्वरूप हे जिनभारती ! तुमको मैं सदा प्रणाम करता हूं ॥ ७ ॥

सुजीवअजीवहतच्चह चक्खु, सुपुण्णविपायविबंधविमुक्खु ।
चउत्थुणिउग्गुविभासिय जाणि, सया पणमामि जिणिंदहवाणि

अर्थ—जीव, अजीव, पुण्य, पाप, बंध, मोक्षादिक तत्वोंको यथार्थ प्रगट करनेवाले चौथे द्रव्यानुयोगको प्रकाशित करनेवाली हे जिनवाणि ! तुमको मेरा नमस्कार है ॥ ८ ॥

तिभेयहिं ओहिविणाणविचित्तु, चउत्थु रिजोविउलं मइउत्तु ।
सुखाइय केवलणाण वियाणि, सया पणमामि जिणिंदहवाणि

अर्थ—देशावधि, परमावधि तथा सर्वावधि ऐसे तीन भेद रूप और अनुगामी, अननुगामी आदि अनेक भेदस्वरूप अवधि-ज्ञान है तथा ऋजुमति और विपुलमति भेदरूप चौथा मनःपर्यय-ज्ञान है एवं ज्ञानावरण कर्मके क्षयसे उत्पन्न होनेवाला केवलज्ञान है । इन तीन ज्ञान स्वरूप हे जिनवरवाणि ! तुमको सदा प्रणाम करता हूं ॥ ६ ॥

जिणिंदहणाणु जगत्तयभाणु, महातमणासिय सुक्खणिहाणु ।
पयच्चउ भत्तिभरेण वियाणि, सया पणमामि जिणिंदहवाणि ॥

अर्थ—जिनेन्द्र भगवानका ज्ञान महामोहांधकारको नाश करनेवाला तथा समस्त चराचर पदार्थोंको प्रकाशित करनेवाला तीन लोकमें सूर्यके समान है और अनंतसुखका निधान (भंडार) है। ऐसा निश्चय करके हे जिनवाणी! तुमको मैं बड़े भक्तिके भारसे नम्र होकर सदा नमस्कार करता हूं॥ १०॥

पयाणि सुवारहकोडि सयेण, सुलक्खतिरासिय जुत्तिभरेण।
सहसअट्ठावण पंच वियाणि, सया पणमामि जिणिंदहवाणि

अर्थ—इस सकल द्वादशांगरूप श्रुतज्ञानके एकसौ बारह करोड़, तिरासी लाख, अट्ठावन हजार पांच (११२८३५८००५) पद हैं। ऐसी जिनेंद्रभारतीको मैं सदा नमस्कार करता हूं।

विशेष—श्रुतज्ञानके अक्षर एक कम एकट्ठी (१८४४६७४४०२-७३७०९५५१६१५ संख्या द्विरूप वर्गधारामें छठवें स्थान पर होती है) प्रमाण हैं। एक पदमें सोलहसौ चौतीस करोड़ तिरासी लाख सात हजार आठसौ अठासी १६३४८३०७८८८ अक्षर होते हैं। इन एक पदके अक्षरोंका श्रुतज्ञानके सम्पूर्ण अक्षरोंमें भाग देनेसे ११२८३५८००५ पूर्णपद बनते हैं। इसके सिवाय आठ करोड़ एक लाख आठ हजार एकसौ पचहत्तर ८०१०८१७५ अक्षर शेष बचते हैं। सो इनमें सामायिकादि चौदह प्रकीर्णक हैं जिनको अंगबाह्य कहते हैं। इस प्रकार श्रुतज्ञानमें पदोंकी संख्या है॥ ११॥

इक्कावण कोडिउ लक्ख अठेव, सहसचुलसीदिसया छक्केव।
सढाइगवीसह गंथपयाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि॥

अर्थ—यदि इस सम्पूर्ण श्रुतज्ञानके बत्तीस अक्षरवाले अनुष्टुप श्लोक बनाये जांय तो इक्यावन करोड़ आठलाख चौरासी

हजार छहसौ अट्ठाईस अपुनरुक्त श्लोक होते हैं। ऐसी जिन-भारतीको मैं सदा प्रणाम करता हूं॥ १२॥

घत्ता।

इह जिणवरवाणि विसुद्धमई, जो भवियण णियमण धरई।
सो सुरणरिंद संपइ लहई, केवलणाण वि उत्तरई॥ १३॥

अर्थ—जो निर्मलबुद्धिधारी भव्यपुरुष ऐसी पवित्र जिन-वाणीको अपने मनमें धारण करता है वह महापुरुष देवोंकी तथा चक्रवर्ती नारायण आदिकी बड़ी विभूतिको प्राप्त करता है और फिर केवलज्ञानको पाकर संसार महासागरके पार होजाताहै॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्‌भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांग-श्रुतज्ञानाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ—अरहंतभगवानके मुख कमलसे उत्पन्न, स्याद्वादनयसे युक्त द्वादशांगरूप श्रुतज्ञानके लिये महार्घ समर्पण करता हूं।

अथ गुरुजयमाला।

भवियह भवतारण, सोलहकारण, अज्जवि तित्थयरत्तणहं।
तव करइ असंगइ दयधम्मंगइ, पालवि पंच महव्वयहं॥ १॥

अर्थ—जो भव्य जीवोंको संसारसे पार लगानेवाले हैं, तीर्थंकर पद पानेके लिये सोलह कारण भावनाओंको भाते हैं, तपस्या करते हैं, निःसंग (परिग्रह रहित) हैं, दयाधर्मके अंग स्वरूप पांच महाव्रतोंको पालते हैं, ऐसे पूज्य गुरु हैं॥ १॥

वंदामि महारिसि सीलवंत, पंचेंदियसंजम जोगजुत्त।
जे ग्यारह अंगह अणुसरंति, जे चउदह पुव्वह मुणि थुणंति

अर्थ—जो १८००० प्रकारके शीलके धारक हैं तथा पांच इन्द्रियोंके दमनरूप संयमसे विभूषित हैं और ग्यारह अंगके पाठी हैं एवं चौदह पूर्वको जानकरके जो ऋषीश्वर जिनेन्द्र भगवान का प्रतिदिन स्तवन करते हैं, मैं उन महाऋषियोंको वंदना करता हूं ॥ २ ॥

पादाणुसारवर कुट्ठबुद्धि, उप्पएणु जाह आयासरिद्धि ।
जे पाणाहारी तोरणीय, जे रुक्खमूल आतावणीय ॥ ३ ॥

अर्थ—जिन मुनीश्वरोंको पादानुसारिणी, कोष्ठस्थधान्योपमा तथा आकाशगामिनी ऋद्धि उत्पन्न हुई है तथा जो ऋषिवर अपने पाणिपात्रमें (हाथोंमें) रक्खे हुए भोजनको लेते हैं और नदी किनारे, वृक्षके नीचे और धूपमें तपते हैं ॥ ३ ॥

जे मोणिधाय चन्दाहणीय, जे जत्थत्थवणि णिवासणीय ।
जे पंचमहव्वय धरणधीर, जे समिदिगुत्तिपालणहिं वीर ॥४॥

अर्थ—जे मुनीश्वर मौन धारण करके चन्द्रमाके समान धनिक और दरिद्र गृहस्थके यहां भोजन करते हैं। अर्थात् चन्द्रमा जिसप्रकार प्रकाश करनेकेलिये दरिद्र तथा धनाढ्यकी अपेक्षासे अधिकता और अल्पता नहीं करता है इसी प्रकार मुनीश्वर भी छियालीस दोष रहित शुद्ध; गृहस्थके यहां वह चाहे धनाढ्य हो अथवा दरिद्र हो, आहार लेते हैं और जो जहां कहीं भी जीव-जन्तुरहित पवित्र वन प्रदेशमें निवास करते हैं तथा जो अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, निष्परिग्रह इन पांच महाव्रतोंको धारण करनेमें बड़े धीर हैं एवं ईर्या, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेपण, प्रतिष्ठापन इन पांच समितियोंको तथा मनोगुप्ति वचनगुप्ति, कायगुप्ति इन तीन गुप्तियोंको पालनेमें बड़े वीर हैं ॥ ४ ॥

जे वट्ठडहिं देह विरत्तचित्त, जे रायरोसभयमोहचत्त ।
जे कुगइहिं संवरु विगयलोह, जे दुरियविणासणकामकोह ॥

अर्थ—जो शरीरको आत्माका कारावास (जेलखाना) समझकर उसमें विरक्त रहते हैं तथा जो राग, द्वेष, भय मोहसे रहित है। जो नरकादि दुर्गतियोंका संवर करते है और लोभसे सदा अलग रहते हैं एवं जो योगीश्वर पापमय काम क्रोधादिकको नष्ट करनेवाले हैं ॥ ५ ॥

जे जल्लमल्लतणलित्तगत्त, आरम्भपरिग्गह जे विरत्त ।
जे तिण्णकाल बाहर गमंति, छट्टट्ठम दसमउ तउ चरंति ॥

अर्थ—षट्कायिक जीवोंके परमरक्षक होनेके कारण तथा विकारकारी इन्द्रियविलाससे बचनेके लिये स्नान न करनेके कारण जिन मुनियोंका शरीर; कर्ण, नेत्र आदि अंगोंके मैलसे तथा पसीना, तृण आदिसे सहित है और आरम्भसे तथा परिग्रह से जो सर्वथा विरक्त हैं, जो इन्द्रियसंयमको दृढ़ रखनेकेलिये तथा निर्विघ्न आत्मध्यान करनेके लिये सर्वदा ग्राम नगरादिकसे बाहर ही विहार करते हैं, तथा जो मुनीश्वर बेला, तेला, चौला आदिक दुर्द्धर तपोंको तपते हैं ॥ ६ ॥

जे इक्कगास दुइगास लिंति, जे णीरसभोयण रइ करंति ।
ते मुणिवरे वंदउं ठियमसाण, जे कम्मडहइ वरसुक्कझाण ॥

अर्थ—जे यतीश्वर कभी आहारका एक ग्रास ही लेते हैं, कभी दो कवल ही ग्रहण करते हैं अर्थात्—अपने आहारको एक ग्रासपर्यंत करके अवमौदर्य तपको पूर्णतया करते हैं जो योगिराज रसना इन्द्रियको वशमें रखनेके लिये सदा मधुर आदि स्वादिष्ट रसोंसे रहित नीरस भोजन रुचिसे करते हैं तथा जो तपस्वी

श्मशानभूमिमें धर्मध्यान तथा शुक्लध्यान द्वारा कर्मोंको नष्ट करते हैं उन मुनिवरोंके लिये मैं नमस्कार करता हूं ॥ ७ ॥

बारहविह संजम जे धरंति, जे चारिउ विकहा परिहरंति ।
बावीस परीसह जे सहंति, संसारमहण्णउ ते तरंति ॥ ८ ॥

अर्थ—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति तथा त्रस इन छह कायके जीवोंकी रक्षा तथा स्पर्शन, रसना, घ्राण, नेत्र, कर्ण तथा मन इन छह इन्द्रियोंको वशमें करना इस तरह बारह प्रकारके संयमको जो यतिराज धारण करते हैं तथा जो मुनिराज स्त्रीकथा, भोजनकथा, देशकथा तथा राजकथा इन चारों विकथाओंको छोड़ते हैं और केवल आत्मध्यानमें ही मनको लगाकर जो ऋषिराज क्षुधा तृषा आदि बाईस परिषहोंको सहन करते हैं वे मुनिवर संसार महासागरको पार कर जाते हैं ॥ ८ ॥

जे धम्मबुद्धि महियलि थुणंति, जे काउस्सग्गें णिस गमंति ।
जे सिद्धिविलासणि अहिलसंति, जे पक्खमास आहार लिंति ॥

अर्थ—समस्त मनुष्य देवादिक जिनकी धर्मबुद्धिका सर्वदा स्तवन करते हैं, जो मुनीन्द्र कायोत्सर्ग द्वारा रात्रिको व्यतीत करते हैं तथा जो सर्वदा मुक्तिरूपी सुन्दरीकी ही अभिलाषा रखते हैं और तप बढ़ानेके लिये तथा शरीरको कृश करनेके लिये पक्षोपवास, मासोपवास आदि उपवासोंको करते हैं ॥ ६ ॥

गोदूहण जे वीरासणीय, जे धणुहसेज वज्जासणीय ।
जे तववलेण आयास जंति, जे गिरिगुहकंदर विवर थंति ॥

अर्थ—जो ऋषिवर गोदोहन आसन, वीरासन, धनुषासन, शय्यासन तथा वज्रासन धारण करते हैं, तपके प्रभावसे जो

मुनिराज आकाशमें निराधार होते हुए गमन करते हैं तथा पर्वतों की गुफा कंदरा आदिमें ठहरते हैं ॥ १० ॥

जे सत्तुमित्त समभावचित्त, ते मुनिवर वंदउ दिढचरित्त ।
चउवीसह गंथह जे विरत्त, ते मुनिवर वंदउ जगपवित्त ॥११॥

अर्थ—जो यतीश्वर नाना उपसर्ग करनेवाले शत्रुमें तथा वैयावृत्य करनेवाले भव्य पुरुषमें समान भाव रखते हैं, उन चारित्रधारी मुनीश्वरोंके लिये मैं प्रणाम करता हूं। जो ऋषीश्वर चौदह अन्तरंग तथा दश बहिरंग परिग्रहोंसे विरक्त हैं उन संसार को पवित्र करनेवाले अथवा संसारमें परम पवित्र मुनीश्वरोंके लिये प्रणाम करता हूं ॥ ११ ॥

जे सुज्झाणिज्झा एकचित्त, वंदामि महारिसि मोखपत्त ।
रयणत्तयरंजिय सुद्धभाव, ते मुणिवर वंदउ ठिदिसहाव ॥

अर्थ—जो परम ऋषीश्वर धर्म्य, शुक्लरूप शुभध्यानमें एकाग्रचित्त हैं अर्थात् जिनका चित्त केवल धर्म्यध्यान अथवा शुक्लध्यानमें ही है, उन मोक्षके पात्र ऋषीश्वरोंको नमस्कार करता हूं। जिन मुनीश्वरोंके पवित्र भाव रत्नत्रयसे सुशोभित हैं उन मुनिवरों की मैं सर्वदा वंदना करता हूं ॥ १२ ॥

घत्ता।

जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धवधू अणुराईया ।
रयणत्तयरंजिय, कम्मह गंजिय, ते ऋषिवर मइ झाईया ॥

अर्थ—जो ऋषिनाथ दुर्द्धर तपश्चरण करनेमें शूरवीर हैं, दुर्लभ संयमको पालनेमें धीरवीर हैं, सिद्धरूपी स्त्रीमें अनुराग

करनेवाले हैं; रत्नत्रयसे विभूषित हैं तथा कर्मोंका विनाश करने वाले हैं उन मुनीश्वरोंका मैं सदा ध्यान करता हूं ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र आदि पवित्र गुणोंसे विभूषित आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधुके लिये महार्घ समर्पण करता हूं ।

विशेष—'सर्व आचार्य तथा सर्व उपाध्याय' न कहकर 'सर्व' पद केवल साधुके साथ ही क्यों लगाया गया है ? इस शंकाका समाधान बट्टकेरस्वामीविरचित मूलाचारमें यों किया है—

णिव्वाणसाधए योगे सदा युञ्जंति साधवः ।
समा सव्वेसु भूदेसु तम्हा ते सव्वसाधवः ॥ १ ॥

क्योंकि मोक्षके साधक योगमें सदा रहते हैं इसलिये साधु कहलाते हैं (मुक्तिं साध्नोतीति साधुः) तथा समस्त छोटे, बड़े, शत्रु, मित्र आदि सर्व जीवोंमें समान परिणाम रखते हैं इसलिये 'सर्व' पदसे विभूषित हैं अर्थात् 'सर्वसाधु' कहलाते हैं (सर्वजीवानां हितं साध्नोतीति सर्वसाधुः) इसके सिवाय प्रश्नके समाधानमें एक यह भी हेतु है कि साधुओंके पुलाक, वकुशादि तथा गण, कुल, तपस्वी, आदि अनेक भेद हैं। उन सबको ग्रहण करनेके लिये साधुके साथ 'सर्व' पद लगाया गया है।

इति देवशास्त्रगुरु पूजा समाप्त ।

विद्यमान तीर्थङ्कर पूजा ।

श्रीमज्जंबूधातकिपुष्करार्द्धद्वीपेषूच्चैर्ये विदेहाः शराः स्युः ।
वेदा वेदा विद्यमाना जिनेंद्राः प्रत्येकं तांस्तेषु नित्यं यजामि ॥

अर्थ—जम्बूद्वीपमें १, धातकीखण्डमें २ और पुष्करार्द्ध द्वीपमें २, ऐसे पांच बिदेह हैं, प्रत्येक विदेहमें चार २ तीर्थंकर हैं उन प्रत्येक तीर्थंकरकी मैं नित्य पूजा करता हूं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा अत्र अवतरत अवतरत सवौषट् ।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्

अष्टकं ।

सुरनदीजलनिर्मलधारया, प्रवरकुंकुमचन्द्रसुसारया ।
सकलमङ्गलवांछितदायकान्, परमविंशतितीर्थपतीन् यजे ॥२॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युबिनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—मैं केशर और कपूरसे सुगन्धित गंगाके जलकी निर्मल धारासे सम्पूर्ण मंगल और इच्छित पदार्थको देनेवाले महान बीस तीर्थंकरोंकी पूजा करता हूं ॥ २ ॥

मलयचन्दनकेशरवारिणा निखिलजाड्यरुजातपहारिणा ।
सकलमंगलवांछितदायकान्, परमविंशततीर्थपतीन् यजे ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः संसारतापविनाश-
नाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—मैं संपूर्ण जड़तारोग और आतापको दूर करनेवाले मलयाचलके चन्दन और केशरके जलसे सभी मंगल और इच्छित पदार्थके दाता महान बीस तीर्थंकरोंकी पूजा करता हूँ ॥ ३ ॥

सरलतंदुलकैरतिनिर्मलैः प्रवरमौक्तिकपुञ्जवदूज्ज्वलैः ।
सकलमंगलवांछितदायकान् परमविंशतितीर्थपतीन् यजे ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्ष-
तान् निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—उत्तम मोतियोंके समान उज्वल तथा सुदीर्घ चावलोंके द्वारा सभी मंगल और इच्छित पदार्थके दाता महान् बीस तीर्थंकरोंकी पूजा करता हूँ ॥ ४ ॥

बकुलकेतकिचंपकपुष्पकैः परिमलागतषट्पदवृन्दकैः ।
सकलमंगलवांछितदायकान् परमविंशतितीर्थपतीन् यजे ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंस-
नाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—जिन पर सुगंधसे भ्रमर गुञ्जार रहे हैं ऐसे मौलश्री, केतकी, और चम्पाके फूलोंसे सभी मंगल और अभीष्टके दाता महान बीस तीर्थंकरोंकी मैं पूजा करता हूं ॥ ५ ॥

प्रवरमादक खज्जकपूपकैः वरसुमंडकसूपशुभौदनैः ।
सकलमंगलवांछितदायकान् परमविंशतितीर्थपतीन् यजे ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरभ्यः क्षुधारोगविनाश-नाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—श्रेष्ठ लड्डू, खाजे, पूये, पूरी, दाल, भात आदिसे सुख और सिद्धिके दाता महान बीस तीर्थंकरोंकी पूजा करता हूं ॥ ६ ॥

अतिसुदीप्तिमयैर्वरदीपकैर्विमलकांचनभाजनसंस्थितैः ।
सकलमंगलवांछितदायकान् , परमविंशतितीर्थपतीन् यजे ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहांधकारविनाश-नाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—स्वच्छ सोनेके पात्रमें रक्खे हुये अत्यन्त प्रकाशमान सुन्दर दीपकोंके द्वारा सभी सुख और सिद्धिके दाता महान बीस तीर्थंकरों की मैं पूजा करता हूं ॥ ७ ॥

अगरुचन्दनमुख्यसुधूपकैः प्रचुरधूपततामलगंधकैः ।
सकलमंगलवांछितदायकान् परमविंशतितीर्थपतीन् यजे ॥८॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः कर्माष्टदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—जिनके धुयेंसे सब जगत में निर्मल सुगंधि फैल रही हैं ऐसी अगरु, चंदन आदिकी खास धूपोंके द्वारा सभी सुख और सिद्धियोंके दाता महान बीस तीर्थंकरोंकी मैं पूजा करता हूं ॥८॥

प्रवरपूगलवंगसदाम्रकैः प्रचुरदाडिममोचसुचोचकैः ।
सकलमंगलवांछितदायकान् परमविंशतितीर्थपतीन् यजे ॥९॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—मैं उत्तम सुपारी, लौंग, आम, बहुतसे दाड़िम, केला और नारियलोंके द्वारा सुख सिद्धिके दाता महान बीस तीर्थंकरों की पूजा करता हूँ ॥ ९ ॥

जलसुगन्धप्रसूनसुतन्दुलैं, चरुप्रदीपकधूपफलादिभिः ।
सकलमंगलवांछितदायकान् परमविंशतितीर्थपतीन् यजे ॥१०॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ— मैं जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप धूप और फल आदिके द्वारा सुखसिद्धिके दाता महान बीस तीर्थंकरोंकी पूजा करता हूँ ॥ १० ॥

जयमाला ।

श्रीबीसजिणेसरविहरमाण, पणमामिपंचसयधणुपमाण ।
जे भवियकमलपडिबोहयंत, विहरंति विदेहे तमहरंत ॥ १ ॥
सीमंधर प्रणवों जिणवरिंद, जुगमंधर वंदों दुहदलिंद ।
हों वंदों बाहुसुबाहुसामि, जंबूविदेह जे सिद्धिगामि ॥ २ ॥

संजाइसयंपहुजिण जयंति, ऋषभानन धम्मपयासयंति ।
तइ नंतवीर सूरप्पहोइ, वंदों विसालवज्जरधरोइ ॥ ३ ॥
चंदानन अट्ठमदीववीर, हों पनऊं पत्त जे भवहतीर ।
तहं पुहकरार्ध जिणचन्दबाहु, भुयंगमईसरजगइनाहु ॥ ४ ॥
णेमिप्पह प्रणवों वीरसेण, महाभद्द भवंबुहितरिउ जेण ।
में प्रणवों देवजससुभाव, जिण अजियवीर जियमुक्कपाव ॥५॥

घत्ता ।

ए बीसजिणेसर णमिय सुरेसर, विहरमाण मइ संथुणियं । जे भणहिं भणावहिं, अरु मन भावहिं, ते णर पावहिं परमपदं ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—पांचसौ धनुष ऊँचा जिनका शरीर है जो विदेहक्षेत्रमें भव्यरूपी कमलोंको विकसित करते हुए अज्ञानान्धकारको दूर कर रहे हैं ऐसे बीस विहरमान तीर्थंकरोंको मैं प्रणाम करता हूँ॥ १ ॥

मैं सीमन्धर स्वामीको नमस्कार करता हूँ, दुःखको दूर करनेवाले युग्मंधर स्वामीको नमस्कार करता हूँ। बाहु और सुबाहु स्वामीको नमस्कार करता हूँ। ये सब जम्बूद्वीपके विदेहक्षेत्रसे मोक्ष जाने वाले हैं॥ २॥

संजात और स्वयंप्रभ जिनेन्द्र जयवन्त रहें। धर्मका प्रकाश करनेवाले ऋषभानन, अनन्तवीर्य, सूरप्रभ विशालकीर्ति वज्रधर तथा आठवें चन्द्राननको मैं प्रणाम करता हूँ। जो धातकी खंडके

विदेहक्षेत्रसे मोक्षगामी हैं। पुष्करार्द्ध द्वीपके विदेहसे मोक्ष जाने वाले भी चन्द्रबाहु भुजंगम और जगतके नाथ ईश्वर जिनेन्द्र नेमिप्रभ तथा संसार समुद्रसे तारनेवाले श्रीमहाभद्र जिनेन्द्रको मैं नमस्कार करता हूँ, मैं देवयश तथा पापसे मुक्त श्रीअजितवीर्य जिनेन्द्रके चरणोंको प्रणाम करता हूँ ॥ ३, ४, ५ ॥

इसप्रकार सुर असुरोंसे नमस्कृत इन विहरमान बीस तीर्थंकरोंकी मैंने स्तुति की है। इस जयमालाको जो पढ़ते पढ़ाते हैं अथवा मनमें स्मरण करते हैं वे मनुष्य परम पद मोक्ष प्राप्त करते हैं ॥ ६ ॥

विद्यमान बीस तीर्थंकरोंका अर्घ।

उदकचन्दनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभऋषभाननअनन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचन्द्राननभद्रबाहुभुजंगमईश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजितवीर्येति विंशतिविद्यमानतीर्थकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

अकृत्रिम चैत्यालयोंके अर्घ।

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकींगतान्,
वंदे भावनव्यंतरद्युतिवरस्वर्गामरावासगान्।
सद्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः,
द्रव्यैर्नीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणां शांतये ॥ १ ॥

अर्थ—मैं दुष्ट कर्मोंको शांत करनेके लिये भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी तथा कल्पवासी देवोंके भवनवर्ती, विमानवर्ती अकृत्रिम चैत्यालयोंको एवं तीन लोकवर्ती कृत्रिम तथा आकृत्रिम मनोहर चैत्यालयोंको नमस्कार करता हूं और जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल द्वारा सदा पूजन करता हूं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसंबंधिजिनविम्बेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—मैं कृत्रिम—मनुष्यद्वारा बने हुए तथा अकृत्रिम (नहीं बनाये हुए)—अनादि कालीन चैत्यालयवर्ती जिनप्रतिमाओंके लिये अर्घ समर्पण करता हूं।

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुंगवानां ॥

अर्थ—जंबूद्वीपवर्ती भरत, हैमवत, विदेहादिक क्षेत्रोंमे, तथा धातकी खण्ड और पुष्करार्द्धद्वीपवर्ती क्षेत्रोंमे तथा सर्व कुलाचलों मे और सुदर्शनादिक पांचों मन्दराचलोंमे इनके सिवाय मध्य-लोकमे जितने भी जिनेन्द्रदेवके अकृतिम चैत्यालय है मैं उन सभीको नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानां ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ ३ ॥

अर्थ—पृथ्वीतलमें (पातालमें) व्यंतर तथा भवनवासी-देवोंके दिव्यविमानोंमें (विमान—भवन) जो कृत्रिम तथा अकृ-

त्रिम चैत्यालय हैं और इस लोकमें इन्द्रोंसे पूजित मनुष्योंके बनाये हुये जिनेन्द्र चैत्यालयोंका शुद्धभावोंसे स्मरण करता हूँ।

विशेष—रत्नप्रभा पृथ्वी एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी है उसके तीन भाग हैं। १ खरभाग, २ पंकभाग, ३ अब्बहुलभाग। खरभाग सोलह हजार योजन मोटा है। पंकभागकी मोटाई चौरासी हजार योजनको है तथा अब्बहुलभाग अस्सी हजार योजन मोटा है। उन से पहले खरभागमें एक हजार योजन नीचे तथा एक हजार योजन ऊपरी भागको छोड़कर बीचकी चौदह हजार योजनकी मोटाईमें नागकुमार, विद्युत्कुमार, सुपर्णकुमार, अग्निकुमार, वातकुमार, स्तनितकुमार, उदधिकुमार, द्वीपकुमार और दिक्कुमार ये नौ प्रकारके भवनवासी देव तथा किन्नर, किम्पुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, भूत, पिशाच ये सात प्रकारके व्यंतर देव अपने २ भवनोंमें रहते हैं। दूसरे पंकभागमें असुरकुमार जातिके भवनवासी तथा राक्षस जातिके व्यंतर देव अपने २ भवनोंमें रहते हैं। तीसरे अब्बहुल भागमें नारकी रहते हैं। इस प्रकार पातालमें व्यंतरोंका तथा भवनवासियोंका निवास है। उनके भवनोंमें ही जिनचैत्यालय हैं।

जम्बूधातकिपुष्करार्द्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा—

श्चंद्राम्भोजशिखंडिकंठकनकप्रावृड्घनाभा जिनाः।

सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेन्धनाः,

भूतानागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥४॥

अर्थ—जंबूद्वीप, धातकीखंड तथा पुष्करार्द्ध द्वीपवर्ती भरतक्षेत्रोंमें विदेहक्षेत्रोंमें तथा ऐरावतक्षेत्रोंमें सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान तथा सम्यक्चारित्रके धारक तथा आठ कर्मरूपी ईंधनको जलाने

वाले निर्वाण सागरादिक भूतकालीन, ऋषभादिक वर्तमानकालीन तथा भविष्यत्कालवर्ती महापद्मादिक तीर्थंकरोंके लिये मैं नमस्कार करता हूं। जिनमेंसे किन्हीं तीर्थंकरोंके शरीरका वर्ण चंद्रमाके समान श्वेत है। किन्हींका शरीर रक्त कमलके समान लाल वर्ण वाला है। कोई तीर्थंकर मोरके कंठके समान वर्णवाले हैं तथा कुछ तीर्थंकर वर्षाकालीन बादलोंके समान नील कांतिवाले शरीर के धारक हैं।

विशेष—जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्र, ऐरावतक्षेत्र तथा देवकुरु और उत्तरकुरुके सिवाय शेष विदेहक्षेत्रमें कर्मभूमि हैं और शेष क्षेत्रांमें भोगभूमि हैं। जम्बूद्वीपके इन क्षेत्रोंकी दूनी २ (संख्यामें) रचना धातकी खंड तथा पुष्कराद्धमें है। जम्बूद्वीपकी भरतादिक तीन कर्मभूमियोंमें तथा धातकीखंडकी छह तथैव पुष्कराद्धकी छह कर्मभूमियोंमें चौथे कालके होने पर चौबीस तीर्थंकर उत्पन्न होकर धर्मका उद्धार करके मोक्ष जाते हैं (विदेह क्षेत्रमें चौथा काल सदा रहता है तथा भरत, ऐरावतमें छह काल क्रमसे हुआ करते हैं) ॥ ४ ॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुंडले मानुषांके।
इष्वाकारेऽजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि॥

अर्थ—अनेक रत्न, सुवर्ण, वनादिककी शोभासे शोभित सुदर्शनादिक पांच मेरुपर्वतों पर, हैमवतादि क्षेत्रवर्ती कुलपर्वतों पर, भरत ऐरावत क्षेत्रवर्ती रजताचलों पर, जम्बूवृक्षवर्ती, शाल्मलीवृक्षवर्ती, विदेहक्षेत्रस्थ वक्षारपर्वतों पर, चैत्यवृक्षोंमें नंदीश्वर

द्वीपके रतिकर, अंजन, दधिमुख नामक पर्वतों पर, रुचिकवरद्वीप में, कुण्डलवरद्वीपमें, मानुषोत्तरपर्वत पर, धातकीखंड तथा पुष्करार्द्धद्वीपवर्ती इष्वाकारपर्वतों पर तथा व्यंतरोंके यहां और स्वर्गोंमें अर्थात् कल्प तथा कल्पातीत स्वर्गवासीदेवोंके विमानोंमे एवं ज्योतिषी देवोंके विमानोंमें तथा पाताल लोकमे जो जिनालय है उनके लिये मैं नमस्कार करता हूं ॥ ५ ॥

द्वौ कुन्देंदुतुषारहारधवलौ द्वाविंद्रनीलप्रभौ,
द्वौ बंधूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्ममृत्युरहिताः संतप्तहेमप्रभाः,
ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥६॥

अर्थ—भरतक्षेत्रमे वर्तमानकालके चौवीस तीर्थंकर हैं । उनमे से चन्द्रप्रभ तथा पुष्पदन्त ये दो तीर्थंकर कुन्दपुष्पके समान अथवा चन्द्रप्रभाके समान या बर्फके तुल्य अथवा हीराके हारके समान श्वेतशरीरवाले हैं और मुनिसुव्रत तथा नेमिनाथ ये जिनवर नीलमणिके समान नीलकांतिवाले हैं और पद्मप्रभ तथा वासुपूज्य इन दो तीर्थंकरोंके शरीरका रंग बंधूकपुष्प (सजनाका फल) के समान लाल है । एवं सुपार्श्वनाथ तथा पार्श्वनाथ तीर्थंकरोंका शरीर प्रियंगुमणि (पन्ना) के समान हरितवर्ण है इनके सिवाय सोलह तीर्थंकरोंके शरीरकी कांति तपे हुए सुवर्णके समान है । ऐसे जन्म, मरणसे रहित, तथा ज्ञानके सूर्य और देवोंसे वंदित समस्त (चौवीस) तीर्थंकर हमको मुक्ति प्रदान करें ।

ॐ ह्रीं त्रिलोक संबंधि–अकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—मैं तीनलोकवर्ती अकृत्रिम चैत्यालयोंको अर्घ समर्पण करता हूँ।

इच्छामि भंते-चेइयभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ। अहलोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेयाणि ताणि सव्वाणि, तीसुवि लोएसु भवणवासियवाणविंतरजोयसियकप्पवासयत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्णाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति। अहमवि इह संतो तत्थसंताइं णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

(इत्याशीर्वादः। परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

हे परमात्मन्! मैं अब चैत्यभक्तिका कायोत्सर्ग करना चाहता हूँ। तथा उसकी आलोचना (वर्तमान दोषोंका निराकरण-प्रकट) करनेके लिये तत्पर हूँ। अधोलोकसम्बन्धी मध्यलोकसम्बन्धी तथा ऊर्ध्वलोकसम्बन्धी इसप्रकार त्रिलोकवर्ती कृत्रिम तथा अकृत्रिम जितने जिनालय हैं उनको भवनवासी, वनमें उत्पन्न व्यंतर, ज्योतिषी तथा कल्पवासी देव—इसप्रकार चारों प्रकारके देव अपने २ परिवारसहित दिव्य (स्वर्गमें होनेवाली-कल्पवृक्षसे प्राप्त) गन्धसे, दिव्य पुष्पोंसे, दिव्य धूपसे, पंचप्रकारके दिव्य रत्नोंके चूर्णसे, दिव्य सुगन्धवासना द्वारा तथा दिव्य स्नानसे सर्वदा सेवन करते हैं, पूजते हैं, वंदना करते हैं, तथा नमस्कार

करते हैं। मैं भी यहां पर (इस स्थानपर) उनकी नित्य ही अर्चना करता हूँ, पूजा करता हूँ, वंदना करता हूँ तथा नमस्कार करता हूँ, मेरे दुःखका क्षय हो, कर्म नष्ट हों, मुझे ज्ञान-अथवा रत्नत्रय मिले, शुभगतिमें मेरा गमन हो, मुझे समाधिमरण (शुद्ध शान्त भावों द्वारा मरण) तथा अर्हंतके गुणरूपी संपत्ति मिले।

(इसप्रकार आशीर्वाद है। यहां पुष्प क्षेपण करना चाहिये)

अथ पौर्वाह्णिक—माध्याह्निक-आपराह्णिकदेववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

अर्थ—सकल कर्मोंका क्षय करनेकेलिये मैं प्रातःकालीन, मध्याह्नकालीन तथा सायंकालीन देव वंदनामें पूर्व-आचार्योंके अनुसार भावपूजा, वंदना तथा स्तवनसे संयुक्त श्रीपंचपरमेष्ठियोंकी भक्ति तथा कायोत्सर्ग (परिणामोंकी शुद्धताके लिये शरीरको एक आसन, निश्चलता से खड़ाना) करता हूँ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं।
तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

अर्थ—मैं जितने समय तक पंच नमस्कार मन्त्रका जाप्य करता हूं तब तक शरीरसे ममत्व भाव (प्रीति), पापकर्म तथा दुष्ट आचरणका त्याग करता हूं।

विशेष—प्रत्येक जाप्यमन्त्रका जाप कमसे कम नौ वार बतलाया है, अधिकसे अधिक १०८ वार कहा है। जाप इतनेमें ही पूर्ण हो जाता है। जाप कमसे कम नौ वार ही क्यों कहा ? और

अधिकसे अधिक एकसौ आठ वार ही क्यों कहा ? इसका कारण यह है कि मन्त्र जपते समय पुरुषको अपना चित्त एकाग्र रखनेके लिये अपने हृदयमें एक कमलकी कल्पना करना चाहिये उस कमलके बीचमें कर्णिका और आठ दिशाओंमें फैली हुई आठ पांखुरीं होनी चाहिये। उस जापमन्त्रको उस कमलकी कर्णिका तथा पांखुरियों पर लिखा हुआ कल्पित करना चाहिये। फिर प्रथम उस कमलकी कर्णिका पर उस मन्त्रका जाप करके पीछे उन आठ पांखुरियों पर उस मन्त्रको जपना चाहिये इस प्रकार मन्त्रका जाप कमसे कम नौ वार होगा। शक्त्यनुसार उस कर्णिका तथा कमलपत्रों पर तीन, पांच, सात आदि वार मन्त्र जपना चाहिये अधिकसे अधिक बारह वार उस कमल पर उस मन्त्रका आराधन करना चाहिये। इस प्रकार अधिकसे अधिक एक पूर्ण जापमें १०८ बार ही मन्त्रका उच्चारण हो सकता है। इसका भी यह कारण है कि आरम्भ परिग्रहसे अथवा अन्य प्रकारसे पापकार्य १०८ दरवाजोंके द्वारा होता है उन प्रत्येकके निवारणार्थ जाप भी १०८ ही वार होना चाहिये। वे १०८ द्वार इसप्रकार हैं—संरंभ, समारंभ, आरम्भ ये तीन क्रियाएं प्रत्येक योगके द्वारा होती हैं इस कारण मन, वचन, कायरूप तीन योगोंको उनसे गुणा करने पर नौ भेद होते हैं और ये नव प्रकारकी क्रियाएं कृत, कारित, अनुमोदनाके ढंगसे हुआ करती है इसलिये प्रत्येक भेदके तीन प्रकार होनेसे सत्तावीस भेद हुए फिर इन भेदोंमेंसे प्रत्येक प्रकार का भेद क्रोध, मान, माया, लोभ इन चार कषायोंके द्वारा ही होता है इसलिये उन सत्तावीस भेदोंको चारसे गुणा कर देनेपर (२७+४=१०८) १०८ भेद हो जाते हैं।

पंचनमस्कार मंत्रको तीन श्वासोच्छ्वासोंमें उच्चारण करना चाहिये। प्रथम श्वासमें 'णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं' ये दो

पद तथा द्वितीय श्वासमें 'णमो आइरीयाणं णमो उवज्झायाणं' ये दो पद तथा तीसरे श्वासमें 'णमो लोए सव्वसाहूणं' इतना उच्चारण करना चाहिये इस प्रकार इस मंत्रका नौ बार उच्चारण करनेमें सत्ताईस श्वासोच्छ्वास लगते हैं।

इति अकृत्रिमचैत्यालय पूजाका अर्घ समाप्त।

अथ सिद्धपूजा (द्रव्याष्टक)

ऊर्ध्वाधो रयुतं सबिंदु सपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं
वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं तत्संधितत्वान्वितं।
अंतःपत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टितं
देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकंठीरवः॥

अर्थ—आठ पांखुरीवाले कमलकी कर्णिकामें (मध्य भागमें) ॐ कारसे वेष्टित तथा ऊपर और नीचे रेफ (र्) से युक्त और विंदुसहित हकार (हं) है। आठ दिशाओंमें फैली हुई वे आठ कमलकी पांखुड़ियां 'अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह' इन आठ वर्गोंसे पूरित हैं और उस कमलके आठ संधिस्थानोंमें (पत्रोंके जुड़ावके स्थान पर) 'णमो अरहंताणं' है तथा उन कमलपत्रोंको 'ह्रीं' से वेष्टित करना। ऐसे अक्षरात्मक सिद्धपरमेष्ठीका जो पुरुष ध्यान करता है वह पुरुष मुक्तिसुन्दरीका पति तथा कर्मरूपी हाथीको सिंहके समान हो जाता है॥ १॥

विशेष—अरहंत परमेष्ठी परम औदारिक शरीरके धारक होते हैं इसलिये वीतराग रूपमें उनकी प्रतिमाका निर्माण हो जाता है जिसका कि पूजन ध्यान आदि करते हैं जो कि अपने अभीष्टको देनेवाला है। किन्तु सिद्धपरमेष्ठी निकल परमात्मा हैं उनके शरीर नहीं है इसलिये उनको अशरीरी कहते हैं। अतएव उनकी प्रतिमा नहीं बन सकती है जिसका कि पूजन, प्रक्षालन, ध्यान आदि कर सकें, इसी कारण उनका पूजन यंत्र रूपमें किया जाता है अर्थात् उपर्युक्त रीतिसे अष्ट पत्रवाले कमलके रूपमें सिद्धयंत्र बनाकर उसकी पूजा की जाती है।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अर्थ—सिद्धचक्रके स्वामिन् भो सिद्धपरमेष्ठी! यहां आइये!! आइये!!!

हे सिद्धचक्रके स्वामिन् सिद्धपरमेष्ठी! यहां तिष्ठिये!! तिष्ठिये!!!

भो सिद्धचक्रके स्वामिन् सिद्धपरमेष्ठी! यहां मेरे समीप हूजिये!! हूजिये!!!

निरस्तकर्मसंबंधं, सूक्ष्मं नित्यं निरामयम्।
वंदेऽहं परमात्मानममूर्तमनुपद्रवम्॥ १॥

अर्थ—मैं कर्मबंधनसे रहित, अशरीरी होनेके कारण सूक्ष्म, जन्म मरणादिक रहित होनेसे नित्य, शारीरिक तथा मानसिक आधि व्याधियोंसे रहित होनेके कारण निरामय (नीरोग), पुद्गलका संबंध न होनेके कारण अमूर्त तथा सांसारिक संबंध न होनेसे उपद्रवरहित सिद्ध परमात्माको नमस्कार करता हूं ।।१।।

(सिद्धयंत्रकी स्थापना)

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं हान्यादिभावरहितं भववीतकायं
रेवापगावरसरोयमुनोद्भवानां नीरैर्यजे कलशगैर्वरसिद्धचक्रं ।।१।।

अर्थ—लोकके अंत भागमें विराजमान, निरन्तर सिद्ध होने वाले, सर्वज्ञ देवके ही गोचर, शरीरकी हानि वृद्धि अथवा आत्माकी हानि वृद्धि आदि विकारोंसे रहित तथा जन्मरहित शरीरवाले अर्थात् जन्म मरणसे रहित अथवा संसारातीत शरीर वाले सिद्धोंके समूहको मैं कलशोंमें भरे हुए रेवानदी, यमुनानदी तथा स्वच्छ सरोवरके जलसे पूजता हूं ।। १ ।।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—मैं सिद्धयंत्रके स्वामी सिद्धपरमेष्ठीको अथवा सिद्ध-समूहको जन्म मरण नाश करनेके लिये जलको समर्पण करता हूं ।। १ ।।

आनंदकंदजनकं घनकर्ममुक्तं सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतं ।
सौरभ्यवासितभुवं हरिचंदनानां गंधैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रं ।।

अर्थ—आनंदके अंकुरको उत्पन्न करनेवाले, कर्म पटलसे रहित, क्षायिक सम्यक्त्व तथा अनंत सुखधारी होनेसे परम

गौरवशाली, जन्मकी पीड़ासे रहित, निर्मलकीर्तिरूपी सुगंधताके निवासस्थान (ऐसे) सर्वोत्तम सिद्धसमूहको मलयगिरिके चंदन की मनोहर सुगंधसे पूजता हूं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—मैं सिद्धयंत्रके स्वामी सिद्धपरमेष्ठीको संसारका संताप मेटनेके लिये चंदन अर्पण करता हूं ।

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं,
सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालं ।
सौगंध्यशालिवनशालिवराक्षतानां,
पुञ्जैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रं ॥

अर्थ—आयु कर्मके नष्ट हो जानेसे अवगाहन गुणके धारक, आत्मीय अनंत गुणोंमें मग्न, संपूर्ण जगतमें प्रसिद्ध, अपने वास्तविक निष्कलंक स्वरूपको प्राप्त, परमब्रह्म और ज्ञानसे सर्व लोकमें व्याप्त सिद्ध भगवानको सुगंधित श्रेष्ठ, चंद्रमाके समान निर्मल अक्षतोंके पुञ्जोंसे मैं पूजता हूं ।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—सिद्धचक्रके स्वामी सिद्ध परमेष्ठीको मैं अक्षयपद पानेके लिये अक्षत भेट करता हूं ।

नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं,
द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।
मंदारकुंदकमलादिवनस्पतीनां,
पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥

अर्थ—कर्मोके द्वारा होनेवाली जन्म मरणादि अनेक अनित्य पर्यायोंसे रहित होनेके कारण नित्य, चरम शरीरसे कुछ कम अपने शरीरके परिमाणमे अवस्थित, अनादिकालीन (सामान्य सिद्धराशिकी अपेक्षा) पुद्गलादिक अन्य द्रव्योंसे निरपेक्ष (अपेक्षा न रखनेवाले) अपनी सिद्ध पर्यायसे अच्युत (अचल, न हटनेवाले) अथवा जीवोंको ध्यान करने पर अमृतके समान सुख प्रदान करनेवाले तथा मरण, शोक, रोगादिकसे रहित सिद्ध-समूहकी मंदार, कुन्द तथा कमल आदिक वृक्षोंके अत्यंत सुन्दर पुष्पोंसे मै पूजन करता हूं ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामवाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—सिद्धचक्रके स्वामी सिद्धपरमेष्ठीको मैं कामदेवको नष्ट करनेके लिये पुष्प समर्पण करता हूं ।

ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं,
ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम् ।
क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भै-
नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥

अर्थ—कर्म बंधके टूट जानेके कारण स्वभावसे ही उर्ध्वगमन करनेवाले, नोइन्द्रिय मतिज्ञानावरणके क्षयोपशमसे होनेवाले भावमन तथा द्रव्यमनसे रहित और जिसका मूल कारण अरहंत दशा है तथा आकाशके समान जो अमूर्तिक है अथवा निर्मल है या आकाशके समान जिसका ज्ञान व्यापक है उस परमपूज्य सिद्ध चक्रको दूध, अन्न तथा घृतसे बने हुए एवं जिनके भीतर मधुर, खट्टा आदि रस परिपूर्ण है ऐसे नाना व्यंजनोंसे (अनेक प्रकारके पकवानों द्वारा) सर्वदा पूजा करता हूं ॥५॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुद्रोगविध्वंसनाय नैवेद्यं नि० ।

अर्थ—सिद्धयंत्रके स्वामी सिद्धपरमेष्ठीके लिये क्षुधा (भूख) रूपी रोगको नाश करनेके लिये मैं नैवद्य (पकवान) समर्पण करता हूं।

आतंकशोकभयरोगमदप्रशांतं, निर्द्वंद्वभावधरणं महिमानिवेशं ।
कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातैर्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

अर्थ—संताप अथवा उदासी, शोक, भय, रोग, मानसे रहित, निर्द्वंद्वताके धारक अर्थात् कलहकारी परिणामोंसे रहित या दुविधा से रहित (निश्चल) तथा सर्वोत्तम महिमा (बड़प्पन) के घर स्वरूप सिद्ध समूहको मैं सुवर्णके बने हुए अनेक कपूरकी वत्तियोंसे सहित दैदीप्यमान दीपकों द्वारा अर्चन करता हूं ॥६॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—सिद्धचक्रके अधिपति सिद्धपरमात्माको मोहरूपी अंधकारको नष्ट करनेके लिये मैं दीपक अर्पण करता हूं।

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितांतं,
त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम्।
सद्द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां,
धूपर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥

अर्थ—केवल-ज्ञानद्वारा समस्त संसारको अच्छी तरह एक साथ देखनेवाले तथैव भूत, भविष्यत और वर्तमान कालवर्ती पदार्थोंको तथा उनकी पर्यायोंको प्रकाशित करनेमें दैदीप्यमान दीपकके समान, सर्वोत्तम सिद्धसंघको मैं कपूरसे सहित चन्दन, अगर आदि उत्तम तथा सुगन्धित पदार्थोंकी सुगन्धित धूपद्वारा पूजता हूं ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धिचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।

अर्थ—सिद्धचक्रके अधिपति सिद्धमहाराजको आठ कर्मोंको जलानेके लिये धूप चढ़ाता हूं।

सिद्धासुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रै-
र्ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुवंद्यं।
नारिंगपूगकदलीफलनारिकेलैः,
सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रं ॥ ८ ॥

अर्थ—सिद्ध (व्यंतर देवविशेष) असुर कुमार आदि देवोंके इन्द्रोंद्वारा तथा यक्ष, नरपतियोंके समूहद्वारा ध्यातव्य (ध्यानं

करने योग्य) कल्याण स्वरूप तथा समस्त भव्यपुरुषों द्वारा चन्दनीय सिद्धोंके संघकी नारंगी, सुपारी, केला तथा नारियल आदि उत्तम फलोंके द्वारा पूजन करता हूं ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरिमेष्ठिने मोक्षफल-प्राप्तये फलं नि०।

अर्थ—सिद्धयंत्रके अधिपति श्रीसिद्धभगवानको मोक्षरूपी फल पानेके लिये फल समर्पण करता हूं।

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः संगं वरं चन्दनं,

पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकं।

धूपं गंधयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये,

सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वांछितं ॥९॥

अर्थ—सुगन्धित निर्मल जल, जिसकी सुगन्धिसे भौंरे आगये हैं ऐसा चन्दन, उज्ज्वल अक्षतका पुंज, पुष्प, मनोहर नैवेद्य, दीपक तथा सुगन्धित धूप और अनेक उत्तम फलोंको एक साथ (अर्घ) जन्म, राग, द्वेषादि दोषोंसे रहित निर्मल, कर्म बन्धनरहित अथवा चक्रवर्ती इन्द्रादि पदसे भी उत्तम, अभीष्ट फल पानेके लिये सिद्धोंके चरणोंमें समर्पण करता हू ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

अर्थ—मैं सिद्धयंत्रके स्वामी श्रीसिद्धपरमात्माको अमूल्यपद (मोक्ष) पानेके लिये अर्घ अर्पण करता हूं।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनंतवीर्यं
कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं वंदे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रं

अर्थ—कषायोंके क्षय हो जानेसे जिसका ज्ञानोपयोग निर्मल है, समस्त कर्ममलके नष्ट हो जानेसे जिसका आत्मस्वरूप परम निर्मल है, जो औदारिक कार्माणादि शरीरोंसे रहित होनेके कारण परमसूक्ष्म है, वीर्यघातक अन्तराय कर्मके नाश हो जानेसे अनन्त बलका धारक है, कर्मसमूहरूपी वनको जलानेवाला तथा सुखरूपी धान्यको उत्पन्न करनेमें बीजके समान है ऐसे अनुपमगुणधारी सिद्धोंके समूहको मैं सर्वदा नमस्कार करता हूं ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अर्थ—सिद्धयंत्रके अधिपति श्रीसिद्धपरमेष्ठीको मोक्षपद पानेके लिये मैं महार्घ समर्पण करता हूं।

त्रैलोक्येश्वरवंदनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं,
यानाराध्य निरुद्धचडंमनसः संतोपि तीर्थंकराः ।
सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाव्याबाधताद्यैर्गुणै-
र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥

अर्थ—देवेन्द्र, धरणेन्द्र, चक्रवर्ती आदिसे जिनके चरण पूजनीय हैं ऐसे, प्रचण्ड मनको रोकने वाले तीर्थंकर भी जिनको आराधन करके नित्य लक्ष्मीको पा चुके हैं तथा जो क्षायिक, सम्यक्त्व, अनन्तज्ञान, अनन्तवीर्य, अव्याबाध आदि अनन्त-

गुणोंसे विभूषित हैं और जिनमें परम विशुद्धताका उदय हो गया है ऐसे सिद्धोंका मैं सर्वदा बारम्बार स्तवन करता हूं ॥ ११ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

अथ सिद्धपूजा (भावाष्टक)

(द्रव्यपूजा और भावपूजा, इसतरह सिद्धपूजा दो प्रकारकी होती है। ऊपर द्रव्यपूजाके अष्टक हैं नीचे भावपूजाके अष्टक हैं! दोनोंमेंसे एक करनी चाहिये)

निजमनोमणिभाजनभारया, शमरसैकसुधारसधारया ।
सकलबोधकलारमणीयकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ १ ॥

अर्थ—मैं अपने मनरूपी रत्नमयी पात्रमें भरी हुई, शांति रसरूपी अमृत रसकी धारा द्वारा केवलज्ञानकी किरणोंसे रमणीय, स्वाभाविक अर्थात् स्वभावसे होनेवाले सिद्धपरमात्माको पूजता हूं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

विशेष—सकल आरम्भ तथा परिग्रहको त्यागनेवाले मुनीश्वर तथा आरम्भ परिग्रहत्यागी श्रावक एवं पूजनकी सामिग्रीसे रहित पूजन करनेके अभिलाषी पुरुष जब कि सिद्धोंकी पूजन करते हैं तब वे ऐसे भावाष्टकों द्वारा ही पूजन करते हैं क्योंकि चन्दन, अक्षत पुष्प, नैवेद्यादिक द्रव्यें न तो उनके पास ही होते हैं न वे इनकी योजना ही करते हैं। इसका कारण भी यह है कि—मनको

वशीभूत करनेके कारण वे बिना जलादिक द्रव्योंके भी पूज्य पदार्थ के साथ अपने भावोंका सम्बन्ध कर सकते हैं। अत एव उन महापुरुषोंका पूजन केवल भावोंसे होता है इसीलिये ऐसे पूजनको 'भाव पूजन' कहते है।

सहजकर्मकलङ्कविनाशनैरमलभावसुभाषितचन्दनैः ।
अनुपमानगुणावलिनायकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ २ ॥

अर्थ—अनुपम गुण समूहके स्वामी सिद्धपरमेष्ठीकी मैं अनादि कालसे आत्माके साथ रहने वाले कर्मरूपी कलंकका नाश करनेवाले निर्मल मानसिक भाव तथा भक्तिपूरित सुन्दर वचन-रूपी चन्दनसे पूजन करता हूं ॥ २॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

सहजभावसुनिर्मलतंदुलैः सकलदोषविशालविशोधनैः ।
अनुपरोधसुबोधनिधानकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ३ ॥

अर्थ—समस्त महा दोषोको नष्ट करनेवाले, स्वाभाविक निर्मल परिणामरूपी अक्षतोंमे अनुपरोध (किसीसे न रुकनेवाले) केवल-ज्ञानके स्वामी सिद्धभगवानकी पूजा करता हूं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

समयसारसुपुष्पसुमालया सहजकर्मकरेण विशोधया ।
परमयोगबलेन वशीकृतं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ४ ॥

अर्थ—स्वाभाविक क्रियारूपी (शुद्ध चारित्ररूपी) हाथके द्वारा सोधी हुई आत्माके शुद्ध परिणामरूपी फूलोंसे गुथी हुई पुष्पमाला द्वारा, शुक्लध्यानसे अपने असली स्वभावको पानेवाले सिद्ध परमात्माकी अर्चना करता हूं ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामवाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

अकृतबोधसुदिव्यनिवेद्यकैर्विहितजा तजरामरणांतकैः ।
निरवधिप्रचुरात्मगुणालयं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ५ ॥

अर्थ—जन्म, जरा तथा मरणको नष्ट करनेवाले, अकृत्रिम ज्ञानरूपी मनोहर नैवेद्योंसे मैं आत्माके अनन्त महागुणोंके धारक सिद्ध महाराजका अर्चन करता हूं ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुद्रोगविध्वंस-नाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकैः, रुचिविभूतितमःप्रविनाशनैः ।
निरवधिस्वविकाशविकाशनैः, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥६॥

अर्थ—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्ररूपी रत्नत्रय की कांतिको चमकानेवाले तथा सम्यक्त्वकी ज्योतिको छिपानेवाले-मोहरूपी अन्धकारको नाश करनेवाले एवं आत्माके अनन्त विकाशको प्रकाशित करनेवाले भाव दीपकोंसे सिद्धपरमेष्ठीको मैं पूजता हूं ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः, स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः ।
विशदबोधसुदीर्घसुखात्मक, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ७ ॥

अर्थ—अपने गुणोंके घातक ज्ञानावरणादिक मैलका नाश करनेवाले, अपने ज्ञान, दर्शन आदि अविनाशी गुणरूपी धूपके द्वारा निर्मल अनन्तज्ञान तथा अनन्तसुखके धारक सिद्ध परमात्मा का मैं पूजन करता हूं ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

परमभावफलावलिसम्पदा सहजभावकुभावविशोधया ।
निजगुणास्फुरणात्मनिरंजन सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ८ ॥

अर्थ—स्वाभाविक ज्ञान, दर्शन आदि भावोंसे मिथ्याज्ञान, मोह आदि खोटे भावोंको हटानेवाली उत्तम भावोंकी समूहरूपी फल-संपदाद्वारा अपने स्फुरायमान गुण प्रकट होनेसे निष्कलंक-कर्मादि मैलसे रहित सिद्ध भगवानकी मै पूजा करता हूं ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यंतबोधाय वै,
वार्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः ।
यश्चिंतामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत्
सिद्धं स्वादुमबाधबोधमचलं संचर्चयामो वयं ॥ ९ ॥

अर्थ—नेत्रोंके खोलनेवाले प्रकाशके समान भावोंकेसमूहद्वारा

जो पुरुष चिंतामणिके समान शुद्ध भाव और उत्तम ज्ञानस्वरूप जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल द्वारा अर्चन करता है उसको वह पूजन अनन्त ज्ञानके लिये होता है अतः हम भी आत्मसुखके अनुभवी, बाधारहित ज्ञानके धारी, निश्चल, सिद्ध परमात्माका पूजन करते हैं ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

विराग सनातन शांत निरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस ।
सुधाम विबोधनिधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१॥

अर्थ—रागरहित हे वीतराग ! हे सनातन ! (बहुत पुरातन) उद्वेग, द्वेष, क्रोधादि रहित होनेसे वास्तविक शांतिको प्राप्ति करनेवाले हे शांत, अंशकल्पनासे रहित होनेके कारण हे निरंश ! शारीरिक मानसिक रोगोंसे रहित हे निरामय, मरणादिक भयोंसे रहित होनेके कारण हे निर्भय, हे निर्मल तेजके निवास स्थान, हे निर्मल ज्ञानके धारक, मोहरहित होनेसे विमोह (ऐसे) हे परमपवित्र, सिद्धोंके समूह मुझपर प्रसन्न हो ॥ १ ॥

विदूरितसंसृतिभाव निरंग, समामृतपूरित देव विसंग ।
अबंध कषायविहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥२॥

अर्थ—हे सांसारिक भावोंके दूर करनेवाले, हे अशरीर, हे समतारूपी अमृतसे परिपूर्ण देव, हे अन्तरंग बहिरंग संगरहित विसंग,

हे कर्मबन्धनसे विनिमुक्त, हे कषायरहित, हे विमोह, विशुद्ध, सिद्धोंके समूह हमपर प्रसन्न हो ॥ २ ॥

निवारितदुष्कृतकर्मविपाश, सदामलकेवलकेलिनिवास ।
भवादधिपारग शांत विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥३॥

अर्थ—हे दुष्कर्मके नाशक, हे कर्म जंजालमे रहित, हे निर्मल केवल ज्ञानके क्रीड़ास्थल, संसारके पारगामी, हे परमशांत, हे निर्मोह, पवित्र सिद्धोंके समूह हमपर प्रसन्न हो ॥ ३ ॥

अनंतसुखामृतसागरधीर, कलंकरजोमलभूरिसमीर ।
विखंडितकाम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥

अर्थ—हे अनन्त सुखरूपी अमृतके समुद्र ! हे धीर ! कलंकरूपी धूलिको उड़ानेके लिये प्रवलवायु ! हे कामविकारको खंडित करनेवाले ! हे कर्मोंके विरामस्थल ! हे निर्मोह पवित्र सिद्धोंके समूह ! प्रसन्न हो ॥ ४ ॥

विकारविवर्जित तर्जितशोक, विबोधसुनेत्रविलोकितलोक ।
विहार विराव विरङ्ग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥

अर्थ—हे कर्मजन्य शुभ, अशुम विकारोंसे रहित ! हे शोक रहित ! हे केवलज्ञानरूपी नेत्रसे सम्पूर्ण लोकको देखनेवाले ! कर्मादिकद्वारा हरणसे रहित, शब्द रहित तथा रङ्गसे (दूसरेको रिझाना) रहित ऐसे हे मोहरहित परमविशुद्ध सिद्धोंके समूह हमपर प्रसन्नता लाओ ॥ ५ ॥

रजोमलखेदविमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ।
सुदर्शनराजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥

अर्थ—दोष, आवरण तथा खेद रहित, हे अशरीर ! हे निरन्तर (समयके अन्तरसे रहित), हे सुखरूपी अमृतके पात्र, हे सम्यदर्शनसे या केवलदर्शनसे शोभायमान ! हे संसारके स्वामी ! हे मोहरहित परमपवित्रतायुक्त सिद्धोंके समूह ! हमपर प्रसन्नता धारण करो ॥ ६ ॥

नरामरवंदित निर्मलभाव, अनन्तमुनीश्वरपूज्य विहाव ।
सदोदय विश्व महेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥

अर्थ—हे मनुष्य देवोंसे पूजनीय ! हे समस्त दोषोंसे युक्त होनेके कारण निर्मल भाववाले, हे अनन्त मुनीश्वरोंसे पूज्य, हे विकाररहित, हे सर्वदा उदयस्वरूप, हे समस्त संसारके महास्वामिन्, हे मोहरहित, परमपवित्र सिद्धोंके समूह ! मुझपर प्रसाद धारण करो ॥ ७ ॥

विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परापर शङ्कर सार वितंद्र ।
विकोप विरूप विशङ्क विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥

अर्थ—हे कपटरहित, हे तृष्णारहित, हे द्वेषादिक दोषरहित, हे निद्रारहित, हे पर तथा अपर शंकर अर्थात् भूतकालीन सिद्धों की अपेक्षा पर तथा आगामी सिद्धोंकी अपेक्षा अपर (शं करोतीति शंकरः अर्थात् महा अशांतिकारक अधर्मका नाशकर धर्मरूपी शांतिको करनेवाले) हे आलस्यरहित, हे कोपरहित, हे रूपरहित, हे शंकारहित, हे मोहरहित विशुद्ध सिद्धोंके समूह ! हम पर प्रसन्न हो ॥ ८ ॥

जरामरणोज्झित वीतविहार, विचिंतित निर्मल निरहंकार ।
अचिंत्यचरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥

अर्थ—हे वृद्धावस्था तथा मरणदशाको नाश करनेवाले ! हे

गमनरहित, हे चितारहित, भो अज्ञानादिक आत्मीय मैलसे रहित, हे अहंकार (घमंड) रहित, हे अचिंत्य चारित्रके धारक, हे दर्प अहङ्काररहित, हे मोहरहित परम पवित्र सिद्धोंके संघ ! मुझ पर प्रसन्नता धारण करो ॥ ६ ॥

विवर्ण विगंध विमान विलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ।
अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥

अर्थ—हे श्वेत, पीत आदिक वर्णरहित, हे गंधरहित, हे छोटे, बडे, हलके, भारी आदि परिमाणसे रहित, हे मानरहित, हे लोभ-रहित, हे मायारहित, हे अशरीर, हे शब्दरहित, हे कृत्रिम शोभा रहित, हे निराकुल, हे केवल (असहाय), हे समस्त परवस्तुमें मोहरहित परमपवित्र सिद्धोंके संघ ! हम पर प्रसन्नता धारण करो ॥ १० ॥

घत्ता।

असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं,
परपरिणतिमुक्तं पद्मनंदींद्रवंद्यं ।
निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं,
स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥

अर्थ—असाधारण तथा परमोत्कृष्ट जिसका आत्मा है, निर्मल चेतनता जिसका चिन्ह है, जड़द्रव्यके परिणमनसे रहित तथा पद्मनन्दी देव, (मुनि) द्वारा वंदनीय एवं समस्त गुणोंके घररूप सिद्ध-चक्रको (सिद्धके समूहको) जो पुरुष स्मरण करता है नमस्कार करता है तथा उसका स्तवन करता है वह पुरुष मोक्षको पा लेता है ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—मैं सिद्धपरमेष्ठी महाराजकेलिये महार्घ समर्पण करता हूं।

अडिल्ल छंद ।

अविनाशी अविकार परमरसधाम हो,
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ।
शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो,
जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥१॥

अर्थ—आप अविनाशी, अविकार, अनुपमसुखके स्थान, मोक्षस्थानमें रहनेवाले, सर्वज्ञ, तथा स्वाभाविक रमणीय हो और निर्मलज्ञानधारी, आत्मिक गुणोंके अनुकूल तथा अनादि और अनन्त हैं। हे संसारके शिरोमणि सर्वोत्तम सिद्ध भगवन ! आपकी सदा जय होवे॥ १ ॥

ध्यान अगनिकर कर्मकलङ्क सबै दहे,
नित्य निरंजनदेवसरूपी ह्वै रहे ।
ज्ञायकके आकार ममत्व निवारिकै,
सो परमातम सिद्ध नमूं शिर नायकैं ॥२॥

अर्थ—जिन्होंने शुक्लध्यानरूपी अग्निसे समस्तकर्मरूपी कलंक को जला दिया है तथा जो नित्य निर्दोष देव स्वरूप हो रहे हैं एवं जो मोहभावको त्यागकर ज्ञानस्वरूप हैं उन सिद्ध परमात्माको शिर झुकाकर नमस्कार करता हूं॥ २ ॥

दोहा ।

अविचल ज्ञान प्रकाशते गुण अनन्तकी खान ।
ध्यान धरे सो पाइये परम सिद्ध भगवान ॥

इत्याशीर्वादः । (पुष्पांजलि क्षिपेत्)

अर्थ—जो निश्चल केवल ज्ञानसे प्रकाशमान हैं तथा अनन्त गुणोंके खानस्वरूप है ऐसे पूजनीय सिद्ध भगवानको केवल ध्यान द्वारा ही पुरुष पा सकते है ॥ ३ ॥

(आशीर्वाद)

अथ पंचपरमेष्ठिजयमाला ।

मणुयणाइन्दसुरधरियछत्तत्तया, पंचकल्लाणसुक्खावली पत्तया
दंसणं णाण झाणं अणंतं बलं, ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं

अर्थ—जिनके ऊपर नरेन्द्र, तथा सुरेन्द्रने तीन छत्रोंको लगाया तथा जिन्होंने गर्भ, जन्म, तप, केवलज्ञान, मोक्ष इन पांच कल्याणकोंके सुखोंको पाया और जिनके पास अनन्त दर्शन, अनन्तज्ञान, शुक्लध्यान तथा अनन्तवल विद्यमान है । वे जिनेन्द्र भगवान हमको परम मंगल प्रदान करें ॥ १ ॥

जेहिं झाणग्गिबाणेहिं अइथद्दयं, जम्मजरमरणणयरत्तयं दड्ढयं
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं, ते महादिंतु सिद्धा वरं णाणयं

अर्थ—जिन्होंने अपने ध्यानरूपी अग्निवाणोंसे अत्यन्त कठोर जन्म, जरा तथा मरणरूपी तीन नगरोंको जला दिया है तथा

जिन्होंने अविनाशी मोक्षस्थानको पा लिया है वे सिद्धभगवान हमको केवलज्ञान दें २ ॥

पंचहाचारपंचग्गिसंसाहया,
वारसंगाइसुयजलहिं अवगाहया ।
मोक्खलच्छी महंती महं ते सया,
सूरिणो दिंतु मोक्खं गया संगया ॥ ३ ॥

अर्थ—कर्मोको जलानेवाली दर्शनाचार, ज्ञानाचार, तपाचार वीर्याचार और चारित्राचार इन पंचाचाररूपी अग्निको साधने वाले तथा द्वादशांगरूपी शास्त्रसागरमें अवगाहन करनेवाले और आशारहित (दुर्लभ) मोक्षको पानेवाले आचार्य महाराज हमको मोक्षरूपी महालक्ष्मी प्रदान करें ॥ ३ ॥

घोरसंसारभीमाडवीकाणणे, तिक्खवियरालणहपावपंचाणणे ।
णट्ठमग्गाण जीवाण पहदेसया, बंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया

अर्थ—घोर संसाररूपी भयानक वनमें महा विकराल नखों वाला पापरूपी सिंह रहता है उस वनमें मिथ्यात्व कुधर्मादिक द्वारा सुमार्गको भूलकर इधर उधर भटकते हुए जीवको मोक्षरूप कल्याणकारी सुमार्गको बतलानेवाले उपाध्याय परमेष्ठीको मैं सर्वदा नमस्कार करता हूं ॥ ४ ॥

उग्गतवयरणकरणेहिं झीणं गया,
धम्मवरझाणक्कखेक्कझाणं गया ।
णिब्भरं तवसिरीए समालिंगया,
साहओ ते महामोक्खपहमग्गया ॥ ५ ॥

अर्थ—जिनका शरीर घोर तपश्चरणसे क्षीण हो गया है और जो धर्मध्यान तथा शुक्लध्यानमें लीन हो गये हैं तथा तपरूपी लक्ष्मीने जिनका गाढ आलिंगन किया है वे साधु महाराज हमको मोक्षमार्गमें लगावें ॥ ५ ॥

एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए,

गुरुयसंसारघणवेल्लि सो छिंदए ।

लहइ सो सिद्धसुक्खाइ वरमाणणं,

कुणइ कम्मिंधणं पुंजपज्जालणं ॥ ६ ॥

अर्थ—इस स्तोत्रसे जो पुरुष पंचपरमेष्ठियोंकी वंदना करता है वह पुरुष संसारकी बड़ी लताको (वेलिको) काट डालता है तथा परमोत्तम सिद्धसुखको पालेता है और कर्मरूपी ईंधनको जला डालता है ॥ ६ ॥

अरिहा सिद्धाइरिया उवझाया साहु पंचपरमेष्ठी ।

एयाण णमुक्कारो भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥ ७ ॥

अर्थ—अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु ये पांच परमेष्ठी (उत्कृष्टपदमें स्थित) हैं । इन परमेष्ठियोंका नमस्कार मुझे प्रत्येक भवमें कल्याण प्रदान करे ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपंचपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्थ—मैं अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्वसाधु इन पांच परमेष्ठियोंके लिये अर्घ समर्पण करता हूं ।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

इच्छामि भंते पंचगुरुभत्तिकाओसग्गो कओ, तस्सा-लोचेओ अट्ठमहापाडिहेरसंजुत्ताणं अरहंताणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं उड्ढलोयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं, अट्ठपवय-णमाउसंजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, तिरयणगुणपालणरयाणं सव्व-साहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं। इत्याशीर्वादः।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अर्थ—भो भगवन्! पंचपरमेष्ठीकी भक्तिमें होनेवाले दोषोंको हटानेके लिये मैं कायोत्सर्ग तथा उसकी आलोचना करना चाहता हूं। चम्वर, छत्र, सिंहासन, अशोकवृक्ष, भामंडल, दिव्यध्वनि, दिव्यपुष्पवृष्टि, दुन्दुभिबाजोंका बजना इन आठ महाप्रातिहार्योंसे विभूषित अरहंतभगवानकी, अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, सम्यक्त्व, अनन्तबल, अव्याबाधत्व, अवगाहनत्व, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघुत्व इन आठ गुणोंसे संयुक्त तथा लोकाकाशके ऊपर तनुवातवलयमें रहनेवाले सिद्धपरमेष्ठीकी, आठ प्रवचन मातृकासे सहित आचार्य महाराजकी, आचारांग आदि द्वादशांगका उपदेश देनेवाले उपाध्याय मुनीश्वरकी तथा रत्नत्रय एवं अन्य अनेक गुणोंमें लवलीन श्रीसर्वसाधुओंकी मैं सर्वदा अर्चना करता हूं, पूजता हूं, वंदना करता हूं तथा उनको नमस्कार करता हूं। मेरे दुःखका क्षय होय, कर्मोंका नाश होवे, मुझे समाधिमरण मिले, रत्नत्रय

प्राप्त हो तथा शुभगति मिले एवं मैं अरहंतकी आध्यात्मिक महा-विभूतिको पाऊं।

(यह आशीर्वाद है। यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

—※—

अथ शांतिपाठः।

दोधकवृत्तं।

शांतिजिनं शशिनिर्म्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रं।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममंबुजनेत्रं ॥ १ ॥

अर्थ—चन्द्रमाके समान जिनका मुख निर्मल है, तथा जिनका शरीर एकसौ आठ शुभ लक्षणोंसे सशोभित है और जो अठारह-हजार शील, केवलज्ञान, दर्शन आदि गुणोंके तथा व्रत, संयमके धारक हैं, उन जिनोत्तम (कषाय जीतनेवाले यतीश्वरोंमें प्रधान) श्रीशांतिनाथ भगवानको मैं नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिंद्रनरेन्द्रगणैश्च।
शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः, षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥२॥

अर्थ—जो वर्तमानकालीन बारह चक्रवर्तियोंमें पांचवें चक्र-वर्ती हैं, देवेन्द्र, नरेन्द्र, मुनीन्द्रादिके समूहसे जो पूजित हैं उन परमशांति देनेवाले सोलहवें शांतिनाथ तीर्थंकरको मुनि-आर्यिका, श्रावक, श्राविका इन चारों गणोंकी शांतिकी इच्छासे मैं नमस्कार करता हूं ॥ २ ॥

दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मंडलतेजः ॥ ३ ॥

अर्थ—अशोकवृक्ष, दिव्य पुष्पोंकी वर्षा, दुन्दुभि बाजा, सिंहासन, दिव्यध्वनि, तीन छत्र, चौसठ चम्वर तथा भामंडल इन आठ प्रातिहार्योंसे जो भगवान शोभायमान है ॥ ३ ॥

तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिमह्ममरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

अर्थ—अपूर्व शांतिको करनेवाले उस जगतपूज्य श्रीशांतिनाथ जिनवरको मैं मस्तक नवाकर नमस्कार करता हूं। हे भगवन ! चारों संघको, हमको तथा आपके स्तवन पूजन आदि पढ़ने वाले पुरुषको शीघ्र ही परम शांति (मुक्ति) प्रदान कीजिये ॥४॥

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः।
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपा-
स्तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥५॥

अर्थ—मुकुट, कुण्डल, हार, रत्न आदि धारक इन्द्रादिकोंने जिनका मनोहर पूजन किया है तथा जिनके चरण कमल चारों प्रकारके देवोंसे पूजित हैं एवं दीपकके समान संसारको प्रकाशित करनेवाले जिन जिनेश्वरोंने इक्ष्वाकु, सूर्य, चन्द्र, हरि आदि उत्तम वंशोंमें जन्म लिया है वे तीर्थंकर संसारमें सर्वदा शांतिका विस्तार करें ॥ ५ ॥

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतींद्रसामान्यतपोधनानां।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांति भगवान् जिनेंद्रः ॥

अर्थ—अपने पूजक पुरुषोंको (पूजा करने वालोंको) धर्मके रक्षकोंको अथवा छोटे २ राजाओंको, यतीश्वरोंको तथा सामान्य संयमियोंको, देशको, राज्यको तथा नगरको एवं राजाओंको भी जिनेन्द्र भगवन् ! शांति प्रदान करो ॥ ६ ॥

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः,
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यांतु नाशं ।
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मा स्म भूज्जीवलोके,
जैनेंद्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अर्थ—हे स्वामिन् ! सकल प्रजाको कल्याण मिले तथा प्रजा रक्षक राजा धार्मिक और बलवान होवे, समय समय पर (योग्य समय पर) मेघवर्षा (बादलोंका बरसना) अच्छी तरह हुआ करे, सभी शारीरिक तथा मानसिक व्याधियां नष्ट हो जावें, इस लोकमें दुर्भिक्ष (समय पर पानीका न बरसना तथा अधिक बरस जाना) चोरी, मारी (प्लेग, हैजा आदि बड़ी बीमारियां) जीवों के लिये क्षणभर भी न हों तथा प्राणीमात्रके लिये सुखदायक जैनधर्मका सर्वदा विस्तार हो ॥ ७ ॥

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वंतु जगतः शांतिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अर्थ—जिन्होंने ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय तथा अन्तराय इन चार घातिया कर्मोंको नष्ट कर दिया है और जो केवलज्ञानसे दैदीप्यमान हैं वे ऋषभ, अजित आदि तीर्थंकर इस संसारमें शांति करें ॥ ८ ॥

अर्थ—मैं प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग तथा द्रव्यानुयोग शास्त्रको नमस्कार करता हूं।

अथेष्टप्रार्थना।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनं।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ ६ ॥

अर्थ—हे प्रभो! जब तक मुझे मुक्ति न मिले तब तक मुझे भव भवमें (प्रत्येक जन्ममें) शास्त्रोंका पढ़ना, पढ़ाना, मनन करनां आदि, जिनेन्द्रदेवकी भक्ति, निरन्तर सज्जन पुरुषोंकी संगति तथा उत्तम सच्चरित्र पुरुषोंके गुणोंकी प्रशंसा करना और किसी भी पुरुषके दोष कहनेमें मौन धारण करना, एवं सभी पुरुषोंके लिये प्रिय तथा हितकारी वचन और केवल आत्मस्वरूप में ही भावना (बार बार चिंतवन) करना प्राप्त होवे ॥ ६ ॥

आर्य्यावृत्तं।

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं।
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः ॥ १० ॥

अर्थ—भो जिनवरदेव! जब तक मुझे कर्मोंसे मुक्ति न मिले तब तक आपके चरणयुगल मेरे हृदयमें विराजौ तथा मेरा हृदय भी आपके चरणकमलमें लवलीन रहा आवे ॥ १० ॥

अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं।
तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दिंतु ॥११॥

अर्थ—हे अनन्तज्ञानके धारक भगवन्! मैंने आपके पूजन स्तवनमें अक्षर, पद, अर्थ तथा मात्रासे हीन (कम) जो कुछ उच्चारण किया हो उसको क्षमा कीजिये और मेरे सांसारिक दुःख का नाश कर दीजिये॥ ११॥

दुःखक्खओ कम्मक्खओ समाहिमरणं च बोहिलाहो य।
मम होउ जगतबंधव तव जिणवर चरणसरणेण॥ १२॥

अर्थ—हे संसारके बन्धु! हे जिनेश्वर! आपके चरणोंकी शरणसे मेरे दुःखका तथा कर्मोंका नाश होवे और मुझे समाधि-मरण तथा ज्ञानकी प्राप्ति होवे॥ १२॥

त्रिभुवनगुरो! जिनेश्वर! परमानंदैककारण कुरुष्व।
मयि किंकरेऽत्र करुणां यथा तथा जायते मुक्तिः॥ १३॥

अर्थ—हे तीन लोकके स्वामिन! हे जिनराज, हे उत्तम निराकुल सुखके एक असाधारण कारण! मुझे जिसप्रकार मोक्ष मि. सके इस सेवक पर (मुझपर) वैसी ही दया कीजिये॥ १३॥

निर्विण्णोहं नितरामर्हन्! बहुदुःखया भवस्थित्या।
अपुनर्भवाय भवहर! कुरु करुणामत्र मयि दीने॥ १४॥

अर्थ—भो अर्हन् देव! महादुखकारी इस संसारके निवाससे मैं बहुत ही उदासीन हूं। इसलिये हे संसारके नाशक! मुझ पर दया करो और मुझे ऐसा कर दो जिससे मैं दूसरा जन्म धारण न करूं॥ १४॥

उद्धर मां पतितमतो विषमाद्भवकूपतः कृपां कृत्वा।
अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि॥ १५॥

अर्थ—हे जिनेन्द्र ! डूबते हुए मुझे कृपा करके इस विषम संसारकूपसे निकालिये। मेरा उद्धार करनेमे केवल आप ही समर्थ है इसीलिये यह बार बार निवेदन मैं आपसे करता हूँ।

त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं ।
मोहरिपुदलितमानं फूत्करणं तव पुरः कुर्वे ॥ १६ ॥

अर्थ—हे जिनेश ! आप ही दयालु हो तथा आप ही मेरे स्वामी हो और मेरे आश्रयभूत भी आप ही हो इसलिये मैं आपके सामने मोहरूपी शत्रुसे अपमानित होकर विलाप करता हूं॥ १६॥

ग्रामपतेरपि करुणा, परेण केनाप्युपद्रुते पुंसि ।
जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन मयि खलु कर्मभिः प्रहते॥

अर्थ—हे जिनदेव ! किसी दुष्ट मनुष्य द्वारा पीड़ित हुए दुखी पुरुष पर जब कि गांवके स्वामी एक छोटे राजाको भी दया होती है तब क्या भो संसारके स्वामी ! कर्मोसे पीड़ित किये गये मुझ-पर आपकी दया नही होगी ? ॥ १७॥

अपहर मम जन्म दयां कृत्वेत्येकवचसि वक्तव्ये ।
तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वं ॥ १८ ॥

अर्थ—हे देव ! यद्यपि "दया करके मेरा संसार नष्ट कर दीजिये" मेरा वक्तव्य (कहना) केवल इसी एक वाक्यमें है तथापि मैं कर्मोके संतापसे बहुत जला हुआ हूं इस कारण यह सब आपके सामने प्रलाप किया है॥ १८॥

तव जिनवर ! चरणाब्जयुगं करुणामृतशीतलं यावत् ।
संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥ १९ ॥

अर्थ—हे जिनोत्तम ! संसारके संतापसे तपा हुआ मैं दया-रूपी अमृतसे शीतल (ठंडे) आपके चरण कमलोंको जब तक अपने हृदयमें धारण किये रहता हूं तभी तक मैं सुखी रहता हूं।

जगदेकशरण ! भगवन् नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघ ।
किं बहुना कुरु करुणामत्र जनं शरणमापन्ने ॥ २० ॥

अर्थ—भो संसारके एक असाधारण आश्रय ! जिनके गुण बलभद्र द्वारा बढ़ाये गए हैं ऐसे हे भगवन् ! आपके लिये मैं नमस्कार करता हूं। मैं अपने दुःखोंका बहुत क्या निवेदन करूं शरणमें आये हुए मुझ पर करुणा करो ॥ २० ॥

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ विसर्जनं ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥

अर्थ—मैं यह पूजन बुद्धिपूर्वक (जान करके) अथवा अबुद्धपूर्वक (बिना जाने) शास्त्रके अनुसार नहीं कर सका हूं। तो भी हे जिनेश ! आपके प्रसादसे (कृपादृष्टिसे) वह सभी त्रुटि (टूट-भूल) पूर्ण हो जाओ ॥ १ ॥

आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥

अर्थ—मैं न तो आह्वान (पूज्य देवको अपने समीप बुलाना)

ही जानता हूं, न पूजन करना ही मुझे आता है तथा विसर्जन (पूजनको समाप्त करना) की विधि भी मुझे मालूम नहीं है। इसलिये हे परमेश्वर ! मेरी यह सभी त्रुटि क्षमा कीजिये ॥ २ ॥

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥

यद्यपि मेरा यह पूजन मन्त्र, क्रिया तथा द्रव्यसे हीन है (कमी रखता है) तथापि हे जिनराज ! वह सभी त्रुटि (भूलि) क्षमा कीजिये और मेरी बारम्बार रक्षा कीजिये ॥ ३ ॥

आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमं ।
ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यांतु यथास्थितिं ॥४॥

अर्थ—मैंने पहले पूजनके लिये जिन जिन देवोंको बुलाया था उनकी मैंने क्रमानुसार पूजाकी है यथाक्रम उनको पूजनका भाग भी प्राप्त हो चुका है अब वे सभी देव कृपा करके अपने २ स्थानको चले जांय ॥ ४ ॥

इति नित्यपूजाविधानं समाप्तं ।

इसप्रकार संस्कृत नित्यनियम पूजाविधान समाप्त हुआ ।

भाषा नित्यनियमपूजा ।

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।

आर्या ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं ॥

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

ॐ अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः ।

(यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना)

चत्तारि मंगलं—अरहंतामंगलं सिद्धामंगलं, साहूमंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि साहूसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।
ध्यायेत्पंचनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१॥
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यंतरे शुचिः ॥२॥

अपराजितमंत्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः ।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः ॥३॥
एसो पंचणमोयारो सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसि पढमं होइ मंगलं ॥४॥
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥५॥
कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥६॥
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनीभूतपन्नगाः ।
विषो निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥७॥
(यहां पुष्पांजलि चढ़ाना चाहिये)
उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वादनायकमनंतचतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतुर्जैनेंद्र-
यज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥ ८ ॥
स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुंगवाय,
स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।

स्वस्ति प्रकाशसहजाजितदृङ्मयाय,
स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥
स्वरद्गुच्छलिद्विमलबोधसुधाप्लवाय,
स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं,
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगंतुकामः ।
आलंबनानि विविधान्यवलंब्य वल्गन्,
भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥

अर्हन् पुराणपुरुषोत्तम पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।
अस्मिन् ज्वद्विमलकेवलबोधवह्नौ,
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥

ॐ ह्रीं विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसंभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः । श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री पद्मप्रभः । श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः । श्रीपुष्पदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः । श्रीश्रेयान्स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः । श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनंतः ।

श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशांतिः। श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः। श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः। श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः, श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः॥

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहन्तः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः॥

प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः॥

जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तुप्रसूनबीजाङ्कुरचारणाह्वाः।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः॥

अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि
मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः॥

सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः॥

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपोघोरपराक्रमस्थाः ॥
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥
आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीर्विषंविषा दृष्टिविषंविषाश्च ।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥
क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः ।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्तिक्रियासुः परमर्षयो नः ॥
इति स्वस्तिमंगलविधानं ।

देवशास्त्रगुरुकी भाषापूजा ।

अडिल्ल छंद ।

प्रथमदेव अरहंत सुश्रुतसिद्धांत जू ।
गुरु निरग्रंथ महंत मुकतिपुरपंथ जू ॥
तीन रतन जगमाहिं सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥१॥

दोहा ।

पूजों पद अरहंतके, पूजों गुरुपदसार ।
पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार ॥२॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ! ठः ठः ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव ।
वषट् ।

गीता छंद।

सुरपति उरगनरनाथ तिनकर, बंदनीक सुपदप्रभा।
अति शोभनीक सुवरण उज्जल, देख छवि मोहित सभा
वर नीर क्षीरसमुद्रघटभरि, अग्र तसु बहुविधि नचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ १ ॥

दोहा।

मलिनववस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव मलछीन।
जासौं पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

जे त्रिजग उदरमझार प्रानी, तपत अति दुद्धर खरे।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे॥
तसु भ्रमरलोभित घ्राणपावन, सरस चंदन घिसि सचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ २ ॥

दोहा।

चंदन शीतलता करै, तपतवस्तु परवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥२॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

यह भवसमुद्र अपार तारण, -के निमित्त सुविधि ठई।
अति दृढ़ परमपावन जथारथ, भक्तिवर नौका सही॥

उज्जल अखंडित सालि तंदुल, पुञ्ज धरि त्रयगुण जचूं ।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिर-ग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ३ ॥

दोहा ।

तंदुल सालि सुगधि अति, परम अखंडित बीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥३॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

जे विनयवंत सुभव्यउरअम्बुजप्रकाशन भान हैं ।
जे एकमुखचारित्र भाषत, त्रिजगमाहिं प्रधान हैं ॥
लहि कुंदकमलादिक पहुप, भव भव कुवेदनसों बचूं ।
अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ४ ॥

दोहा ।

विविधभांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

अति सबल मदकंदर्प जाको, क्षुधा उरग अमान है ।
दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुडसमान है ॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित नैवेद्य करि घृतमें पचूं ।
अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥५॥

दोहा।

नानाविध संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन।
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय चरु निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने मोहतिमिर महाबली।
तिहिकर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाशजोति प्रभावली ॥
इह भांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥६॥

दोहा।

स्वपरप्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि हीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै।
वर धूप तासु सुगंधिताकरि सकलपरिमलता हंसै ॥
इह भांति धूप चढाय नित भवज्वलनमाहिं नहीं पचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ७ ॥

दोहा।

अग्निमांहिं परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

लोचन सुरसना घ्रान उर, उत्साहके करतार हैं।
मोप न उपमा जाय वरणी, सकलफलगुणसार हैं ॥
सो फल चढावत अर्थपूरन, परम अमृतरस सचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ८ ॥

दोहा।

जे प्रधान फल फलविषै, पंचकरण–रसलीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं।
वर धूप निर्मल फल विविध, बहुजनमके पातक हरूं ॥
इहभांति अर्घ चढाय नित भवि, करत शिवपंकतिमचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ६ ॥

दोहा।

वसुविधि अर्घ संजोयकै, अति उछाह मन कीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

जयमाला।

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीनरतनकरतार।
भिन्न भिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुणविस्तार ॥ १ ॥

पद्धरी छंद।

कर्मनिकी त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश दोषराशि।
जे परम सुगुण हैं अनंत धीर, कहवतके छयालिस गुण गंभीर ॥
शुभ समवसरणशोभा अपार, शत इंद्र नमत कर सीस धार।
देवाधिदेव अरहंत देव, बंदों मनवचतनकरि सु सेव ॥३॥
जिनकी धुनि ह्वै ओंकाररूप, निरअक्षरमय महिमा अनूप।
दश-अष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥४॥
सो स्यादवादमय सप्तभंग, गणधर गूंथे बारह सु अंग।
रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहुप्रीति ल्याय
गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रतनत्रयनिधि अगाध
संसारदेहवैराग धार, निरवांछि तपै शिवपद निहार ॥ ६ ॥
गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस, भवतारनतरन जिहाज ईस।
गुरुकी महिमा वरनी न जाय, गुरु नाम जपों मनबचनकाय ॥

सोरठा।

कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरै।
"द्यानत" सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ॥८॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बीस तीर्थङ्करपूजा भाषा ।

दीप अढाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस ।
तिन सबकी पूजा करूं, मनवचतन धरि सीस ॥१॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकराः ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकराः ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकराः ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

इन्द्र फणींद्र नरेंद्र-वंद्य, पद निर्मल-धारी ।
शाभनीक संसार, सारगुण हैं अविकारी ॥
क्षीरोदधि सम नीरसों (हों), पूजों तृषा निवार ।
सीमंधर जिन आदि दे, बीस विदेह मंझार ॥
श्रीजिनराज हो भव, तारणतरण जहाज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(इस पूजामे बीस पुंज करना हो, तो इस प्रकार मंत्र बोलना चाहिये)

ॐ ह्रीं सीमन्धर-युग्मन्धर-बाहु-सुबाहु-संजात-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनंतवीर्य्य-सूरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चंद्रानन-भद्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र-देवयशोऽजितवीर्य्येतिविंशतिविद्यमानतीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

तीनलोकके जीव, पाप आताप सताये ।
तिनकों साता दाता, शीतल बचन सुहाये ॥

बावन चंदनसों जजूं (हो), भ्रमनतपन निरवार । सीमं०

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

(इसके स्थानमे यदि इच्छा हो, तो बड़ा मंत्र पढ़े)

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी ।
तातैं तारे बड़ी भक्ति–नौका जगनामी ॥

तंदुल अमलसुगंधसों (हो) पूजों तुम गुणसार । सीमं० ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

भविक-सरोज-विकाश, निंद्यतमहर रविसे हो ।
जति-श्रावक आचार, कथनको तुम्ही बड़े हो ॥

फूलसुवास अनेकसों (हो), पूजों मदन प्रहार । सीमं० ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

कामनाग विषधाम,–नाशको गरुड कहे हो ।
छुधा महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो ॥
नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो), पूजों भूखविडार । सीमं० ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः छुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ॥ ५ ॥

उद्यम होन न देत, सर्व जगमाहि भर्यो है ।
मोह महातमघोर, नाश परकाश कर्यो है ॥

पूजों दीपप्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योतिकरतार ॥
सीमन्धर जिन आदि दे, बीस विदेह मझार ।
श्रीजिनराज हो भव तारण तरण जहाज ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

कर्म आठ सब काठ,–भार विस्तार निहारा ।
ध्यान अगनिकर प्रगट, सरब कीनो निरवारा ॥
धूप अनूपम खेवतें (हो), दुःख जलैं निरधार । सीमं०

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं ।
सबको छिनमें जीत, जैनके मेर खरे हैं ॥
फल अति उत्तमसों जजों (हो) वांछितफलदातार । सीमं०

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल आठों दर्व, अरघ कर प्रीति धरी है ।
गणधर इन्द्रनिहूतैं, थुति पूरी न करी है ॥
"द्यानत" सेवक जानके (हो) जगतैं लेहु निकार । सीमं०

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला ।

सोरठा।

ज्ञानसुधाकर चन्द, भविकखेतहित मेघ हो।
भ्रमतमभान अमन्द, तीर्थंकर बीसों नमों ॥ १ ॥

चौपाई।

सीमंधर सीमंधर स्वामी, जुगमन्धर जुगमन्धर नामी।
बाहु-बाहु जिन जगजन तारे, करम सुबाहु बाहुबल दारे॥
जात सुजातं केवलज्ञानं, स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं।
ऋषभानन ऋषि भानन दोषं, अनंतवीरज वीरजकोषं ॥२॥
सौरीप्रभ सौरीगुणमालं, सुगुण विशाल विशाल दयालं।
वज्रधार भवगिरिवज्जर हैं, चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ॥३॥
भद्रबाहु भद्रनिके करता, श्रीभुजंग भुजंगम हरता।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजैं, नेमिप्रभु जस नेमि विराजैं ॥४॥
वीरसेन वीरं जग जानै, महाभद्र महाभद्र बखाने।
नमों जसोधर जसधरकारी, नमों अजितवीरज बलकारी ॥५॥
धनुष पांचसै काय विराजं, आव कोडिपूरव सब छाजै।
समवसरण शोभित जिनराजा, भवजलतारनतरन जिहाजा॥
सम्यक रत्नत्रयनिधिदानी, लोकालोक प्रकाशक ज्ञानी।
शत इन्द्रनिकरि वंदित सोहैं, सुरनर पशु सबके मन मोहैं॥

दोहा ।

तुमको पूजै वंदना, करै धन्य नर सोय ।
'द्यानत' सरधा मन धरैं, सो भी धरमी होय ।। ८ ।।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

विद्यमान बीस तीर्थंकरोंका अर्घ ।

उदकचन्दनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ।। १ ।।

ॐ ह्रीं सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभऋषभानन-अनन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचन्द्राननभद्रबाहुभुजंगमई-श्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजितवीर्येति विंशतिविद्यमान-तीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।। १ ।।

अथ तीनलोकसम्बन्धिअकृत्रिमचैत्यालयपूजा ।

चौपाई ।

आठ किरोड़ रु छप्पन लाख,
सहस सत्याणव चतुशत भाख ।
जोड़ इक्यासी जिनवर थान,
तीनलोक आह्वान करान ।। १ ।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयानि अत्रावतरतावतरत । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयानि अत्र तिष्ठत तिष्ठत। ठः ठः

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयानि अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत। वषट्।

अथाष्टक।

छंद त्रिभंगी।

छीरोदधिनीरं, उज्जलसीरं,
छान सुचीरं, भरि झारी।
अति मधुरलखावन, परम सुपावन,
तृषा बुझावन गुणभारी ॥
वसुकोटि सु छप्पन लाख सताणव,
सहस चारसत इक्यासी।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुंजगभीतर,
पूजत पद ले अविनासी ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो जलं निर्वपामि ॥१॥

मलयागिरपावन, चन्दनबावन,
तापबुझावन, घसि लीनो।

धरि कनककटोरी, द्वैकर जोरी,
तुमपद ओरी चित दीनो ॥
वसुकोटि सु छप्पनलाख सताणव,
सहस चारसत इक्यासी ।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुंजगभीतर,
पूजत पद ले अविनासी ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यः चंदनं निर्वपामि ॥२॥

बहुभांति अनोखे, तंदुल चोखे,
लखि निरदोखे हम लीने ।
धरि कंचनथाली, तुम गुणमाली,
पुञ्जविशाली, कर दीने ॥
वसुकोटि सु छप्पनलाख सताणव,
सहस चारसत इक्यासी ।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुंजगभीतर,
पूजत पद ले अविनासी ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अक्षतान् निर्वपामि ॥३॥

शुभ पुष्प सुजाती, है बहु भांती,
अलि लिपटाती लेय वरं ।

धरि कनककरकेवी, कर गहलेवी,
तुमपद जुगकी भेट धरं ॥
वसुकोटि सु छप्पनलाख सताणव,
सहस चारसत इक्यासी ।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुंजगभीतर,
पूजत पद ले अविनासी ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामि ।।४।।

खुरमा जु गिंदौड़ा बरफी पेड़ा,
घेवर मोदक भरि थारी ।
विधिपूर्वक कीने, घृतपय भीने,
खँड में लीने सुखकारी ॥
वसुकोटि सु छप्पनलाख सताणव,
सहस चारशत इक्यासी ।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुंजगभीतर,
पूजत पद ले अविनासी ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामि ।।५।।

मिथ्यात महातम, छाय रह्यो हम,
निजभव परणति नहिं सूजै ।

इहकारण पाकैं, दीप सजाकैं,
थाल धराकैं हम पूजैं ॥
वसुकोटि सु छप्पनलाख सताणव,
सहस चारशत इक्यासा ।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुंजगभीतर,
पूजत पद ले अविनासी ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालियेभ्यो दीपं निर्वपामि ॥६॥

दशगंध कुटाकें, धूप बनाकें,
निजकर लेकें, धरि ज्वाला ।
तस धूम उड़ाई, दशदिश छाई,
बहु महकाई, अति आला ॥
वसुकोटि सु छप्पनलाख सताणव,
सहस चारसत इक्यासी ।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुजगभीतर,
पूजत पद ले अविनासी ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो धूपं निर्वपामि ॥७॥

बादाम छुहारे, श्रीफल धारे,
पिस्ता प्यारे, द्राखवरं ।

इन आदि अनोखे, लखि निरदोखे,
थाल पजोखे, भेट धरं ॥
बसुकोटि सु छप्पनलाख सतागव,
सहस चारसत इक्यासी ।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुंजगभीतर,
पूजत पद ले अविनासी ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-
चतु:शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्य: फलं निर्वपामि ॥८॥

जल चन्दन तन्दुल, कुसुम रु नेवज,
दीप धूप फल, थाल रचौं ।
जयघोष कराऊं, बीन बजाऊं,
अर्घ चढ़ाऊं, खूब नचौं ॥
बसुकोटि सु छप्पनलाख सतागव,
सहस चारसत इक्यासी ।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुंजगभीतर,
पूजत पद ले अविनासी ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-
चतु:शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ॥६॥

अथ प्रत्येक अर्घ ।

चौपाई ।

अधोलोक जिनआगमसाख, सात कोड़ि अरु बहतरलाख ।
श्री जिनभवनमहा छवि देइ, ते सब पूजों वसुविध लेइ ॥१॥

ॐ ह्रीं अधोलोकसम्बन्धिसप्तकोटिद्विसप्ततिलक्षाकृत्रिमश्रीजिन-चैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ॥ १ ॥

मध्यलोकजिनमन्दिरठाठ, साढेचारशतक अरु आठ ।
ते सब पूजों अर्घ चढ़ाय, मनवचतन त्रय जोगमिलाय ॥२॥

ॐ ह्रीं मध्यलोकसम्बन्धिचतुःशताष्टपञ्चशत्श्रीजिनचैत्यालये-भ्यो अर्घ्य निर्वपामि ॥ २ ॥

अडिल्ल ।

ऊर्द्धलोकके माहिं भवनजिन जानिये
लाख चौरासी सहस सत्याणव मानिये ॥
तापै धरि तेईस जजों शिरनायकैं
कंचनथालमझार जलादिक लायकैं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं ऊर्द्ध्वलोकसम्बन्धिचतुरशीतिसप्तनवतिसहस्रत्रयोविं-शतिश्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ॥ ३ ॥

गीताछंद ।

वसुकोटि छप्पनलाख ऊपर, सहससत्याणव मानिये ।
शतच्यारपै गिनले इक्यासी, भवनजिनवर जानिये ॥

तिहुँलोकभीतर सासते, सुर असुर नर पूजा करैं ।
तिन भवनको हम अर्घलेके, पूजिहैं जगदुख हरैं ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चशाल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामि ॥४॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

अब वरणों जयमालिका, सुनो भव्य चितल्याय ।
जिनमंदिर तिहुँलोकके, लेहुँ सकल दरसाय ॥ १ ॥

पद्धरीछंद ।

जय अमल अनादि अनन्त जान,
अनमित जु अकीर्तम अचल मान ।
जय अजय अखण्ड अरूप धार,
षट्द्रव्य नहीं दीसैं लगार ॥ २ ॥

जय निराकार अविकार होय,
राजत अनन्त परदेश सोय ।
जय शुद्ध सगुण अवगाह पाय,
दशदिशामांहि इहविधि लखाय ॥ ३ ॥

यह भेद अलोकाकाश जान,
तामध्य लोकनभ तीन मान ।

स्वयमेव बन्यो अविचल अनन्त,
अविनाशी अनादि जु कहत संत ॥ ४ ॥
पुरुषाअकार ठाड़ा निहार,
कटि हाथ धारि द्वै पग पसार ।
दच्छिन उत्तरदिशि सर्व ठौर,
राजू जु सात भाख्यो निचोर ॥ ५ ॥
जय पूर्व' अपर दिश घाटबाधि,
सुन कथन कहूँ ताको जु साधि ।
लखि श्वभ्रतले राजू जु सात,
मधिलोक एक राजू रहात ॥ ६ ॥
फिर ब्रह्म सुरग राजू जु पांच,
भू सिद्ध एक राजू जु सांच ।
दश चार ऊंच राजू गिनाय,
षटद्रव्य लये चतुकोण पाय ॥ ७ ॥
तस वातवलय लपटाय तीन,
इस निराधार लखियो प्रवीन ।
त्रसनाड़ी तामधि जान खास,
चतुकोन एक राजू जु व्यास ॥ ८ ॥
राजू उतंग चौदह प्रमान,
लखि स्वयंसिद्ध रचना सयान ।

तामध्य जीव त्रस आदि देय,
निज थान पाय तिष्ठे भलेय ॥ ९ ॥
लखि अधोभागमें श्वभ्रथान,
गिण सात कहे आगम प्रवान।
षटथानमांहि नारकि बसेय,
इक श्वभ्रभाग फिर तीन भेय ॥ १० ॥
तस अधोभाग नारकि रहाय,
फुनि ऊरधभाग द्वयथान पाय।
बस रहे भवन व्यंतर जु देव,
पुर हर्म्य छजे रचना स्वमेव ॥ ११ ॥
तिह थान गेह जिनराज भाख,
गिन सातकोटि बहतरि जु लाख।
ते भवन नमों मनवचनकाय,
गति श्वभ्र हरनहारे लखाय ॥ १२ ॥
फुनि मध्यलोक गोलाअकार,
लखि द्वीप उदधि रचना विचार।
गिण असंख्यात भाखे जु संत,
लखि संभुरमन सबके जु अन्त ॥ १३ ॥
इक राजुव्यासमें सर्व जान,
मधिलोकतणों इह कथन मान।

सबमध्य द्वीप जंबू गिनेय,
अयदशम रुचिकवर नाम लेय ॥ १४ ॥
इन तेरहमें जिनधाम जान,
सतचार अठावन हैं प्रमान ।
खग देव असुरनर आय आय,
पद पूज जाय शिर नाय-नाय ॥ १५ ॥
जय उर्द्ध्वलोक सुर कल्पवास,
तिहँ थान छजे जिनभवन खास ।
जय लाख चौरासीप लखेय,
जय सहस सत्याणव और ठेय ॥ १६ ॥
जय वीसतीन फुनि जोड़ देय,
जिनभवन अकीरतम जान लेय ।
प्रतिभवन एक रचना कहाय,
जिनबिंब एकशत आठ पाय ॥ १७ ॥
शतपंच धनुष उन्नत लसाय,
पद्मासनजुत वर ध्यान लाय !
शिर तीनछत्र शोभित विशाल
त्रय पादपीठ मणिजड़ित लाल ॥ १८ ॥
भामण्डलकी छवि कौन गाय,
फुनि चँवर ढुरत चौसठि लखाय ।

जय दुन्दभिरव अद्भुत सुनाय,
जय पुष्पवृष्टि गंधोदकाय ॥ १६ ॥
जय तरु अशोक शाभा भलेय
मंगल विभूति राजत अमेय ।
घटतूप छजे मणिमाल पाय,
घटधूपधूम्र दिग सर्व छाय ॥ २० ॥
जय केतुपंक्ति सोहै महान,
गंधर्वदेव गुन करत गान ।
सुर जनम लेत लखि अवधि पाय,
तिस थान प्रथम पूजन कराय ॥ २१ ॥
जिनगेहतणो वरनन अपार,
हम तुच्छबुद्धि किम लहत पार ।
जय देव जिनेसुर जगत भूप,
नमि 'नेम' मँगैं निज देहु रूप ॥ २२ ॥

दोहा ।

तीनलोकमें सासते, श्रीजिनभवन विचार ॥
मनवचतन करि शुद्धता, पूजौं अरघ उतार ॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीति अकृत्रिमश्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि ॥

कवित्त ।

तिहुं जगभीतर श्रीजिनमंदिर, बने अकीर्त्तम अति सुखदाय ।
नर सुर खग करि वंदनीक जे, तिनको भविजन पाठ कराय ॥
धनधान्यादिक संपति तिनके, पुत्रपौत्र सुख होत भलाय ।
चक्री सुर खग इन्द्र होयकें, करम नाश सिवपुर सुख थाय ॥२४॥

इत्याशीर्वादाय पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

तीनलोकसम्बन्धी कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्यालयोंका अघ ।

सातकरोड़ बहत्तरलाख पाताल विषै जिन मन्दिर जानो ।
मध्य लोकमें चारसौ अट्ठावन व्यंतर ज्योतिषके अधिकानो ॥
लाखचौरासी हजारसत्तानवे तेईस ऊरध लोक बखानो ।
इक-इकमें प्रतिमा शतआठ नमों कर जोड़ त्रिकाल सयानो ॥

ॐ ह्रीं तीनलोकसम्बन्धि-कृत्रिमअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घं ।

इति तीनलोकसम्बन्धिअकृत्रिमचैत्यालयपूजा ।

अथ सिद्धचक्रपूजा ।

अडिल्ल ।

अष्ट करमकरि नष्ट अष्ट गुण पायकैं,
अष्टमवसुधामाहिं विराजे जायकैं ।
एसे सिद्ध अनन्त महन्त मनायकैं,
संवौषट् आह्वान करूं हरषायकैं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर । संवौषट्
ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव ।

त्रिभंगी ।

हिमवनगत गंगा आदि अभंगा, तीर्थ उतंगा सरवंगा ।
आनिय सुरसंगा सलिल सुरंगा, करि मन चंगा भरि भृङ्गा ॥
त्रिभुवनके स्वामी त्रिभुवनकामी, अन्तरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी निजनिधिपामी, सिद्धजजामी शिरनामी ॥१॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

हरिचन्दन लायो कपुर मिलायो, बहु महकायो मनभायो ।
जलसंग घसायो रंग सुहायो, चरन चढ़ायो हरषायो ॥
त्रिभुवनके स्वामी त्रिभुवनकामी, अन्तरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी निजनिधिपामी, सिद्धजजामी शिरनामी ॥२॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधपितये चंदनं निर्वपामि ॥ २ ॥

तंदुल उजियारे शशिदुति टारे, कोमल प्यारे अनियारे ।
तुषखण्ड निकारे जलसुपखारे, पुंज तुम्हारे ढिंग धारे ॥
त्रिभुवन स्वामी त्रिभुवनकामी, अन्तरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी निजनिधिपामी, सिद्धजजामी शिरनामी ॥३॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये अक्षतान् निर्वपामि ॥ ३ ॥

सुरतरुकी बारी प्रीतविहारी, करि या प्यारी गुलजारी ।
भरि कंचनथारी मालसँवारी, तुमपद्धारी अतिसारी ॥
त्रिभुवनके स्वामी त्रिभुवनकामी, अन्तरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी निजनिधिपामी, सिद्धजजामी शिरनामी ॥४॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

पकवान निवाजे स्वाद विराजे, अमृत लाजे क्षुत भाजे ।
बहु मोदक छाजे घेवर खाजे, पूजनकाजे करि ताजे ॥
त्रिभुवनके स्वामी त्रिभुवनकामी, अन्तरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी निजनिधिपामी, सिद्धजजामी शिरनामी ॥५॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥

आपापर भासै ज्ञानप्रकासै, चित्तविकासै तम नासै ।
ऐसे विधखासे दीप उजासे, धरि तुमपासे उल्लासे ॥
त्रिभुवनके स्वामी त्रिभुवनकामी, अन्तरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी निजनिधिपामी, सिद्धजजामी शिरनामी ॥६॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

चुम्बत अलिमाला, गधविशाला, चन्दनकाल, गरुवाला ।
तस चूर्ण रसाला, करि ततकाला, अगनीज्वालामें डाला ॥
त्रिभुवनके स्वामी त्रिभुवनकामी, अन्तरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी निजनिधिपामी सिद्धजजामी शिरनामी ॥७॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये धूपं निर्वपामि ॥ ७ ॥

श्रीफल अतिभारा, पिस्ता प्यारा, दाख छुहारा सहकारा ।
ऋतुऋतुका न्यारा, सत्फलसारा, अपरम्पारा लै धारा ॥
त्रिभुवनके स्वामी त्रिभुवनकामी, अन्तरजामी अभिरामी ॥
शिवपुरविश्रामी निजनिधिपामी, सिद्धजजामी शिरनामी ॥८॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये फल निर्वपामि ॥ ८ ॥

जलफलवसुवृन्दा अरघ अमंदा, जजत अनंदाके कंदा ।
मेटो भवफंदा, सब दुखदंदा, हीराचंदा, तुम बंदा ॥
त्रिभुवनके स्वामी त्रिभुवनकामी, अन्तरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी निजनिधिपामी, सिद्धजजामी शिरनामी ॥६॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये अर्घ्यं निर्वपामि ॥ ६ ॥

—❀—

अथ जयमाला ।

दोहा ।

ध्यानदहन विधिदारु दहि, पायो पद निरवान ।
पंचभावजुत थिर थये, नमौ सिद्ध भगवान ॥ १ ॥

त्रोटक छंद ।

सुखसम्यक दर्शन ज्ञान लहा,
अगुरूलघु सूक्षम वीर्य महा ।
अवगाह अबाध अघायक हो,
सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ २ ॥

असुरेंद्र सुरेंद्र नरेंद्र जजैं,
भुचरेंद्र खगेंद्र गणेंद्र भजैं ।
जरजामनमर्णमिटायक हो,
सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ ३ ॥

अमलं अचलं अकलं अकुलं,
अछलं असलं अरलं अतुलं ।
अरलं सरलं शिवनायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ ४ ॥

अजरं अमरं अधरं सुधरं,
अडरं अहरं अमरं अधरं ।

अपरं असरं सबलायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ ५ ॥

वृषवृन्द अमन्द न निंद लहै,
निरदंद अफंद सुछंद रहै ।
नित आनन्दवृन्द बधायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ ६ ॥

भगवंत सुसंत अनंतगुनी,
जयवंत महंत नमंत मुनी ।
जगजंतुतणो अघघायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ ७ ॥

अकलंक अटंक शुभंकर हो,
निरडंक निशंक शिवंकर हो ।
अभयंकर शंकर खायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ ८ ॥

अतरंग अरंग असंग सदा,
भवभंग अभंग उतंग सदा ।
सरदंग अनंगनसायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ ९ ॥

ब्रह्मंड जु मंडलमंडन हो,
तिहुं दंड प्रचंड विहंडन हो ।

चिदपिंड अखंड अकायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।१०।।
निरभोग सुभोग वियोग हरै,
निरजोग अरोग अशोग धरै ।
भ्रमभंजन तीक्षन सायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।११।।
जय लक्ष्य अलक्ष्य सुलक्षक हो,
जय दक्षक पक्षक रक्षक हो ।
पण अक्ष प्रतक्ष खपायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।१२।।
अप्रमाद अनाद सुस्वादरता,
उनमाद विवाद विषादहता ।
समता रमता अकषायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।१३।।
निरभेद अखेद अछेद सही,
निरवेदनिवेदन वेद नही ।
सब लोकअलोकके ज्ञायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ।। १४ ।।
अमलीन अदीन अरीन हने,
निजलीन अधीन अछीन बने ।

जमको घनघात बचायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१५॥
न अहार निहार विहार कबैं,
अविकार अपार उदार सबैं ।
जगजीवनके मनभायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१६॥
असमंध अधंद अरंध भये,
निरबंध अखंद अगंध ठये ।
अमनं अतनं निरवायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१७॥
निरवर्ण अकर्ण उधर्ण बली,
दुखहर्ण अशर्ण सुशर्ण भली ।
बलि मोहकी फौज भगायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ १८ ॥
अविरुद्ध अक्रुद्ध अजुद्ध प्रभू,
अतिशुद्ध प्रबुद्ध समृद्ध विभू ।
परमातम पूरन पायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१९॥
विररूप चिद्रूपस्वरूप द्युती,
जसकूप अनूपमभूप भ्रुती ।

कृतकृत्य जगत्त्रयनायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ २० ॥

सब इष्ट अभीष्ट विशिष्टहितू,
उतकिष्ट वरिष्ट गरिष्ट मितू।

शिवतिष्ठत सर्व सहायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ २१ ॥

जय श्रीधर श्रीघर श्रीवर हो,
जय श्रीकर श्रीभर श्रीभर हो।

जय ऋद्धि सुसिद्धि बढायक हो,
सबसिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥ २२ ॥

दोहा।

सिद्ध सुगुण को कहि सकै, ज्यों विलस्त नभ मान।
हिराचंद तातैं जजै, करहु सकल कल्यान ॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्ध-चक्राधिपतये अर्घ्यं निर्वपामि ॥ २४ ॥

अडिल्ल।

सिद्ध जजै तिनको नहिं आवै आपदा,
पुत्र पौत्र धन धान्य लहै सुख संपदा।

इंद्रचंद्र धरणेंद्र जु होय कैं,
जावैं मुकतिमझार करम सब खायकैं ॥२४॥
इत्याशीर्वादाय पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।
इति सिद्धपूजा समाप्ता ।

समुच्चय चौबीसी पूजा ।

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पदम सुपार्स जिनराय
चंद पुष्प शीतल श्रेयांस नेमि, वासुपूज्य पूजित सुरराय ॥
विमल अनत धरम जस उज्जल, शांतिकुंथु अर मल्लि मनाय
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्वप्रभु, वर्द्धमानपद पुष्प चढ़ाय ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

(चाल-द्यानतरायकृत नन्दीश्वरद्वीपाष्टककी तथा गर्भाराग आदि अनेक चालोंमे)

मुनिमनसम उज्जल नीर, प्रासुक गंध भरा ।
भरि कनक कटोरी धीर, दीनी धार धरा ॥
चौबीसों श्रीजिनचन्द, आनंदकंद सही ।
पदजजत हरत भवफंद, पावत मोक्षमही ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गोशीर कपूर मिलाय, केशर रङ्गभरी।
जिनचरनन देत चढ़ाय, भवआताप हरी।
चाबीसों श्रीजिनचन्द, आनंदकंद सही।
पदजजत हरत भवफंद, पावत मोक्षमही ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तंदुल सित सोमसमान, सुन्दर अनियारे।
मुक्ताफलकी उनमान, पुंज धरों प्यारे। चौबीसों० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

वरकंज कदंव कुरंड, सुमन सुगंध भरे।
जिन अग्रधरौं गुनमंड, कामकलङ्क हरे। चौबीसों० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मनमोहनमोदक आदि, सुन्दर सद्य बने।
रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने। चौबीसों० ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तमखण्डन दीप जगाय, धारों तुम आगे।
सब तिमिरमोह क्षय जाय, ज्ञानकला जागै। चौबीसों० ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध हुताशनमांहिं, हे प्रभु खेवत हों।
मिस धूम करम जरि जाहिं, तुमपद सेवत हों। चौबीसों० ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि पक्व सुरस फल सार, सब ऋतुके ल्यायो।
देखत दृग मनको प्यार, पूजत सुख पायो। चौबीसों० ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलफल आठों शुचि सार, ताको अर्घ करो करों।
तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोक्ष वरों॥
चौबीसों श्रीजिनचन्द, आनंद कंद सही।
पद जजत हरत भवफंद, पावत मोक्ष मही॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

दोहा।

श्रीमत तीरथनाथपद, माथ नाय हितहेत।
गाऊं गुणमाला अबै, अजर अमरपद देत॥ १ ॥

छन्द घत्तानन्द ।

जय भवतमभंजन जनमनकंजन रञ्जन दिनमनि स्वच्छकरा।
शिवमगपरकाशक अरिगननाशक चौबीसों जिनराज वरा ॥

छन्द पद्धरी ।

जय ऋषभदेव ऋषिगन नमंत, जय अजित जीत वसुअरि तुरन्त
जय संभव भवभय करत चूर, जय अभिनंदन आनंदपूर ॥
जय सुमति सुमतिदायक दयाल, जय पद्म पद्मदुति तनरसाल
जय जय सुपास भवपासनाश, जय चंद चंदतनदुतिप्रकाश ॥
जय पुष्पदंत दुतिदंत सेत, जय शीतल शीतल गुननिकेत ।
जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज, जय वासवपूजित वासुपुज्ज ॥
जय विमल विमलपद देनहार, जय जय अनंत गुनगन अपार
जय धर्म धर्म शिवशर्मदेत, जय शांति शांतिपुष्टी करेत । ६ ।
जय कुंथ कुंथवादिक रखेय, जय अर जिन वसुअरि छय करेय
जय मल्लि मल्ल हतमोहमल्ल, जय मुनिसुव्रत व्रतशल्लदल्ल ॥७॥
जय नमि नित वासवनुत सपेम, जय नेमिनाथ वृषचक्रनेम ।
जय पारसनाथ अनाथ नाथ, जय वर्द्धमान शिवनगरमाथ ॥

घता छन्द ।

चौबीस जिनंदा आनंदकंदा पापनिकंदा सुखकारी ।
तिन पदजुगचंदा उदय अमंदा, वासवबंदा हितकारी ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा।

भुक्तिमुक्तिदातार, चौबीसो जिनराज वर।
तिनपद मनवचधार, जो पूजैं सो शिव लहै ॥ १० ॥
(इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)।

श्रीआदिनाथ पूजा।

नाभिराय मरुदेविके नंदन, आदिनाथ स्वामी महाराज।
सर्वारथसिद्धतैं आप पधारे, मध्यम लोकमांहि जिनराज ॥
इन्द्रदेव सब मिलकर आये, जन्म-महोत्सव करने काज।
आह्वानन सब विधि मिलकरके, अपने कर पूजे प्रभु पांय ॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अष्टक।

क्षीरोदधिको उज्जल जल ले, श्रीजिनवर-पद पूजन जाय।
जन्म जरा दुख मेटन कारन, ल्याय चढ़ाऊं प्रभुजीके पांय ॥
श्रीआदिनाथके चरणकमलपर, बलिबलि जाऊं मनवचकाय।
हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पांय ॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलियागिरि चंदन दाहनिकंदन, कंचन झारीमें भर ल्याय।
श्रीजीके चरण चढ़ावो भविजन, भवआताप तुरत मिटि जाय॥
श्रीआदिनाथके चरणकमल पर, बलिबलि जाऊं मनवचकाय।
हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पांय॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभशालि अखंडित सौरभमंडित, प्रासुकजलसों धोकर ल्याय।
श्रीजीके चरण चढ़ावो भविजन, अक्षयपदको तुरत उपाय॥
श्रीआदिनाथके०।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केतुकी बेल चमेली, श्रीगुलाबके पुष्प मंगाय।
श्रीजीके चरण चढ़ावो भविजन, कामबाण तुरत नसिजाय॥
श्रीआदिनाथके०।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज लीना तुरत रस भीना, श्रीजिनवर आगे धरवाय।
थाल भराऊं क्षुधा नसाऊं, ल्याऊं प्रभुके मंगल गाय॥
श्रीआदिनाथके०।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग जगमग होत दशोदिश, ज्योति रही मंदिरमें छाय।
श्रीजीके सन्मुख करत आरती, मोह तिमिर नासै दुखदाय॥
श्रीआदिनाथके०।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर कपूर सुगंध मनोहर, चंदन कूट सुगंध मिलाय।
श्रीजीके सन्मुख खेय धुपायन, कर्म जरे चहुंगति मिटिजाय॥
श्रीआदिनाथके०।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल और बदाम सुपारी, केला आदि छुहारा ल्याय।
महामोक्षफल पावन कारन, ल्याय चढ़ाऊं प्रभुजीके पांय॥
श्रीआदिनाथके०।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि निरमल नीरा गंध सुअक्षत, पुष्प चरू ले मन हरषाय।
दीप धूप फल अर्घ सु लेकर, नाचत ताल मृदङ्ग बजाय॥
श्रीआदिनाथके०।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक ।

दोहा ।

सर्वारथसिद्धितें चये, मरुदेवी उर आय ।
दोज असित आषाढकी, जजूं तिहारे पाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीआषाढकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चैतवदी नौमी दिना, जन्म्या श्रीभगवान ।
सुरपति उत्सव अति करा, मैं पूजौं धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

तृणवत् ऋधि सब छांडिके, तप धारा बन जाय ।
नौमी चैत्र असेतकी जजूं तिहारे पांय ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तप कल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

फाल्गुन वदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान ।
इन्द्र आय पूजा करी, मैं पूजौं यह थान ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णएकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिजिनाय अर्घं ।

माघ चतुर्दशि कृष्णकी, मोक्ष गये भगवान ।
भवि जीवोंको बोधिके पहुचे शिवपुर थान ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिजिनाय अर्घं ।

जयमाला।

आदीश्वर महराज, मैं विनती तुमसे करूं,
चारो गतिके मांहि, मैं दुख पायो सो सुनो।
अष्ट कर्म मैं छु' इकलो यह दुष्ट महादुख देत हो,
कबहूं इतर निगादमें मोकूं पटकत करत अचेत हो॥
म्हारी दीनतनी सुनो वीनती॥ १॥

प्रभु कबहूंक पटक्यो नरकमें, जठे जीव महादुख पाय हो।
नित उठ निरदई नारकी, जठे करत परस्पर घात हो। म्हा०॥

प्रभु नरकतणा दुख अब कहू, जठे करत परस्पर घात हो।
कैइक बांध्यो खंभस्यों, पापी दे मुद्गरकी मार हो॥म्हा०॥

कोइक कार्टे करोंतसों पापी अङ्गतणी दोय फाड हो।
प्रभु इहविधि दुखभुगत्याघणा, फिर गतिपाई तिरिजंच हो॥म्हा०

हिरण बकरा बाछला, पशु दीन गरीब अनाथ हो।
प्रभु मैं ऊंटबलद भैंसाभयो, जठेलादियो भारअपार हो॥म्हा०

नहीं चालो जब गिर पर्यो, पापी दे सोटनकी मार हो।
प्रभु कोइक पुण्यसूं मैं तो पायो स्वर्गनिवास हो॥म्हारी०॥

देवांगना संग रम रह्यो, जठे भोगनि परताप हो।
प्रभु संगअप्सरा मैं रह्यो, जासों कर अतिअनुराग हो॥म्हा०

कबहूक नंदन वनविषै, प्रभु कबहूक वनगृह मांहिं हो।
प्रभु यहिविधि काल गमाइके, फिर माला मुरझाय हो॥म्हा०

देव थिती सब घट गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो।
सोच करत तनखिरपड्यो, फिरउपज्यो गरभमें जाइ हो ॥म्हा०
प्रभु गर्भतणा दुख अब कहूं, जठे सकडाई ठौर हो।
हलनचलन नहिं करसक्यो, जठे सघनकीच घनघोर हो ॥म्हा०
माता खावे चरपरो, फिर लागे तन संताप हो।
प्रभु जो जननी तातो भखे, फेर उपजे तन संताप हो ॥म्हा०॥
ओंधे मुख झूलो रह्यो, फेर निकसन कौन उपाय हो।
कठिन कठिन कर नीसरो, जैसे निसरै जंतीमें तार हो ॥म्हा०
प्रभु फिर निकसही धरत्यापड्यो, फिरउपज्यो दुःखअपार हो।
रोय रोय विलख्यो घनो, दुख वेदनको नहिं पार हो ॥म्हारी०
प्रभु दुख मेटन समरथ धनी, यातैं लागूं तिहारे पांय हो।
सेवक अरज करै प्रभू, मोकूं भवोदधि पार हो। म्हारी०॥

दोहा।

श्रीजीकी महिमा अगम है, कोई न पावे पार।
मैं मति अल्प अज्ञान हों, होइ नहीं विस्तार ॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
विनती ऋषभ जिनेशकी, जो पढसी मन ल्याय।
स्वर्गो में संशय नहीं, निश्चय शिवपुर जाय ॥

इत्याशीर्वादः।

••०००••

श्री शान्तिनाथ पूजा ।

रोडक छंद ।

सर्वारथ सुविमान त्याग गजपुर में आये,
विश्वसेन भूपाल तास के नंद कहाये ।
पंचम चक्री भये दर्प द्वादशमे राजे,
मैं सेऊं तुम चरण तिष्ठिये ज्यों दुख भाजे ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्र अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानम् ।
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधीकरणम् ।

कोशमालती छंद ।

पंचम उदधि तनो जल निरमल, कंचन कलश भरे हरषाय ।
धार देत ही श्रीजिन सन्मुख, जन्म जरामृतु दूर भगाय ॥
शांतिनाथ पंचम चक्रेश्वर, द्वादश मदन तनो पद पाय ।
तिनके चरण कमल के पूजे, रोग शोक दुख दारिद जाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-
कल्याणकप्राप्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मलयागिर चंदन कदलीनंदन, कुंकुम जलके संग घसाय ।
भव आताप विनाशन कारण, चरचूं चरण सबै सुखदाय ॥
शांतिनाथ पंचम चक्रेश्वर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-
कल्याणकप्राप्ताय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

पुण्यराशिसम उज्ज्वल अक्षत, शशिमरीचि तिस देख लजाय
पुञ्ज किये तुम आगे श्रीजिन, अक्षयपदके हेतु बनाय ॥
शांतिनाथ पंचम चक्रेश्वर, द्वादश मदन तनो पद पाय ।
तिनके चरण कमल के पूजे, रोग शोक दुख दारिद जाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरपुनीत अथवा अवनीके, कुसुम मनोहर लिये मंगाय ।
भेटधरत तुमचरणनके ढिग, ततछिन कामबाण नस जाय ॥
शांतिनाथ पंचम चक्रेश्वर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।

भांति भांति के सद्य मनोहर, कीने मैं पकवान संवार ।
भरथारी तुम सन्मुख लाया, क्षुधावेदनी वेग निवार ॥
शांतिनाथ पंचम चक्रेश्वर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।

घृत सनेह करपूर लायकर, दीपक ताके धरे प्रजार ।
जगमग जोत होत मंदिरमें, मोहअंधको देत सुटार ॥
शांतिनाथ पंचम चक्रेश्वर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणकप्राप्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

देवदार कृष्णागर चंदन, तगर कपूर सुगंध अपार।
खेऊं अष्टकरम जारनको, धूप धनंजयमांहि सुडार॥
शांतिनाथ पंचम चक्रेश्वर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंचकल्याणकप्राप्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नारंगी बादाम सुकेला, एला दाडिम फल सहकार।
कंचनथालमाहिं धरलायो, अरचतही पाऊं शिवनार॥
शांतिनाथ पंचम चक्रेश्वर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंचकल्याणकप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फलादि वसुद्रव्य संवारे, अर्घ चढ़ाये मंगल गाय।
'बखत रतन' के तुमही साहिब, दीजे शिवपुर राज कराय॥
शांतिनाथ पंचम चक्रेश्वर, द्वादश मदन तनो पद पाय।
तिनके चरण कमल के पूजे रोग शोक दुख दारिद जाय॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद उपगीत।

भादव सप्तमिश्यामा, सर्वार्थ त्याग नागपूर आये।
माता ऐरा नामा, मैं पूजूं अर्घ शुभलाये॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मे श्रीजिनराजा, जेठ असित चतुर्दशी सोहै ।
हरिगण नावें माथा, मैं पूजूं शांति चरणयुग जोहै ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्मकल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदश जेठ अंधारी, काननमें जाय संयम प्रभु लीन्हा ।
नवनिधिरत्न सुछारो, मैं बंदूं आतमसार जिन चीन्हा ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपःकल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष दसें उजियारा, अरि घाति ज्ञानभानु जिन पाया ।
प्रातिहार्य वसु धारा, मैं सेऊं सुरनर जास यश गाया ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय पौषशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्मेद शैल भारी, हनकर अघाति मोक्ष जिन पाई ।
जेठ चतुर्दशि कारी, मैं पूजूं सिद्धथान सुखदाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

छप्पय छंद।

भये आप जिनदेव जगत में सुख विस्तारे,
तारे भव्य अनेक तिन्हों के संकट टारे।
टारे आठों कर्म मोक्ष सुख तिनको भारी,
भारी विरद निहार लही मैं शरण तिहारी ॥

चरननको सिरनाय हूं, दुखदारिद्र संताप हर ।
हर सकलकर्म छिन एकमें, शांतिजिनेश्वर शांति कर ।।

दोहा ।

सारंग लक्षण चरण में, उन्नत धनु चालीस ।
हाटक वर्ण शरीर दुति, नमूं शांति जगईश ।।२।।

छंद भुजंग प्रयात ।

प्रभो आपने सर्वके फंद तोड़े, गिनाऊं कछू मैं तिनों नाम थोड़े
पड़ो अम्बुके बीच श्रीपाल राई, जपो नाम तेरो भएथे सहाई ।
धरो रायने सेठको सूलिका पै, जपी आपके नामकी सार जापै
भयेथे सहाई तबै देव आये, करी फूलवर्षा सुविष्टर बनाये ।।
जबै लाखकेधाम वन्हि प्रजारी, भयो पांडवोंपै महाकष्ट भारी
जबै नाम तेरतनी टेरकीनी, करीथी विदुरने वही राह दीनी ।
हरी द्रौपदी धातकी खंडमांही, तुम्हींहोसहाई भला और नाहीं
लियो नामतेरो भलो शीलपालो, बचाई तहांते सबैदुखटालो।
जबै जानकी रामने जो निकारी, धरे गर्भको भार उद्यान डारी
रटो नामतेरो सबै सौख्यदाई, करी दूर पीडा सुछिनना लगाई
विसन सात सेवे करे तस्कराई, सुअंजन जु तारो घड़ी ना लगाई
सहे अंजनाचंदना दुःख जेते, गयेभाग सारे जरा नामलेते ।
घड़े बीचमें सासने नाग डारो, भलोनामतेसे जु सोमा संभारो
गई काढनेको भई फूलमाला, भई है विख्यातं सबै दुःख टाला

इन्हें आदिदेके कहांलों बखानें, सुनो वृद्धमारी तिहूंलोक जानें
अजी नाथ मेरी जराओर हेरो, बड़ीनाव तेरी रतीबोझ मेरो।
गहो हाथस्वामी करो बेगपारा, कहूंक्या अबै आपनी मैं पुकारा
सबै ज्ञानकेबीच भासी तुम्हारे, करो देरनाहीं अहो संतप्यारे।

घत्ता छंद।

श्री शांति तुम्हारी, कीरति भारी, सुर नरनारी गुणमाला।
बखतावर ध्यावे, रतन सु गावे, मम दुखदारिद सब टाला॥

ॐ ह्रीं श्रीशातिनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरिणी छंद।

अजी ऐरानंद छवि लखत हैं आय अरनं,
धरें लज्जा भारी करत थुति सो लाग चरनं।
करे सेवा कोई लहत सुख सो सार छिन में,
घने दीना तारे हम चहत हैं वास तिन में॥१३॥

इति आशीर्वादः।

श्रीपार्श्वनाथ पूजा।

गीता छन्द।

वरस्वर्ग प्राणतको विहाय सुमात वामासुत भये।
अश्वसेनके पार्श्वजिनेश्वर चरण तिनके सुर नये॥

नौ हाथ उन्नत तन विराजै उरग लछण अति लसैं ।
थापूं तुम्हें जिन आय तिष्ठो कर्म मेरे सब नसैं ।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आव्हानम् ।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम् ।

चामर छन्द ।

छीर सोमके समान अम्बुसार लाइये,
हेम-पात्र धारके सु आपको चढ़ाइये ।
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूं सदा,
दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदनादि केसरादि स्वच्छ गंध लीजिये,
आप चर्न चर्च मोहतापको हनीजिये । पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय चदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

फेन चंदके समान अक्षतं मंगाइके,
पादके समीप सार पूजको रचायके । पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

केवड़ा गुलाब और केतकी चुनाइये,
धार चर्णके समीप कामको नशाइये ।
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूं सदा,
दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवरादि बावरादि मिष्ट सर्पिमें सनें,
आप चर्ण अर्च तें क्षुधादि रोगको हनें। पार्श्व० ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लाय रत्न दीपको सनेह पूरके भरूं,
वातिका कपूर वार मोह-ध्वातको हरूं। पार्श्व० ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप गंध लेयके सु अग्नि संग जारिये,
तास धूपके सु संग कर्म अष्ट वारिये। पार्श्व० ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

खारकादि चिर्भटादि रत्नथारमें भरूं,
हर्ष धारके जजूं सुमोक्ष सौख्यको वरूं। पार्श्व० ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंध अक्षत सुपुष्प चारु लीजिये,
दीप धूप श्रीफलादि अर्घ तें जजीजिये । पार्श्व० ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पायता छन्द ।

शुभ प्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आए ।
वैशाख तनी दुतकारी, हम पूजें विघ्न निवारी ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भ-कल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जन्मे त्रिभुवन सुखदाता, कलिकादशि पौष विख्याता ।
श्यामातन अद्भुत राजे, रवि कोटिक तेज सु लाजे ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पौषकृष्णएकादश्यां जन्म-कल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कलि पौष इकादशि आई, तब बारह भावना भाई ।
अपने कर लौंच सुकीना, हम पूजें चर्न जजीना ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पौषकृष्णएकादश्यां तप.-कल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वह कमठ जीव दुखकारी, उपसर्ग कियो अतिभारी ।
प्रभु केवल ज्ञान उपाया, अलि चैत चौथ दिन गाया ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां ज्ञान-कल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सित सावन सातैं आई, शिवनार तबै जिन पाई।
सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजें मोक्ष कल्याना ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्ष-कल्याणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

पारसनाथ जिनंद तने वच पानभखी जरते सुन पाये,
करो सरधान लहो पद आन भये पद्मावति शेष कहाये।
नाम प्रताप टरे संताप सुभव्यनको शिवशर्म दिखाये,
हो विश्वसेनके नंद भले गुण गावत हैं तुमरे हरषाये ॥

केकीकंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ।
लक्षण उरग निहार पग, वंदं पारसनाथ ॥

मोतीदाम छन्द।

रची नगरी षट् मास अगार, बने बहुगोपुर शोभ अपार।
सु कोटतनी रचना छवि देत, कगूंरनपै लहकैं बहुकेत ॥१॥
बनारसकी रचना जु अपार, करी या भांत धनेश तैयार,।
तहां विश्वसेन नरेंद्र उदार, करैं सुख वाम सु दे पटनार ॥
तजो तुम प्राणत नाम विमान, भये तिनके घर नंदन आन।
तबै सुर इन्द्र नियोगनि आय, गिरींद्र करी विध न्होन सु जाय

पिता घर सौंप गये निज धाम, कुबेर करे वसु जाम जु काम।
बधें जिन दूज मयंक समान, रमें बहु बालक निर्जर आन ॥
भये जब अष्टम वर्ष कुमार, धरे अणुव्रत्त महा सुखकार।
पिता जब आन करी अरदास, करो तुम व्याह वरो मम आस
करो तब नाहिं रहे जगचंद, किए तुम काम कषायक मंद।
चढ़े गजराज कुमारन संग, सु देखत गंगतनी सुतरंग ॥६॥
लख्यो इक रंक करे तप घोर, चहूदिस अग्नि बले अतिजोर
कहे जिननाथ अरे सुन भ्रात, करे बहुजीव तनी मतघात ॥७॥
भयो तब कोप कहे कित जीव, जले तब नाग दिखाय सजीव
लख्यो यह कारण भावन भाय, नये दिव ब्रह्मऋषी सब आय
तबै सुर चारप्रकार नियाग, धरी शिविका निजकंध मनाग
करो बन मांहिं निवास जिनंद, धरे व्रत चारित आनंद कंद ॥
गहे तहां अष्टमके उपवास, गये धनदत्ततनें जु अवास।
दियो पयदान महा सुखकार, भई पणवृष्टि तहां तिहवार ॥
गये फिर काननमांहिं दयाल, धरो तुम योग सबै अघ टाल।
तबै वह धूम सुकेत अयान, भयो कमठाचरको सुर आन ॥
करै नभ गौन लखे तुम धीर, जु पूरब बैर विचार गहीर।
करो उपसर्ग भयानक घोर, चली बहु तीक्षण पवन झकोर ॥
रहो दशहूं दिशमें तम छाय, लगी बहु अग्नि लखी नहिं जाय
सुरुंडनके बिन मुण्ड दिखाय, पड़े जल मूसल धार अथाय ॥

तबै पद्मावति कंत धनंद, नये युग आय तहां जिनचंद ।
भगो तब रंक सुदेखत हाल, लहो तब केवल ज्ञान विशाल ।।
दियो उपदेश महाहितकार, सुभव्यन बोधि सम्मेद पधार ।
सु सुवर्णभद्र जू कूट प्रसिद्ध, वरी शिवनारि लही वसुऋद्ध ।।
जजूं तुम चर्ण दोऊकर जोर, प्रभू लखिये अबही मम ओर ।
कहै बखतावर रत्न बनाय, जिनेश हमें भवपार लगाय ।।१६।।

घत्ता छन्द ।

जय पारसदेवं, सुरकृत सेवं, बंदित चरण सुनागपती ।
करुणा के धारी पर उपकारी, शिव सुखकारी कर्म हती ।।१७।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंच-कल्याणप्राप्ताय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द मद अवलिप्त ।

जो पूजें मन लाय, भव्य पारस प्रभु नित ही ।
ताके दुख सब जांय, भीति व्यापै नहि कितही ।।
सुख सम्पति अधिकाय, पुत्र मित्रादिक सारे ।
अनुक्रम सो शिव लहे, रतन इम कहे पुकारे ।।१८।।

इति आशीर्वादः ।

इति श्रीपार्श्वनाथजिनपूजा संपूर्णा ।

शान्तिपाठ भाषा।

चौपाई।

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी, शीलगुणव्रतसंजमधारी।
लखन एकसौ आठ विराजै, निरखत नयनकमलदल लाजैं॥
पंचमचक्रवर्तिपदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी।
इंद्रनरेंद्रपूज्य जिननायक, नमों शांतिहित शांतिविधायक॥
दिव्य विटप पहुपनकी बरसा, दुन्दुभि आसन बाणी सरसा।
छत्र चमर भामंडल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी॥३॥
शांति जिनेश शांति सुखदाई, जगतपूज्य पूजौं सिरनाई।
परमशांति दीजे हम सबको, पढ़ैं तिन्हें पुनि चार संघको॥

वसन्ततिलका।

पूजैं जिन्हें, मुकुट हार किरीट लाके,
इन्द्रादिदेव, अरु पूज्य पदाब्ज जाके।
सो शान्तिनाथ वरवंशजगत्प्रदीप,
मेरे लिये करहि शांति सदा अनूप॥ ५॥

इन्द्रवज्रा।

संपूजकोंको प्रतिपालकोंको, यतीनको औ यतिनायकोंको।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले, कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे॥

स्रग्धरा।

होवे सारी प्रजाको सुख, बलयुत हो धर्मधारी नरेशा,
होवै वर्षा समैपै, तिलभर न रहै व्याधियोंका अन्देशा।

होवैं चोरी न जारी, सुसमय वरतैं, हो न दुष्काल मारी,
सारे ही देश धारैं जिनवरवृषको, जो सदा सौख्यकारी ॥७॥

दोहा।

घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शांति करैं सो जगतमें, वृषभादिक जिनराज ॥ ८ ॥

मन्दाक्रान्ता।

शास्त्रोंका हो पठन सुखदा, लाभ सत्संगतीका,
सद्‌वृत्तोंके सुगुन कहके, दोष ढांकूं सभीका।
बोलूं प्यारे वचन हितके, आपका रूप ध्याऊँ,
तौलों सेऊं चरन जिनके, मोक्ष जौलों न पाऊं ॥९॥

आर्या।

तव पद मेरे हियमें, ममहिय तेरे पुनीत चरणोंमें।
तब लों लीन रहै प्रभु, जबलों पाया न मुक्ति पद मैंने ॥१०॥

अक्षरपद मात्रामें, दूषित जो कछु कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणाकरि पुनि छुड़ाहु भवदुखसे ॥
हे जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊं तव चरणशरण बलिहारी।
मरणसमाधि सुदुर्लभ, कर्मोंका क्षय सुबोध सुखकारी ॥१२॥

(पुष्पांजलि क्षिपेत)

विसर्जन। दोहा।

बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय।
तुव प्रसाद तैं परमगुरु, सो सब पूरन होय ॥ १ ॥

पूजनविधि जानों नहीं, नहिं जानों आव्हान ।
और विसर्जन हू नहीं, छमा करो भगवान ॥ २ ॥
मंत्रहीन धनहीन हूं, क्रियाहीन जिनदेव ।
छमा करहु राखहु मुझे, देहु चरणकी सेव ॥ ३ ॥
आये जो जो देवगन, पूजे भक्तिप्रमान ।
सो अब जावहु कृपाकर, अपने अपने थान ॥ ४ ॥

भाषा स्तुति पाठ ।

तुम तरनतारन भवनिवारन भविकमन आनंदनो ।
श्रीनाभिनंदन जगतवंदन, आदिनाथ निरंजनो ॥१॥
तुम आदिनाथ अनाथ सेऊं, सेय पद पूजा करूं ।
कैलाशगिरि पर ऋषभजिनवर, पदकमल हिरदै धरूं ॥२॥
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली ।
यह विरद सुनकर शरन आयो, कृपा कीजे नाथजी ॥३॥
तुम चंद्रवदन सुचंद्र लच्छन, चंद्रपुरि परमेश्वरो ।
महासेन-नंदन जगत-वंदन, चंद्रनाथ जिनेश्वरो ॥४॥
तुम शांति पांच कल्याण पूजूं, शुद्धमनवचकाय जू ।
दुर्भिक्ष चोरी पाप-नाशन, विघन जाय पलाय जू ॥५॥
तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्य कमल विकाशनो ।
श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पाप तिमिर विनाशनो ॥६॥

जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या वश करी ।
चारित्र रथ चढ़ भये दूल्हा, जाय शिवरमणी वरी ॥७॥
कंदर्प दर्प सुसर्प लच्छण, कमठ शठ निर्मद कियो ।
अश्वसेननंदन जगतवंदन, सकलसंघ मंगल कियो ॥८॥
जिन धरी बालकपणे दीक्षा, कमठ मान विदारके ।
श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमूं चित धारके ॥९॥
तुम कर्मघाता मोक्षदाता, दीन जान दया करो ।
सिद्धार्थनंदन जगतवंदन, महावीर जिनेश्वरो ॥१०॥
त्रय छत्र सोहैं सुर नर मोहें, वीनती अवधारिये ।
कर जोड़ि सेवक वीनवे प्रभु, आवागमन निवारिये ॥११॥
अब होउ भव भव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहो ।
कर जोड़ यह वरदान मांगों मोक्षफल जावत लहों ॥१२॥
जो एक मांहीं एक राजे, एकमांहि अनेकनो ।
इक अर अनेककी नहीं संख्या, नमों सिद्ध निरंजनो ॥१३॥

चौपाई ।

मैं तुम चरणकमल गुणगाय, बहुविधि भक्ति करूं मन लाय ।
जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि, यह सेवा फल दीजे मोहि ॥
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय ।
बार बार मैं विनती करूं, तुम सेयें भवसागर तरूं ॥१५॥

नाम लेत सब दुख मिट जाय, तुम दर्शन देख्यां प्रभु आय।
तुम हो प्रभु देवनके देव, तुम पदकमल करूं नित सेव ॥
मैं आयो पूजनके काज, मेरो जनम सफल भयो आज।
पूजा करके नवाऊं शीस, मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥१७॥

दोहा।

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान।
मो गरीबकी, वीनती सुन लीजे भगवान ॥ १८ ॥
दर्शन करते देवका, आदि मध्य अवसान।
स्वर्गनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥ १९ ॥
बिन मतलब बहुते अधम, तार दिये स्वयमेव।
त्यों मेरा कारज सफल, कर देवनके देव ॥ २० ॥
जैसी महिमा तुम विषै, और धरे नहिं कोय।
जो सूरजमें ज्योति है, तारनमें नहि सोय ॥ २१ ॥
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमांहि पलाय।
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अन्धकार विनशाय ॥ २२ ॥
बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अजान।
पूजाविधि जानू नहीं, शरन राखि भगवान ॥ २३ ॥
इस अपार संसारमें, शरण नाहि प्रभु कोय।
यातैं तुम पद भक्तको, भक्ति सहाई होय ॥ २४ ॥

इति भाषानित्यनियम पूजा।

••••○○•••

नैमित्तिक पूजाऐं

वर्तमान चौबीसी पूजा।

(कविवर वृन्दावन कृत)

दोहा

वंदौं पाचों परमगुरु, सुरगुरु वंदत जास।
विघनहरन मंगलकरन, पूरन परमप्रकाश ॥ १ ॥
चौबीसौं जिनपति नमों, नमों शारदा माय।
शिवमगसाधक साधु नमि, रचों पाठ सुखदाय ॥ २ ॥

नामावली स्तोत्र।

(छंद नयमालिनी, तथा तामरस व चंडी १६ मात्रा)

जय जिनंद सुखकंद नमस्ते, जय जिनंद जितफंद नमस्ते।
जय जिनंदवरबोध नमस्ते, जय जिनंद जितक्रोध नमस्ते ॥१॥
पापतापहर इंदु नमस्ते, अर्हवरनजुतबिंदु नमस्ते।
शिष्टाचारविशिष्ट नमस्ते, इष्ट मिष्ट उतकृष्ट नमस्ते ॥२॥
परमधर्म वरशर्म नमस्ते, मर्ममर्मघन-धर्म नमस्ते।
दृगविशाल वरभाल नमस्ते, हृदिदयाल गुनमाल नमस्ते ॥३॥

शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध नमस्ते, ऋद्धिसिद्धिवरवृद्ध नमस्ते ।
वीतराग विज्ञान नमस्ते, चिद्विलास धृतध्यान नमस्ते ॥४॥
स्वच्छगुणांबुधिरत्न नमस्ते, सत्त्वहितंकरयत्न नमस्ते ।
कुनयकरीमृगराज नमस्ते, मिथ्याखगवरबाज नमस्ते ॥ ५ ॥
भव्यभवोदधितार नमस्ते, शर्मामृतसितसार नमस्ते ।
दरशज्ञानसुखवीर्य नमस्ते, चतुरानन धरधीर्य नमस्ते ॥ ६ ॥
हरि हर ब्रह्मा विष्णु नमस्ते, मोहमर्द मनु जिष्णु नमस्ते ।
महादान महभोग नमस्ते, महाज्ञान महजोग नमस्ते ॥ ७ ॥
महा-उग्रतपसूर नमस्ते, महा-मौन गुणभूरि नमस्ते ।
धर्मचक्रि वृषकेतु नमस्ते, भवसमुद्रशतसेतु नमस्ते ॥ ८ ॥
विद्याईश मुनीश नमस्ते, इंद्रादिकनुतशीस नमस्ते ।
जय रतनत्रयराय नमस्ते, सकल जीवसुखदाय नमस्ते ॥९॥
अशरनशरनसहाय नमस्ते, भव्यसुपंथलगाय नमस्ते ।
निराकार साकार नमस्ते, एकानेकअधार नमस्ते ॥ १० ॥
लोकालोकविलोक नमस्ते, त्रिधा सर्व गुनथोक नमस्ते ।
सल्लदल्लदलमल्ल नमस्ते, कल्लमल्ल जितछल्ल नमस्ते ॥ ११ ॥
भुक्तिमुक्तिदातार नमस्ते, उक्तिसूक्ति शृङ्गार नमस्ते ।
गुनअनंत भगवंत नमस्ते, जय जय जय जयवंत नमस्ते ॥१२॥

इति पठित्वा जिनचरणाग्रे परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

[समुच्चय चौबीसी पूजा पहले आ चुकी है इस कारण यहां पर पुनः नहीं रखी]

श्रीआदिनाथपूजा ।

अडिल्ल ।

परमपूज्य वृषभेष स्वयंभूदेव जू,
पितानाभि मरुदेवि करें सुर सेव जू ।
कनकवरण तन तुङ्ग धनुष पनशत तनों,
कृपासिंधु इत आइ तिष्ठ ममदुख हनों ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिन अत्र अवतर अवतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक ।

छंद द्रुतविलंवित तथा सुन्दरी ।

हिमवनोद्भव वारि सुधारिकैं, जजत हों गुनबोध उचारिकैं ।
परमभाव सुखोदधि दीजिए, जनममृत्युजरा छय कीजिए ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामि स्वाहा।

मलयचंदन दाहनिकंदनं, घसि उभै करमें करि वंदनं ।
जजत हों प्रशमाश्रम दीजिए, तपततापत्रिधा छै कीजिए ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामि स्वाहा।

अमल तंदुल खंडविवर्जितं, सित निशेशहिमामियतर्जितं ।
जजत हों तसु पुञ्ज धरायजी, अखय संपति द्यो जिनरायजी ।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्रायाऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामि ।

कमल चंपक केतकि लीजिए, मदन-भंजन भेट धरीजिए ।
परमशील महा सुखदाय हैं, समरशूल निमूल नशाय हैं ।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय कामविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामि ।

सरस मोदनमोदक लीजिए, हरनभूख जिनेश जजीजिए ।
सकल आकुलअंतकहेतु हैं, अतुल शांतसुधारस देतु हैं ।।५।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामि स्वाहा ।

निविड मोहमहातम छाइयो, स्वपरभेद न मोहि लखाइयो ।
हरनकारन दीपक तासके, जजत हों पद केवल भासके ।।६।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामि स्वाहा ।

अगरचन्दन आदिक लेयकें, परम पावन गन्ध सुखेयकें ।
अगनिसंग जरें मिस धूमके, सकल कर्म उड़े यह घूमके ।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्रायाऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि ।

सुरस पक्क मनोहर पावने, विविध लै फल पूज रचावने ।
त्रिजगनाथ कृपा अब कीजिए, हमहि मोक्ष महाफल दीजिए ।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ।

जलफलादि समस्त मिलायकैं, जजत हों पद मंगल गायकें।
भगतवत्सल दीनदयालजी, करहु मोहि सुखी लखि हालजी ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामि।

पंचकल्याणक ।

छंद द्रुतविलंबित तथा सुन्दरी।

असित दोज अषाढ़ सुहावनी, गरभमंगलको दिन पावनी।
हरि सची पितुमातहिं सेवही, जजत हैं हम श्रीजिनदेवही ॥१॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णद्वितीयादिने गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

असित चैत सुनौमि सुहाइयो, जनममंगल तादिन पाइयो।
हरि महागिरिपै जजियो तबै, हम जजैं पदपंकजको अबै ॥२॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवमीदिने जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीवृषभनाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

असित नौमि सुचैत धरे सही, तपविशुद्ध सबै समता गही।
निज सुधारससों भर लाइयो, हम जजैं पद अर्घ चढ़ाइयो ॥३॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवमीदिने दीक्षामंगलप्राप्ताय श्रीआदिनाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

असित फागुन ग्यारसि सोहनों, परम केवलज्ञान जग्यो भनों।
हरि समूह जजैं तहँ आइकैं, हम जजैं इत मंगल गाइकैं ॥४॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानसाम्राज्यमंगलप्राप्ताय श्रीवृषभनाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

असित चौदसि माघ विराजई, परम मोक्ष सुमंगल साजई।
हरि समूह जजे कैलासजी, हम जजैं अति धार हुलासजी ॥५॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीवृषभनाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला।

छंद घत्तानन्द।

जय जय जिनचन्दा आदिजिनन्दा, हनि भवफंदा कंदा जू।
वासवशतवंदा धरि आनन्दा, ज्ञान अमंदा नन्दा जू ॥१॥

छंद मोतियदाम।

त्रिलोकहितंकर पूरन पर्म, प्रजापति विष्णु चिदातम धर्म।
जतीसुर ब्रह्मविदांवर बुद्ध, वृषंक अशंक क्रियाम्बुधि शुद्ध ॥२॥
जबै गर्भागममंगल जान, तबै हरि हर्ष हिये अति आन।
पिताजननीपद सेव करेय, अनेक प्रकार उमंग भरेय ॥३॥
जये जब ही तब ही हरि आय, गिरीन्द्रविषै किय न्हौंन सुजाय।
नियोग समस्त किये तित सार, सुलाय प्रभू पुनि राजअगार
पिताकर सौंपि कियो तित नाट, अमंद अनन्द समेत विराट।
सुथान पयान कियो फिर इन्द, इहां सुरसेव करैं जिनचद ॥।
कियो चिरकाल सुखाश्रित राज, प्रजा सब आनन्दको तित साज
सुलिप्त सुभोगनिमें लखि जोग, कियो हरिने यह उत्तम योग ॥
निलंजन नाच रच्यो तुम पास, नवों रसपूरित भाव विलास।
बजैं मिरदंग द्रमं द्रम जोर, चलै पग झारि झनांझन झोर ॥

घनाघन घंट करं धुनि मिष्ट, बजैं मुहचंग सुरान्वितपुष्ट ।
खड़ी छिनपास छिनहिं आकाश, लघू छिन दीरघ आदि विलास
ततच्छन ताहि विलै अविलोय, भये भवतैं भयभीत बहोय ।
सुभावत भावन बारह भाय, तहां दिवब्रह्मऋषीश्वर आय ॥
प्रबोध प्रभू सुगये निज धाम, तबैं हरि आय रची शिवकाम ।
कियो कचलोंच पिरागअरन्य, चतुर्थम ज्ञान लह्यो जगधन्य ॥
धरौ तब योग छमास प्रमान, दियो शिरियंस तिन्हैं इख दान ।
भयो जब केवलज्ञान जिनेन्द्र, समोसृतठाठ रच्यो सु धनेन्द्र ॥
तहां वृषतत्व प्रकाशि अशेष, कियो फिर निर्भयथान प्रवेश ।
अनन्त गुनातम श्रीसुखराश, तुम्हें नित भव्य नमैं शिवआश ॥

छन्द घत्तानन्द ।

यह अरज हमारी, सुनि त्रिपुरारी, जनम जरा मृति दूर करो
शिवसंपति दीजे, ढील न कीजे, निज लख लीजे कृपा धरो ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

छन्द आर्या ।

जो ऋषभेश्वर पूजै, मनवचतनभाव शुद्ध कर प्रानी ।
सो पावै निश्चैसौं, भुक्ती औ मुक्तिसार सुखथानी ॥ १४ ॥

इत्याशीर्वादः ।

पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

इति श्रीअनादिनाथपूजा समाप्त ।

श्रीअजितजिनेन्द्रपूजा ।

(छंद अशोकपुष्पमंजरी, दण्डक, अर्द्धमंजरी तथा अर्द्धनाराच)

त्याग वैजयंत सार सारधर्मके अधार,
जन्मधार धीर नम्र सुष्टु कौशलापुरी ।
अष्टदुष्ट नष्टकार मातु वैजयाकुमार,
आयु पूर्व लक्ष दक्ष है बहत्तरैपुरी ॥
ते जिनेश श्रीमहेश शत्रुके निकंदनेश,
अत्र हेरिये सुदृष्टि भक्तपै कृपा पुरी ।
आय तिष्ट इष्टदेव मैं करों पदाब्जसेव,
पर्म शर्मदाय पाय आय शर्न आपुरी ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिन अत्रावतरावतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक ।

छंद त्रिभंगी अनुप्रासक ।

गंगाहृदपानी निर्मल आनी, सौरभसानी सीतानी ।
तसु धारत धारा तृषानिवारा, शांतागारा सुखदानी ॥
श्रीअजितजिनेशं नुतनाकेशं, चक्रधरेशं खग्गेशं ।
मनवांछितदाता त्रिभुवनत्राता, पूजों ख्याता जग्गेशं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुचि चंदन बावन तापमिटावन, सौरभ पावन घसि ल्यायो।
तुम भवतपभंजन हो शिवरंजन, पूजनरंजन मैं आया।।
श्रीअजितजिनेशं नुतनाकेशं, चक्रधरेशं खग्गेशं।
मनवांछितदाता त्रिभुवनत्राता, पूजों ख्याता जग्गेशं।।२।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सितखंडविवर्जित निशिपतितर्जित, पुञ्ज विधर्जित तंदलको।
भवभावनिखर्जित शिवपदसर्जित, आनंदभर्जित दंदलको।।श्री०

ॐ ह्रीं अजितजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मनमथमदमंथन धीरजग्रंथन, ग्रंथनिग्रंथन ग्रंथपती।
तुअपादकुशेसे आदिकुशेसे, धारि अशेसे अर्चयती।।श्री०।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

आकुलकुलवारन थिरताकारन, छुदाविदारन चरु लायो।
षटरसकर भीने अन्न नवीने पूजन कीने सुख पायो।।श्री०।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय चरुं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपकमनिमाला जोतउजाला, भरि कनथाला हाथ लिया।
तुम भ्रमतमहारी शिवसुखकारी, केवलधारी पूज किया।।श्री०।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अमरादिक चूरन परिमलपूरन, खेवत क्रूरन कर्म जरै।
दशहूदिशि धावत हर्षबढ़ावत, अलिगुणगावत नृत्यकरै ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीअजितजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि।

बादाम नरङ्गी श्रीफल चंगी आदि अभंगीसौं अरचौं।
सब विघनविनाशै सुखपरकाशै, आतम भासै भौविरचौं ॥श्री०॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि।

जलफल सब सज्जे बाजत बज्जे, गुनगनरज्जै मनमज्जै।
तुअ पदजुगमज्जे सज्जन जज्जे, ते भवभज्जे निजकज्जे ॥
श्रीअजितजिनेशं नुतनाकेशं, चक्रधरेशं, खग्गेशं
मनवांछितदाता त्रिभुवनत्राता, पूजों ख्याता, जग्गेशं ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामि।

पंचकल्याणक।

छंद द्रुतमध्यकं १६ मात्रा।

जेठ असेत अमावशि सोहै, गर्भदिना नँद सो मनमोहै।
इंद फनिंद जजें मनलाई, हम पद पूजत अर्घ चढ़ाई। ॥१॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णामावस्यायां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीअजितजिनेन्द्राय अर्घं निवपामीति स्वाहा ॥१॥

माघसुदी दशमी दिन जाये, त्रिभुवनमें अति हरष बढ़ाये।
इंद फनिंद जजें तित आई, हम नित सेवत हैं हुलसाई ॥२॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लदशमीदिने जन्ममंगलमंडिताय श्रीअजितजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

माघसुदी दशमी तप धारा, भव तन भोग अनित्य विचारा।
इंद फनिंद जजें तित आई, हम इत सेवत हैं सिरनाई ॥३॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लदशमीदिने दीक्षाकल्याणकप्राप्ताय श्रीअजित-जिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

पौषसुदी तिथि चाथ सुहायो, त्रिभुवनभानु सुकेवल जायो।
इंद फनिंदजजैं तित आई, हम पद पूजत प्रीत लगाई ॥४॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लचतुर्थीदिने ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीअजित-जिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

पंचमि चैतसुदी निरवाना, निजगुनराज लियो भगवाना।
इन्द फनिंद जजैं तित आई, हम पद पूजत हैं गुनगाई ॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपञ्चमीदिने निर्वाणमंगलप्राप्ताय श्रीअजित-नाथाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला।

दोहा।

अष्ट दुष्टको नष्ट करि, इष्ट मिष्ट निज पाय।
शिष्ट धर्म भाख्यो हमें, पुष्ट करो जिनराय ॥ १ ॥

छन्द पद्धड़ी १६ मात्रा।

जय अजितदेव तुअ गुन अपार, पै कहूं कछुक लघुबुद्धि धार।
दशजनमतअतिशय बलअनंत, शुभलच्छन मधुरवचन भनंत
संहनन प्रथम मलरहित देह, तनसौरभ शोणितस्वेत जेह।
वपु स्वेदविना महरूपधार, समचतुर धरें संठान चार ॥२॥

दश केवल गमनअकाशदेव, सुरभिक्ष रहै योजन सतेव।
उपसर्गरहित जिनतन सु होय, सब जीव रहितबाधा सु जोय
मुखचारि सरबविद्याअधीश, कवलाअहारवर्जित गरीश।
छायाविनु नख कच बढ़ैं नाहिं, उन्मेष टमक नहिं भ्रु कुटिमाहिं
सुरकृत दशचार करों बखान, सब जीवमित्रताभाव जान।
कंटकविन दर्पणवत सुभूम, सब धान वृच्छ फल रहे भूम॥
षटऋतुके फूल फले निहार, दिशि निर्मल जिय आनंदधार।
जहँ शीतल मंद सुगंध वाय, पदपंकजतल पंकज रचाय॥७॥
मलरहित गगन सुर जय उचार, वरषा गंधोदक होत सार।
वर धर्मचक्र आगें चलाय, वसुमंगलजुत यह सुर रचाय॥८॥
सिंहासन छत्र चमर सुहात, भामंडलछवि वरनी न जात।
तरु उच्चअशोक रु सुमनवृष्टि, धुनिदिव्य और दुन्दभी मिष्ट॥
दृगज्ञानशर्मवीरज अनंत, गुण छियालीस इम तुम लहंत।
इन आदि अनंते सुगुनधार, वरनत गनपति नहिं लहत पार
तव समवशरनमहँ इन्द्र आय, पद पूजत बसुविधि दरब लाय
अति भगतसिहित नाटक रचाय, ताथेइ थेइ थेइ धुनि रही छाय
पग नूपुर झननन झननाय, तननननननन तन तान गाय।
घननननननन घंटा घनाय, छम छम छम छम घु घरू बजाय॥
दम दम दम दम दम मुरज ध्वान, संसाग्रदि सरंगीसुर भरत तान
झट झट झट अटपट नटत नाट, इत्यादि रच्यो अद्भुत सुठाट

पुनि वंदि इंद थुति नुति करन्त, तुम हो जगमें जयवंत संत।
फिर तुम विहार करि धर्मवृष्टि, सब जोग निरोध्यो परम इष्ट
सम्मेदथकी लिय मुकति थान, जय सिद्धशिरोमन गुननिधान
वृन्दावन वंदत बारबार, भवसागरतें मो तार तार ॥१५॥

छन्द घत्तानन्द।

जय अजित कृपाला गुनमणिमाला, संजमशाला बोधपती।
वर सुजसउजाला हीरहिमाला, ते अधिकाला स्वच्छ अती॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामि।

छन्द मदावलिप्तकपोल।

जो जन अजित जिनेश जजैं हैं, मनवचकाई,
ताकों होय अनन्द ज्ञान संपति सुखदाई।
पुत्र मित्र धयधान्य सुजस त्रिभुवनमहँ छावै,
मकल शत्रु छय जाय अनुक्रमसों शिव पावै॥१७॥

इत्याशीर्वादः।

श्रीशंभवनाथपूजा।

छंद मदावलिप्तकपोल।

जय शम्भव जिनचन्द सदा हरिगनचकोरनुत,
जयसेना जसु मातु जैति राजा जितारसुत।
तजि ग्रीवक लिये जन्मनगर सावित्री आई,
सो भवभंजनहेत भगतपर होहु सहाई॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशंभवनाथ जिनेन्द्र ! अत्रावतरावतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीशंभवनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीशंभवनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक ।

(छंद चौबोला तथा अनेक रागोंमें गाया जाता है ।)

मुनिमनसम उज्ज्वल जल लेकर, कनक कटोरीमें धारा,
जनमजरामृतुनाशकरनकों, तुमपदतर ढारों धारा ।
शम्भवजिनके चरन चरचतें, सब आकुलता मिट जावै,
निजनिधि ज्ञानदरशसुखवीरज, निराबाध भविजन पावै ।।१।।

ॐ ह्रीं श्रीशंभवजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामि० ।

तपतदाहकों कन्दन चन्दन मलयागिरिको घसि लायो ।
जगवन्दन भौफन्दनिकन्दन समरथ लखि शरन आयो । शं०।।

ॐ ह्रीं श्रीशंभवजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं नि० ।

देवजीर सुखदास कमलवासित सित सुन्दर अनियारे ।
पुञ्ज धरों इन चरनन आगें, लहों अखयपदकों प्यारे ।।शं०।।

ॐ ह्रीं श्रीशंभवजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामि ।

कमल केतकी बेल चमेली, चम्पा जूही सुमन वरा ।
तासौं पूजत श्रीपति तुमपद, मदनबान विध्वंसकरा ।।शं०।।

ॐ ह्रीं श्रीशंभवजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ।

घेवर बावर मोदन मोदक, खाजा ताजा सरस बना ।
तासों पदश्रीपतिको पूजत, छुधारोग ततकाल हना ।।
शम्भवजिनके चरन चरचतें, सब आकुलता मिट जावै ।
निजनिधि ज्ञानदरशसुखवीरज, निराबाध भविजन पावै ।।५।।
ॐ ह्रीं श्रीशंभवजिनेन्द्राय छुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

घटपटपरकाशक भ्रमतमनाशक, तुमढिंग ऐसो दीप धरों ।
केवलजोत उदोत होहु मोहि, यही सदा अरदास करों ।।शं०।।
ॐ ह्रीं श्रीशंभवजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० ।

अगर तगर कृष्णागर श्रीखंडादिक चूर हुताशन में ।
खेवत हों तुम चरनजलजढिंग, कर्म छार जरि ह्वै छनमें। शं०
ॐ ह्रीं श्रीशंभवजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि ।

श्रीफल लौंग बदाम छुहारा, एला पिस्ता दाख रमैं ।
लै फल प्रासुक पूजों तुमपद, देहु अखयपद नाथ हमैं ।।शं०
ॐ ह्रीं श्रीशंभवजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ।

जल चंदन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप फल अर्घ किया ।
तुमको अरपों भावभगतिधर, जय जय जय शिवरमनिपिया ।।
शम्भवजिनके चरन चरचतें, सब आकुलता मिट जावें ।
निजनिधि ज्ञानदरशसुखवीरज, निराबाध भविजन पावै ।।६।।
ॐ ह्रीं श्रीशंभवजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामि ।

पंचकल्याणक ।

छंद हंसी मात्रा १५ ।

मातागर्भविषैं जिन आय, फागुनसित आठैं सुखदाय ।
सेयो सुरतिय छप्पनवृन्द, नानाविधि मैं जजों जिनन्द ॥१॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लाष्टम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीशंभवजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कातिक सित पूनम तिथि जान, तीनज्ञानजुत जनम प्रमान।
धरि गिरिराज जजे सुरराज, तिन्हें जजों मैं निजहित काज ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लपूर्णिमायां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीशंभवजिनेन्द्राय अर्घ निवपामीति स्वाहा।

मगसिरसित पून्यों तप धार, सकल संगतजि जिन अनगार।
ध्यानादिक बल जीते कर्म, चर्चों चरन देहु शिवशर्म॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षपूर्णिमायां दीक्षाकल्याणकप्राप्ताय श्रीसंभवजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

कातिक कलितिथि चौथ महान, घातिघात लिय केवलज्ञान।
समवशरनमहँ तिष्ठे देव, तुरिय चिहन चर्चों वसुभेव ॥४॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाचतुर्थीदिने ज्ञानसाम्राज्यमंगलप्राप्ताय श्रीसंभवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत शुक्ल तिथि षष्ठी चोख, गिरसमेदतैं लीनों मोख।
चारशतक धनुअवगाहना, जजों तासपद थुति कर घना॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लषष्ठीदिने निर्वाणकल्याणप्राप्ताय श्रीसंभवजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला ।

दोहा ।

श्रीशम्भवके गुन अगम, कहि न सकत सुरराज ।
मैं वशभक्ति सुधीठ ह्वै, विनवों निजहितकाज ॥१॥

छंद मोतियदाम ।

जिनेश महेश गुनेश गरिष्ठ, सुरासुरसेवित इष्ट वरिष्ठ ।
धरे वृषचक्र करे अघ चूर, अतत्त्वछपातममर्दन सूर ॥ २ ॥
सुतत्त्वप्रकाशन शासन शुद्ध, विवेक विराग बढ़ावन बुद्ध ।
दयातरुतर्पनमेघ महान, कुनैगिरिभंजन वज्र समान । ३ ॥
सगर्भरु जन्ममहोत्सव मांहि, जगज्जन आनंदकंद लहांहि ।
सुपूरब साठहि लच्छ जु आय, कुमार चतुर्थम अंश रमाय ॥
चवालिस लाख सुपूरव एव, निकंटक राज किया जिनदेव ।
तजो कछुकारन पाय सुराज, धरे व्रत संजम आतमकाज ॥५॥
सुरेन्द्र नरेन्द्र दियो पयदान, धरे वनमें निज आतम ध्यान ।
कियौ चवघातिय कर्मविनाश, लयोतब केवलज्ञानप्रकाश ॥६॥
भई समवसृति ठाट अपार, खिरै धुनि झेलहिं श्रीगनधार ।
भने षटद्रव्यतने विसतार, चहू अनुयोग अनेकप्रकार ॥७॥
कहे पुनि त्रेपन भावविशेष, उभै विधि हैं उपशम्य जुभेष ।
सुसम्यकचारितभेदस्वरूप, अबै इमिछायक नौ सुअनूप ॥८॥

दगौ बुधि सम्यक चारितदान, सु लाभ रु भोगुपभोगप्रमान।
सु वीरज संजुत ए नव जान, अठार छयोपशमं इम मान ॥६॥
मति श्रुत औधि उभै विधि जान, मनःपरजैं चखु और प्रमान।
अचखु तथावधि दान रु लाभ, सुभोगुपभोग रु वीरजसाभ ॥
व्रताव्रत संजम और सुधार, धरे गुन सम्यक चारित भार।
भये वसु एक समापत येह, इकीश उदीक सुनो अब जेह ॥
चहूं गति चारि कषाय तिवेद, छलेश्यय और अज्ञानविभेद।
असंजमभाव लखो इसमाहिं, असिद्धित और अतत्तकहांहिं ॥
भये इकवीस सुनो अब और, विभेद त्रियं परिनामिक ठौर।
सुजीवित भव्यत और अभव्व, तरेपन एम भने जिन सव्व ॥
तिन्होंमँह केतक त्यागनजोग, कितेक गहेतैं मिटै भवरोग।
कह्यो इनआदि लह्यो फिर मोख, अनंतगुनातममंडित चोख ॥
जजों तुमपाय जपौं गुनसार, प्रभू हमको भवसागरतार।
गही शरनागत दीनदयाल, विलंब करो मति हे गुनमाल ॥

छंद घत्तानन्द।

जै जै भवभंजन जनमनरंजन, दयाधुरंधर कुमतिहरा।
वृन्दावन वंदत मनआनन्दित, दीजे आतमज्ञानवरा ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीशंभवजिनेन्द्राय महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥

छंद अडिल्ल ।

जो बांचै यह पाठ सरस शम्भवतनों,
सो पावै धनधान्य सरस संपति घनो ।
सकलपाप छै जाय सुजस जगमें बढ़ै,
पूजत सुरपद होय अनुक्रम शिवचढ़ै ॥१७॥

इत्याशीर्वाद ।

श्रीअभिनंदनजिनपूजा ।

छंद मदावलिप्तकपोल ।

अभिनन्दन आनन्दकन्द, सिद्धारथनन्दन,
संवरपिता दिनन्द चंद, जिहि आवत बंदन ।
नगर अजोध्या जनम इन्द, नागिंद जु ध्यावै,
तिन्हें जजनके हेत थापि, हम मंगल गावैं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर। संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक ।

छंद गीता, हरिगीता, तथा रूपमाला ।

पद्मद्रहगत गंगचंग, अभंग, धार सुधार है,
कनकमणिगनजड़ित झारी, द्वारधार निकार है ।

कलुषतापनिकंद श्रीअभिनन्द, अनुपमचंद है,

पदवंद वृन्द जजे प्रभु, भवदंदफंदनिकन्द है ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामि।

शीतचंदन कदलिनंदन, सुजलसंग घसायकैं।

होै सुगंध दशोंदिशामें, भमैं मधुकर आयकैं ॥क०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामि।

हीरहिमशशिफेनमुक्ता, सरिस तन्दुल सेत हैं।

तासको ढिंग पुंज धारौं, अछय पदके हेत हैं ॥क०॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

समरसुभटनिघटनकारन, सुमन सुमनसमान हैं।

सुरभितैं जापै कर झंकार, मधुकर आन हैं ॥क०॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस ताजे नव्य गव्य मनोज्ञ, चितहर लेयजी।

छुधाछेदन छिमाछितपतिके, चरन चरचेयजी ॥क०॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अततततममर्दनकिरनवर, बोधभानुविकाश है ।
तुम चरनढिंग दीपक धरों, मोहि होहु स्वपरप्रकाश है ॥
कलुषतापनिकंद श्रीअभिनन्द, अनुपमचंद है,
पदवंद वृन्द जजे प्रभु, भवदंदफंदनिकन्द है ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

भूर अगर कपूर चूर सुगन्ध, अगिनि जराय है ।
सब करमकाष्ठ सुकाष्ठमें मिस, धूमधूम उड़ाय है ॥क०॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।

आम निंबु सदा फलादिक, पक्क पावन आनजी ।
मोक्षफलके हेत पूजौं, जोरिकै जुगपानजी ॥क०॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

अष्टद्रव्य सँवारि सुन्दर, सुजस गाय रसाल ही ।
नचत रचत जजों चरनजुग, नाय नाय सुभाल ही ॥क०॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

पंचकल्याणक ।

छंद हरिपद ।

शुकलछट्ठ वयशाखविषै तजि, आये श्रीजिनदेव,
सिद्धारथमाताके उरमें, करै सची शुचि सेव ।
रतनवृष्टि आदिक वर मंगल, होत अनेकप्रकार,
ऐसे गुननिधिकों मैं पूजौं, ध्यावों बारम्बार ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठीदिने गर्भमंगलमंडिताय श्रीअभिनन्दननजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

माघशुक्लतिथि द्वादशिके दिन, तीनलोकहितकार,
अभिनन्दन आनंदकंद तुम, लीन्हो जगअवतार।
एक मुहूरत नरकमांहि हू, पायो सब जिय चैन,
कनकवरन कपि चिह्नधरनपद, जजों तुमैं दिनरैन ॥२॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

साढे छत्तिसलाख सुपूरब, राजभोग वर भोग,
कछु कारन लखि माघशुकल, द्वादशिकों धारौ जोग।
षष्ठक नेम समापत करि लिय, इन्द्रदत्त घर छीर,
जय धुनि पुष्प रतन गंधोदक, वृष्टि सुगंध समीर ॥३॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां दीक्षाकल्याणप्राप्ताय श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पौष शुकल चौदशिकों घाते, घातिकरमदुखदाय,
उपजायो वरबोध जासको, केवल नाम कहाय।
समवसरन लहि बोधिधरम कहि, भव्यजीवसुखकंद,
मोकों भवसागरतैं तारो, जय जय जय अभिनंद ॥४॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लचतुर्दश्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

जोगनिरोध अघातिघाति लहि, गिरसमेदतैं मोख,
मास सकल सुखराशि कहे, वैशाखशुकल छठ चोख।
चतुरनिकाय आय तित कीनो, भगतभाव उमगाय,
हम पूजैं इत अरघ लेय जिमि, विघनसघन मिट जाय ॥५॥
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठीदिने मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्रीअभिनंदन-
जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

दोहा।

तुङ्ग सु तन धनु तीनसौ, औ पचास सुखधाम।
कनकवरन अवलोकिकैं, पुनि पुनि करूं प्रणाम ॥१॥

छंद लक्ष्मीधरा।

सच्चिदानंद सद्ज्ञान सद्दर्शनी, सत्स्वरूपा लई सत्सुधासर्सनी।
सर्वआनन्दकंदा महादेवता, जास पादाब्ज सेवैं सबै देवता ॥
गर्भ औ जन्मनिःकर्मकल्यानमें, सत्वको शर्म पूरे सबै थानमें
वंशइक्ष्वाकुमें आपु ऐसेभये, ज्यों निशाशर्दमें इंदु स्वच्छ ठये ॥

लक्ष्मीवती छंद।

होत वैराग लौकांत सुर बोधियो,
फेरि शिविकासु चढ़ि गहन निज साधियो।
घाति चौघातिया ज्ञान केवल भयो,
समवसरनादि धनदेव तब निरमयो ॥४॥

एक है इन्द्रनीली शिला रत्नकी,
गोल साढेदशै जोजने जत्नकी ।
चारदिशपैड़िका बीस हज्जार है,
रत्नके चूरका कोट निरधार है ॥ ५ ॥
कोट चहुँओर चहुँद्वार तोरन खँचे,
तास आगें चहूं मानथंभा रचे ।
मान मानी तजै जास ढिंग जायकै,
नम्रताधार सेवैं तुम्हैं आयकैं ॥ ६ ॥

छंद लक्ष्मीधरा ।

बिंब सिंहासनोंपै जहां सोहहीं,
इंद्र नागेन्द्र केते मनै मोहहीं ।
वापिका वारिसों जत्र सोहै भरी,
जासमें न्हात ही पाप जावै टरी ॥ ७ ॥
तास आगें भरी खातिका वारसों,
हंस सूआदि पंखी रमें प्यारसों ।
पुष्पकी वाटिका वागवृच्छें जहां,
फूल औ श्रीफलें सर्वही हैं तहां ॥ ८ ॥
कोट सौवर्णका तास आगें खड़ा,
चार दर्वाज चौओर रत्नों जड़ा ।
चार उद्यान चारों दिशामें गना,
है ध्वजापंक्ति औ नाटशाला बना ॥ ९ ॥

तासु आगें त्रिती कोट रूपामयी,
तूप नौ जास चारों दिशामें ठयी।
धाम सिद्धांतधारीनके हैं जहां,
औ सभाभूमि है भव्य तिष्ठै तहां ॥१०॥
तास आगें रची गंधकूटी महा,
तीन है कट्टिनी सारशोभा लहा।
एकपै तौ निधै ही धरी ख्यात हैं,
भव्यप्रानी तहांलौं सबै जात हैं ॥ ११ ॥
दूसरी पीठपै चक्रधारी गमैं,
तीसरे प्रातिहार्यै लशै भागमैं।
तासपै वेदिका चार थंभानकी,
है बनी सर्वकल्यानके खानकी ॥ १२ ॥
तासपै है सुसिंहासनं भासनं,
जासपै पद्म प्राफुल्ल है आसनं।
तासु पै अंतरीच्छ विराजै सही,
तीनछत्र जु फिरें शीसरत्नै यही ॥ १३ ॥
वृच्छ शाकापहारी अशोकं लसै,
दुन्दुभीनाद औ पुष्प खंते खसैं।
देहकी ज्योतिसों मंडलाकार है,
सात भौ भव्य तामें लखै सार हैं ॥१४॥

दिव्यवानी खिरै सर्वशंका हरै,
श्रीगनाधीश झेलैं सुशक्ती धरै।
धर्मचक्री तुही कर्मचक्री हन,
सर्वशक्री नमै मोदधारे घने ॥ १५ ॥

भव्यको बोधि सम्मेदतैं शिव गये,
तत्र इन्द्रादि पूजे सुभक्तीमये।
हे कृपासिंधु मोपैं कृपा धारिये,
घोरसंसारसों शीघ्र मो तारिये ॥ १६ ॥

छन्द घत्तानन्द।

जै जै अभिनन्दा आनँदकन्दा, भवसमुद्रवर पोत इवा।
भ्रमतमशतखंडा, भानुप्रचंडा, तारि तार जगरैनदिवा ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द कवित्त।

श्रीअभिनन्दन पापनिकन्दन तिनपद जो भवि जजै सुधार।
ताके पुन्नभानु वर उग्गै दुरिततिमिर फाटै दुखकार॥
पुत्र मित्र धनधान्य कमल यह विकसै सुखद जगतहित प्यार।
कछुक कालमें सो शिव पावै, पढ़ै सुनै जिन जजै निहार ॥१८

इत्याशीर्वाद।

सुमतिनाथपूजा।

कवित्त रूपक मात्रा ३१।

संजमरतनविभूषनभूषित, दूषनदूषन श्रीजिनचन्द।
सुमतिरमारंजन भवभंजन, संजयन्त तजि मेरुनरिंद॥
मातुमंगला सकलमंगला, नगर विनीता जये अमन्द।
सो प्रभुदयासुधारसगर्भित आय तिष्ठ इत हरि दुखदन्द॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर! संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

अष्टक।

(छन्द कविक्त तथा कुसुमलता भी कहाता है।)

पंचमउदधितनों सम उज्वल, जल लीनों वरगन्ध मिलाय।
कनककटोरीमांहिं धारिकरि, धार देहुं सुचि मनवचकाय॥
हरिहरवंदित पापनिकंदित, सुमतिनाथ त्रिभुवनके राय।
तुमपदपद्म सद्मशिवदायक, जजत मुदितमन उदित सुभाय॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागर घनसार घँसौं वर, केशर अर करपूर मिलाय।
भवतपहरन चरनपर वारों, जनमजरामृततापपलाय॥हरि०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शशिसमउज्जल सहितगंधतल, दोनों अनी शुद्ध सुखदास ।
सो लै अखयसंपदाकारन, पुञ्ज धरौं, तुमचरननपास ॥हरि०॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।

कमलकेतुकी बेल चमेली, करना अरु गुलाब महकाय ।
सो लै समरशूलछेकारन, जजों चरन अति प्रीत लगाय।हरि०।४॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नव्य गव्य पकवान बनाऊँ, सुरस देखि दृगमन ललचाय ।
सोलै छुधारोगछयकारण, धरों चरणढिंग मनहरषाय ॥हरि०।५।

ॐ ह्रीं सुमतिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं नि० ।

रतनजड़ित अथवा घृतिपूरित, वा कपूरमय जोति जगाय ।
दीप धरों तुम चरननआगें, जातैं केवलज्ञान लहाय ।हरि०॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अगर तगर कृष्णागर चंदन, चूरि अगिनिमें देत जराय ।
अष्टकरम यह दुष्ट जरतु हैं, धूम घूम यह तासु उड़ाय ।हरि०॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।

श्रीफल मातुलिंग वर दाड़िम, आम निंबु फल प्रासुकलाय ।
मोक्षमहाफल चाखन कारन, पूजतहों तुमरे जुग पाय ।हरि०।८॥

ॐ ह्रीं सुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ।

जल चंदन तंदुल प्रसून चरु, दीप धूप फल सकल मिलाय ।
नाचिराचिशिरनाय समरचों, जयजय जयजयजय जिनराय ।
हरिहरवंदित पापनिकंदित, सुमतिनाथ त्रिभुवनके राय ।
तुमपदपद्म सद्मशिवदायक, जजत मुदितमन उदित सुभाय॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

पंचकल्याणक

रूप चौपाई ।

संजयंत तजि गरभ पधारे, सावनसेतदुतिय सुखकारे ॥
रहे अलिप्त मुकुर जिम छाया, जजों चरन जयजय जिनराया॥१॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लद्वितीयादिने गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीसुमतिनाथजिनेद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

चैतसुकलग्यारस कहँ जानों, जनमे सुमति सहित त्रयज्ञानों ।
मानों धर्यौ धरम अवतारा, जजों चरनजुग अष्टप्रकारा ।।२॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

चैतसुकलग्यारस तिथि भाखा, तादिन तप धरि निजरस चाखा ।
पारन पद्मसद्मपय कीनों, जजत चरन हम समता भीनों ।।३॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां तपमङ्गलमंडिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सुकलचैतएकादशि हाने, घाति सकल जे जुगपति जाने ।
समवसरनमहँ कहि वृषसारं, जजहुं अनंतचतुष्टयधारं ।।४॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां ज्ञानसाम्राज्यप्राप्ताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

चैतसुकलग्यारस निरवानं, गिरिसमेदतैं त्रिभुवनमानं ।
गुनअनंत निज निर्मलधारी, जजों देव सुधि लेहु हमारी ॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला ।

दोहा ।

सुमति तीनसौ छत्तिसो, सुमतिभेद दरसाय ।
सुमति देहु विनती करों, सुमति विलम्ब कराय ॥१॥
दयाबेलि तहँ सुगुननिधि, भविक-मोद गम चंद ।
सुमतिसतीपति सुमतिको, ध्यावों धरि आनंद ॥२॥
पंच परावरतन हरन, पंच समिति सित दैन ॥
पंचलब्धिदातारके, गुन गाऊँ दिन रैन ॥३॥

छंद भुजंगप्रयात ।

पितामेघराजा,सबै सिद्धकाजा, जपें नाम जाकोसबै दुःख भाजा ।
महासूर इक्ष्वाकवंशी विराजै, गुणग्राम जाको सबै ठौर छाजै ॥
तिन्होंके महापुण्यसों आप जाये, तिहूंलोकमें जीव आनंदपाये
सुनासीर ताहीघरी मेरुधायो, क्रिया जन्मकी सर्व कीनी यथायो
बहुरतातकों सोंपि संगीतकीनों, नमें हाथजोरैं भलीभक्तिभीनों
विताई दशैलाखही पूर्वबालैं, प्रजा लाखउन्तीसही पूर्वपालै ॥६॥

कछू हेतुतैं भावना बार भाये, तहां ब्रह्मलोकांतके देव आये।
गये बोधि ताही समैं इन्द्र आयो, धरेपालकीमें सुउद्यान ल्यायो ॥
नमेंसिद्धको केशलोंचे सबैही, धर्यो ध्यान शुद्धं जु घाती हनेही
लह्यो केवलं औसमोसर्न साजं, गणाधीशजु एकसौसोल राजं ॥
खिरैंशब्द तामें छहों द्रव्यधारे, गुनापर्ज उत्पादव्यैध्रौव्य सारे।
तथाकर्म आटोंतनी तिरियगाजं, मिलै जासुके नाशतें मोक्षराजं
धरैं मोहनी सत्तरं कोड़कोड़ी, सरित्पत्प्रमाणं थिति दीर्घजोड़ी
अवर ज्ञानदृग्वेदिनी अन्तरायं, धरें तीसकोड़ाकुड़ीसिंधुआयं ॥
तथा नामगोतं कुड़ाकोड़ि बीसं, समुद्रप्रमाणं धरें सत्तईसं।
सुतेतीसअब्धिं धरें आयुअब्धिं, कहें सर्वकर्मोतनी वृद्धलब्धि ॥
जघन्यप्रकारें धरें भेद ये ही, मुहूर्त्तं वसू नामगोतं गनेही।
तथा ज्ञानदृग्मोह प्रत्यूहआयं, सुअन्तमुहूर्तं धरैं थित्ति गायं ॥
तथा वेदिनी बारहेंही मुहूर्तं, धरैंथित्ति ऐसें भन्यो न्यायजुत्तं।
इन्हैं आदितत्वार्थभाख्यो अशेसा, लह्योफेरिनिर्वानमाहींप्रवेसा ॥
अनंतं महंतं सुसंतं सुतंतं, अमंदं अफंदं अनंदं अभंतं।
अलक्षं विलक्षं सुलक्षं सुदक्षं, अनक्षं अवक्षं अभक्षं अतक्षं ॥
अवर्णं अघर्णं अमर्णंअकर्णं, अभर्णं अतर्णं अशर्णं सुशर्णं।
अनेकं सदेकं चिदेकं विवेकं, अखंडं सुमंडं प्रचंडं तदेकं ॥१५॥
सुपर्मं सुधर्मं सुशर्मं अकर्मं, अनंतं गुनाराम जैवन्त वर्मं।
नमैं दास वृंदावनं शर्नआई, सबैदुःखतैं मोहिलीजै छुड़ाई ॥

छंद घत्तानंद।

तुव सुगुन अनन्ता ध्यावत संता, भ्रमतमभंजनमार्तण्डा।
सतमतकरचंडा भवि-कजमंडा, कुमतिकुबल इन गनहंडा॥

ॐ ह्रीं सुमतिजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद रोड़क।

सुमतिचरन जो जजैं, भविक जन मनवचकाई,
तासु सकलदुखदंद फंद, ततछिन छय जाई।
पुत्रमित्र धन धान्य, शर्म अनुपम सो पावै,
वृन्दावन निर्वान, लहै जो निहचैं ध्यावै॥१८॥

इत्याशीर्वाद।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

इति सुमतिजिनपूजा समाप्त।

पद्मप्रभजिनपूजा।

छंद रोड़क (मदावलिप्तकपोल)

पदमरागमनिवरनधरन, तनतुङ्ग अढ़ाई।
शतक दंड अघखंड, सकल सुर सेवत आई।
धरनि तात विख्यात सुसीमाजूके नंदन।
पदमचरन धरि राग सु थापों इतकरि वन्दन॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

अष्टक ।

चाल होलीकी-ताल जत्त ।

पूजों भावसों, श्रीपदमनाथपद सार, पूजों भावसों ।।टेक।।

गंगाजल अति प्रासुक लीनों, सौरभ सकल मिलाय ।।
मनवचतन त्रयधार देत ही, जनमजरामृत जाय ।
पूजों भावसों, श्रीपदमनाथपद सार, पूजों भावसों ।।१।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं नि० ।

मलयागर कपूर चंदन घँसि, केशररंग मिलाय ।
भवतपहरन चरनपर वारों, मिथ्याताप मिटाय ।पू०।।२।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं नि० ।

तंदुल उज्जल गंधअनीजुत, कनकथार भर लाय ।
पुञ्ज धरौं तुव चरनन आगैं, मोहि अखयपदपाय ।पू०।।३।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।

पारजात मंदार कलपतरुजनित सुमन शुचि लाय ।
समरशूल निरमूलकरनकों, तुम पद पद्म चढ़ाय ।।पू०।।४।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेंद्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ।

घेवर बावर आदि मनोहर, सद्य सजे शुचि भाय ।
छुधा रोगनिर्नाशन कारन, जजों हरष उर लाय ।।पू०।।५।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

दीपकजोति जगाय ललित वर, धूमरहित अभिराम ।
तिमिरमोह नाशनके कारन, जजों चरन गुनधाम ।।पू०।।६।।

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेंद्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ।

कृष्णागर मलयागर चंदन चूर सुगंध बनाय ।
अगिनमाहिं जारों तुम आगें, अष्टकरम जरि जाय ॥पू० ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि ।

सुरस-वरन रसना मनभावन, पावन फल अधिकार ।
तासों पूजों जुगम चरन यह, विघन करमनिरवार ॥पू०॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ।

जल फल आदिमिलाय गाय गुन, भगतभाव उमगाय ।
जजों तुमहिं शिवतियवर जिनवर, आवागमन मिटाय ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामि ।

पंचकल्याणक

छंद द्रुतविलंवित तथा सुन्दरि (मात्रा १६)

असित माघ सु छट्ट बखानिये, गरभमंगल तादिन मानिये ।
उरधग्रीवकसों चय राजजी, जजत इन्द्र जजैं हम आजजी ॥१॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णषष्ठीदिने गर्भावतरणमंगलप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

सुकलकार्तिकतेरसकों जये, त्रिजगजीव सु आनंदकों लये ।
नगर स्वर्गसमान कुसंबिका, जजतु हैं परिसंजुत अंबिका ॥२॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

सुकलतेरसकातिक भावनी, तप धर्यो वनषष्टम पावनी।
करत आतमध्यान धुरंधरो, जजत हैं हम पाप सबै हरो ॥३॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लत्रयोदश्यां निःक्रमणकल्याणकप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सुकलपूनमचैत सुहावनो, परमकेवल सो दिन पावनो ॥
सुरसुरेश नरेश जजं तहां, हम जजें पदपंकजको इहां ॥४॥

ॐ ह्रीं चैत्रपूर्णिमायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

असित फागुन चौथ सुजानियो, सकलकर्ममहा अरि हानियो।
गिरिसमेदथकी शिवको गये, हम जजैंपद ध्यानविषैं लये ॥५॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णचतुर्थीदिने मोक्षमंगलमंडिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला।

छंद घत्तानंद।

जय पद्म जिनेशा शिवसद्मेशा, पादपद्म जजि पद्मेशा।
जय भवतमभंजन मुनिमनकंजन,—रंजनको दिवसाधेशा ॥१॥

छंद रूपचौपाई।

जय जय जिन भविजनहितकारी, जय जय जिन भवसागरतारी।
जय जय समवसरन धनधारी, जय जय वीतराग हितकारी ॥
जय तुम साततत्वविधि भाख्यौ, जय जय नवपदार्थलखि आख्यौ
जय षटद्रव्य पंच जुतकाया, जय सबभेदसहित दरशाया ॥२॥

जय गुनथान जीव परमानो, जय पहिले अनंत जिय जानो ॥
जय दूजे सासादनमाहीं, तेरहकोड़ि जीवथित आंहीं ॥४॥
जय तीजे मिश्रित गुणथाने, जीव सु बावनकोड़ि प्रमाने ।
जय चौथे अविरति गुन जीवा, चारअधिक शतकोड़ि सदीवा ॥
जय जिय देशवरतमें शेषा, कोड़ि सातसौ हैं थिति वेशा ।
जय प्रमत्त षटशून्य दोय वसु, पांच तीन नव पांच जीव लसु ॥
जय जय अपरमत्तगुन कोरं, लच्छ छानवै सहस बहोरं ।
निन्यानवे एकशत तीना, ऐते मुनि तित रहहिं प्रवीना ॥७॥
जय जय अष्टममें दइ धारा, आठशतक सत्तानों सारा ।
उपशममें दुइसो निन्यानों, छपकमाहि तसु दूने जानों । ८॥
जय इतने इतने हितकारी, नवें दशे जुगश्रेणी धारी ।
जय ग्यारे उपशममगगामी, दुइसै निन्यानों अध आमी ॥६॥
जय जय छीनमोह गुनथानों, मुनि शतपांचअधिक अट्ठानो ।
जय जय तेरहमें अरहंता, जुग नभ पन वसु नव वसुतंता ॥
एते राजतु हैं चतुरानन, हम बंदै पद थुतिकरि आनन ।
हैं अजोग गुनमें जे देवा, पनसोठानों करों सुसेवा ॥११॥
तित थिति अइउऋलृलघु भाषत, करि थिति फिर शिवआनंदचाखत
ए उतकृष्ट सकल गुणथानी, तथा जघन मध्यम जे प्रानी ॥
तीनों लोकसदनके वासी, निज गुनपरजभेदमय राशी ।
तथा और द्रव्यनके जेते, गुनपरजाय भेद हैं तेते ॥१३॥

तीनों कालतने जु अनंता, सो तुम जानत जुगपत संता।
सोई दिव्यवचनके द्वारे, दे उपदेश भविक उद्धारे ॥१४॥
फेरि अचलथलवासा कीनों, गुन अनन्त निजआनंद भीनों।
चरमदेहतें किंचित ऊनों, नरआकृति तिति हैं नित गूनो ॥
जय जय सिद्धदेव हितकारी, बार बार यह अरज हमारी।
मोकों दुखसागरतें काढ़ो, वृन्दावन जाँचतु है ठाढ़ो ॥१६॥

छंद घत्ता।

जय जय जिनचंदा पद्मानंदा, परमसुमतिपद्माधारी।
जय जनहितकारी दया विचारी, जय जय जिनवर अधिकारी
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद रोड़क।

जजत पद्मपदपद्म सद्म ताके सुपद्म अत,
होत वृद्ध सुतमित्र सकल आनंदकंद शत ॥
लहत स्वर्गपदराज, तहांतें चय इत आई,
चक्रीको सुख भोगि, अंत शिवराज कराई। ८॥

इत्याशीर्वाद।

इतिश्रीपद्मप्रभजिनपूजा समाप्त।

सुपार्श्वनाथपूजा ।

छंद हरिगीता तथा गीता ।

जय जय जिनिंद गनिंद इंद, नरिंद गुन चिंतन करैं,
तन हरीहर मनसम हरत मन, लखत उर आनंद भरैं ।
नृप सुपरतिष्ठ वरिष्ठ इष्ट, महिष्ट शिष्ट पृथी प्रिया,
तिन नंदके पद वंद वृन्द, अमंद थापतु जुतक्रिया ॥१॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ॥१॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथजिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथजिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ॥ ३ ॥

चाल द्यानतरायजीकृत सोलहकारणभाषाष्टककी ।

तुम पद पूजों मनवचकाय, देव सुपारस शिवपुरराय,
दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो ।
उज्जल जल शुचि गंध मिलाय, कंचनझारी भरकर लाय ।
दयानिधि हो, जयजगबंधु दयानिधि हो । तुम ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मलयागिरचंदन घँसि सार, लीनो भवतपभंजनहार ।
दयानिधि हो, जयजगबंधु दयानिधि हो । तुम० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

देवजीर सुखदास अखंड, उज्जल जलछालित सित मंड।
दयानिधि हो, जयजगबंधु दयानिधि हो॥
तुम पद पूजों मनवचकाय, देव सुपारस शिवपुरराय।
दयानिधि हो, जय जगबंधु दयानिधि हो॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

प्रासुक सुमन सुगंधित सार, गुञ्जत अलि मकरध्वजहार।
दयानिधि हो, जयजगबंधु दयानिधि हो। तुम०॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

क्षुधाहरन नेवज वर लाय, हरों वेदनी तुम्हें चढ़ाय।
दयानिधि हो, जयजगबंधु दयानिधि हो। तुम०॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविध्वंसनाय चरुं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

ज्वलित दीप भरकरि नवनीत, तुमढिंग धारतु हों जगमीत।
दयानिधि हो, जयजगबंधु दयानिधि हो। तुम०॥ ६॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

दशविधि गंध हुताशनमाहिं, खेवत क्रूर करम जरि जाहिं।
दयानिधि हो, जयजगबंधु दयानिधि हो। तुम०॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि०।

श्रीफल केला आदि अनूप, लै तुम अग्र धरों शिवभूप ।
दयानिधि हो, जयजगबंधु दयानिधि हो । तुम० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

आठों दरबसाजि गुनगाय, नाचत राचत भगति बढ़ाय ।
दयानिधि हो, जयजगबंधु दयानिधि हो । तुम० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

पंचकल्याणक ।

छंद द्रुतिविलंबित तथा सुन्दरी (वर्ण १२)

सुकलभादवछट्ठ सुजानिये, गरभमंगल तादिन मानिये ।
करत सेव सची रचि मातकी, अरघ लेय जजों वसु भांतिकी ॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लाषष्ठीदिने गर्भमंगलमंडिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

सुकलजेठदुवादशि जन्मये, सकल जीव सु आनंद तन्मये ।
त्रिदशराज जजें गिरिराजजी, हम जजैं पद मंगल साजजी ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

जनमके तिथ श्रीधरनें धरी, तप समस्त प्रमादनकों हरी ।
नृपमहेन्द्र दियो पय भावसों, हम जजैं इत श्रीपद चावसों ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां निःक्रमणकल्याणप्राप्ताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अमरफागुनछट्ठ सुहावनों, परमकेवलज्ञान लहावनों ।
समवसर्नविषैं वृष भाखियो, हम जजैं पद आनंद चाखियो ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णषष्ठीदिने ज्ञानसाम्राज्यपदप्राप्ताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

असितफागुणसाँतय पावनों, सकलकर्म कियो छय भावनों।
गिरिसमेदथकी शिव जातु हैं, जजत ही सब विघ्न विलातु हैं ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तमीदिने मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला।

दोहा।

तुङ्ग अंग धनु दोयसौ, शोभा सागरचंद।
मिथ्यातपहर सुगुनकर, जय सुपास सुखकंद ॥१॥

छंद कामिनीमोहन (२० मात्रा।)

जयति जिनराज शिवराजहितहेत हो,
परमवैरागआनंद भरि देत हो।
गर्भके पूर्व षटमास धनदेवने,
नगर निरमापि बाराणसी सेवने ॥ २ ॥

गगनसों रतनकी धार बहु वरषहीं,
कोड़ि त्रैअर्द्ध त्रैवार सब हरषहीं।
तातके सदन गुनवदन रचना रची,
मातुकी सर्वविधि करत सेवा सची ॥ ३ ॥

भयो जब जनम तब इंद्रआसन चल्यो,
होय चकित तुरित अवधितैं लखि भल्यो।
सप्त पग जाय शिर नाय वंदन करी,
चलन उमग्यो तबै मानि धनि धनि घरी ॥४॥

सात विधि सेन गज वृषभ रथ बाज लै,
गंधरव निरतकारी सबै साज लै।
गलितमदगंड ऐरावती साजियो,
लच्छजोजन सु तन वदन सत साजियो ॥५॥

वदन वसुदंत प्रतिदंत सरवर भरे,
तासुमधि शतकपनवीस कमलिन खरे।
कमलिनी मध्य पनवीस फूले कमल,
कमलप्रति कमलमहँ एकसौ आठदल ॥६॥

सर्वदल कोड़शतवीस परमान जू,
तासुपर अपछरा नचहिं जुतमान जू।
तततता तततता वितता ताथई,
धृगतना धृगतता धृगततामें लई ॥ ७ ॥

धरत पग सनन नन सनन नन गगनमें,
नूपुरें झनन नन झनन नन पगनमें।
नचत इत्यादि कई भाँतिसौं मगनमें,
केइ तित बजत बाजे मधुर पगनमें ॥ ८ ॥

केइ द्रम द्रम द्रुद्रम द्रम मृदंगनि धुनै,
केइ झल्लरि झनन झंझनन झंझनै।
केइ संसागृदि संसागृदि सारंगि सुर,
केइ बीनापटह वंसि बाजैं मधुर ॥ ६ ॥

केइ तननन तननन तानैं पुरैं,
शुद्ध उच्चारि सुर केइ पाठैं फुरैं।
केइ झुकि झुकि फिरैं चक्रसी भामनी,
धृगततां धृगतगत परम शोभा बनी ॥१०॥

केइ छिन निकट छिन दूर छिन थूल लघु,
धरत वैक्रियकपरभावसों तन सुभगु।
केइ करताल करलालतलमें धुनैं,
तत वितत घन सुखरि जात बाजै मुनै ॥११॥

इन्हें आदिक सकल साज संग धारिकैं,
आय पुर तीन फेरी करी प्यारकैं।
सचिय तब जाय परसूतथल मोदमें,
मातु करि नींद लीनों तुम्हें गोदमें ॥१२॥

आन गिरवाननाथहि दियो हाथमें,
छत्र अर चमर वर हरि करत माथमें।
चढ़े गजराज जिनराज गुन जापियो,
जाय गिरिराजपांडुकशिला थापियो ॥ १३ ॥

लेय पञ्चमउदधिउदक कर कर सुरनि,
सुरन कलशनि भरे सहित चर्चित पुरनि।
सहस अरु आठ शिर कलश ढारे जबै,
अघघ घघ घघघघघ भभभ भम भौ तबै ॥१४॥

घघघ घघ घघघ घघ धुनि मधुर होत है,
भव्यजनहंसके हरष उद्योत है ।
भये इमि न्हौन तब सकल गुन रंगमें,
पोंछि भृङ्गार कीनों सची अंगमें ॥ १५ ॥

आनि पितुसदन शिशु सौंपि हरि थल गयो,
बालवय तरुन लहि राजसुख भोगयो ।
भोग तज जोग गहि चार अरिकों हने,
धारि केवल परमधरम दुइविधि भने ॥१६॥

नाशि अरि शेष शिवथानवासी भये,
ज्ञानदृगशर्मवीरजअनन्ते लये ।
सो जगतराज यह अरज उर धारियो,
धरमके नंदको भवउदधि तारियो ॥ १७ ॥

छंद घत्तानन्द ।

जय करुनाधारी शिवहितकारी, तारनतरनजिहाजा हो ।
सेवत नित वंदे मन आनंद, भवभयमेटनकाजा हो ॥१८॥
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा।

श्रीसुपार्श्वपदजुगल जो, जजैं पढ़ैं यह पाठ।
अनुमोदे सो चतुर नर, पावैं आनँद ठाठ ॥१६॥

इत्याशीर्वादाय पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

इति श्री सुपार्श्वजिनपूजा समाप्त ॥

श्री चन्द्रप्रभजिन पूजा।

छप्पय—अनौष्ठ्य यमकालंकार तथा शब्दालंकार शान्तरस।

चारुचरन आचरन, चरन चितहरनचिहनचर।
चंदचंदतनचरित, चंदथल चहत चतुर नर॥
चतुक चंड चकचूरि, चारि चिदचक्र गुनाकर।
चंचल चलितसुरेश, चूलनुत चक्र धनुरहर॥
चर अचरहितू तारनतरन, सुनत चहकि चिरनंद शुचि।
जिनचंदचरन चरच्यो चहत, चितचकोर नचि रचि रुचि ॥१॥

दोहा।

धनुष डेढसौ तुङ्ग तन, महासेन नृपनंद।
मातु लक्ष्मनाउर जये, थापों चंदजिनन्द ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्॥

अष्टक

(चाल द्यानतरायकृत नंदीश्वराष्टककी अष्टपदी तथा होलीकी तालमें, तथा गरभा आदि अनेक चालोंमें ।)

गंगाहृदनिरमलनीर, हाटकभृङ्गभरा ।
तुम चरन जजों वरवीर, मेटो जनमजरा ॥
श्रीचंदनाथदति चंद, चरनन चंद लगे ।
मन वच तन जजत अमंद, आतमजोति जगे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामि ॥ १ ॥

श्रीखंड कपूर सुचंग, केशररंग भरी ।
घँसि प्रासुक जलके संग, भवआताप हरी ॥ श्री० ॥२ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामि ॥ २ ॥

तंदुल सित सोमसमान, सम लय अनियारे ।
दिय पुंज मनोहर आन, तुमपदतर प्यारे ॥ श्री० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामि ॥ ३ ॥

सुरद्रुमके सुमन सुरंग, गंधित अलि आवै ।
तासों पद पूजत चंग, कामविथा जावै ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

नेवज नानापरकार, इंद्रियबलकारी ।
सो लै पद पूजों सार, आकुलता हारी ॥
श्रीचंदनाथदुति चंद, चरनन चंद लगे ।
मन वच तन जजत अमंद, आतमजोति जगे ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

तमभंजन दीप सँवार, तुमढिंग धारतु हों ।
मम तिमिरमोह निरवार, यह गुन धारतु हों ॥श्री०॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

दशगंध हुताशनमाहिं, हे प्रभु खेवतु हों ।
मम करम दुष्ट जरि जाँहि, यातैं सेवतु हों ॥श्री०॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

अति उत्तमफल सुमंगाय, तुम गुन गावतु हों ।
पूजों तन मन हरषाय, विघन नशावतु हों ॥ श्री० ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों ।
पूजों अष्टमजिन मीत, अष्टम अवनि गमों ॥ श्री० ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

पंचकल्याणक।

छंद तोटक (वर्ण १२)।

कलिपंचमचैत सुहात अली, गरभागममंगल मोद भली।
हरि हर्षित पूजत मातु पिता, हम ध्यावत पावत शर्मसिता ॥१॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपञ्चम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

कलि पौषइकादशि जन्म लयो, तब लोकविषै सुखथोक भयो।
सुरईश जजें गिरशीश तबै, हम पूजत हैं नुतशीश अबै ॥२॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

तप दुद्धर श्रीधर आप धरा, कलिपौष इग्यारसि पर्व वरा।
निजध्यानविषै लवलीन भये, धनि सोदिन पूजत विघ्न गये॥३॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

वर केवलभानु उद्योत कियो, तिहुं लोकतणों भ्रम मेट दियो।
कलि फाल्गुनसप्तमि इन्द्र जजे,हम पूजहिं सर्व कलंक भजे॥४॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

सित फाल्गुण सप्तमि मुक्ति गये, गुणवंत अनंत अबाध भये।
हरि आय जजें तित मोदधरे, हम पूजत ही सब पाप हरे ॥५॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला ।

दोहा ।

हे मृगांकअंकितचरण, तुम गुण अगम अपार ।
गणधरसे नहिं पार लहिं, तौ को वरनत सार ॥१॥
पै तुम भगति हिये मम, प्रेरै अति उमगाय ।
तातै गाऊं सुगुण तुम, तुम ही होउ सहाय ॥२॥

छंद पद्धरी (१६ मात्रा)

जय चन्द्र जिनेन्द्र दयानिधान, भवकानन हानन दवप्रमान ।
जय गरभजनममंगल दिनन्द, भवि जीवविकाशन शर्मकंद ॥३॥
दशलक्षपूर्व की आयु पाय, मनवांछित सुख भोगे जिनाय ।
लखि कारण ह्वै जगतैं उदास, चिंत्यो अनुप्रेक्षा सुखनिवास॥४॥
तित लौकांतिक बोध्यो नियोग, हरि शिविका सजि धरियो अभोग
तापै तुम चढ़ि जिनचन्दराय, ताछिनकी शोभा को कहाय ॥५॥
जिन अंग सेत सित चमर ढार, सित छत्र शीस गलगुलकहार ।
सित रतनजड़ित भूषण विचित्र, सित चंद्रचरण चरचैं पवित्र॥६॥
सित तन द्यु ति नाकाधीश आप, सित शिविका कांधे धरिसुचाप
सित सुजस सुरेश नरेश सर्व, सित चितमें चिंतत जात पर्व ॥७॥
सित चंदनगरतैं निकसि नाथ, सित वनमें पहुंचे सकलसाथ ।
सितशिलाशिरोमणि स्वच्छछांह, सित तपतित धारो तुमजिनाह

सित पयको पारण परमसार, सित चंद्रदत्त दीनों उदार।
सित करमें सो पयधार देत, मानो बांधत भवसिन्धुसेत ॥९॥

मानों सुपुण्यधारा प्रतच्छ,तित अचरज पन सुर किय ततच्छ।
फिर जाय गहन सित तपकरंत, सित केवलज्योति जग्यो अनंत
लहि समवसरणरचना महान, जाके देखत सब पापहान।
जहँ तरु अशोक शोभै उतंग, सब शोकतनो चूरैप्रसंग ॥११॥

सुर सुमनवृष्टि नभतैं सुहात, मनु मन्मथ तज हथियार जात।
वानी जिनमुखसौं खिरत सार, मनु तत्वप्रकाशन मुकुरधार ॥

जहँ चौंसठ चमर अमर ढुरंत, मनु सुजस मेघझरि लगिय तंत
सिंहासन है जहँ कमलजुक्त, मनु शिवसरवरको कमलशुक्त ॥

दुन्दभि जित बाजत मधुर सार, मनु करमजीतको है नगार।
सिर छत्र फिरै त्रय श्वेतवर्ण, मनु रतन तीन त्र्यताप हर्ण ॥

तन प्रभातनों मंडल सुहात, भवि देखत निजभव सात सात।
मनु दर्पणद्युति यह जगमगाय, भविजन भव मुख देखत सुआय
इत्यादि विभूति अनेक जान, बाहिज दीसत महिमा महान।
ताको वरणत नहिं लहत पार, तौ अन्तरंग को कहै सार ॥१६॥

अनअन्त गुणनिजुत करि विहार, धरमोपदेश दे भव्य तार।
फिर जोगनिरोधि अघाति हान, सम्मेदथकी लिय मुकतिथान ॥
वृन्दावन वन्दत शीश नाय, तुम जानत हो मम उर जु भाय।
तातें का कहौं सुबार बार, मनवांछित कारज सार सार ॥१८॥

छंद घत्तानंद ।

जय चन्दजिनंदा आनँदकंदा, भवभय भंजन राजै है ।
रागादिकद्वंदा हरि सब फंदा, मुकतिमांहि थिति साजैं हैं ॥
ॐ श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छंद चौबोला ।

आठों दरब मिलाय गाय गुण, जो भविजन जिनचन्द जजैं ।
ताके भव भवके अघ भाजैं, मुक्तिसार सुख ताहि सजैं ।२०।
जम के त्रास मिटैं सब ताके, सकल अमंगल दूर भजैं ।
वृन्दावन ऐसो लखि पूजत, जातैं शिवपुरि राज रजैं ॥२१॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

इति श्रीचन्द्रप्रभजिनपूजा समाप्त

श्रीपुष्पदन्तजिनपूजा ।

(छंद मदावलिप्तकपोल तथा रोड़क मात्रा २४)

पुष्पदंत भगवंत संत सुजपंत तंत गुन,
महिमावंत महंत कंत शिवतिय रमंत मुन ।
काकंदीपुर जनम पिता सुग्रीवरमासुत,
स्वेतवरन मनहरन तुम्हें थापों त्रिवार नुत ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

(चाल हाली, ताल जत्त।)

मेरी अरज सुनीजे, पुष्पदन्त जिनराय, मेरी० ॥ टेक ॥

हिमवनगिरिगतगंगाजल भर, कंचनभृङ्ग भराय।
करमकलंक निवारनकारन, जजों तुम्हारे पाय ॥मेरी०॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

बावन चंदन कदलीनन्दन, कुंकुमसंग घसाय।
चरचों चरन हरन मिथ्यातप, वीतराग गुणगाय ॥मेरी०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेंद्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

शालि अखंडित सौरभमंडित, शशिसम द्युति दमकाय।
ताको पुञ्ज धरों चरननढिंग, देहु अखयपद राय ॥मेरी०॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंतजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निवपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सुमन सुमनसम परिमलमंडित, गुंजतअलिगन आय।
ब्रह्मपुत्रमदभंजनकारन, जजों तुम्हारे पाय ॥ मेरी० ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

घेवरबावर फेनी गोभा, मोदन मोदक लाय।
छुधावेदनीरोगहरनको, भेंट धरों गुणगाय ॥ मेरी० ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय छुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

बाति कपूर दीप कंचनमय, उज्वल ज्योति जगाय।
तिमिर मोह नाशक तुमको लखि, धरों निकट उमगाय॥
मेरी अरज सुनीजे, पुष्पदन्त जिनराय, मेरी० ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

दशवर गंध धनंजयके संग, खेवत हौं गुन गाय।
अष्टकर्म ये दुष्ट जरैं सो, धूम धूम सु उड़ाय ॥ मेरी० ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल मातुलिंग शुचि चिरभट, दाड़िम आम मँगाय।
तासों तुम पदपद्म जजत हों, विघनसघन मिटजाय ॥मेरी०

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल फल सकल मिलाय मनोहर, मनवचतन हुलसाय।
तुमपद पूजों प्रीति लायकै, जय जय त्रिभुवनराय ॥ मेरी०॥९॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पंचकल्याणक।

छंद स्वयंभू (मात्रा ३२)।

नवमीतिथि कारी फागुन धारी, गरभमांहिं थितिदेवा जी।
तजि आरणथानं कृपानिधानं, करत सची तित सेवा जी ॥

रतननकी धारा परमउदारा, पर्यो व्योमतैं सारा जी ।
मैं पूजों ध्यावौं भगतिबढ़ावौं, करो मोहि भवपारा जी ॥१॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णनवम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीपुष्पदन्त-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मँगसिर सितपच्छं परिवा स्वच्छं, जनमे तीरथनाथा जी ।
तब ही चवभेवा निरजर येवा, आय नये निजमाथा जी ॥
सुरगिर नहवाये, मंगल गाये, पूजे प्रीति लगाई जी ।
मैं पूजो ध्यावौं भगतिबढावौं, निजनिधिहेत सहाई जी ॥२॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदि जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपुष्पदंत-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

सित मँगसिरमासा तिथिसुखरासा, एकमके दिन धारा जी ।
तप आतमज्ञाना आकुलहानी, मौनसहित अविकारा जी ॥
सुरमित्र सुदानीके घरआनी, गो-पय-पारन कीना है ।
तिनको मैं बन्दों पापनिकंदों, जो समतारस भीना है ॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदि तपमङ्गलमण्डिताय श्रीपुष्पदंत-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सतकातिक गाये दोइज घाये, घातिकरम परचंडा जी ।
केवल परकाशे भ्रमतम नाशे, सकल सारसुख मंडा जी ॥
गनराज अठासी आनँदभासी, समवसरणवृषदाता जी ।
हरि पूजन आयो शीश नमायो, हम पूजैं जगताता जी ॥४॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वितीयायां ज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीपुष्प-दंतजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

आश्विन सित सारा आठैं धारा, गिरिसमेद निरवाना जी ।
गुन अष्टप्रकारा अनुपम धारा, जै जै कृपा निधाना जी ॥
तित इन्द्र सु आयौ पूज रचायौ, चिन्ह तहां करि दीना है।
मैं पूजत हों गुन ध्याय महीसौं, तुमरे रसमें भीना है ॥५॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाष्टम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीपुष्पदंत-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला ।

दोहा ।

लच्छन मगर सुश्वेत तन, तुंग धनुष शतएक ।
सुरनरवंदित मुकतिपति, नमों तुम्हें शिरटेक ॥ १ ॥
पुहुपरदन गुनवदन है, सागरतोय समान ।
क्योंकर कर अंजुलिनकर, करिये तासु प्रमान ॥ २ ॥

(छंद तामरस तथा नयमालिनी तथा चंडीमात्रा मात्रा १६)

पुष्पदन्त जयवन्त नमस्ते, पुण्यतीर्थंकर संत नमस्ते ।
ज्ञानध्यानअमलान नमस्ते, चिद्विलास सुखज्ञान नमस्ते ॥३॥
भवभयभंजन देव नमस्ते, मुनिगनकृतपदसेव नमस्ते ।
मिथ्यानिशिदिनइन्द्र नमस्ते, ज्ञानपयोदधिचन्द्र नमस्ते ॥४॥
भवदुखतरुनिःकंद नमस्ते, रागदोषमदहंद नमस्ते ।
विश्वेश्वर गुनभूर नमस्ते, धर्मसुधारसपूर नमस्ते ॥ ५ ॥
केवलब्रह्मप्रकाश नमस्ते, सकल चराचरभास नमस्ते ।
विघ्नमहीधर वज्र नमस्ते, जय ऊरधगतिरिज्जु नमस्ते ॥६॥

जय मकराकृतपाद नमस्ते, मकरध्वजमदवाद नमस्ते ।
कर्मभर्मपरिहार नमस्ते, जय जय अधमउधार नमस्ते ॥७॥
दयाधुरन्धर धीर नमस्ते, जय जय गुनगंभीर नमस्ते ।
मुक्तिरमनिपति वीर नमस्ते, हरता भवभयपीर नमस्ते ॥८॥
व्ययउतपतिथितिधार नमस्ते, निजअधार अविकार नमस्ते ।
भव्यभवोदधितार नमस्ते, वृन्दावननिसतार नमस्ते ॥ ९ ॥

घत्ता छंद (मात्रा ३२)।

जय जय जिनदेवं हरिकृतसेवं, परमधरमधनधारी जी ।
मैं पूजौं ध्यावौं गुनगन गावौं, मेटो विथा हमारी जी ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंतजिनेंद्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छंद मदावलिप्तकपोल।

पुहुपदंतपद सन्त, जजैं जो मन वचकाई,
नाचैं गावैं भगति करें, शुभपरनति लाई ।
सो पावैं सुख सर्व, इन्द अहिमिंद तनों वर,
अनुक्रमतैं निरवान, लहैं निहचैं प्रमोदधर ॥ ११ ॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।
इति श्रीपुष्पदंतजिनपूजा समाप्त।

श्रीशीतलनाथ जिनपूजा ।

छंद मत्तमातंग तथा मत्तगयंद । (वर्ण २३)

शीतलनाथ नमो धरि हाथ, सुनाथ जिन्हों भवगाथ मिटाये ।
अच्युततैं च्युत मातसुनन्दके, नन्द भये पुरभद्दल आये ॥
वंश इक्ष्वाक कियौ जिनभूषित, भव्यनको भवपार लगाये ।
ऐसे कृपानिधिके पदपंकज, थापतु हौं हिय हर्ष बढ़ाये ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट ।

अष्टक ।

छंद वसंततिलका (वर्ण १४)।

देवापगा सुवरवारि विशुद्ध लायौ ।
भृंगार हेम भरि भक्ति हिये बढ़ायौ ॥
रागादिदोषमलमर्दनहेतु येवा ।
चर्चों पदाब्ज तव शीतलनाथ देवा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखंड सार वर कुंकुम गारि लीनों ।
कंसंग स्वच्छ घसि भक्ति हिये धरीनों ॥रागादि०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

मुक्तासमान सित तंदुल सार राजैं ।
धारंत पुञ्ज कलिकुञ्ज समस्त भाजैं ॥
रागादिदोषमलमर्दनहेतु येवा,
चर्चो पदाब्ज तव शीतलनाथ देवा ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

श्रीकेतकी प्रमुख पुष्प अदोष लायौ ।
नौरंग जंगकरि भृंग सुरंग पायौ ॥रागादि०॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

नैवेद्य सार चरु चारु सँवारि लायौ ।
जांबूनदप्रभृतिभाजन शीस नायौ ॥रागादि०॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

स्नेहप्रपूरित सुदीपक जोति राजै ।
स्नेहप्रपूरित हिये जजतेऽघ भाजै ॥रागादि०॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

कृष्णागुरुप्रमुखगंध हुताशमाहीं ।
खेवों तवाग्र वसुकर्म जरन्त जाहीं ॥रागादि०॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

निम्नाम्र कर्कटि सु दाड़िम आदि धारा।
सौवर्ण गंध फलसार सुपक्क प्यारा ॥रागादि०॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

कंश्रीफलादि वसु प्रासुक द्रव्य साजे।
नाचे रचे मचत बज्जत सज्ज बाजे ॥रागादि०॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

पंचकल्याणक।

छंद इंद्रवज्रा तथा उपेंद्रवज्रा (वर्ण ११)।

आठैं वदी चैत सुगर्भ माहीं, आये प्रभू मंगलरूप थाहीं।
सेवै सची मातु अनेक भेवा, चर्चौं सदा शीतलनाथ देवा ॥१॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाष्टम्यां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीशीतलनाथ-जिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

श्रीमाघकी द्वादशि श्याम जायो, भूलोकमें मंगलसार आयो।
शैलेंद्रपै इंद्रफनिन्द्र जज्जे, मैं ध्यानधारों भवदुःख भज्जे ॥२॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीशीतलनाथ-जिनेंद्राय अर्घं निवपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

श्रीमाघकी द्वादशि श्याम जानों, वैराग्य पायो भवभाव हानों
ध्यायो चिदानन्द निवार मोहा, चर्चों सदा चर्न निवारि कोहा

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

चतुर्दशी पौषवदी सुहायो, ताही दिना केवललब्धि पायो।
शोभ समौसृत्य बखानि धर्म, चर्चो सदा शीतल पर्म शर्म ॥४॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

कुँवारकी आठयँ शुद्धबुद्धा, भये महामोक्षसरूप शुद्धा।
सम्मेदतैं शीतलनाथस्वामी, गुनाकरं तासु पदं नमामी ॥५॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाष्टम्यां मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला।

छंद लोलतरंग (वर्ण ११)।

आप अनन्तगुनाकर राजैं, वस्तुविकाशन भानु समाजैं।
मैं यह जानि गही शरना है, मोहमहारिपुको हरना है ॥१॥

दोहा।

हेमवर्न तन तुंग धनु, नव्वै अति अभिराम।
सुरतरु अंक निहारि पद, पुन पुन करौं प्रणाम ॥२॥

छंद तोटक (वर्ण १२)

जयशीतलनाथ जिनंदवरं, भवदाघदवानल मेघझरं।
दुखभूभृतभंजन वज्रसमं, भवसागर नागर पोतपमं ॥३॥

कुहमानमयामदलोभहरं, अरि विघ्नमयंद मृगिंद वरं।
कुवारिदवृष्टन सृष्टिहितू, परदृष्टि विनाशन सुष्टुपितू ॥४॥

समवसृतसंजुत राजतु हो, उपमा अभिराम विराजतु हो।
वर बारहभेद सभाथितको, तित धर्म वखानि कियौ हितको ॥५॥
पहले में श्रीगनराज रजैं, दुतियेमें कल्पसुरी जु सजैं।
त्रितिये गगनी गुनभूरि धरैं, चवथे तियजोतिष जोति भरैं ॥६॥
तिय विंतरनी पनमें गनिये, छहमें भुवनेसुर ती भनिये।
भुवनेश दशों थित सत्तम हैं, वसुमें वसुविंतर उत्तम हैं ॥७॥
नवमें नभजोतिष पंच भरे, दशमें दिविदेव समस्त खरे।
नरवृन्द इकादशमें निवसैं, अरु बारहमें पशु सर्व लसैं ८॥
तजि वैर प्रमोद धरैं सब ही, समतारसमग्न लसैं तब ही।
धुनि दिव्य सुनैं तजि मोहमलं, गनराज असी धरि ज्ञानबलं॥
सबके हित तत्व बखान करैं, करुनामनरंजित शर्म भरैं।
वरने षटद्रव्यतनें जितने, वर भेद विराजतु हैं तितने ॥१०॥

पुनि ध्यान उभैं शिवहेत मुना, इक धर्म दुती सुकलं अधुना॥
तित धर्म सुध्यानतणो गनियो, दशभेद लखे भ्रमको हनियो॥
पहलो अरि नाश अपाय सही, दुतियो जिनवैन उपाय गही।
त्रिति जीवविचै निजध्यावन है, चवथो सु अजीव रमावन है॥
पनमों सु उदैबलटारन है, छहमों अरिरागनिवारन है।
भवत्यागनचिंतन सप्तम है, वसुमों जितलोभ न आतम है॥१३॥
नवमों जिनकी धुनि सीस धरै, दशमो जिनभाषित हेत करै।
इमि धर्मतणो दशभेद भन्यो, पुनि शुक्लतणो चदु येम गन्यो॥

सुपृथक्त वितर्कविचार सही, सुइकत्ववितर्कविचार गही।
पुनि सूक्ष्मक्रियाप्रतिपात कही, विपरीतक्रियानिरवृत्त लही ॥१५
इन आदिक सर्व प्रकाश कियो, भवि जीवनको शिव स्वर्ग दियो
पुनि मोक्षविहार कियो जिनजी, सुखसागर मग्न चिरंगुनजी ॥
अब मैं शरना पकरी तुमरी, सुधि लेहु दयानिधिजी हमरी।
भवव्याधि निवार करो अब ही, मति ढील करो सुख द्यो सबही॥

छंद घत्तानंद।

शीतलजिन ध्यावौं भगति बढ़ावौं, ज्यों रतनत्रयनिधि पावौं।
भवदन्द नशावौं शिवथल जावौं, फेर न भौवनमें आवौं ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेंद्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छन्द मालनी।

दिढ़रथसुत श्रीमान्, पंचकल्याणधारी।
तिनपदजुगपद्मं, जो जजै भक्तिधारी ॥
सहसुख धनधान्यं, दीर्घ सौभाग्य पावै।
अनुक्रम अरि दाहै, मोक्षको सो सिधावै ॥१९॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

इति श्रीशीतलनाथजिनपूजा समाप्त ॥ १० ॥

श्रीश्रेयांसनाथजिनपूजा ।

छंद रूपमाला तथा गीता ।

विमलनृप विमलासुअन, श्रेयांसनाथ जिनन्द ।
सिंघपुर जनमे सकल हरि, पूजि धरी आनन्द ॥
भवबंधध्वंसनहेत लखि मैं, शरन आयो येव ।
थापों चरन जुग उर कमलमें, जजनकारन देव ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ॥ ३ ॥

छंद गीता तथा हरिगीता । (मात्रा २८)

कलधौतवरन उतंगहिमगिरिपदमद्रहतैं आवई ।
सुरसरित प्रासुकउदकसों भरि भृंग धार चढ़ावई ॥
श्रेयांसनाथ जिनंद त्रिभुवनवंद आनँदकंद हैं ।
दुखदंदफंदनिकंद पूरनचंद जोति अमंद हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

गोशीर वर करपूर कुंकुम नीरसंग घसों सही ।
भवतापभंजनहेत भवदधिसेत चरन जजों सही ॥ श्रे० ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

सितशालि शशिदुति शुक्तिसुन्दरमुक्तिकी उनहार हैं ।
भरि थार पुंज धरंत पदतर अखयपद करतार हैं ॥श्रे०॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सदसुमन सुमन समान पावन, मलयतै मधुझंकरैं ।
पदकमलतर धरतैं तुरित सो मदन को मद खंकरैं ॥श्रे०॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

यह परममोदकआदि सरस संवारि सुन्दर चरु लियौ ।
तुव वेदनीमदहरन लखि, चरचों चरन सुचिकर हियौ ॥श्रे०

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

संशयविमोहविभरमतम भंजन दिनंदसमान हो ।
तातैं चरनढिंग दीप जोऊं देहु अविचलज्ञान हो ॥श्रे० ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

वर अगर तगर कपूर चूर सुगंध भूर बनाइया ।
दहि अमरजिह्वविषैं चरन ढिंग करम भरम जराइया ॥श्रे०॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

सुरलोक अरु नरलोकके फल पक्व मधुर सुहावने ।
ल भगतिसहित जजौं चरन शिव परमपावन पावने॥श्रे०। ८
ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जलमलयतंदुलसुमनचरु अरु दीपधूपफलावली ।
करि अरघ चरचौं चरनजुगप्रभु मोहि तार उतावली ।
श्रेयांसनाथ जिनंद त्रिभुवनवंद आनंदकंद हैं,
दुखदंदफंदनिकंद पूरनचंद जोति अमंद हैं ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पंचकल्याणक ।

छंद आर्या ।

पुष्पोत्तर तजि आये, विमलाउर जेठकृष्ण आठेंको ।
सुरनर मंगल गाये, मैं पूजौं नासि कर्मकाठेंको ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाष्टम्यां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जनमे फागुनकारी, एकादशि तीनज्ञानदृगधारी ।
इख्वाकवंशतारी, मैं पूजौं घोर विघ्न दुखटारी ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

भवतनभोग असारा, लख त्याग्यो धीर शुद्ध तपधारा ।
फागुनवदि इग्यारा, मैं पूजों पाद अष्टपरकारा ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

केवलज्ञान सुज्ञानन, माघवदी पूर्णतित्थको देवा ।
चतुरानन भवभानन, वंदौं ध्यावौं करौं सुपदसेवा ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णामावस्यायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

गिरिसमेदतैं पायो, शिवथल तिथि पूर्णमासि सावनको ।
कुलिशायुध गुनगायो, मैं पूजों आपनिकट आवनको ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लपूर्णिमायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला ।

छंद लोलतरंग (वर्ण ११) ।

शोभित तुंग शरीर सुजानो, चाप असी शुभलच्छन मानो ।
कंचनवर्ण अनूपम सोहै, देखत रूप सुरासुर मोहै ॥ १ ॥

छन्द पद्धड़ी (मात्रा १६)

जै जै श्रेयांस जिन गुनगरिष्ठ, तुमपदजुग दायक इष्टमिष्ट ।
जै शिष्टशिरोमनि जगतपाल, जै भवसरोजगन प्रातकाल ॥२॥
जै पंचमहाव्रतगजसवार, लै त्यागभावदलवल सु लार ।
जै धीरजको दलपति बनाय, सत्ताछितिमहँ रनको मचाय ॥
धरि रतनतीन तिहुं शक्तिहाथ, दशधरमकवच तपटोप माथ ।
जै शुकलध्यानकर खड़गधार, ललकारे आठौं अरि प्रचार ॥

तामें सबको पति मोहचंड, ताकों ततछिन करि सहस खंड।
फिर ज्ञानदरसप्रत्यूह हान, निजगुनगढ़ लीनों अचलथान ॥५॥
शुचि ज्ञान दरस सुख वीर्य सार, हुव समवसरणरचना अपार।
तित भाषे तत्व अनेक धार, जाकों सुनि भव्य हिये विचार ।.६॥
निजरूप लह्यो आनंदकार, भ्रम दूरकरनकों अति उदार।
पुनि नयप्रमाननिच्छेपसार, दरसायो करि संशयप्रहार ॥७॥
तामें प्रमान जुग भेद एव, परतच्छ परोछ रजैं सुमेव।
तामें प्रतच्छके भेद दोय, पहिलो है संविवहार सोय ॥८॥
ताके जुग भेद विराजमान, मति श्रुत सोहै सुंदर महान।
है परमारथ दुतियो प्रतच्छ, हैं भेद जुगम तामाहिं दच्छ ॥६॥
इक एकदेश इक सर्व देश, इकदेश उभैविधि सहित वेश।
वर अवधि सुमनपरजै विचार, है सकलदेश केवल अपार ॥१०॥
चरअचर लखत जुगपत प्रतच्छ, निरद्वंदरहित परपंचपच्छ।
पुनि है परोच्छमह पंच भेद, समिरति अरु प्रतिभिज्ञानवेद॥११॥
पुनि तरक और अनुमान मान, आगमजत पन अब नय बखान
नगम संग्रह व्यौहार गूढ़, ऋजुसूत्र शब्द अरु समभिरूढ ॥१२॥
पुनि एवंभूत सु सप्त एम, नय कहे जिनेसुर गुन जुतेम।
पुनि दरबछेत्र अर काल भाव, निच्छेप चार विधि इमि जनाव
इनको समस्त भाष्यौ विशेष, जा समुझत भ्रम नहिं रहत लेश॥
निज ज्ञानहेत ये मूलमंत्र, तुम भाषे श्रीजिनवर सु तंत्र ॥१४॥

इत्यादि तत्वउपदेश देय, हनि शेषकरम निरवान लेय ।
गिरवान जजत वसु दरव ईश, वृन्दावन नितप्रति नमत सीश॥

घत्तानंद छंद।

श्रेयांस महेशा सुगुनजिनेशा, वज्र धरेशा ध्यावतु हैं ।
हम निशिदिन वंदैं पापनिकंदैं, ज्यों सहजानंद पावतु हैं ॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेंद्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा ।

जो पूजै मनलाय, श्रेयनाथपदपद्मको ।
पावै इष्ट अघाय, अनुक्रमसों शिवतिय वरै ॥१॥

इत्याशीर्वादाय पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।
इति श्रीश्रेयांसनाथजिनपूजा समाप्त ॥

श्रीवासुपूज्य जिनपूजा ।

छन्द रूपकवित्त ।

श्रीमतवासुपूज्य जिनवरपद, पूजनहेत हिये उमगाय ।
थापों मनवचतन शुचि करिकै, जिनकी पाटलदेव्या माय ॥
महिष चिह्न पद लसै मनोहर, लाल वरन तन समतादाय ।
सो करुनानिधि कृपादृष्टिकरि, तिष्ठहु सुपरितिष्ठ यहँ आय ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ॥
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ॥ ३ ॥

अष्टक

(छन्द जोगीरासा। आंचलीबंध "जिनपदपूजों लवलाई॥")
गंगाजल भरि कनककुंभमें, प्रासुक गंध मिलाई।
करम कलंक विनाशन कारन, धार देत हरषाई॥जिनपद०॥
वासुपूज्य वसुपूजतनुजपद, वासव सेवत आई।
बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई॥जिन०

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

कृष्णागरु मलयागिर चन्दन, केशरसंग घसाई।
भवआताप विनाशनकारन, पूजों पद चितलाई॥वा०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

देवजीर सुखदास शुद्ध वर, सुवरनथार भराई।
पुञ्जधरत तुम चरननआगैं,तुरित अखय पदपाई॥वा०॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निवपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

परिजात संतानकल्पतरु,-जनित सुमन बहु लाई।
मीनकेतुमनभंजनकारन, तुम पदपद्म चढ़ाई॥ वा०॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नव्यगव्यआदिकरसपूरित, नेवज तुरित उपाई।
छुधारोग निरवारनकारन, तुम्हें जजों शिरनाई॥ वा० ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपकजोत उदोत होत वर, दशदिशमें छवि छाई ।
तिमिरमोहनाशक तुमको लखि, जजों चरन हरषाई ॥वा०॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

दशविध गंधमनोहर लेकर, वातहोत्रमें डाई ।
अष्ट करम ये दुष्ट जरतु हैं, धूम सु धूम उड़ाई ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

सुरस सुपक्वसुपावन फल लै, कंचनथार भराई ।
मोक्षमहाफलदायक लखि प्रभु, भेंट धरों गुनगाई ॥वा०॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥८॥

जलफल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई ।
शिवपदराज हेत हे श्रीपति ! निकट धरों यह लाई ॥वा०॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ॥९॥

पंचकल्याणक

छंद पाईता (मात्रा १४) ।

कलि छट्ठ असाढ़ सुहायौ, गरभागम मंगल पायौ ।
दशमें दिवितें इत आये, शतइंद्र जजे सिर नाये ॥१॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णषष्ठ्यां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कलि चौदश फागुन जानों, जनमे जगदीश महानों ।
हरि मेर जजे तब आई, हम पूजत हैं चितलाई ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीफाल्गुनकृष्णाचतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तिथि चौदस फागुन श्यामा, धरियो तप श्रीअभिरामा ।
नृप सुंदरके पय पायो, हम पूजत अतिसुख थायो ॥३॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां तपोमंगलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वदि भादव दोइज सोहै, लहि केवल आतम जो है ।
अनअंत गुनाकर स्वामी, नित वंदों त्रिभुवन नामी ॥४॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णाद्वितीयायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सितभादव चौदशि लीनों, निरवान सुथान प्रवीनों ।
पुर चंपाथानकसेती, हम पूजत निजहित हेती ॥५॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा ।

चंपापुरमें पंचवर, कल्याणक तुम पाय ।
सत्तर धनु तन शोभनो, जै जै जै जिनराय ॥१॥

छंद मोतियदाम (वर्ण १२) ।

महासुखसागर आगर ज्ञान, अनंत सुखामृतभुक्त महान ।
महाबलमंडित खंडितकाम, रमाशिवसंग सदा विसराम ॥२॥
सुरिंद फनिंद खगिंद नरिंद, मुनिंद जजैं नित पादरविंद ।
प्रभू तुव अन्तरभाव विराग, सुबालहिनें व्रतशीलसों राग॥३॥
कियो नहिं राज उदाससरूप, सुभावन भावत आतमरूप ।
अनित्य शरीर प्रपंच समस्त, चिदातम नित्य सुखाश्रित वस्त ॥
अशर्न नहीं कोउ शर्न सहाय, जहां जिय भोगत कर्मविपाय ।
निजातम कै परमेसुर शर्न, नहीं इनके विन आपदहर्न ॥५॥
जगत्त जथा जलबुदबुद येव, सदा जिय एक लहै फलमेव ।
अनेकप्रकार धरी यह देह, भमें भवकानन आन न नेह ॥६॥
अपावन सात कुधात भरीय, चिदातम शुद्धसुभाव धरीय ।
धरै इनसों जब नेह तबेव, सुआवत कर्म तबै वसुमेव ॥७॥
जबै तनभोगजगत्तउदास, धरै तब संवर निर्जरआस ।
करै जब कर्मकलंक विनाश, लहै तब मोक्ष महासुखराश ॥८॥
तथा यह लोक नराकृत नित्त, विलोकियते षटद्रव्यविचित्त ।
सुआतमजानन बोधविहीन, धरै किन तत्त्वप्रतीत प्रवीन ॥९॥
जिनागमज्ञानरु संजमभाव, सबै निजज्ञान विना विरसाव ।
सुदुर्लभ द्रव्य सुक्षेत्र सुकाल, सुभाव सबै जिहतें शिव हाल॥१०
लयो सब जोग सुपुन्य वशाय, कहो किमि दीजिय ताहि गँवाय
विचारत यों लवकांतिक आय, नमें पदपंकज पुष्प चढ़ाय ॥

कह्यो प्रभु धन्य कियो सुविचार, प्रबोधि सु येम कियो जुविहार
तबै सवधर्मतनो हरि आय, रच्यौ शिबिका चढि आप जिनाय
धरे तप पाय सुकेवलबोध, दियो उपदेश सुभव्य सँबोध।
लियो फिर मोक्ष महासुखराश, नमैं नित भक्त सोई सुखआश

घत्तानंद।

नित वासववन्दत, पापनिकंदत, वासुपूज्य व्रत ब्रह्मपती।
भवसंकलखंडित, आनँदमंडित, जै जै जै जैवंत जती॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

सोरठा छन्द।

वासुपूजपद सार, जजौं दरवविधि भावसों।
सो पावै सुखसार, भुक्ति मुक्तिको जो परम॥ १५ ॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

इति श्रीवासुपूज्यजिनपूजा समाप्त॥

श्रीविमलनाथ जिनपूजा

छन्द मदावलिप्तकपोल (मात्रा २४)

सहस्रार दिवि त्यागि, नगर कम्पिला जनम लिय।
कृतधर्मानृपनंद, मातु जयसेन धर्मप्रिय।
तीन लोक वरनन्द, विमल जिन विमल विमलकर।
थापों चरनसरोज, जजनके हेत भावधर॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर। संवौषट् ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट् ॥३॥

अष्टक।

सोरठा छंद।

कंचनझारी धारि, पदमद्रहको नीर ले।
तृषा रोग निरवारि, विमल विमलगुन पूजिये ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

मलयागर करपूर, देववल्लभा संग घसि।
हरि मिथ्यातमभूर, विमलविमलगुन जजतु हों ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

वासमतीसुखदास, श्वत निशापतिको हंसै।
पूरै वांछित आस, विमलविमलगुन जजत हौ ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

पारिजात मंदार, सन्तानकसुरतरुजनित।
जजों सुमन भरि थार, विमल विमलगुन मदनहर ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नव्यगव्य रसपूर, सुवरनथार भरायकैं ।
छुधावेदनी चूर, जजों विमलपद विमलगुन ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मानिक दीप अखंड, गो छाई वर गो दशों ।
हरो मोहतम चंड, विमल विमलमतिके धनी ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेंद्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अगर तगर घनसार, देवदार कर चूर वर ।
खेवों वसु अरि जार, विमल विमलपदपद्मढिंग ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

श्रीफल सेव अनार, मधुर रसीले पावने ।
जजों विमलपद सार, विघ्न हरैं शिवफल करैं ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

आठों दरब संवार, मनसुखदायक पावने ।
जजों अरघ भरथार, विमल विमलशिवतिय-रमन ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पंचकल्याणक

छंद द्रुतविलम्बित तथा सुंदरि (वर्ण १२)।

गरभ जेठवदी दशमी भनों, परम पावन सो दिन शोभनों।
करत सेव सची जननीतणी,हम जजैं पदपद्मशिरोमणी॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीज्येष्ठकृष्णादशम्यां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

शुकलमाघ तुरी तिथि जानिये, जनममंगल तादिन मानिये।
हरि तबै गिरिराज विषैं जजे,हम समर्चत आनंद को सजे॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्दश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

तप धरे सितमाघ तुरी भली,निज सुधातम ध्यावत हैं रली।
हरि फनेश नरेश जजैं तहां, हम जजैं नित आनँदसों इहां॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्दश्यां निःक्रममहोत्सवमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

विमल माघरसी हनि घातिया, विमलबोध लयो सब भासिया
विमल अर्घ चढाय जजों अबै, विमल आनँद देहु हमें सबै॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लषष्ठ्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निवपामीति स्वाहा॥ ४॥

अमरसाढरसी अति पावनों, विमल सिद्ध भये मनभावनों।
गिरसमेद हरी तित पूजिया, हम जजैं इतहर्ष धरें हिया॥५॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णषष्ठ्यां मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

जयमाला

दोहा छन्द । अति उपमालंकार ।

गनन चहत उड़गन गगन, छिति थितिके छँहँ जेम ।
तिमि गुन वरनन वरनन,--माहि होय तव केम ॥ १ ॥

साठधनुष तन तुंग है, हेमवरन अभिराम ।
वर वराह पद अंक लखि, पुनि पुनि करों प्रनाम ॥ २ ॥

छन्द तोटक । (वर्ण १२) ।

जय केवलब्रह्म अनन्तगुनी, तुव ध्यावत शेष महेश मुनी ।
परमातम पूरन पापहनी, चितचिंततदायक इष्ट धनी ॥३॥

भवआतपध्वंसन इंदुकरं, वर साररसायन शर्मभरं ।
सब जन्मजरामृतदाघहरं, शरनागतपालन नाथ वरं ॥४॥

नित संत तुमे इन नामनितैं, चितचिंतत हैं गुनगामनितैं ।
अमलं अचलं अटलं अतुलं, अरलं अछलं अथलं अकुल ॥५॥

अजरं अमरं अहरं अडरं, अपरं अभरं अशरं अनरं ।
अमलीन अछीन अरीन हने, अमतं अगतं अरतं अघने ॥६॥

अछुधा अतृषा अभयातम हो, अमदा अगदा अवदातम हो ।
अविरुद्ध अक्रुद्ध अमानधुना, अतलं असलं अनअंत गुना ॥७॥

अरसं सरसं अकलं सकलं, अवचं सवचं अमनं सबलं ।
इन आदि अनेकप्रकार सही, तुमको जिन संत जपैं नित ही ॥

अब मैं तुमरी शरना पकरी, दुख दूर करो प्रभुजी हमरी।
हम कष्ट सहे भवकाननमें, कुनिगोद तथा थल आननमें ॥९॥
तित जामनमर्न सहे जितने, कहि केम सकैं तुमसों तितने।
सुमुहूरत अन्तरमाहिं धरे, छह त्रै त्रय छःछहकाय खरे ।१०।
छिति वह्नि वयारक साधरनं, लघु थूल विभेदनिसों भरनं।
परतेक वनस्पति ग्यारभये, छहजार दुवादश भेद लये ॥११॥
सब द्वै त्रय भूषट छःसु भया, इक इन्द्रियकी परजाय लया।
जुगइन्द्रिय काय असी गहियो, तिय इन्द्रिय साठनिमें रहियो॥
चतुरिंद्रिय चालिस देह धरा, पनइंद्रियके चववीस वरा।
सब ये तन धार तहां सहियो, दुखघोर चितारित जात हियो॥
अब मो अरदास हिये धरिये, दुखदंद सबै अब ही हरिये।
मनवांछित कारज सिद्ध करो, सुखसार सबै घर ऋद्धि भरो।१४।

घत्तानंद छंद।

जै विमलजिनेशा, नुतनाकेशा, नागेशा नरईश सदा।
भवतापअशेषा, हरनानशेषा, दाता चिन्तित शर्म सदा॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

दोहा छंद।

श्रीमत विमलजिनेशपद, जो पूजै मनलाय।
पूजै वांछित आश तसु, मैं पूजों गुनगाय॥ १६॥

इत्याशीर्वादाय पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

इति श्री विमलनाथजिनपूजा समाप्त॥ १३॥

श्रीअनन्तनाथजिनपूजा ।

कवित्त छंद (मात्रा ३१)।

पुष्पोत्तर तजि नगर अजुध्या, जनम लियो सूर्याउरआय ।
सिंहसेन नृपके नंदन आनंद अशेष भरे जगराय ॥
गुन अनंत भगवंत धरे भवदंद हरे तुम हे जिनराय ।
थापतु हों त्रयबार उचरिकै, कृपासिन्धु तिष्ठहु इत आय ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भवभव। वषट्

अष्टक

छंद गीता तथा हरिगीता (मात्रा २८)

शुचि नीर निरमल गंगको लै, कनकभृंग भराइया ।
मलकरम धोवन हेत मन, वचकाय धार ढराइया ॥
जगपूज परमपुनीत मीत, अनंत संत सुहावनों ।
शिवकन्तवन्त महन्त ध्यावों, अन्ततन्त नशावनों ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

हरिचंद कदलीनंद कुंकुम, दंदताप निकंद है ।
सब पापरुजसंतापभंजन, आपको लखि चंद है ॥ जग०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

कनशालदुति उजियाल हीर, हिमालगुलकनितैं घनी ।
तसु पुंज तुम पदतर धरत, पद लहत स्वच्छ सुहावनी ॥ज०

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पुष्कर अमरतरुजनित बर, अथवा अवर कर लाइया ।
तुम चरन पुष्करतर धरत, सरशूल सकल नशाइया ॥ ज०

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

पकवान नैना घ्रान रसना, को प्रमोद सु दाय हैं ।
सो ल्याय चरन चढ़ाय रोग छुधाय नाश कराय हैं ॥ ज०

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

तममोहभानन जानि आनँद, आनि सरन गही अबै ।
वरदीप धारों बारि तुमढिंग, सुपरज्ञान जु द्यो सबै ॥ ज०

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

यह गंध चूरि दशांग सुन्दर, धूम्रध्वजमें खेय हों ।
वसुकर्म भर्म जराय तुम ढिग, निजसुधातम वेय हों ॥ ज०

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

रसथक पक्व सुभक्ष चक्र, सुहावनें मृदुपावनें ।
फलसारवृन्द अमन्द ऐसा, ल्याय पूज रचावनें ॥ जग० ८

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

शुचिनीर चंदन शालिशंदन, सुमन चरु दीवा धरों ।
अरु धूप जुत अरघ करि कर जारजुग विनती करों ॥ जग०

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

पंचकल्याणक ।

छंद-सुन्दरी तथा द्रुतविलंबित ।

असित कातिक एकम भावनो, गरभको दिन सो गिन पावनों
किय सची तित चर्चन चावसों, हम जजैं इत आनँद भावसों

ॐ ह्रीं कातिककृष्णप्रतिपदि गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीअनन्तनाथजिनेद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जनम जेठवदी तिथि द्वादशी, सकलमंगल लोकविषें लशी ।
हरि जजे गिरिराज समाजतें, हम जजें इत आतमकाजतें ।२।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीअनन्तनाथजिनेद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

भवशरीर विनस्वर भाइया, असित जेठदुवादशि गाइयो ।
सकल इंद्र जजे तित आइकैं, हम जजैं इत मंगल गाइकैं ।३।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाद्वादश्यां तपोमंगलप्राप्ताय श्रीअनन्तनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

असित चैत अमावसको सही, परम केवलज्ञान जग्यो कही।
लहि समासृत धर्म धुरंधरा, हम समर्चत विघ्न सब हरो ।४।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीअनन्त-नाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

असित चैततुरी तिथि गाइयो, अघतघाति हने शिव पाइयौ।
गिरि समेद जजे हरि आयकैं, हम जजैं पद प्रीति लगाइकैं॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाचतुर्थ्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीअनन्तनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा।

तुम गुनवरनन येम जिम, खंविहाय करमान।
तथा मेदिनी पदनि कार, कीनों चहत प्रमान॥ १ ॥

जय अनन्त रवि भव्यमन, जलजवृन्द विहसाय।
सुमति कोकतियथोक सुख, वृद्ध कियो जिनराय ॥२॥

छंद नयमालनी। तथा चण्डी। तथा तामरस (मात्रा १६)

जै अनन्त गुनवन्त नमस्ते, शुद्धध्येय नितसन्त नमस्ते।
लोकालोकविलोक नमस्ते, चिन्मूरत गुनथोक नमस्ते ॥३॥

रत्नत्रयधर धीर नमस्ते, करमशत्रुकरिकीर नमस्ते ।
चार अनन्त महन्त नमस्ते, जैं जैं शिवतियकन्त नमस्ते ।४।
पंचाचारविचार नमस्ते, पंचकर्णमदहार नमस्ते ।
पंच-पराव्रत-चूर नमस्ते, पंचमगतिसुखपूर नमस्ते ॥५॥
पंचलब्धिधरनेश नमस्ते, पंचभावसिद्धेश नमस्ते ।
छहों दरबगुनजान नमस्ते, छहों काल पहिचान नमस्ते ॥६॥
छहोंकायरच्छेश नमस्ते, छहसम्यक उपदेश नमस्ते ।
सप्तविशनवनवह्नि नमस्ते, जय केवलअपरन्हि नमस्ते ॥७॥
सप्ततत्वगुनभनन नमस्ते, सप्तशुभ्रगतिहनन नमस्ते ।
सप्तभंगके ईश नमस्ते, सातों नयकथनीश नमस्ते ॥८॥
अष्टकरममलदल्ल नमस्ते, अष्टजोगनिरशल्ल नमस्ते ।
अष्टम-धराधिराज नमस्ते, अष्ट-गुननि-सिरताज नमस्ते ॥९॥
जै नवकेवल-प्राप्त नमस्ते, नवपदार्थथिति आप्त नमस्ते ।
दशों धरमधरतार नमस्ते, दशों बंधपरिहार नमस्ते ॥१०॥
विघ्न-महीधर-विज्जु नमस्ते, जैं ऊरधगति-रिज्जुनमस्ते ।
तनकनकंदुति पूर नमस्ते, इख्वाकजगनख़र नमस्ते ॥११॥
धनु पचासतन उच्च नमस्ते, कृपासिंधु गुन शुच्च नमस्ते ।
सेही-अंक निशंक नमस्ते, चितचकोर मृगअंक नमस्ते ॥१२॥
रागदोषमदटार नमस्ते, निजविचारदुखहार नमस्ते ।
सुर-सुरेश-गन-वृंद नमस्ते, 'वृंद' करो सुखकंद नमस्ते १३

घत्तानंद छंद।

जय जय जिनदेवं, सुरकृतसेवं, नितकृतचित हुल्लासधरं।
आपदउद्धारं, समतागारं, वीतरागविज्ञान भरं॥ १४॥

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेंद्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मदावलिप्तकपोल तथा रोड़क छंद (मात्रा २४)

जो जन मनवचकायलाय, जिन जजै नेह धर।
वा अनुमोदन करै करावै पढ़ै पाठ वर॥
ताके नित नव होय, सुमंगल आनँददाई।
अनुक्रमतैं निरवान, लहै सामग्री पाई॥ १॥

इत्याशीर्वादाय पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

इति श्रीअनन्तनाथजिनपूजा समाप्त॥

श्री धर्मनाथ जिनपूजा।

माधवी तथा किरीट छन्द (८ सगण व गुरु)

तजिके सरवारथ सिद्ध विमान, सुभानके आनि अनँद बढ़ाये
जगमातसुव्रतिके नंदन होय, भवोदधि डूबत जंतु कढ़ाये॥
जिनको गुन नामहिं माहि प्रकाश है,दासनिको शिवस्वर्ग मँढ़ाये
तिनके पद पूजनहेत त्रिवार, सुथापतु हों यह फूल चढ़ाये १

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेंद्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्॥
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेंद्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः॥ २॥
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेंद्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव।
वषट्॥ ३॥

अष्टक

छन्द जोगीरासा (मात्रा २८)

मुनि मनसम शुचि शीर नीर अति, मलय मेलि भरि भारी।
जनमजरामृत तापहरनको, चरचों चरन तुम्हारी ॥
परमधरम-शम-रमन धरम-जिन, अशरन शरन निहारी।
पूजों पाय गाय गुन सुन्दर, नाचौं दे दे तारी ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

केशर चदन कदलीनंदन, दाहनिकंदन लीनों।
जलसँगघस लसि शशिसमशमकर, भवआताप हरीनो॥ पर०

ॐ ह्रीं श्रीधमनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

जलज जीर सुखदास होर हिम, नीर किरनसम लायो।
पुंज धरत आनंद भरत भव,-दद हरत हरषायो ॥ पर० ३

ॐ ह्रीं श्रीधमनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

सुमन सुमनसम सुमनथालरम, सुमनवृन्द विहसाई।
सु मनमथ-मदमथनके कारन, चरचों चरन चढ़ाई ॥ पर० ४

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

घेवर बावर अर्द्धचन्द्र सम, छिद्र सहस विराजै ।
सुरस मधुर तासों पद पूजत, रोग असाता भाजै ॥ पर० ५

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

सुन्दर नेह सहित वर दीपक, तिमिर हरन धरि आगै ।
नेह सहित गाऊं गुन श्रीधर, ज्यों सुबोध उर जागै ॥ पर०

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

अगर तगर कृष्णागर तरदिव, हरिचंदन करपूरं ।
चूर खेय जलजवनमांहिं जिमि, करम जरैं वसु कूरं ॥ पर०

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

आम्र काम्रक अनार सारफल, भार मिष्ट सुखदाई ।
सो लै तुमढिग धरहुँ कृपानिधि, देहु मोक्षठकुराई ॥ पर०

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

आठों दरब साज शुचि चितहर, हरषि हरषि गुनगाई ।
बाजत दमदमदम मृदंग गत, नाचत ता थेई थाई ॥ पर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पंचकल्याणक ।

राग टप्पाकी चाल 'खोयोरे गंवार तैं सारे दिन यों ही खोयो'

पूजों हो अबार, धरमजिनेसुर पूजों, पूजों हो । टेक ।

आठैं सित वैशाखकी हो, गरभदिवस अविकार ॥
जगजन वंछित पूजों, हो अबार,
धरमजिनेसुर पूजों, पूजों हो० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाष्टम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

शुकल माघ तेरस लयो हो, धरम धरम अवतार ।
सुरपति सुरगिर पूजों, पूजों हो अबार, ॥ धरम० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

माघशुकल तेरस लयो हो, दुद्धर तप अविकार ।
सुरऋषि सुमनन पूज्यो, पूजों हा अबार, ॥ धरम० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां निःक्रममहोत्सवमण्डिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पौषशुकल पूनम हने अरि केवल लहि भवितार ।
गनसुर नरपति पूज्यो, पूजों हो अबार, ॥ धरम० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लपूर्णिमायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

जेठशुकल तिथि चौथकी हो, शिव समेदतैं पाय ।
जगतपूजपद पूजों, पूजों हो अवार ॥ धरम० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लचतुर्थ्यां ,मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्रीधर्मनाथ-
जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला ।

दोहा (विशेषोक्ति) ।

घनाकार करि लोक पट, सकल उदधि मसि तंत ।
लिखै शारदा कलम गहि, तदपि न तुव गुन अंत ॥ १ ॥

छंद पद्धरी (मात्रा १६) ।

जय धरमनाथ जिन गुनमहान, तुम पदको मैं नित धरों ध्यान
जय गरभजनम तप ज्ञानजुक्त, वर मोक्ष सुमंगल शर्मभुक्त ॥२॥

जय चिदानंद आनंदकंद, गुनवृन्द सु ध्यावत मुनि अमंद ।
तुम जीवनिके,विनुहेत मित्त, तुम ही हो जगमें जिन पवित्त ॥३॥

तुम समवसरणमें तत्त्वसार, उपदेश दियो है अति उदार ।
ताकों जे भवि निजहेत चित्त, धारैं ते पावैं मोक्षवित्त ॥ ४ ॥

मैं तुम मुख देखत आज पर्म, पायो निजआतमरूप धर्म ।
मोकों अब भौभयतैं निवार, निरभयपद दीजे परमसार ॥ ५ ॥

तुम सम मेरो जगमें न कोय, तुमहीतैं सब विधि काज होय ।
तुम दयाधुरन्धर धीर वीर, मेटो जगजनकी सकल पीर ॥६॥

तुम नीतिनिपुन विनरागदोष, शिवमग दरसावतु हो अदोष ।
तुम्हरे ही नामतने प्रभाव, जगजीव लहैं शिव-दिव-सुराव ॥७॥
तातै मैं तुमरी शरण आय, यह अरज करतु हों शीस नाय ।
भवबाधा मेरी मेट मेट, शिवराधासों करि भेट भेट ॥ ८ ॥
जंजाल जगतको चूर चूर, आनंद अनूपम पूर पूर ।
मति देर करो सुनि अरज एव, हे दीनदयाल जिनेश देव ॥६॥
मोकों शरना नहिं और ठौर, यह निहचै जानों सुगुन मौर ।
वृंदावन, बंदत प्रीति लाय, सब विघन मेट हे धरम-राय ॥१०॥

छंद घत्तानंद (मात्रा ३१) ।

जय श्रीजिनधर्मं, शिवहितपर्मं श्रीजिनधर्मं उपदेशा ।
तुम दयाधुरंधर विनतपुरंदर, कर उरमंदर परवेशा ॥११॥
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद मदावलिप्तकपोल (मात्रा २४) ।

जा श्रीपतिपद जुगल, उगल मिथ्यात जजै भव ।
ताके दुख सब मिटहिं, लहै आनँदसमाज सब ॥
सुर-नर-पति-पद भोग, अनुक्रमतैं शिव जावै ।
वृन्दावन यह जानि धरम, जिनके गुन ध्यावै ॥१॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

इति श्रीधर्मनाथजिनपूजा समाप्त ॥ १५ ॥

श्रीशान्तिनाथ जिनपूजा ।

मत्तगयंद छंद । (यमकालंकार) ।

या भवकाननमें चतुरानन, पापपनानन घेरि हमेरी ।
आतमजान न मान न ठानन, बान न होन दई सठ मेरी ॥
तामद भानन आपहि हो यह, छानन आन न आननटेरी ।
आन गही शरनागतको, अब श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर । संवौषट् ॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठतिष्ठ । ठः ठः ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट्

अष्टक

छंद त्रिभंगी । अनुप्रयासक । (मात्रा जगणवर्जित) ।

हिमगिरिगतगंगा,—धार अभंगा, प्रासुक सङ्गा भरि, भृङ्गा ।
जरमरनमृतंगा, नाशि अघंगा, पूजिपदंगा मृदुहिंगा ॥
श्रीशान्तिजिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं, चक्रेशं ।
हनि अरिचक्रेशं, हे गुनधेशं, दयामृतेशं, मक्रेशं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १ ॥

बर बावनचंदन, कदलीनंदन, घनआनंदन सहित घसों ।
भवतापनिकंदन, ऐरानंदन, वंदि अमंदन चरनवसों॥श्री०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

हिमकरकरि लज्जत, मलयसुसज्जत, अच्छत जज्जत, भरथारी।
दुखदारिदगज्जत, सदपदसज्जत, भवभयभज्जत, अतिभारी॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३॥

मंदार सरोजं, कदली जोजं, पुञ्जभरोजं, मलयभरं।
भरि कंचनथारी, तुमढिग धारी, मदनविदारी, धीरधरं ॥ श्री०४

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४॥

पकवान नवीने, पावन कीने, षटरसभीने, सुखदाई।
मनमोदनहारे, छुधा विदारे, आगे धारे, गुनगाई ॥श्री०॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५॥

तुम ज्ञानप्रकाशे, भ्रमतमनाशे, ज्ञेयविकाशे सुखरासे।
दीपक उजियारा, यातैं धारा, मोह निवारा, निजभासे ॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६॥

चन्दन करपूरं, करिवर चूरं, पावकभूरं, माहिजुरं।
तसु धूम उड़ावै, नाचत आवै, अलि गुंजावै मधुरसुरं ॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७॥

बादाम खजूरं, दाड़िम पूरं, निंबुक भूरं, लै आयो।
तासों पद जज्जों, शिवफल सज्जों, निजरसरज्जों, उमगायो॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।।८।।

वसु द्रव्य सँवारी, तुमढिग धारी, आनंदकारी, दृगप्यारी।
तुम हो भवतारी, करुनाधारी, यातैं थारी, शरनारी ।। श्री ०

ॐ ह्रीं शीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।९।।

पंचकल्याणक ।

सुंदरी तथा द्रुतविलंबित छंद ।

असित सातय भादव जानिये, गरभमंगल तादिन मानिये।
सचि कियो जननी पद चर्चनं, हम करैं इत ये पद अर्चनं ।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्या गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।१०।।

जनम जेठ चतुर्दशि श्याम है, सकलइन्द्र सु आगत धाम है।
गजपुरै गज साजि सबै तबै, गिरि जजे इत मैं जजि हों अबै ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।२।।

भव शरीर सुभोग असार हैं, इमि विचार तबै तप धार हैं।
भ्रमर चौदश जेठ सुहावनी, धरमहेत जजों गुन पावनी ।।३।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।।४।।

शुक्लपौष दशैं सुखराश है, परम-केवल-ज्ञान प्रकाश है ॥
भवसमुद्रउधारन देवकी, हम करैं नित मंगल सेवकी ॥४॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

असित चौदश जेठ हने अरी, गिरि समेदथकी शिव-ती वरी ।
सकलइन्द्र जजैं तित आइकैं, हम जजैं इत मस्तक नाइकैं ॥५॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

जयमाला ।

छंद रथोद्धता, चन्द्रवर्त्म (वर्ण ११—लाटानुप्रास)।

शान्ति शान्तिगुनमंडिते सदा, जाहि ध्यावत सुपंडिते सदा ।
मैं तिन्हें भगतमंडिते सदा, पूजि हों कलुषहंडिते सदा ॥१॥

मोक्षहेत तुम ही दयाल हो, हे जिनेश गुनरत्नमाल हो ।
मैं अबै सुगुनदाम ही धरों, ध्यावतें तुरित मुक्ति-ती वरों २

छंद पद्धरी (१६ मात्रा) ।

जय शान्तिनाथ चिद्रूपराज, भवसागरमें अद्भुत जहाज ।
तुम तजि सरवारथसिद्ध थान, सरवारथजुत गजपुर महान १
तित जनम लियौ आनन्द धार, हरि ततछिन आयो राजद्वार ।
इन्द्रानी जाय प्रसूतथान, तुमको करमें लै हरष मान ॥२॥

हरि गोद देय सो मोदधार, सिर चमर अमर ढारत अपार।
गिरिराज जाय तित शिला पांड, तापै थाप्यौ अभिषेक मांड ३

तित पंचमउदधितनों सु वार, सुरकर कर करि ल्याये उदार।
तब इन्द्र सहसकरकरि आनंद, तुम सिर धारा ढारी सुनंद॥

अघघघघघघघ धुनि होत घोर, भभभभभभ धधधध कलशशोर
दमदम दमदम बाजत मृदंग, झन नन नन नन नन नूपुरंग

तन नन नन नन नन तनन तान, घन नन नन घंटा करत ध्वान
ताथेई थेइ थेइ थेइ थेई सुचाल, जुत नाचत नावत तुमहिं भाल

चट चट चट अटपट नटतनाट, झट झट झट हट नट शट विराट
इमि नाचत राचत भगत रंग, सुरलेत जहां आनंद संग॥७॥

इत्यादि अतुल मंगल सुठाट, तित बन्यौ जहां सुरगिरि विराट
पुनि करि नियोग पितुसदन आय, हरि सौंप्यौ तुम तित वृद्ध थाय

पुनि राजमाहिं लहि चक्ररत्न, भोग्यौ छखंड करि धरम जत्न
पुनि तप धरि केवलऋद्धिपाय, भवि जीवनकों शिवमग बताय

शिवपुर पहुंचे तुम हे जिनेश, गुनमंडित अतुल अनंत भेष।
मैं ध्यावतु हों नित शीश नाय, हमरी भवबाधा हरि जिनाय

सेवक अपनों निज जान जान, करुना करि भौभय भान भान
यह विघनमूल तरु खंडखंड, चितचिन्तित आनँद मंडमंड॥

घत्ता छंद (मात्रा ३१)

श्रीशान्ति महंता, शिवतियकंता, सुगुन अनंता भगवन्ता ।
भवभ्रमन हनंता, सौख्य अनंता, दातारं तारनवन्ता ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छंद रूपक सवैया (मात्रा ३१)

शांतिनाथजिनके पदपंकज, जो भवि पूजैं मनवचकाय ।
जनम जनमके पातक ताके, ततछिन तजिकैं जाय पलाय ॥
मनवंछित सुख पावैं सो नर, बांचैं भगतिभाव अति लाय ।
तातैं 'वृन्दावन' नित बंदैं, जातैं शिवपुरराज कराय ॥१॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

इति शान्तिनाथजिनपूजा समाप्त ॥ १६ ॥

श्रीकुन्थुनाथजिनपूजा ।

छंद माधवी तथा किरीट (वर्ण २४) ।

अजअंक अजैपद राजै निशंक, हरै भवशंक निशंकित दाता
मतमत्त मतंगके माथैं गंथे, मतवाले तिन्हैं हनें ज्यौं हरि हाता
गजनागपुरै लियो जन्म जिन्हौं, रविके प्रभनंदन श्रीमतिमाता
सहकुन्थुसुकुंथुनिके प्रतिपालक,थापों तिन्हें जुतभक्ति विख्याता

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव ।
वषट् ।

अष्टक

चाल लावनी मरहठी की

कुंथु सुन अरज दासकेरी, नाथ सुन अरज दासकेरी।
भवसिन्धु पर्यो हों नाथ निकारो बांह पकर मेरी॥
प्रभू सुन अरज दासकेरी, नाथ सुनि अरज दासकेरी।
जगजाल पर्यो हों बेग निकारो बांह पकर मेरी॥ टेक॥
सुरसरिताको उज्जल जल भरि, कनकभृंग भेरी।
मिथ्यातृषा निवारन कारन, धरों धार नेरी॥ कुन्थु॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

बावन चंदन कदलीनंदन, घँसिकर गुन टेरी।
तपत मोह नाशनके कारन, धरौं चरन नेरी॥ कुन्थु॥

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेंद्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

मुक्ताफलमम उज्जल अच्छत, सहित मलय लेरी।
पुन्ज धरों तुम चरनन आगैं, अखय सुपद देरी॥ कुन्थु॥३॥

ॐ श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥३॥

कमल केतकी वेला दौना, सुमन सुमनसेरी।
समरशूल निरमूल हेतु प्रभु, भेंट करों तेरी॥ कुन्थु॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

घेवर बावर मोदन मोदक, मृदु उत्तम पेरी ।
तासों चरन जजों करुनानिधि, हरो छुधा मेरी ॥ कुन्थु ॥५ ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय क्षुद्रोगविनाशनाय नैवेद्यं-निर्वपामीति स्वाहा । ॥५॥

कंचन दीपमई वर दीपक, ललित जोति घेरी ।
सो लै चरन जजों भ्रमतम रवि, निज सुबोध देरी ॥ कुं०॥६

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

देवदारु हरि अगर तगर करि चूर अगनि खेरी ।
अष्ट करम ततकाल जरं ज्यों, धूम धनंजेरी कुन्थु० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीकन्थुनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

लोंग लायची पिस्ता केला, कमरख शुचि लेरी ।
मोक्ष महाफल चाखन कारन, जजों सुकरि ढेरी ॥कुं० ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

जल चंदन तंदुल प्रसून चरु, दीप धूप लेरी ।
फलजुत जजन करो मन सुख धरि,हरो जगत फेरी ॥कुं०॥९

ॐ श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

पंचकल्याणक ।

मोतीदाम छंद (वर्ण १२) ।

सुसावन की दशमी कलि जान, तज्यो सरवारथसिद्ध विमान
भयो गरभागममंगल सार, जजैं हम श्रीपद अष्टप्रकार ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णदशम्यां गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीकुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

महा वयशाख सु एकम शुद्ध, भयो तब जन्म तिज्ञान समुद्ध
कियो हरि मंगल मंदरशीस, जजैं हम अत्र तुम्हें नुतशीस २

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदि जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीकुन्थुनाथ-जिनेंद्राय अघ निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

तज्यो षटखंडविभौ जिनचंद, विमोहितचित्तचितारि सुछंद ।
धरे तप एकम शुद्ध विशाख, सुमग्न भये निजआनंदचाख ३

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदि निःक्रममहोत्सवमंडिताय श्रीकुन्थु-नाथजिनेंद्राय अर्घं निवपामीति स्वाहा ॥३॥

सुदी तिय चैत सु चेतन शक्त, चहूँ अरि छै करि तादिन व्यक्त
भई समवसृत भाखि सुधर्म, जजो पद ज्यों पद पाइयपर्म ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लतृतीयायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीकुन्थुनाथ-जिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

सुदी बयसाख सु एकम नाम,लियो तिहिं द्यौस अभै शिवधाम
जजे हरि हर्षित मंगल गाय, समर्चतु हौं सु हिया वचकाय ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदि मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीकुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय अघ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

अडिल्ल छंद । (मात्रा २१ रूपकालंकार)

खट खंडनके शत्रु राजपदमें हने ।
धरि दीक्षा खटखंडन पाप तिन्हें दने ॥
त्यागि सुदरशन चक्र धरमचक्री भये ।
करमचक्र चकचूर सिद्ध दिढ़ पद लये ॥ १ ॥
ऐसे कुन्थजिनेशतने पदपद्मकों ।
गुन अनन्त भंडार महासुखसद्मकों ॥
पूजों अरघ चढ़ाय पूरणानंद हो ।
चिदानंद अभिनंद इंदगनवंद हो ॥ २ ॥

पद्धरी छन्द (मात्रा १६)

जय जय जय जय श्रीकुंथुदेव, तुम ही ब्रह्मा हरि त्रिंबुकेव ।
जय बुद्धि विदांवर विष्णु ईस, जय रमाकंत शिवलोक शास
जय दयाधुरंधर सृष्टिपाल, जय जय जगबंधू सुगुनमाल ।
सरवारथसिद्धविमान छार, उपजे गजपुरमें गुन अपार ॥४॥
सुरराज कियो गिरन्हान जाय, आनन्दसहित जुत-भगत भाय
पुनि पिता सौंपि कर मुदित अंग, हरि तांडव-निरत कियो अभंग
पुनि स्वर्ग गयो तुम इत दयाल, वय पाय मनोहर प्रजापाल
षटखंडविभौ भोग्या समस्त, फिर त्याग जोग धार्यो निरस्त

तब घाति घात केवल उपाय, उपदेश दियो सबहित जिनाय।
जाके जानत भ्रम-तम विलाय, सम्यकदर्शन निरमल लहाय ॥
तुम धन्य देव किरपा-निधान, अज्ञान-छपा-तमहरन भान।
जय स्वच्छगुनाकर शुक्रशुक्र, जय स्वच्छ सुखामृत शुक्रशुक्र ॥
जय भौभयभंजन कृत्यकृत्य, मैं तुमरो हौं निज भृत्य भृत्य।
प्रभु अशरन शरन अधार धार, मम विघ्नतूलगिरि जार जार ॥
जय कुनय-यामिनी सूर सूर, जय मनवांछित सुख पूर पूर।
मम करमबंध दिढ़ चूरचूर, निजसम आनँद दे भूरभूर ॥१०॥
अथवा जब लौं शिव लहौं नाहिं, तबलों ये तो नित ही लहाहिं
भव भव श्रावक-कुलजनमसार, भवभव सतमत सत्संग धार ॥
भवभव निज आतम-तत्त्व-ज्ञान, भवभव तप संजम शील दान
भवभव अनुभव नित चिदानंद, भवभव तुम आगम हे जिनंद॥
भवभव समाधिजुत मरनसार, भवभव व्रत चाहों अनागार।
यह मोकों हे करुणानिधान, सब जोग मिलो आगमप्रमान॥
जब लों शिव सम्पति लहों नाहिं, तबलों मैं इनको नित लहांहिं
यह अरज हिये अवधारि नाथ, भवसंकट हरि कीजे सनाथ॥

छन्द घत्तानंद (मात्रा ३१)

जय दीनदयाला, वरगुनमाला, विरदविशाला सुख आला।
मैं पूजों ध्यावों, शीश नमावों, देहु अचलपदकी चाला ॥१५॥
ॐ ह्रीं कुन्थुनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

छंद रोड़क मात्रा (२४)।

कुंथुजिनेसुरपादपदम, जो प्रानी ध्यावैं ।
अलि समकर अनुराग, सहज सो निजनिधि पावैं ॥
जो बांचै सरद है, करैं अनुमोदन पूजा ।
वृन्दावन तिह पुरुष सदृश, सुखिया नहिं दूजा॥१६॥

इत्याशीर्वादः पुरिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

इति श्रीकुन्थुनाथजिनपूजा समाप्त ॥ १७ ॥

श्रीअरनाथजिनपूजा ।

छप्पय छंद (वीररसरूपकालंकार मात्रा १४२)

तप तुरंग असवार धार, तारन विवेक कर,
ध्यान शुकल असिधार, शुद्ध सु विचार सुबखतर ।
भावन सेना धरम, दशों सेनापति थापे,
रतन तीन धर सकति, मंत्रि अनुभो निरमापे ॥
सत्तातल सोहं सुभट धुनि, त्याग केतु शत अग्र धरि ।
इहविधि समाज सज राजको, अरजिन जीते करम अरि ।१।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक

छंद त्रिभंगी (अनुप्रयासक मात्रा ३२-जगनवर्जित)।

कनमनिमय झारी, दृगसुखकारी, सुरसरितारी नीर भरी।
मुनिमनसम उज्जल, जनमजरादल, सो लै पदतल, धार करी
प्रभु दीनदयालं, अरिकुलकालं, विरदविशालं सुकुमालम्।
हनि मम जंजालं, हे जगपालं, अरगुनमालं, वरभालम्।१।

ॐ ह्रीं अरनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

भवताप नशावन, विरद सु पावन, सुनि मनभावन मोद भयो
त तैं घसि बावन, चंदनपावन, तरहि चढ़ावन, उमगि अयो॥प्रभु०

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

तंदुल अनियारे, श्वेत सँवारे, शशिदुतिटारे, थार भरे।
पदअखय सुदाता, जगविख्याता, लखि भवताता पुञ्जधरे॥प्रभु०

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सुरतरुके शोभित, सुरन मनोभित, सुमन अछोभित, लै आयो।
मनमथके छेदन, आप अवेदन, लखि निरवेदन गुनगायो ॥

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज सज भक्षक, प्रासुक अक्षक, पक्षकरक्षक, स्वच्छ धरी।
तुम करमनिकक्षक भस्मकलक्षक दक्षकपक्षक, रक्षकरी ॥प्रभु॥

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

तुम भ्रमतमभंजन, मुनिमनकंजन,–रंजन गंजन मोहनिशा ।
रविकेवलस्वामी, दीपजगामी, तुमढिंग आमी, पुन्यदशा॥प्रभु०

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

दशधूप सुरंगी, गंधअभंगी, वन्हि वरंगी मांहिं हवै ।
वसुकर्म जरावै, धूमउड़ावै, ताँडव भावै नृत्य पवै ॥ प्रभु० ॥

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

ऋतुफल अति पावन, नयनसुहावन, रसनाभावन कर लीने ।
तुम विघनविदारक, शिवफलकारक, भवदधितारक, चरचीने॥प्रभु०

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ।

सुचि स्वच्छ पटीरं, गंधगहीरं, तंदुल शीरं, पुष्पचरुं ।
वर दीपं धूपं, आनँदरूपं, लै फल भूपं, अर्घकरं ॥ प्रभु० ॥

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामि ।

पंचकल्याणक

छंद चौपाई (मात्रा १६) ।

फागुन सुदी तीज सुखदाई, गरभ सुमंगल ता दिन पाई ।
मित्रादेवी उदर सु आये, जजे इन्द्र हम पूजन आये ॥१॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्लतृतीयायां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मंगसिर शुद्ध चतुर्दशि सोहै, गजपुर जनम भयौ जग मोहै।
सुरगुरु जजे मेरुपर जाई, हम इत पूजैं मनवचकाई ॥२॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लचतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीअरनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

मंगसिर सित चौदस दिन राजै, तादिन संजम धरे विराजै।
अपराजित घर भोजन पाई, हम पूजैं इत चित हरषाई ॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लचतुर्दश्यां निःक्रममंगलमण्डिताय श्री-अरनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

कातिक सित द्वादसि अरि चूरे, केवलज्ञान भयो गुन पूरे।
समवसरनथिति धरम बखाने, जजत चरन हम पातक भाने ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वादश्यां ज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीअरना-थजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

चैत शुकल ग्यारस सब कर्म, नाशि वास किय शिव-थल पर्म।
निहचल गुन अनंत भंडारी, जजों देव सुधि लेहु हमारी ॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्रीअरनाथजिने-न्द्राय अर्घं निवपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला।

दोहा छंद (जमकपद तथा लाटानुबंधन।)

बाहर भीतरके जिते, जाहर अर दुखदाय।
ता हर कर अरजिन भये, साहर शिवपुर राय ॥१॥
राय सुदरशन जासु पितु, मित्रादेवी माय।
हेमबरन तन बरष वर, नब्वे सहस सुआय ॥२॥

छंद तोटक (वर्ण १२)।

जय श्रीघर श्रीकर श्रीपति जी, जय श्रीवर श्रीभर श्रीमति जी।
भवभीमभवोदधि तारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥३॥
गरभादिक मंगल सार धरे, जग जीवनिके दुखदंद हरे।
कुरुवंशशिखामनि तारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥४॥
करि राज छखंडविभूतिमई, तप धारत केवलबोध ठई।
गण तीस जहां भ्रमवारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥
भविजीवनिकों उपदेश दियो, शिवहेत सबै जन धारि लियो।
जगके सब संकट टारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥६॥
कहि बीस प्ररूपनसार तहां, निजशर्मसुधारस धार जहां।
गति चार हृषी पन धारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥७॥
षट काय तिजोग तिवेद मथा, पनवीस कषा वसु ज्ञान तथा।
सुर संजमभेद पसारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥८॥
रस दर्शन लेश्यय भव्य जुगं, षट सम्यक सैनिय भेद युगं।
जुग हार तथा सु अहारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥९॥
गुनथान चतुर्दश मारगना, उपयोग दुवादश भेद भना।
इमि बीस विभेद उचारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥१०
इन आदि समस्त बखान कियो, भवि जीवननें उरधार लियो।
कितने शिववादिन धारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥
फिर आप अघाति विनाश सबै, शिवधामविषैं थित कीन तबै।
कृतकृत्य प्रभू जगतारन हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥१२

अब दीनदयाल दया धरिये, मम कर्म कलंक सबै हरिये ।
तुमरे गुनको कछु पार न हैं, अरनाथ नमों सुखकारन हैं ॥ १३

घत्तानंद छंद (मात्रा ३१)

जय श्रीअरदेवं, सुरकृतसेवं, समताभेवं, दातारं ।
अरिकर्मविदारन, शिवसुखकारन, जय जिनवर जगत्रातारं ॥

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेंद्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

छंद आर्या (मात्रा ६०)

अरजिनके पदसारं, जो पूजें द्रव्यभावसों प्रानी ।
सो पावै भवपारं, अजरामर मोक्षथान सुखदानी ॥ १५ ॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।
इति श्रीअरनाथजिनपूजा समाप्त ॥ १८ ॥

श्रीमल्लिनाथजिनपूजा ।

छंद रोड़क ।

अपराजिततें आय नाथ मिथिलापुर जाये ।
कुंभरायके नन्द, प्रजापति मात बताये ॥
कनक वरन तन तुंग, धनुष पच्चीस विराजै ।
सो प्रभु तिष्ठहु आय निकट मम ज्यों भ्रम भाजै ॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव ।
वषट् ।

अष्टक

छंद जोगीरासा (मात्रा २८)

सुर-सरिता-जल उज्जल ले कर, मनिभृङ्गार भराई।
जनम जरामृत नाशनकारन, जजहु चरन जिनराई॥
राग-दोष-मद-मोहहरनको, तुम ही हो वरवीरा।
यातें शरन गही जगपतिजी, वेग हरौ भवपीरा॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

बावनचंदन कदलीनन्दन, कुंकुमसंग घसायो।
लेकर पूजो चरनकमलप्रभु, भवआताप नशायो॥ राग०॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

तंदुलशशिसम उज्जल लीने, दीने पुञ्ज सुहाई।
नाचत राचत भगति करत हो, तुरित अखैपद पाई। राग०

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निवपामीति स्वाहा॥ ३॥

पारिजातमंदार सुमन संतानजनित महकाई।
मार सुभट मदभंजनकारन, जजहु तुम्हें शिरनाई॥ राग०

ॐ ह्रीं मल्लिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

फेनी गोझा मोदनमोदक, आदिक सद्य उपाई।
सो लै क्षुधा निवारन कारन, जजहु चरन लवलाई॥ राग०

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

तिमिरमोह उरमंदिर मेरे, छाय रह्यो दुखदाई ।

तासु नाशकारनको दीपक, अद्भुतजाति जगाई ॥ राग० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

अगर तगर कृष्णागर चंदन, चूरि सुगन्ध बनाई ।

अष्टकरम जारनका तुमढिग, खेवतु हौं जिनराई ॥ राग० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल लौंग बदाम छुहारा, एला केला लाई ।

मोक्षमहाफलदाय जानिके, पूजो मन हरखाई ॥ राग० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल फल अरघ मिलाय गाय गुन, पूजो भगति बढ़ाई ।

शिवपदराज हेत हे श्रीधर, सरन गह्यो मैं आई ॥ राग० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पंचकल्याणक

लक्ष्मीधरा छंद (१२ वर्ण)

चैतकी शुद्ध एक भली राजई, गर्भकल्यान कल्यानको साजई ।

कुम्भराजा प्रजापति माता तने, देवदेवी जजे शीस नाये घने

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लप्रतिपदि गर्भागममङ्गलमण्डिताय श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं निवपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मार्गशीर्ष सुदी ग्यारसी राजई,जन्मकल्यानको द्यौस सो छाजई।
इंद्रनागेंद्र पूजें गिरेंद्रे जिन्हें, मैं जजों ध्यायकें शीस नावों तिन्हें

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीमल्लि-नाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मार्गशीर्षसुदीग्यारसीके दिना,राजको त्याज दीक्षा धरी है जिना
दान गोक्षीरको नंदसेनें दयो, मैं जजों जासुके पंचचर्जे भयो॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीमल्लि-नाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पौषकी श्यामदूजी हने घातिया,केवलज्ञानसाम्राज्यलक्ष्मी लिया
धर्मचक्री भये सेव शक्री करैं, मैं जजों चर्न ज्यों कर्मवक्री टरैं॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाद्वितीयायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुणी सेत पांचैं अघाती हते, सिद्धआलै बसे जाय संमेदतें।
इन्द्रनागेंद्र कीन्हीं क्रिया आयकें, मैं जजों सो मही ध्यायकें गायकें

ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्लपञ्चम्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

घत्तानंद छंद (मात्रा ३१)।

तुम नमित सुरेशा, नरनागेशा, रजतनगेशा, भगतिभरा।
भवभयहरनेशा, सुखभरनेशा, जै जै जै शिवरमनिवरा ॥१॥

पद्धरी छन्द (मात्रा १६ लघ्वंत)।

जय शुद्ध चिदातम देव एव, निरदोष सुगुन यह सहज टेव।
जय भ्रमतमभंजन मारतंड, भविभवदधितारनको तरंड ॥२॥
जय गरभजनममंडित जिनेश, जय छायक समकित बुद्ध भेस।
चौथें किय सातोंप्रकृति छीन, चौ अनंतानु मिथ्यात तीन ॥३॥
सातँय किय तीनों आयु नाश, फिर नवें अंश नवमे विलाश।
तिनमाहि प्रकृत छत्तीस चूर, याभांति कियो तुम ज्ञानपूर ॥४॥
पहिले महँ सोलह कहँ प्रजाल, निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचाल।
हनि थांनगृद्धिको सकल कुब्ब, नर तिर्यग्गति गत्यानुपुब्ब ॥५॥
इक बे ते चा इन्द्रीय जात, थावर आतप उद्योत घात।
सूच्छम साधारन एम चूर, पुनि दुतिय अंश वसु करो दूर ॥६॥
चौ प्रत्याप्रत्याख्यान चार, तीजे सु नपुंसकवेद टार।
चौथे तियवेद विनाश कीन, पांचैं हास्यादिक छहों छीन ॥७॥
नरवेद छठें छय नियत धीर, सातयें संज्वलन क्रोध चीर।
आठवें संज्वलन मान भान, नवमें माया संज्वलन हान ॥८॥
इमि घात नवें दशमें पधार, संज्वलनलोभ तित हू विदार।
पुनि द्वादशके द्वयअंशमाहिं, सोरह चकचूर कियो जिनाहिं ॥९॥
निद्रा प्रचला इकभागमाहिं, दुति अंश चतुर्दश नाश जाहिं।
ज्ञानावरनी पन दरश चार, अरि अन्तराय पांचों प्रहार ॥१०॥

इमि छय ग्रेशठ केवल उपाय, धरमोपदेश दीन्हों जिनाय।
नवकेवललब्धि बिराजमान, जय तेरमगुनथिति गुन अमान।।११
गत चौदहमें द्वै भाग तत्र, छह कीन बहत्तर तेरह्त्र।
वेदनी असाताको विनाश, औदारि विक्रियाहार नाश।।१२।।
तैजस्यकारमानों मिलाय, तन पञ्चपञ्च बन्धन विलाय।
संघात पंच घाते महंत, त्रय आगोपांग सहिते भनंत।।१३।।
संठान संहनन छह छहेव, रसवरन पंच वसु फरस मेव।
जुगगंध देवगति सहित पुव्व, पुनि अगुरुलघू उस्वास दुव्व।।
परउपघातक सुविहाय नाम, जुत अशुभगमन प्रत्येक खाम।
अपरज थिर अथिर अशुभसुभेव, दुरभाग सुसुर दुस्सुर अभेव।।
अनआदर और अजस्यकित्त, निरमान नीच गोतौ विचित्त।
ये प्रथम बहत्तर दिय खपाय, तब दूजेमे तेरह नशाय।।१६।।
पहले सातावेदनी जाय, नरआयु मनुषगतिको नशाय।
मानुषगत्यानु सु पूरवीय, पंचेंद्रिय जात प्रकृती विधीय।।१७।।
त्रसवादर परजापति सुभाग, आदरजुत उत्तम गोत पाग।
जसकीरत तीरथ प्रकृति जुक्त, ए तेरह छय करि भये मुक्त।।१८।।
जय गुन अनंत अविकार धार, वरनत गनधर नहिं लहत पार।
ताकों मैं बन्दां बारबार, मेरी आपत उद्धार धार।।१९।।
संमेदशैल सुरपति नमंत, तव मुकतथान अनुपम लसन्त।
बृन्दावन वन्दत प्रीतलाय, मम उरमें तिष्ठहु हे जिनाय।।२०।।

घत्तानंद ।

जय जय जिन स्वामी, त्रिभुवन नामी, मल्ल विमलकल्यान करा
मकरदन्दविदारन आनन्दकारन, भविकुमोदनिशिईश वरा ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शिखरिणी ।

जजे हैं जो प्रानी दरब अरु भावादि विधिसों,
करैं नानाभांती भगति थुति औ नौति सुधिसों ।
लहै शक्री चक्री सकल सुख सौभाग्य तिनको,
तथा मोक्षं जावैं जजत जन जो मल्लिजिनको ॥२२॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत ।

इति श्रीमल्लिनाथजिनपूजा समाप्त ॥ १६ ॥

श्रीमुनिसुव्रतजिनपूजा ।

मत्तगयन्द ।

प्रानत स्वर्ग विहाय लिया जिन, जन्म सु राजगृहीमहँ आई,
श्रीसुहमित्त पिता जिनके, गुनवान महापदमा जसु माई ।
बीस धनू तनु श्याम छवी, कछ-अङ्क हरी वरवंश बताई,
सो मुनिसुव्रतनाथ प्रभू यहँ, थापतु हौं अति प्रीति लगाई ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिन ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट ।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट

अष्टक।

गीतिका।

अब श्रीमुनिसुव्रत मैं पायनि परों। सुखदाय लखि पांयनि परों।
उज्वल सुजल जिमि जस तिहारो, कनक झारीमें भरों,
जरमरन जामन हरन कारन, धार तुमपदतर करों।
शिवसाथ करत सनाथ सुव्रतनाथ, मुनि गुनमाल हैं,
तस चरन आनंदभरन तारन, तरन विरद विशाल हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवतापघायक शांतिदायक, मलय हरि घसि ढिग धरों।
गुनगाय शीस नमाय पूजत, विघनताप सबै हरों ॥शि०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्दुल अखंडित दमक शशिसम, गमक जुत थारी भरों।
पद अखयदायक मुकतिनायक, जानि पदपूजा करों ॥शि०॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बेला चमेली रायबेली, केतकी करना सरों।
जगजीत मनमथहरन लखि प्रभु, तुम निकट ढेरी करों ॥शि०॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान विविध मनोज्ञ पावन, सरस मृदुगुन विस्तरों।
सो लेय तुम पदतर धरत ही, छुधा डाइनको हरों ॥शि०॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय क्षुद्रोगनिवारणाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक अमोलिक रतन मनिमय, तथा पावनघृत भरों।
सो तिमिरमोहविनाश आतमभास कारन ज्वै धरों ॥शि०॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

करपूर चन्दन चूरभूर, सुगन्ध पावकमें धरों।
तसु जरत जरत समस्त पातक सार निजसुखको भरों ॥शि०॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि।

श्रीफल अनार सु आम आदिक पक्कफल अति विस्तरों।
सो मोक्षफलके हेतु लेकर, तुम चरन आगें धरों ॥शि०॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि।

जलगन्ध आदि मिलाय आठों, दरब अरघ सजों बरों।
पूजों चरनरज भगतिजुत, जातें जगत सागर तरों ॥शि०॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि०।

पंचकल्याणक।

तोटक।

तिथि दोजय सावन श्याम भयो, गरभागममंगल मोद थयो।
हरिवृन्द सची पितुमात जजे, हम पूजत ज्यों अघओघ भजे ॥

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीमुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वयसाख बदी दशमी वरनी, जनमे तिहि द्यौस त्रिलोकधनी।
सुरमंदिर ध्याय पुरन्दरन, मुनिसुव्रतनाथ हमें सरनं ॥२॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीमुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तप दुद्धर श्रीधरन गहियो, वैशाखवदी दशमी कहियो।
निरुपाधि समाधि सुध्यावत है, हम पूजत भक्ति बढ़ावत है ॥३॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां तपमंगलप्राप्ताय श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वरकेवलज्ञान उद्योत किया, नवमी वैशाखवदी सुखिया।
धनि मोहनिशाभनि मोखमगा, हम पूजि चहैं भवसिंधु थगा ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां केवलज्ञानमंगलप्राप्ताय श्रीमुनि-सुव्रतजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वदि वारस फागुण मोच्च गये, तिहुलोक शिरोमनि सिद्ध भये।
सु अनन्त गुणाकर विघ्न हरी, हम पूजत है मनमोद भरी ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णद्वादश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीमुनिसुव्रत-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा।

मुनिगननायक मुक्तिपति, सूक्तव्रताकरयुक्त।
भुक्तमुक्त दातार लखि, वन्दों तनमन उक्त ॥ १ ॥

तोटक।

जय केवलभान अमान धरं, मुनिस्वच्छसरोजविकासकरं।
भवसंकट भंजन लायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥२॥
घनघातक नन्द व दीप्त भनं, भविबोधतृषातुरमेघघनं।
नित मंगलवृन्द बधायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥३॥
गरभादिक मंगलसार धरे, जगजीवनके दुखदन्द हरे।
सब तत्त्वप्रकाशन वायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥४॥
शिवमारगमण्डन तत्वकह्यो, गुनसार जगत्रय शर्म लह्यो।
रुज रागरु दोष मिटायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥५॥
समवसृतमें सुरनार सही, गुन गावत नावत भाल मही।
अरु नाचत भक्ति बढ़ायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥६॥
पगनूपुरकी धुनि होत भनं, झननं झननं झननं झननं।
सुरलेत अनेक रमायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥७॥
घननं घननं घन घंट बजैं, तननं तननं तनतान सजैं।
द्रिमद्री मिरदंग बजायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥८॥
छिनमें लघु औ छिन थूल बनें, जुत हावविभाव विलासपनें।
मुखतें पुनि यों गुनगायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥९
धृगतां धृगतां पग पावत हैं, सननं सननं सुनचावत हैं।
अति आनंदको पुनि पायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥

अपने भवको फल लेत सही, शुभ भावनितें सब पाप दही।
तित ते सुखकों सब पायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥
इन आदि समाज अनेक तहां, कहि कौन सके जु विभेद यहां।
धन श्रीजिनचंद सुधायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥१२
पुनि देशविहार कियौ जिननें, वृष अमृतवृष्टि कियौ तुमनें।
हम तो तुम्हरी शरनायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥१३
हमपै करुना करि देव अबै, शिवराज समाज सुदेहु सबै।
जिमि होहुं सुखाश्रमनायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥१४
भविवृन्द तनी विनती जु यही, मुझ देहु अभैपद राज सही।
हम आनि गही शरनायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥१५

घत्तानंद।

जय गुनगनधारी, शिवहितकारी, शुद्धबुद्ध चिद्रूपपती।
परमानंददायक दासमहायक, मुनिसुव्रत जयवंत जती ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा।

श्रीमुनिसुव्रतके चरन, जो पूजैं अभिनंद।
सो सुरनर सुख भोगिकैं, पावैं सहजानंद ॥१७॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

इति श्रीमुनिसुव्रतनाथपूजा समाप्त।

श्रीनमिनाथपूजा ।

रोड़क ।

श्रीनमिनाथजिनेन्द्र नमों विजयारथनन्दन,
विख्यादेवी मातु सहज सब पापनिकंदन ।
अपराजित तजि जये मिथुलपुर वर आनन्दन,
तिन्हें सु थापों यहां त्रिधा करिके पदवन्दन ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक

द्रुतविलम्बित ।

सुरनदीजल उज्ज्वल पावनं, कनकभृङ्ग भरों मनभावनं ।
जजतुहौं नमिके गुनगायकें, जुगपदांबुज प्रीति लगायकें ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

हरिमलै मिलि केशरसों घसों, जगतनाथ भवातपको नसों ।
जजतुहौं नमिके गुनगायकें, जुगपदांबुज प्रीति लगायकें ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

गुलकके सम सुन्दर तंदुलं, धरत पुञ्जसु भुञ्जत संकुलं ।
जजतुहौं नमिके गुनगायकें, जुगपदांबुज प्रीति लगायकें ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केतुकि बेलि सुहावनी, समरसूल समस्त नशावनी।
जजतुहौं नमिके गुनगायकें, जुगपदांबुज प्रीति लगायकें ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि सुधासम मोदक मोदनं, प्रबल दुष्ट छुधामद खादनं।
जजतु हौं नमिके गुनगायकें, जुगपदांबुज प्रीति लगायकें ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय क्षुद्रोगनिवारणाय नैवेद्यं निर्व-

शुचि घृताश्रित दीपक जोइया, असममोह महातम खोइया।
जजतु हौं नमिके गुनगायकें, जुगपदांबुज प्रीति लगायकें ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा।

अमरजिह्वविषें दशगन्धको, दहत दाहत कर्म कबंधकों।
जजतु हौं नमिके गुनगायकें, जुगपदांबुज प्रीति लगायकें ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि।

फलसुपक्व मनोहर पावनं, सकल विघ्नसमूह नशावनं।
जजतु हौं नमिके गुनगायकें, जुगपदांबुज प्रीति लगायकें ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि।

जलफलादि मिलाय मनोहरं, अरघ धारत ही भय भौ हरं।
जजतु हौं नमिके गुनगायकें, जुगपदांबुज प्रीतिलगायकें ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामि।

पंचकल्याणक

पाइता छंद ।

गरभागम मंगलचारा, जुगआसिन श्याम उदारा ।
हरि हर्षि जजे पितुमाता, हम पूजें त्रिभुवन-ताता ॥१॥

ॐ ह्रीं आश्विनकृष्णद्वितीयायां गर्भावतरणमंगलप्राप्ताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जनमोत्सव श्याम असाढ़ा, दशमीदिन आनँद बाढ़ा ।
हरि मन्दर पूजें जाई, हम पूजें मनवचकाई ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीआषाढ़कृष्णादशम्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

तप दुद्धर श्रीधर धारा, दशमीकलि षाढ़ उदारा ।
निज आतमरसभर लायौ, हम पूजत आनँद पायौ ॥३॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णदशम्यां तपकल्याणप्राप्ताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सित मँगसिरग्यारस चूरे, चवघाति भये गुनपूरे ।
समवस्रत केवलधारी, तुमको नित नौति हमारी ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीमार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां केवलज्ञानमंगलप्राप्ताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

वैशाख चतुर्दशि श्यामा, हनि शेष वरी शिववामा ।
सम्मेदथकी भगवंता, हम पूजें सुगुन अनन्ता ॥५॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला ।

दोहा ।

आयु सहस दशवर्षकी, हेमवरन तनसार ।
धनुष पंचदश तुंग तन, महिमा अपरम्पार ॥१॥

चौपाई (मात्रा १६) ।

जै जै जै नमिनाथ कृपाला, अरिकुलगहनदहनदवज्वाला ।
जै जै धरमपयोधर धीरा, जय भवभंजन गुनगंभीरा ॥ २ ॥
जै जै परमानँद गुनकारी, विश्वविलोकन जन हितकारी ।
अशरन शरन उदार जिनेशा, जै जै समवशरन आवेशा ॥३॥
जै जै केवलज्ञानप्रकाशी, जै चतुरानन हनि भवफाँसी ।
जै त्रिभुवनहित उद्यमवन्ता, जै जै जै जै नमि भगवंता ॥४॥
जै तुम सप्ततत्त्व दरशायो, तास सुनत भविनिजरस पायो ।
एक शुद्धअनुभवनिज भाखे, दोविधि राग दोष छै आखे ॥५॥
द्वै श्रेणी द्वै नय द्वै धर्मं, दो प्रमाण आगमगुन शर्मं ।
तीनलोक त्रयजोग त्रिकालं, सल्ल पल्ल त्रय बात वलालं ॥६॥
चार बंध संज्ञागति ध्यानं, आराधन निक्षेप चउ दानं ।
पंचलब्धि आचार प्रमादं, बन्धहेतु पैंताले सादं ॥ ७ ॥
गोलक पंचभाव शिव भौनें, छहों दरब सम्यक अनुकौनें ।
हानिवृद्धि तप समय समेता, सप्तभंगवानीके नेता ॥ ८ ॥

संजम समुद्घात भय सारा, आठ करम मद सिध गुनधारा ।
नवों लब्धि नवतत्व प्रकाशे, नोकषाय हरि तूप हुलाशे ॥९॥

दशों बन्धके मूल नशाये, यों इन आदि सकल दरशाये ।
फेर विहरि जगजन उद्धारे, जै जै ज्ञान दरश अविकारे ॥१०॥

जै वीरज जै सूक्षमवंता, जै अवगाहन गुन वरनंता ।
जै जै अगुरुलघू निरवाधा, इन गुनजुत तुम शिवसुख साधा ॥

ताकों कहत थके गनधारी, तौ को समरथ कहै प्रचारी ।
तातें मैं अब शरनैं आया, भवदुख मेटि देहु शिवराया ॥१२॥

बारबार यह अरज हमारी, हे त्रिपुरारी हे शिवकारी ।
परपरिनतिको वेगि मिटावो, सहजानंदसरूप मिटावो ॥१३॥

वृन्दावन जांचत शिरनाई, तुम मम उर निवसौ जिनराई ।
जबलों शिव नहिं पावों सारा, तबलों यही मनोरथ म्हारा ॥१४॥

घत्तानंद ।

जयजय नमिनाथं, हौ शिवसाथं, औ अनाथके नाथ सदं ।
तातें शिर नायौ, भगति बढ़ायौ, चिहन चिन्ह शतपत्र पदं ॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा ।

श्रीनमिनाथतने जुगल, चरन जजें जो जीव ।
सो सुरनरसुख भोग कर, होवैं शिवतिय पीव ॥१५॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।
इति श्रीनमिनाथजिनपूजा समाप्त ॥ २१ ॥

श्रीनेमिनाथपूजा

छन्द लक्ष्मी, तथा अर्द्ध लक्ष्मीधरा।

जैतिजै जैतिजै जैतिजै नेमकी, धर्म औतार दातार श्यौचैनकी,
श्रीशिवानंद भौफन्द निकन्द ध्यावै जिन्हें इन्द्रनागेन्द्र औ मैनकी
पर्मकल्यानके देनहारे तुम्हीं, देव हो एव तातें करौं ऐनकी,
थापि हौं वार त्रै शुद्ध उच्चार त्रै, शुद्धताधार भौपारकूं लेनकी ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिन ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः ॥
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्

अष्टक

चाल होली, ताल जत्त।

दाता मोक्षके, श्रीनेमिनाथ जिनराय, दाता० । टेक ।
निगमनदी कुश प्रासुक लीनौं, कंचनभृंग भराय।
मनवचतनतें धार देत हौ, सकल कलङ्क नशाय ॥
दाता मोक्षके, श्रीनेमिनाथ जिनराय, दाता० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

हरिचन्दनजुत कदलीनंदन, कुंकुमसंग घसाय।
विघनतापनाशनके कारन, जजौं तिहारे पाय ॥ दाता० ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्यराशि तुमजस सम उज्जल, तंदुल शुद्ध मंगाय ।
अखय सौख्य भोगनके कारन, पुंज धरौं गुनगाय ॥ दाता०

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥

पुण्डरीकतृणद्रुमको आदिक, सुमन सुगंधित लाय ।
दर्पकमनमथभंजनकारन, जजहुँ चरन लवलाय ॥दाता०॥४

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥

घेवर बावर खाजे साजे, ताजे तुरत मँगाय ।
क्षुधावेदनी नाश करनको, जजहुँ चरन उमगाय। दाता०॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कनकदीपनवनीत पूरकर, उज्जल जोति जगाय ।
तिमिरमोहनाशक तुमको लखि,जजहुँ चरन हुलसाय ॥ दाता०

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

दशविध गंध मगाय मनोहर, गुञ्जत अलिगन आय ।
दशों बंध जारनके कारन, खेवों तुमढिंग लाय ॥ दाता० ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सुरसवरन रसनामनभावन, पावन फल सु मँगाय ।
मोक्षमहाफल कारन पूजों, हे जिनवर तुमपाय ॥ दाता० ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलफलआदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय।
अष्टमछितिके राजकरनकों, जजों अंग वसु नाय॥ दाता० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

पंचकल्याणक

पाइता छन्द।

सित कातिक छट्ठ अमंदा, गरभागम आनँदकंदा।
शचि सेय शिवापद आई, हम पूजत मनवचकाई ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं कातिकशुक्लषष्ठ्यां गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सित सावन छट्ठ अमंदा, जनमे त्रिभुवनके चंदा।
पितु समुद महासुख पाया, हम पूजत विघन नशायो ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तजि राजमती व्रत लीनों, सितसावन छट्ठ प्रवीनों।
शिवनारी तबै हरषाई, हम पूजैं पद शिरनाई ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सित आशिन एकम चूरे, चारों घाती अति कूरे।
लहि केवल महिमा सारा, हम पूजैं अष्टप्रकारा ॥४॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लप्रतिपदि केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीनेमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सितषाढ़ अष्टमी चूरे, चारों अघातिया कूरे।
शिव उज्जयंततें पाई, हम पूजैं ध्यान लगाई ॥५॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लाष्टम्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

दोहा।

श्याम छवी तन चाप दश, उन्नत गुननिधिधाम।
शङ्ख चिह्न पदमें निरखि, पुनि पुनि करों प्रनाम ॥१॥

छंद पद्धरी (१६ मात्रा लघ्वन्त)।

जै जैं जैं नेमि जिनिंद चंद, पितु समुद देन आनंदकन्द।
शिवमात कुमुदमनमोददाय, भविवृन्द चकोर सुखी कराय ॥२॥
जय देव अपूरब मारतंड, तम कीन ब्रह्मसुत सहस खंड।
शिवतियमुखजलजविकाशनेश, नहि रहो सृष्टिमें तम अशेश ॥
भवि भीत कोक कीनों अशोक, शिवमग दरशायो शर्मथोक।
जयजयजयजय तुम गुनगँभीर, तुम आगमनिपुन पुनीतधीर ॥

तुम केवलजोति विराजमान, जयजयजयजय करुनानिधान।
तुम समवसरनमें तत्वभेद, दरशायो जातें नशत खेद ॥५॥

तित तुमकों हरि आनन्दधार, पूजत भगतीजुत बहु प्रकार।
पुनि गद्यपद्यमय सुजस गाय, जै बल अनंत गुनवंतराय ॥६॥

जय शिवशङ्कर ब्रह्मा महेश, जय बुद्धि विधाता विष्णुवेष।
जय कुमतिमतंगनको मृगेंद्र, जय मदनध्वांतकों रवि जिनेंद्र ॥

जय कृपासिंधु अविरुद्ध बुद्ध, जय ऋद्धिसिद्धि दाता प्रबुद्ध।
जय जगजनमनरंजन महान, जय भवसागरमहँ सुष्टु यान ॥८॥

तुव भगति करें ते धन्य जीव, ते पावैं दिव शिवपद सदीव।
तुमरो गुन देव विविधप्रकार, गावत नित किन्नरकी जु नार ॥९॥

वर भगतिमांहि लवलीन होय, नाचैं ताथेइ थेइ थेइ बहोय।
तुम करुणासागर सृष्टिपाल, अब मोकों वेगि करो निहाल ॥१०

मैं दुख अनन्त वसुकरम जोग, भोमे सदीव नहिं और रोग।
तुमको जगमें जान्यौं दयाल, हो वीतराग गुनरतनमाल ॥११॥

तातें शरना अब गही आय, प्रभु करो वेगि मेरी सहाय।
यह विघन करम मम खंडखंड, मनवांछितकारज मंडमंड ॥१२

संसारकष्ट चकचूर चूर, सहजानन्द मम उर पूर पूर।
निज पर प्रकाश बुधि देह देह, तजिके विलंबसुधि लेह लेह ॥१३

हम जांचत हैं यह बार बार, भवसागरतें मो तार तार।
नहिं सह्यो जात यह जगत दुःख, तातें विनवों हे सुगुनमुक्ख ॥

घत्तानंद।

श्रीनेमिकुमारं जितमदमारं, शीलागारं, सुखकारं।
भवभयहरतारं, शिवकरतारं, दातारं धर्माधारं ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मालिनी (१५ वर्ण)।

सुखधनजससिद्धी पुत्रपौत्रादि वृद्धी,
सकल मनसि सिद्धी होतु है ताहि ऋद्धी।
जजत हरषधारी नेमिको जो अगारी,
अनुक्रम अरि जारी सो वरे मोक्षनारी ॥१६॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

इति श्रीनेमिनाथजिनपूजा समाप्त ॥ २२॥

श्रीपार्श्वनाथपूजा

कवित्त छंद (मात्रा ३१)

प्रानतदेवलोकतें आये, वामादे उर जगदाधार,
अश्वसेनसुत नुत हरिहर हरि, अङ्क हरिततन सुखदातार।
जरत नाग जुगबोधि दियो जिहिं, भुवनेसुरपद परमउदार,
ऐसे पारसको तजि आरस, थापि सुधारस हेत विचार ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक ।

प्रमिताक्षर ।

सुरदीरघिकाकनकुम्भ भरों, तव पादपद्मतर धार करों ।
सुखदाय पाय यह सेवत हों, प्रभुपार्श्व सार्श्वगुन वेवत हों ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा

हरिगन्ध कुंकुम कर्पूर घसौं, हरिचिह्न हेरि अरचों सुरसौं ।
सुखदाय पाय यह सेवत हौं, प्रभुपार्श्व सार्श्वगुन वेवत हौं ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

हिमहीरनीरजसमानशुचं, वरपुञ्ज तंदुल तवाग्र मुचं ।
सुखदाय पाय यह सेवत हौं, प्रभुपार्श्व सार्श्वगुन वेवत हौं ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

कमलादिपुष्प धनुपुष्प धरी, मदभञ्जहेत ढिंग पुञ्ज करी ।
सुखदाय पाय यह सेवत हौं, प्रभुपार्श्व सार्श्वगुन वेवत हौं ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चरु नव्यगव्य रससार करौं, धरि पादपद्मतर मोद भरौं।
सुखदाय पाय यह सेवत हौं, प्रभुपार्श्व सार्श्वगुन वेवत हौं ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुद्रोगनिवारणाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनिदीपजोत जगमग्ग मई, ढिगधारतें स्वपरबोध ठई।
सुखदाय पाय यह सेवत हौं, प्रभुपार्श्व सार्श्वगुन वेवत हौं ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगन्ध खेय मन माचत है, वह धूमधूममिसि नाचत है।
सुखदाय पाय यह सेवत हौं, प्रभुपार्श्व सार्श्वगुन वेवत हौं ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फलपक्व शुद्ध रसजुक्त लिया, पदकंज पूजत हौं खोलि हिया।
सुखदाय पाय यह सेवत हौं, प्रभुपार्श्व सार्श्वगुन वेवत हौं ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलआदि साजि सब द्रव्य लिया, कनथार धार नुतनृत्य किया।
सुखदाय पाय यह सेवत हौं, प्रभुपार्श्व सार्श्वगुन वेवत हौं ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक ।

लक्ष्मीधरा ।

पक्ष वैशाखकी श्याम दूजी भनो, गर्भकल्यानको द्यौस सोही गनों
देवदेवेंद्र श्रीमातु सेवै सदा, मैं जजों नित्य ज्यों विघ्न होवै विदा

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयाया गर्भागममंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्व-नाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पौषकी श्याम एकादशीकों स्वजी, जन्म लीनों जगन्नाथ धर्मध्वजी
नाकनागेन्द्र नागेन्द्र पै पूजिया, मैं जजों ध्यायके भक्ति धारों हिया

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्या जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृष्णएकादशो पौषकी पावनी, राजकों त्याग वैराग धारौ वनी
ध्यानचिद्रूपको ध्याय सातामई, आपको मैं जजों भक्ति भावें लई

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्या तपोमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चैतकी चौथिश्यामा महाभावनी, तादिना घातियाघाति शोभावनी
बाह्य आभ्यन्तरे छन्द लक्ष्मीधरा, जैति सर्वज्ञ मैं पादसेवा करा

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां केवलज्ञानमंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सप्तमीशुद्ध शोभै महासावनी, तादिना मोक्ष पायो महापावनी ।
शैलसम्मेदतें सिद्धराजा भये, आपकों पूजतें सिद्धकाजा ठये ।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा (जमकालंकार)

पाशपर्मगुनराश हैं, पाशकर्म हरतार।
पाशशर्म निजवास द्यो, पाशधर्म धरतार॥ १॥
नगरबनारसि जन्म लिय, वंश इक्ष्वाक महान।
आयु वरषशत तुङ्गतन, हस्त सु नौ परमान॥ २॥

पद्धरी छंद।

जय श्रीधर श्रीकर श्रीजिनेश, तुव गुनगन फणि गावत अशेश
जय जय जय आनदकन्द चन्द, जय जय भविपङ्कजको दिनन्द
जय जय शिवतियवल्लभ महेश। जय ब्रह्मा शिवशंकर गनेश
जय स्वच्छचिदङ्ग अनङ्गजीत, तुम ध्यावत मुनिगन सुहृदमीत॥
जय गरभागममंडित महंत, जगजनमनमोदन परम संत।
जय जनममहोच्छव सुखदधार, भविसारंगको जलधर उदार॥
हरिगिरिवरपर अभिषेक कीन, झट तांडव निरत अरंभ दीन।
बाजन बाजत अनहद अपार, को पार लहत वरनत अबार ६
दमदम दमदम दमदम मृदंग, घननन ननननं घंटा अभंग।
छमछम छमछम छम छुद्रघंट, टमटम टमटम टंकार ठंट॥७॥

झननन झननन नूपुर झँकोर, तननन तननन नन तानशोर।
सनननन नननननगगनमाहिं, फिरिफिरिफिरिफिरिफिरिफिरिकीलहांह
ताथेइ थेइथेइथेइ धरत पांव, चटपट अटपट झट त्रिदशराव।
करिके सहस्र करको पसार, बहुभांति दिखावत भाव प्यार॥
निजभगति प्रगट जित करत इन्द्र,ताको क्या कहिसकिहैं कविंद्र
जहँरंगभूमि गिरिराज पर्म, अरु सभा ईश तुमदेव शर्म॥१०॥
अरु नाचत मघवा भगतिरूप, बाजे किन्नर वज्जत अनूप।
सो देखत ही छवि बनत वृंद, मुखसों कैसे बरनैं अमंद ११
धन घड़ी सोय धन देव आप, धन तीर्थंकर प्रकृती प्रताप।
हम तुमको देखत नयनद्वार, मनु आज भये भवसिंधु पार॥
पुनिपिता सौंपि हरि स्वर्ग जाय, तुम सुखसमाज भोग्यौ जिनाय
फिर तपधरि केवलज्ञान पाय, धरमोपदेश दै शिवसिधाय॥१३॥
हम सरनागत आये अबार, हे कृपासिंधु गुन अमलधार।
मो मनमें तिष्ठहु सदाकाल, जबलों न लहों शिवपुर रसाल॥
निरवानथान सम्मेद जाय, 'वृंदावन' बंदत शीसनाय।
तुम ही हो सब दुखदंद हर्न, तातैं पकरी यह चर्नशर्न।१५।

घत्तानंद।

जयजय सुखसागर, त्रिभुवन आगर, सुजस उजागर, पार्श्वपती
वृन्दावन ध्यावत, पूज रचावत, शिवथल पावत, शर्म अती॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

कवित्त (मात्रा ३१)।

पारसनाथ अनाथनिके हित, दारिदगिरिकों वज्र समान,
सुखसागरवर्द्धनको शशिसम, दवकषायको मेघ महान।
तिनकों पूज जो भवि प्रानी, पाठ पढ़ें अति आनन्द आन,
सो पावै मनवांछित सुख सब, और लहै अनुक्रम निरवान।

इत्याशीर्वाद परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

इति श्रीपार्श्वनाथजिनपूजा समाप्त ॥२३॥

श्रीवर्द्धमानजिनपूजा

मत्तगयद।

श्रीमतवीर हरें भवपीर, भरें सुखसीर अनाकुलताई,
कहरिअंक अरीकरदङ्क, नये हरिपंकतिमौलि सुआई।
मैं तुमको इत थापतु हौं प्रभु, भक्तिसमेत हिये हरषाई,
हे करुणाधनधारक देव, इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

अष्टक

छंद अष्टपदी (द्यानतरायकृत नदीश्वराष्टकादिक अनेक रागोंमें भी बने है)।

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कंचनभृङ्ग भरों,
प्रभु वेग हरो भवपीर, यातैं धार करों।
श्रीवीर महा अतिवीर सन्मतिनायक हो,
जय वर्द्धमान गुणधीर सन्मतिदायक हो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मलयागिरचंदन सार, केशरसंग घसों।
प्रभु भव आताप, निवार, पूजत हिय हुलसा ॥श्री०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीनों थार भरी।
तसु पुञ्ज धरों अविरुद्ध, पावों शिवनगरी ॥श्री०॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुरतरुके सुमन समेत, सुमन सुमन प्यारे।
सो मनमथभंजनहेत, पूजों पद थारे ॥श्री०॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

रसरजत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी।
पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी ॥श्री०॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

तमखंडित मंडितनेह, दीपक जोवत हों।
तुम पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हों। श्री० ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

हरिचन्दन अगर कपूर, चूर सुगन्ध करा।
तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा ॥श्री०॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

ऋतुफल कलवर्जित लाय, कंचनथार भरा।
शिव फलहित हे जिनराय, तुमढिग भेट धरा ॥श्री०॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि।

जलफल वसु सजि हिमथार, तनमनमोद धरों।
गुण गाऊं भवदधि तार, पूजत पाप हरों ॥श्री० ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पंचकल्याणक

राग टप्पाचालमें।

मोहि राखो हो सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखो
गरभ साढ़सित छट्ठ लियो थिति, त्रिशला उर अघहरना।
सुर सुरपति तित सेव करौ नित, मैं पूजों भवतरना। मोहि रा॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठ्या गर्भमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जनम चैतसित तेरसके दिन, कुण्डलपुर कनवरना।
सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजों भवहरना। मोहि रा॥२॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्या जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं सिर्वपामीति स्वाहा।

मंगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना।
नृपकुमार घर पारन कीनो, मैं पूजों तुम चरना। मोहि रा॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्या तपोमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

शुकलदशैं वैशाखदिवस अरि, घाति चतुक छयकरना।
केवल लहि भवि भवसरतारे, जजों चरन सुख भरना। मोहि रा

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्या ज्ञानकल्याणप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतें परना।
गनफनिवृन्द जजैं तित बहुविधि, मैं पूजों भयहरना। मोहिरा०

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद हरिगीता २८ मात्रा।

गनधर असनिधर, चक्रधर, हलधर गदाधर वरवदा,
अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा।
दुखहरन आनंदभरन तारन, तरन चरन रसाल हैं,
सुकुमाल गुनमनिमाल उन्नत, भालकी जयमाल हैं ॥१॥

घत्तानंद।

जय त्रिशलानंदन, हरिकृतवंदन, जगदानंदन, चंदवरं।
भवतापनिकंदन तनकनमंदन, रहितसपंदन-नयन धरं ॥२॥

छंद तोटक।

जय केवलभानु कलासदनं, भविकोकविकाशनकंजवनं।
जगजीत महारिपु मोहहरं, रजज्ञानदृगावर चूरकरं ॥१॥
गर्भादिकमंगलमण्डित हो, दुखदारिदको नित खंडित हो।
जगमाहिं तुम्हीं सतपंडित हो, तुम ही भवभावविहंडित हो ॥२॥
हरिवंशसरोजनको रवि हो, बलवंत महंत तुम्हीं कवि हो।
लहि केवल धर्मप्रकाश कियो, अबलों सोई मारगराजति यो ॥

पुनि आप तने गुनिमाहिं सही, सुर मग्न रहैं जितने सबही।
तिनकी बनिता गुन गावत हैं, लय माननिसों मनभावत हैं॥
पुनि नाचत रंग उमंग भरी, तुअ भक्तिविषै पग येम धरी।
झननं झननं झननं झननं, सुर लेत तहाँ तननं तननं॥५॥
घननं घननं घनघंट बजै, दमदं दमदं मिरदंग सजै।
गगनांगनगर्भगता सुगता, ततता ततता अतता वितता॥६॥
धृगतां धृगतां गति बाजत है, सुरताल रसालजु छाजत है।
सननं सननं सननं नभमें, इकरूप अनेक जु धारि भमें॥७॥
कइ नारि सु बीन बजावति हैं, तुमरो जस उज्जल गावति हैं।
करतालविषै करताल धरें, सुरताल विशाल जुनाद करें॥८॥
इन आदि अनेक उछाहभरी, सुरभक्ति करें प्रभुजी तुमरी।
तुमही जगजीवनिके पितु हो, तुमही विनकारनतें हितु हो॥
तुमही सब विघ्नविनाशन हो, तुमही निज आनंदभासन हो।
तुमही चितचिंतितदायक हो, जगमाहिं तुम्हीं सब लायक हो॥
तुमरे पनमंगलमाहिं सही, जिय उत्तम पुन्न लिया सब ही।
हमको तुमरी सरनागत है, तुमरे गुनमें मन पागत है॥११॥
प्रभु मोहिय आप सदा बसिये, जबलों वसु कर्म नहीं नसिये।
तबलों तुम ध्यान हिये वरतो, तबलों श्रुतचिंतन चित्त रतो॥
तबलों व्रत चारित चाहतु हों, तबलों शुभ भाव सुगाहतु हों।
तबलों सतसंगति नित्त रहो, तबलों मम संजम चित्त गहो॥

अबलों नहिं नाश करों अरिको, शिवनारि वरों समता धरिको।
यह थी तबसों हमको जिनजी, हम जांचतु हैं इतनी सुनजी ॥

घत्तानंद।

श्रीवीरजिनेशा नमितसुरेशा, नागनरेशा भगतिभरा।
'वृन्दावन' ध्यावै विघन नशावै, वांछित पावै शर्मवरा ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा।

श्रीसनमतिके जुगलपद, जो पूजैं धरि प्रीति।
वृन्दावन सो चतुरनर, लहै मुक्तिनवनीत ॥१६॥

इत्याशीर्वाद परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत।

इति श्रीवर्द्धमानजिनपूजा समाप्त ॥ २४ ॥

समुच्चयअर्घ

तोटक।

सुनिये जिनराज त्रिलोक धनी,
तुममें जितने गुन हैं तितनी।
कहि कौन सकै मुखसों सब ही,
तिहिं पूजतु हौं गहि अर्घ यही ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो चतुर्विंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कवित्त ।

ऋषभदेवको आदि अंत श्रीवर्धमान जिनवर सुखकार,
तिनके चरनकमलको पूजै, जो प्रानी गुनमाल उचार ।
ताके पुत्रमित्र धन जोवन, सुखसमाजगुन मिलै अपार,
सुरपदभोगभोगि चक्री ह्वै, अनुक्रम लहै मोक्षपद सार ॥२॥

इत्याशीर्वादः ।

कविनामग्रामादिपरिचय

मनहरन ।

काशीजीमें काशीनाथ नन्हूजी, अनंतराम,
मूलचंद, आढतसुराम आदि जानियो ।
सज्जन अनेक तहां धर्मचन्दजीको नन्द,
वृन्दावन अग्रवाल गोल गोती बानियो ॥
तानें रचे पाठ पाय मन्नालालको सहाय,
बालबुद्धि अनुसार सुनो सरधानियो ।
यामें भूलचूक होय ताहि शोध शुद्ध कीज्यो,
मोहि अलपज्ञ जानि छिमा उर आनियो ॥ १ ॥

इति श्रीकविवरवृन्दावनकृत श्रीवर्तमानजिनचतुर्विंशति जिन-
पूजा समाप्त ।

समुच्चय

श्रीतीसचौबीसीजीकी पूजा।

पांच भरत शुभ क्षेत्र पांच ऐरावते,
आगत-नागत वर्तमान जिन शास्वते।
सो चौबीसी तीस जजूं मन लायके,
आह्वानन विधि करूं वार त्रय गायके॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसंबन्धि - पंचभरत - पंचऐरावत - क्षेत्रस्था भूतानागतवर्तमान - सम्बन्धिचतुर्विंशतितीर्थंकरा अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् इति आह्वानं।

अत्र अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं।

अत्र मम सन्निहिता भवत वषट सन्निधीकरणं।

अष्टक

नीर दधि क्षीर सम ल्यायो, कनकको भृङ्ग भरवायो,
अबै तुम चरण ढिंग आयो, जनम जरा रोग नशवायो।
द्वीप अढ़ाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषैं छाजे,
सात शत बीस जिनराजे, जे पूजतां पाप सब भाजें॥ १॥

ॐ ह्रीं पंचभरतपंचैरावतक्षेत्रस्थभूतानागतवर्तमानकालसबन्धिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभिजुत चन्दनं ल्यायो, संग करपूर घसवाया,
धार तुम चरण ढरवायो, भव आताप नशवायो॥द्वीप०॥

ॐ ह्रीं पांच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र संबन्धी तीस चौबीसी सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यः चन्दनं नि० ।

चन्द्रसम तन्दुलं सारं, किरण मुक्ता जु उनहारं,
पुञ्ज तुम चरण ढिंग धारं, अक्षयपद प्राप्तिके कारं ।
द्वीप अढ़ाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषें छाजे,
सात शत बीस जिनराजे, पूजतां पाप सब भाजे ॥

ॐ ह्रीं पांच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र संबन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः अक्षतं नि० ।

पुष्प शुभ गन्धजुत सोहै, सुगन्धित नास मन मोहै ।
जजत तुम मदन क्षय हाव, मुकति पर पलकमें जोव ॥द्वीप०॥

ॐ ह्रीं पांच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र संबन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः पुष्पं नि० ।

सरस व्यंजन लिया ताजा, तुरत बनवायकें खाजा ।
चरन तुम जजों हों महाराजा, क्षुधादिक पलकमें भाजा ॥द्वीप

ॐ ह्रीं पांच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः नैवेद्यं नि० ।

दीप तम नाशकारी है, सरस शुभ जोतिधारी है ।
होय दशों दिश उजारी है, भूम्र मिस पाप क्षारी है ॥दीप०॥

ॐ ह्रीं पांच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र सम्बंधी तीसचौबीसीके सातसौबीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः दीपं नि० ।

सरस शुभ धूप दस अंगी, जलाऊं अग्निके संगी ।
करमकी सेन चतुरंगी, चरन तुम पूजतें भंगी ॥दीप०॥

ॐ ह्रीं पांच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र सम्बंधी तीसचौबीसीके सातसौबीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः धूपं नि० ।

मिष्ट उत्कृष्ट फल ल्यायो, अष्ट अरि दुष्ट नशवायो ।
श्रीजिन भेंट धरवायो, कार्य मनवांछता पायो ॥दीप०॥

ॐ ह्रीं पांच भरत पाच ऐरावत क्षेत्र सम्बंधी तीसचौबीसीके सातसौबीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः फलं नि० ।

द्रव्य आठों जु लीना है, अर्घ करमें नवीना है ।
पूजते पाप छीना है, 'भानमल' जोर कीना है ॥दीप०॥

ॐ ह्रीं पाच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र सम्बंधी तीसचौबीसीके सातसौबीस जिनेंद्रेभ्यो नमः अर्घं नि० ।

प्रत्येक अर्घ ।

जम्बूद्वीपको प्रथममेरुकी, दक्षिणदिशा भरत शुभ जान ।
तहां चौबीसी तीन बिराजें, आगत नागत औ वर्तमान ॥
तिनके चरणकमलकी निशिदिन, अर्घ चढ़ाई करूं उर ध्यान ।
इस संसारभ्रमणतें तारो, अहो जिनेश्वर ! करुणावान ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरुकी दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र सम्बधी तीन चौबीसीके बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो नमः । अर्घं ।

सुदर्शन मेरुकी उत्तर दिश में, ऐरावत क्षेत्र शुभ जान ।
आगत नागत वर्तमान जिन, बहत्तर सदा शाश्वते आन ॥तिन०

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरुकी उत्तर दिशा ऐरावतक्षेत्र सम्बंधी तीन चौबीसीके बहत्तर जिनेरोभ्यो नमः । अर्घं ।

कुसुमलता छन्द ।

खण्ड धातकी विजय मेरुके, दक्षिण दिशा भरत शुभ जान।
तहां चौबीसी तीन विराजे, आगत नागत अरु वर्तमान ॥
तिनके चरणकमलको निशिदिन, अर्घ चढ़ाय करूं उर ध्यान।
इस संसार भ्रमणतैं तारा, अहो जिनेश्वर ! करुणावान ॥

ॐ ह्रीं धातकीखण्ड द्वीपकी पूर्व दिशि विजय मेरुकी दक्षिण दिशि भरतक्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसीके बहत्तर जिनेंद्रेभ्यो अर्घं।

इसी द्वीपकी प्रथम शिखरिकौ, उत्तर ऐरावत जु महान।
आगत नागत वर्तमान जिन, बहत्तरि सदा सासते जान॥
तिनके चरणकमलको निशिदिन, अर्घ चढ़ाइ करूं उर ध्यान।
इस संसारभ्रमणतें तारो, अहो जिनेश्वर ! करुणावान ॥

ॐ ह्रीं धातकी खण्ड द्वीपकी पूर्व दिशि विजय मेरुकी उत्तर दिशि ऐरावतक्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसीके बहत्तरि जिनेंद्रेभ्यो अर्घं।

खंड धातकी अचल सुमेर, दक्षिण तास भरत बहु घेर।
तामें चौबीसी त्रय जान, आगत नागत और वर्तमान॥

ॐ ह्रीं धातकीखण्ड द्वीपकी पश्चिम दिशा अचलमेरुकी दक्षिण दिशा भरतक्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसीके बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो नमः अघ।

अचल मेरुकी उत्तर दिश जान, ऐरावत शुभ क्षेत्र बखान।
तामें चौबीसीत्रय जान, आगत नागत और वर्तमान॥

ॐ ह्रीं धातकीखण्डकी पश्चिम दिशा अचलमेरुकी उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसीके बहत्तर जिनेशेभ्यो नमः । अर्घं ।

द्वीप पुष्करकी पूरब दिशा, मंदिरमेरुकी दक्षिण भरत-सा ।
ताविषे चौबीसो तीन जू, अर्घ लेय जजूं परवीन जू ॥

ॐ ह्रीं पुष्कर द्वीपकी पूरब दिशा मन्दरमेरुकी दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसीके बहत्तर जिनालयेभ्यो नमः अर्घं ।

गिरि सूं मंदर उत्तर जानिये, ताके पूर्व दिशा बखानिये ।
ताविषे चौबीसी तीन जू, अर्घलेय जजूं परवान जू ॥

ॐ ह्रीं पुष्कर द्वीपकी पूर्व दिशा मन्दरमेरुकी उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घं ।

पश्चिमपुष्करगिरि विद्युतमाल, ताके दक्षिण भरतक्षेत्र
है सुविशाल ।
तामें चौबीसी हैं जु तीन, वसु द्रव्य लेय जजूं परवीन ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्ध द्वीपकी पश्चिम दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घं ।

याही गिरिके उत्तर जु ओर, ऐरावत क्षेत्र बनो निहोर ।
तामें चौबीसी है जु तीन, वसु द्रव्य लेय जजूं परवीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीपुष्कर द्वीपकी पश्चिम दिशा विद्यु त माली मेरुकी उत्तर दिशा ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घं ।

द्वीप अढ़ाईके विषे, पंचमेरु है तांह।
दक्षिण उत्तर तासके, भरत ऐरावत भाय॥
भरत ऐरावत भाय, एक क्षेत्रके मांही।
चौबीसी हैं तीन, दसों दिशि ही के मांही॥
दसों क्षेत्रके सातसौ बीस जिनेश्वर।
अर्घ ल्याय करजोडि, जें ज रविमल सुमनकर॥

ॐ ह्रीं पचमेरु सम्बन्धी भरतैरावत क्षेत्रके विषै तीस चौबीसीजीके सातसै बीस जिनेन्द्रेभ्यो नम अर्घं नि०।

जयमाला।

दोहा।

चौबीसों तीसों नमों, पूजा परम रसाल।
मन, वच तन को शुद्धकर, अब वरणो जयमाल॥

जय द्वीप अढ़ाई में जु सार, गिरि पाच मेरु उन्नत अपार।
तागिरि पूर्व-पश्चिम जु ओर, शुभ क्षेत्र विदेह बसै जु ठौर॥
ता दक्षिण क्षेत्र भरत सु जानि, है उत्तर ऐरावत महान।
गिरि पांचतनें दश क्षेत्र जोय, छबि ताकी वरन नसके कोय॥
ताको वरणूं वरणन विशाल, तैसा ही ऐरावत है रसाल।
इस क्षेत्र बीच विजयार्द्ध एक, वा ऊपर विद्याधर अनेक॥
इस क्षेत्र विषें षट खंड जानि, तहां छहोंकाल बरतैं महान।
जो तीन कालमें भाग भूमि, दस जाति कल्पतरु रहे झूमि॥

जब चौथौ काल लगै जु आय, तब कर्मभूमि वर्ते सुहाय।
तब तीर्थंकर को जन्म होय, सुरलेय जजैं गिरि पर सुजोय॥
बहु भक्ति करें सब देव आय, ताथेई थेई की तान ल्याय।
हरि तांडव नृत्य करे अपार, सब जीवन मन आनन्दकार॥
इत्यादि भक्ति करिके सुरेन्द्र, निजथान जाय जुत देव वृन्द।
इहविधि पांचों कल्यान होय, हरिभक्ति करै अति हर्ष जोय॥
या कालविषें पुण्यवंत जीव, नरजन्मधार शिव लहै अतीव।
तब श्रेष्ठ पुरुष परवीन होय, सब याही काल विषै जु होय॥
जब पंचम काल करे प्रवेश, मुनिधर्म तणों नहीं रहे लेश।
विरले कोई दखिन देश मांहि, जिनधर्मी नर बहुते जु नाहिं॥
जब षष्ठम काल करे प्रवेश, तब धर्म रंच नहिं रहे लेश।
दश क्षेत्रमें रचना समान, जिनवाणी भाष्यो सो प्रमाण॥
चौबीसी होइके क्षेत्र तीन, दश क्षेत्रनिमें जानो प्रवीन।
आगत व अनागत वर्तमान, सत्तसातशतक अरु बीसजान॥
सबही महाराज नमूं त्रिकाल, मम भवसागरतें लेहु निकाल।
यह वचन हिये में धार लेव, मम रक्षा करहु जिनेन्द्र देव॥
'विमल' की विनती सुनहु नाथ, मैं पांय परूं जुग जोरि हाथ।
मम वांछित कारज करो पूर, यह अरज हृदयमें धरि जरूर॥

घत्ता।

सात सात जु बीसं श्रीजगदीशं, आगतनागत अरु वर्तत हैं।
मन वच तन पूजैं, बुध मन हूजें, सुरग मुक्ति पद पावत हैं॥

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धी दश क्षेत्रनिके विषै तीस चौबीसीके सातसौबीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ नि०।

दोहा।

सम्वत् सत उन्नीस के, ता ऊपर पुनि आठ।
पौष कृष्ण तृतीया गुरु, पूरन भयो जु पाठ॥
अक्षर मात्रा की कसर, बुध जन शुद्ध करेय।
अल्प बुद्धि मो सोचकें, दोष कबहुं नहि देय॥
पढ़ौ नहीं व्याकरण मैं, पिंगल देख्यो नाहिं।
जिनवाणी परसादतें, उमंग भई घट मांहि॥
मान बड़ाई ना चहू, चहू धर्मको अंग।
नित प्रति पूजा कीजियो, मनमें धारि उमंग॥

इत्याशीर्वादः।

पंचबालयति तीर्थंकरपूजा ।

दोहा ।

श्रीजिनपंच अनंगजित, वासुपूज्य मलि नेम ।
पारसनाथ सुवीर अति, पूजों चितधरि प्रेम ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयतितीर्थंकरा ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयतितीर्थंकरा ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयतितीर्थंकरा ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

(अथ अष्टक । चाल द्यानतरायकृत नंदीश्वरद्वीपपूजाकी)

शुचिशीतल सुरभिसुनीर, ल्यायो भरि झारी,
दुख जन्मन मरण गहीर, याको परिहारी ।
श्रीवासुपूज्य मल्लि नेम, पारस वीर अती,
नमु मनवचतनधरि प्रेम, पांचो बालजती ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदन केशर कर्पूर, जलमें घसि आने ।
भवतपभंजनसमपूर, तुमको मैं जाने ॥ श्रीवासु० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

वर अक्षत विमल बनाय, सुवरण थाल भरे।
बहु देश देशके लाय, तुमरी भेंट करे ।। श्रीवासु० ।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

इह काम सुभट अति शूर, मनमें चोभ करें।
मैं लाया सुमन हजूर, याको वेग हरे ।। श्रीवासु० ।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयतितीर्थंकरेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट रसपूरित नैवेद्य, रसना सुखकारी।
है कर्मवदनी छेद, आनंद है भारी ।। श्रीवासु० ।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि दीपक जगमग जोत, तुम चरनन आगे।
मम मोहतिमिर छय होत, आतम गुणजागे ।।श्रीवासु।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयतितीर्थंकरेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

यह दशविधि धूप अनूप, खेऊं गन्धमई।
दशबंधदहन जिनभूप, तुम हो कर्म-जई ।। श्रीवासु ।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयतितीर्थंकरेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले पिस्ता दाख बदाम, श्रीफल आदि घने।
तुम चरण जजूं गुणधाम, दो फल मोखतने ।।श्रीवासु।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सजि वसुविधिदरब मनोग, अर्घ बनावतु हौं।
वसुकर्म अनादि संजोग, ताहि नशावतु हौं॥ श्रीवासु॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

चौपाई।

पांचों बालयती तीर्थेश, तिनकी यह जयमाल विशेष।
मनवचकाय त्रियोग संभार, जे गावत पावत भव पार॥१॥

पद्धरी छंद।

जय जय जय जय श्रीवासुपूज, तुमसम जगमें नहिं और दूज।
तुम महाशुक्र सुरलोक छार, जब गर्भमात मांही पधार॥२॥
षोडश सपने देखे सुमात, बस अवधि जान तुम जन्म तात।
बहु हर्षधार दंपति सुजान, बहु दान दियो जाचक जनान॥३॥
छप्पन कुमारिका कियो आन, तुम मात सेव बहु भक्ति ठान
छैमास अगाऊ गर्भ आय, धनपति सुवरण नगरी रचाय॥४॥
तुम मात महल आंगनमंझार, तिहुं काल रतनधारा अपार।
बरसाई षट नव मास मार, धनि जिन पुरुषन नैनन निहार॥

जय मल्लिनाथ देवन सुदेव, शत इन्द्र करत तुम चरण सेव।
त्रय ज्ञानयुक्त तुम जन्म धार, आनंद भयो तिहुंजग अपार॥
तब ही ले चहु विधि देव संग, सौधर्म इन्द्र आयो उमंग।
सजि गज ले तुम हरि गोद आप, वन पांडुकशिल ऊपर सुथाप
क्षीरोदधितैं बहु देव जाय, भरि जल घट हाथों हाथ लाय।
करि न्हवन बस्त्र भूषण सजाय, दे मात नृत्य तांडव कराय॥
पुनि हर्ष धार हिरदै अपार, सब निर्जर रव जैं जैं उचार।
तिस अवसर आनंद हेजिनेश, हम कहिवे समरथ नाहिं लेश॥
जय जादोंपति श्रीनेमिनाथ, हम नमन सदा जुग जोड़ि हाथ।
तुम व्याहसमय पशुअन पुकार, सुन तुरत छुड़ाये दयाधार॥
करकंकण अरु शिरमोरबंद, सो तोड़ भये छिनमें स्वछंद।
तब ही लौकांतिकदेव आय, वैराग्यवर्द्धिनी थुति कराय॥११॥
ततछिन शिविका लायो सुरेन्द्र, आरूढ भये तापर जिनेन्द्र।
सो शिविका निजकंधन उठाय, सुर नर खग मिल तपवन ठराय
कचलौंच वस्त्र भूषण उतार, भये जती नगनमुद्रा सुधार।
हरि केश लिये रतनन पिटार, सो क्षीरउदधि मांही पधार॥
जय पारसनाथ अनाथनाथ, सुरअसुर नमत तुमचरण माथ।
जुगनाग जरत कीनो सुरच, यह बात सकल जगमें प्रतच्छ
तुम सुरधनुसम लखि जग असार, तप तपत भये तनममत छार
शठ कमठ कियो उपसर्ग आय, तुम मन-सुमेरु नहिं डगमगाय

तब शुक्लध्यान गहि खडग हाथ, अरि चारिघातिया करि सुघात
उपजायो केवलज्ञान भान, आयो कुबेर हरि बच प्रमान ॥१५॥
की समवसरण रचना विचित्र, तहं खिरत भई वाणी पवित्र।
मुनि सुर नर खग तिर्यंच आय, सुनि निज-निज भाषाबोध पाय
जय वर्द्धमान अंतिम जिनेश, पायौ न अन्त तुम गुण गणेश
तुम चार अघाती करम हान, लहि मोक्ष स्वर्गसुख अचलथान
तबही सुरपति बल अवधि जान, सब देवनयुत बहु हरष ठान।
सजि निजवाहन आयो सुतीर, जहं परमौदारिक तुम शरीर॥
निर्वाण-महोत्सव कियौ भूर, लै मलियागिरि चंदन कपूर।
बहु द्रव्य सुगंधित सरससार, तामें श्रीजिनवर वपु पधार॥

निज अगिनकुमारनि मुकुटनाय, तिहं रतननि शुचिज्वाला उठाय
तिस सिरमांही दीनी लगाय, सो भस्म सबन मस्तक चढ़ाय
अति हर्ष थकी रचि दीपमाल, शुभ रत्नमई दशदिश उजाल।
पुनि गीतनृत्य बाजे बजाय, गुनगाय ध्याय सुरपति सिधाय॥
सो नाथ अबै जगमें प्रतक्ष, नित होत दीपमाला सुलक्ष।
हे जिन तुम गुणमहिमा अपार, वसु सम्यग्ज्ञानादिक सुमार।
तुम ज्ञानमाहिं तिहुंलोक दर्व, प्रतिबिंबित हैं चर अचर सर्व।
लहि आतम अनुभव परमऋद्धि, भये वीतराग जगमें प्रसिद्ध॥
हो बालजती तुम सबन एम, अचरज शिवकांता वरी केम।
तुम परमशांतमुद्रा सुधार, किम अष्टकर्म रिपुको प्रहार॥२४॥

हम करत वीनती बारबार, करजोड़ सुमस्तक धार धार ।
तुम भये भवोदधि पार पार, मोकों सुवेग ही तार तार ॥२४॥
'अरदास' दास यह पूर पूर, वसुकर्मशैल चकचूर चूर ।
दुख सहन दासकी शक्ति नाहिं, गहि शरण चरण कीजै निबाह

दोहा ।

ब्रह्मचर्य सों नेह धरि, रचियो पूजन ठाठ ।
पांचों बालजतीनका, कीजै नित प्रति पाठ ॥
ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयतितीर्थंकरेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीगोम्मटेश्वरपूजा ।

मत्तगयंद छंद ।

स्थापना ।

देखत ही द्युतिवन्त हरे, तनकी छवि, सूर्य सुधाधर हारे ।
ध्यान विवेक तपोबलसे, जिनने अरि-कर्म प्रचंड संहारे ॥
बाहु पसार अनुग्रहकी, भवसागरसे भवि जीव उबारे ।
सो जिन बाहुबलीश, दयाकर तिष्ठहु मानस आय हमारे ॥
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिभगवन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिभगवन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिभगवन् ! मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

हरिगीतिका छंद

शुचि सित सलिलकी धार, शशि रस तुल्य गुणकी खान है।
सो चरण सन्मुख ईशके, भवसिंधु-सेतु समान है॥
वसुकर्मजेता मोक्षनेता, मदनतन अभिराम है।
भगवान बाहुबलीशको, नित शीश नाय प्रणाम है॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर कपूर सुगन्धयुत श्रीखण्ड संग घसाइये।
भवतापभंजन देव पदकी भव्य पूज रचाइये॥वसुकर्मजेता०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत अखंड सुधांशुकरसम धवल शुद्ध चुनायके।
अक्षय महापद हेतु चरचूं चरण नित गुण गायके॥वसुकर्म०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

अम्भोज चंपक मालती बेला गुलाब प्रसून ले।
पदपद्म पूजूं देवके, हैं मदन मद जिनने दले॥वसुकर्म०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिमिष्ट मोहन भोग मोदक घेवरादिक घृतसने।
पकवानसे भगवानको पूजूं क्षुधादिक जिम हने॥वसुकर्म०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लेकर जजूं कपूर घृत रत्नादिकी दीपावली।
जिनकी प्रभासे हो प्रगट गुणराशि आतमकी भली॥वसुकर्म०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरदारु अगर कपूर तगर सुगन्ध चंदनसे बनी।
दशदिशारंजन धूप दशविधि अग्र खेऊं पावनी।।वसुकर्म०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय दुष्टाष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम पिस्ता नारियल अंगूर कदली आम हैं।
शिव अमरफल हित चर्चते हम नाथ तव पदधाम हैं॥वसुकर्म०

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

गन्धाम्बु तन्दुल सुमन व्यंजन दीप धूप सुहावनी।
फल मधुर मिश्रित अर्घ ले, पूजूं तुम्हें त्रिभुवन धनी॥वसुकर्म०॥

ॐ ह्रीं भगवते श्रीबाहुबलिजिनाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा।

पोदनपुरमें स्वर्णकी, जजूं बिम्ब छविधाम।
पुष्प वृष्टि सुर जहं करें, केशरकी अविराम॥

ॐ ह्रीं श्रीपोदनपुरस्थबाहुबलिस्वामिप्रतिमायै, अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

भला विंध्यगिरि शिखर है, भले विराजे जेह।
चालिस हस्त सुशोभनो, खड्गासन है देह॥
अनुपम छवि जिनराजकी, देख लजे शशि सूर्य,
तातैं नहिं छाया पड़े, बन्दू यह माधुर्य॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रवणवेलगोला विंध्यगिरिस्थ बाहुबलिजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

गोमटगिरि वेणुरमें, जजूं नाय कर शीश।
पूजू आरा कारकल, और जहां हो ईश॥

ॐ ह्रीं श्रीगोम्मटगिरि, वेणुपुर, धनुपुरा (आरा) कारकल आदिविविधस्थानस्थश्रीबाहुबलिजिनप्रतिमायै अर्घं निर्वपामि।

नमूं शिखर कैलाश जिहिं, शेष कर्म करि शेष।
लोक शिखर चूड़ामणी, भये सिद्ध परमेश॥

ॐ ह्रीं श्रीकैलाशशिखरात् सिद्धिगताय श्रीबाहुबलिसिद्धाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा।

सवा पांचसौ धनुष तन, लतायुक्त अभिराम।
खड्गासन मरकत वरण, सुन्दर रूप ललाम॥

पद्धरी ।

जय बाहुबलीश्वर सुगुण धाम, चरणोंमें हो कोटिक प्रणाम।
तुम आदि ब्रह्मके सुत सुजान, था अंतरंगमें स्वाभिमान ॥
प्रण था वृषभेश्वरके सिवाय, यह मस्तक परको ना झुकाय।
षट् खण्ड भूमि भरतेश जीत, लौटे जब अवधपुरी पुनीत ॥
नहिं करै चक्र तब पुर प्रवश, भरतश्वरकी जय थी अशेष।
तुम पोदनेश बाहूबलीश, नहिं थे वशमें नहि नमो शीश ॥
इसपर ही युद्ध ठना महान, थी खड़ी सैन्य चतुरंग आन।
है भरत बाहु द्वय चरम अंग, इनका नहिं होगा अंग-भंग ॥
बहु सेनाका होगा सहार, कर उभयपक्ष मन्त्री विचार।
ठहराये निर्णय हित प्रबुद्ध, थिर दृष्टि मल्ल जल तीन युद्ध ॥
तीनो जीते तुम हे बलीश, तब क्रोधित हो वह चक्र ईश।
निज चक्र दिया तुमपर चलाय, कुल रीति नीति सबको भुलाय
पर चक्ररत्न तुम पास आय, फिरि गया सप्रदिक्षण शीश नाय
यह ज्येष्ठ भ्रातकी क्रिया देख, इस जगकी स्वार्थकता विलेख
तुम देव भये जगमे उदास, सब शिथिल किया भवमोह पाश
दे तनुज महाबलको स्वराज, सब सौंप उसे वैभव समाज ॥
कह भरतेश्वरसे बनो ज्येष्ठ, इस नश्वर भूके भूप श्रेष्ठ।
फिर यथाजात मुद्रा सु धार, कर क्रिया कर्मरिपुका सहार ॥

इक वर्ष खड़े थे एक थान, धर प्रतिमायोग अखण्ड ध्यान।
थे एक वर्ष तक निराहार, सर्वोत्कृष्ट तप महा धार॥
बाईस परीषह सहे घोर, तपते थे तप जिन अति महीर।
थे उगे लता तरु आस पास, चरननमें था अहिका निवास॥
थे तजे उग्र तपके प्रभाव, वनके सब जीव विरोध भाव।
अनुताप तुम्हें इक था महेश, पाये हैं मुझसे भरत क्लेश॥
भरतेश्वरसे सन्मान पाय, सन्ताप गया सत्वर नशाय।
तब भये केवली हे जिनेश, पूजन की आकर नर सुरेश॥
उपदेश दिया करुणा-अधार, भवि जीवोंको करके विहार।
कैलाश शिखरसे मुक्ति थान, पाया तुमने सब कर्म हान॥
जय गोमटेश बाहूबलीश, जय जय भुजबलि जय दोर्बलीश।
जय त्रिभुवन मोहन छवि अनूप, जय धर्मप्रकाशक ज्योतिरूप॥
जय मुनिजनभूषण धर्मसार, अकलंकरूप मोहि करहु पार।
जय मात सुनन्दाके सुनन्द, शिव राज्य देहु मोहि जगतबंद॥
है स्वर्णमयी प्रतिमाभिराम, पोदनपुरमें शतशः प्रणाम।
धनु सवापांचसौ हो जिनेन्द्र, जजते कुसुमांजलि ले सुरेन्द्र॥
प्रतिमा विंध्येश्वरको प्रधान, नित नमूं कारकलकी महान।
वणूर पुरीकी है ललाम, गोमटगिरिपतिको हो प्रणाम॥
आरामें रहे विराज नाथ, शतवार तुम्हें हम नमत माथ।
जितनी हो जहँ जहँ बिम्बसार, सबको मेरा हो नमस्कार॥

घत्ता ।

जय बाहुबलीश्वर महात्मधीश्वर, दयानिधीश्वर जगतारी ।
जय जय मदनेश्वर जितचक्रेश्वर, विंध्येश्वर भवभयहारी ॥

महार्घ ।

बाहुबलीके महापाद पद्मोंका, जो भवि नित्य जजें,
सर्वसंपदा पावे जगमें, ताके सब संताप भजैं ।
होकर 'वीर' बाहुबलि जैसा, 'धर्म' चक्रका कंत सजै,
कर्मबेड़ियां काट स्वपरकी, निश्चय शिवपुरराज रजें ॥

इति आशीर्वादः ।

आरती ।

(सौ० धर्मवतीजैन "ज्योति")

जिन, करूं आरती तेरी !
जय बाहुबली, जय गोमटेशके, चरण कमल केरी ॥
भक्ति प्रभू, अन्तस्तल भरके, तुम गुण गान हृदयमें धरके ।
रत्न-दीप करमें ले करके, करूं तिहारी फेरी ॥ जिन० ॥
सवा पांच सौ धनु तन दरशैं, नैन देख देखन फिर तरषैं ।
जय अनंग छवि जनमन हरषैं, हरित वर्ण हेरी ॥ जिन० ॥
मात सुनन्दाके तुम नंदन, करूं ऋषभसुत मैं अभिनंदन ।
अमर अमर होनेको वंदन, करते भक्ति घनेरी ॥ जिन० ॥

घृत सनेह कपूर सजाऊँ, जगमग, जगमग, दीप जगाऊँ।
खोई आतम निधि निज पाऊँ, नशे अघनिशा अंधेरी ॥जिन०॥
'ज्योति' रूप जय, धर्मईश जय, 'वीर' धीर जितचक्र ईश जय
जय भुजबलि जय दोर्बलांश जय, ध्याऊँ सांझ सवेरी। जिन०॥

श्रीकलिकुण्डपार्श्वनाथपूजा।

हूंकारं ब्रह्मरुद्रं स्वरपरिकलितं वज्ररेखाष्टभिन्नम्,
वज्रस्याग्रांतराले प्रणवमनुपमानाहतं संश्रयाणं।
वर्णान्ताद्यान्सपिंडान् हमभरघझसखान् वेष्टयेत्तद्वदंते,
वज्राणां यन्त्रमेतत् परकृतमशुभं दुष्टविद्यां विहन्ति ॥१॥
पिंडस्थान्पापनोदान् हभमरघझसखान् शांतियुक्तान्विदध्युः
शाकिन्यो यान्तु नाशं वरलकयहसैंस्तेनयुक्तैर्महोग्राः।
यन्त्रं श्रीखंडलिप्तं लिखतु शुचिवसाः कांस्यपात्रे सुमंत्री,
लेखिन्या दर्भजात्या निखिलजनहितं तस्य सौख्यं बिभर्ति
अर्कश्चन्द्रः कुजः सौम्यः गुरुः शुक्रः शनैश्चरः।
राहुः केतुः ग्रहाः शान्ति यान्ति यन्त्रस्थापने ॥३॥
सिद्धं विशुद्धं महिमानिवेशं, दुष्टारिमारि-ग्रहदोषनाशम्।
सर्वेषु योगेषु परं प्रधानं, संस्थापये श्रीकलिकुंडयंत्रम् ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथ धरणेन्द्र-पद्मावती-सेवित अतुलबलवीर्यपराक्रम सर्वविघ्नविनाशन अत्र

अवतर अवतर संवौषट आह्वानम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अष्टक

गंगापगातीर्थसुनीरपूरैः, शीतैः सुगन्धैर्घनसारमिश्रैः।
दुष्टापमर्गैकविनाशहेतुं, समर्चये श्रीकलिकुण्डयंत्रम्। १

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डश्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्रपद्मावती-सेवताय अतुल बलवीर्यपराक्रमाय सर्वविघ्नविनाशनाय ह्म्ल्व्र्यूं भ्म्ल्व्र्यूं म्म्ल्व्र्यूं रम्ल्व्र्यूं घ्म्ल्व्र्यूं भम्ल्व्र्यूं स्म्ल्व्र्यूं खम्ल्व्र्यूं जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निवपामीति स्वाहा।

श्रीचन्दनैर्गन्धविलुब्धभृङ्गैः, सर्वोत्तमैर्गन्धविलासयुक्तैः।
दुष्टोपसर्गैकविनाशहेतुं, समर्चय श्रीकलिकुण्डयन्त्रम्॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड श्रीपार्श्वनाथाय ····· चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रावदातैः सरलैः सुगन्धैरनिद्यपात्रे वरशालिपुञ्जैः।
दुष्टोपमर्गैकविनाशहेतुं, समर्चये श्रीकलिकुण्डयन्त्रम्॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डश्रीपार्श्वनाथाय······ अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मन्दारजातीनकुलादिकुन्दैः, सौरयभम्यैः शतपत्रपुष्पैः।
दुष्टापसर्गैकविनाशहेतुं, समर्चये श्रीकलिकुंडयन्त्रम्॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय······ पुष्पं निर्वपामीमि स्वाहा।

वाष्पायमाणैः घृतपूरपूरैः, नानाविधैः पात्रगतैरसाढ्यैः ।
दुष्टोपसर्गैकविनाशहेतुं, समर्चये श्रीकलिकुंडयन्त्रम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय ··· ·· नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

विश्वप्रकाशैः कनकावदातैर्दीपैः सुकर्पूरमयैर्विशालैः ।
दुष्टोपसर्गैकविनाशहेतुं, समर्चये श्रीकलिकुंडयन्त्रम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय ··· दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूरकृष्णागुरुचन्दनाद्यैः, धूपैः सुगन्धीकृतदिग्विभागैः ।
दुष्टोपसर्गैकविनाशहेतुं, समर्चये श्रीकलिकुण्डयन्त्रम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय······ धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

खर्जूरराजादलनालिकेरैः, पुङ्गीफलैर्मोचफलाभिसारैः ।
दुष्टोपसर्गैकविनाशहेतुं, समर्चये श्रीकलिकुंडयन्त्रम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय······ फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलगन्धाक्षतपुष्पैर्नैवेद्यैः, दीपधूपफलनिकरैः ।
श्रीकलिकुण्डाय वरं ददामि कुसुमांजलिं भक्त्या ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डश्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्रपद्मावतीसेविताय अतुलबलवीर्यपराक्रमाय सर्वविघ्नविनाशनाय ह्म्ल्व्र्यूं भ्म्ल्व्र्यूं म्म्ल्व्र्यूं र्म्ल्व्र्यूं घ्म्ल्व्र्यूं झ्म्ल्व्र्यूं स्म्ल्व्र्यूं ख्म्ल्व्र्यूं अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

वरसम्मत्तविहूसणई, भव्वयणहं जिणवर सुमिरणे ।
णासइ पाउ असेस लहु तम्रु जेम दिवायर विथरणे ॥१॥

सुदुद्धरअंजनपव्वयकाउ, दिसाकरि तासण मेह णिणाउ ।
सदप्पुव चिघुण देइ करिंदु, मणम्मि भरंतहं देउजिणदु ॥२॥

पणुत्त समुट्ठिउ दन्तिसमूह, महाबल लोल लुलाविय जोहु ।
सरोसु ण देइ कमं ण मइन्दु, मणम्मि० ॥३॥

तमालमहीरुह झंपडसीसु, दिणेसरसंणिहु लोयण भीसु ।
पसंणु हवेइ पिसाउ रउद्दु, मणम्मि० ॥४॥

वियंभियवेल णहंगणि बोलु, जलुब्भव जीव पयासिय रोलु ।
अथाहु वि गापयमित्तु समुद्दु, मणम्मि० ॥५॥

फुरंतफनामणिरुद्धदियंतु, तिलोयखयंकरु णाइं कयंतु ।
बलेवि ण डंकइ कूरु फणिंद, मणम्मि० ॥६॥

दुसंचर तीरणिपव्वयदुग्गि, असंख महीरुह भीसणमग्गि ।
कहिंपि ण लग्गइ तक्कर विंद, मणम्मि० ॥७॥

घिएणइ सित्तउ तिव्वु जलंतु, जगत्तउजालइणाइगिलिंतु ।
ससोसिही मुह वेइ जिमचन्दु, मणम्मि० ॥८॥

णिमीलियबंधवसज्जणचक्खु, अणेयपयार पयासिय दुक्खु ।
विहडइ संखलबंधु रउद्दु, मणम्मि० ॥९॥

मणोहरइन्दियमोक्खणिवार, भयंदरखलसिलेसमसार ।
पणासइ रोउ तहाजरविंदु, मणम्मि० ॥१०॥
दुलंघु रणप्पिणु पासहवूहु, ण मारि वि सक्कइ सत्तु समूहु ।
किवाणु वि होइ अलंअर बिंदु, मणम्मि० ॥११॥

घत्ता।

वरखग्गिं दुष्भायंतहं गारुडियहं फिट्टइ विसुजिह ।
भव्वयणहं णयणार्णदिजिणु सुमरंतहं उवसग्गुतिहं ॥१२

छंद।

कन्दर्पद्विपकुम्भदारुणहरिः कर्म्माद्रिभेदाशनिः,
मिथ्याज्ञानतमोविनाशतरणिः क्रोधादियत्तीश्वरः ।
अज्ञानद्रुमखंडनैकपरशुः मुक्तांगनावल्लभः,
श्रीमत्पार्श्वजिनेश्वरो भयहरो कुर्यात्सतां मंगलं ॥१२॥

जयमाला शार्दूल छंद।

प्रोद्यत्सन्मणिनागनायकफटाटोपोल्लसन्मण्डपम् ,
सद्भक्त्यानमदिन्द्रमलिमौणिभाभास्वत्पदाम्भोरुहम् ।
प्रोन्मीलन्नवनीरदालिपटलीशङ्कासमुत्पादकम् ,
ध्यायेत् श्रीकलिकुण्डदण्डविलसच्चंडोग्रपार्श्वप्रभुम् ॥

छन्द।

सुसिद्ध विशुद्ध विबोधनिधान, विकासितविश्व विवेकविधान ।
विडम्बितकाम जगज्जय चंड, सदा सदयोदय जय कलिकुण्ड

पयोधि-पयोधर-धीर-निनाद, निराकृत-दुर्मत-दुर्मदवाद ।
असत्यपथैकपतत्पविदंड, सदा सदयोदय जय कलिकुंड ॥२॥
निराकुल निर्मलशील निरीह, निराश निरंजन संयमसिंह ।
विपाटित-दुष्ट-मदद्विपगंड, सदा सदयोदय जय कलिकुंड ॥
कषाय चतुष्टय-काष्ठ-कुठार, निरामय नित्य नरामर-सार ।
विदीर्ण-घनाघन-विघ्न-करंड, सदा सदयोदय जय कलिकुंड ॥
अनल्प वितल्प विलीन-विकल्प, विशल्य विशूल विसप विदर्प
विरोग विभाग विखंड विमुंड, सदा सदयोदय जय कलिकुंड
फणीश नरेश सुरेश महेश, दिनेश शुभेश गणेश गुणेश ।
वितर्क विकासित-सत्कज-खंड, सदा सदयोदय जय कलिकुंड
विशोक विशंक विमुक्तकलंक, विकासित-विश्व विदूरित-पंक ।
कलामल केवल चिन्मयपिंड, सदा सदयोदय जय कलिकुंड
निकन्दितमोहमहीरुहकन्द, वरप्रद सत्पद सम्पदमन्द ।
त्रिदंड विखंडित माय-विहंड, सदा सदयोदय जय कलिकुंड

मालिनी छंद ।

कलिलदमनदक्षंयोगियोगोपलक्ष्यविकलकलिकुंडोद्दंडपार्श्वप्रचंडं
शिवसुखशुभसंपद्वासबल्लीवसंतं प्रतिदिनमहमीडेवर्द्धमानर्द्धिसिद्ध्यै

आशीर्वाद (स्रग्धरा छंद)

सर्पत्सर्पत्सदर्पोत्कटतरलतरोत्तारफुत्कारवेला,
संघट्टोत्पन्नवाताहतशठकमठोद्भूतजीमूतजातः ।

खेलत्स्वर्गापगांतर्जलधितललसल्लोलडिंडीरपिंड-
ञ्याजाच्छ्रीपार्श्वराजोज्ज्वलविजययशो राजहंसोऽवताद्वः

अथ आनन्द स्तवन छंद ।

प्रणम्य देवेन्द्रनुतं जिनेन्द्रं सर्वज्ञमत्र प्रतिबोधसंज्ञं,
स्तोष्ये सदाहं कलिकुण्डयन्त्रं सर्वाङ्गविघ्नौघविनाशदक्षम् । १॥
नित्यं स्मरंतोपि हृ्ंयेपि भक्त्या शक्त्या स्तुवंतोपि जपन्सुमंत्रं,
पूजां प्रकुर्वन् हृदये दधानाः स चेप्सितं यच्छति यन्त्रराजः ॥२
गृहांगणे कल्पतरुः प्रसृतश्चिंतामणिस्तस्य करे लुलोठ ।
गौस्तस्य तुल्यास्ति च कामधेनोर्यस्यास्ति भक्तिः कलिकुंडयंत्रे॥
नमामि नित्यं कलिकुण्डयन्त्रं सदा पवित्रं कृतरत्नपात्रम् ।
रत्नत्रयाराधनभावलभ्यं सुरासुरैर्वंदितमाद्यमीड्यम् ॥ ४ ॥
सिंहेभसर्पाग्निजलाब्धिचौरविषादयोऽन्ये च सदापि विघ्नाः ।
व्याध्यादयो राजकुलोद्भवं भयं नश्यंत्यवश्यं कलिकुंडपूजया
दुःखादिबंधं निगडं निदानं त्रुट्यन्ति शीघ्रं प्रजपन्सुमन्त्रम् ।
ज्वरातिसारग्रहणीविकाराः प्रयांति नाशं कलिकुंडपूजया ॥६॥
वंध्यापि नारी बहुपुत्रयुक्ता संसारसक्ता प्रियचित्तरक्ता ।
यस्यास्यि चित्ते कलिकुण्डचिंता नमाम्यहं तं सततं त्रिकालम्॥
अनर्थसर्वप्रतिघातदक्षं सौख्यं यशः शान्तिकपौष्टिकाख्यम् ।
नमाम्यहं तं कलिकुण्डयन्त्रं विनिर्मितं यज्जिनराजवाक्यात् ॥८॥

मालिनी छंद ।

भुवनमिदमनिंद्यं देवराजाभिवंद्यं,
पठति च वरभक्त्या सर्वदा योपि शांत्यै ।
सकलसुखमनल्पं कल्पयावत्प्रपेदे,
विनिहतविषविघ्नं यंत्रराजप्रसादात् ॥ ६ ॥

जाप्य मन्त्र १

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड श्रीपार्श्वनाथ धरणेन्द्रपद्मावतीसेवित अतुलबलवीर्यपराक्रम ममात्मविद्यां रक्ष रक्ष परविद्यां छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि स्फ्रां स्फ्रीं स्फ्रूं स्फ्रौं स्फ्रः हूँ फट् स्वाहा ॥ १ ॥

द्वितीय मन्त्र २

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीपार्श्वनाथ धरणेन्द्रपद्मावतीसेवित ममेप्सितं कार्यं कुरु कुरु स्वाहा ॥ २ ॥

तृतीय मन्त्र

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डस्वामिन्नतुलबलवीर्यपराक्रम ममात्मविद्यां रक्ष रक्ष परविद्यां छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि स्फ्रां स्फ्रीं स्फ्रूं स्फ्रौं स्फ्रः हूँ फट् स्वाहा ॥ ३ ॥

मंत्रस्तोत्रम्

श्रीमद्देवेन्द्रवंद्यामल-मणि-मुकुट-ज्योतिषाश्चक्रवाड-
व्यालीढं पादपीठं शठ-कमठ-कृतोपद्रवाबाधितस्य ।
लोकाऽलोकावभासि-स्फुरदुरुविमल-ज्ञान सद्दीप्रदीप,
प्रध्वस्तध्वान्तजालस्य वितरतु सुखं पार्श्वनाथस्य नित्यं ॥१॥

हां हीं हूं हौं हः प्रभास्वन्मरकत-मणिभाऽऽक्रान्त-मूर्तिर्हि वं मं
वं सं तं बीजमन्त्रैः कृतसकलजगत् क्षेम-रक्षोरु-रक्षः ।
क्षां क्षीं क्षूं क्षौं समस्त-क्षिति-तल-महित-ज्योतिरुद्योतितार्थं,
क्षें क्षों क्षौं क्षः क्षीं बीजात्मक-सकल-तनोःपार्श्वनाथस्य नित्यम्

हींकारं रेफयुक्तं रर रर रर रां देव सं संयुतं हीं,
क्लीं क्लूं द्रां द्रीं सुरेभं भयदमलकुला पंचकोद्भाषि हूं हूं ।
द्रं द्रमत्युष्णावर्णैरखिलमिह जगन्मे विधेद्ध्याशु वश्यं,
वा वं मंत्रं पठंतं त्रिजगदधिपते ! पार्श्व ! मां रक्ष नित्यं ॥३॥

ओं क्रौं हीं सर्ववश्यं कुरु कुरु सरसं क्रामणं तिष्ठ मक्षूं,
हैं हैं हैं रक्ष रक्ष प्रभलभलमहाभैरवातिप्रभीतेः ।
क्रीं द्रीं ब्रूं द्रावय द्रावय हन हन फट् फट् वषट् भिन्धि भिन्धि,
स्वाहा मंत्रं पठंतं त्रिजपदधिपते ! पार्श्व ! मां रक्ष नित्यम् ॥४॥

हं जं ज्वीं च्वीं च हं सः कुवलयकलितैः रंजितांगप्रसूनैः,
जं वं ह्वः पक्षि हं हं हर हर हर हंतं पक्षिपः पक्षिकोपम् ।
वं जं हं सः प वं जं सर सर सर सूं स स्वधाबीजमंत्रैः,
स्त्रायस्व स्थावरादि—प्रबल-विष-सुसंहारिम्मदः पार्श्वनाथः ॥

क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः एतैरहिपति-रतमंत्राक्षरैरीश नित्यं,
हा हा कारोग्रनादैर्ज्वलदनलशिखाकल्पदीर्घोर्ध्वकेशैः ।
पिंगाक्षैः लोलजिह्वैर्विषम-विषधराऽलंकृतैस्तीक्ष्णदंष्ट्रैः,
भूतैः प्रेतैः पिशाचैरमलकृतमहोपद्रवाद्रक्ष रक्ष ॥ ६ ॥

ओं ओं ल: शाकिनानां सपदि हरवद' छिंद भिद्द द्रवं च,
ग्मौं क्ष्मं क्षं क्ष्व्यदीर्घागतिमतिकथितस्तंभनं त्वं विधेहि ।
फट् फट् फट् सर्वरोगग्रहमरणभयोच्चाटनं चैव पार्श्व,
त्रायस्वाशेषदोषादमरनरवनैर्नूतपादारविन्दः ॥ ७ ॥
इत्थं मंत्राक्षरोत्थं वचनमनुपमं पार्श्वनाथस्य नित्यम्,
विद्वेषोच्चाटनस्तंभनवशकृतः पापरोगापहेति ।
प्रोत्सर्पज्जंगमस्थावरविषम-विषध्वं वनं स्वासुरारो-
ग्यैश्वर्यापादभक्त्या स्मरति पठति यो स्तौति तस्येष्टसिद्धिं ॥८॥

श्रीकलिकुण्डपार्श्वनाथपूजाभाषा ।

(मंगल पाठ)

मंगलमूर्ती परमपद, पंच धरो नित ध्यान ।
हरो अमंगल विश्वका, मंगलमय भगवान ॥ १ ॥
मंगल जिनवरपद नमो, मंगल अर्हत देव ।
मंगलकारी सिद्धपद, सो बन्दों स्वयमेव ॥२॥
मंगल श्रीआचार्य मुनि, मंगल गुरु उवझाय ।
सर्वसाधु मंगल करो, बन्दों मन वच काय ॥३॥
मंगल सरस्वति मातका, मंगल जिनवरधर्म ।
मंगलमय मंगल करो, हरो असाता कर्म ॥४॥

याविधि मंगल द्वार से, जगमें मंगल होत।
मंगल नाथूराम यह, भवसागर दृढ पोत ॥४॥

अडिल्ल छंद।

ह्ूंकार अक्षरात्मक देव जो ध्यावते,
देव मनुष पशुकृत सो व्याधि नशावते।
कांसी तांबेपत्र पै शुद्ध लिखावते,
केशर चन्दन ता पर मन्त्र रचावते॥

दोहा।

ऐसे अनुपम यंत्रको, मन वच काय सहार।
जे भवि पूजें प्रीति धर, हों भवदधिसे पार॥

(यन्त्र स्थापना) चाल जोगीरासा।

है महिमाको थान शुद्धवर, यंत्र कलीकुण्ड जानो,
डांकिन शांकिन अगनि चोर भय, नाशत सब दुख खानो।
नव ग्रहका सब दुःख विनाश, रवि शनि आदि पिछानो,
तिसका मैं स्थापन करहूं, त्रिविध योग कर लानो॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्ह कलिकुण्डदण्ड श्रीपार्श्वनाथ धरणेन्द्रपद्मावतीसेवित अतुलबलवीर्यपराक्रम सर्वविघ्नविनाशक अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अष्टक

छंद त्रिभंगी।

गंगाको नीरं अति ही शीरं गन्ध गहीरं मेल सही,
भर कंचनझारी आनंद धारी धार करो मन प्रीति लही।
कलिकुण्ड सु यन्त्रं पढ़ कर मंत्रं ध्यावत जे भविजन ज्ञानी,
सब विपति विनाशै, सुख परकाशै होवै मंगल सुखदानी॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डश्रीपार्श्वनाथाय धरणेंद्र-पद्मावती-सेविताय अतुल-बलवीर्यपराक्रमाय सर्वविघ्नविनाशनाय ह्म्ल्व्र्यूं भ्म्ल्व्र्यूं म्म्ल्व्र्यूं रम्ल्व्र्यूं घ्म्ल्व्र्यूं झ्म्ल्व्र्यूं स्म्ल्व्र्यूं ख्म्ल्व्र्यूं जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीरोदधि नन्दन मलयाचन्दन केशर औ कर्पूर घसो।
भर सुवरणकलशा मन अतिहुलसा भय वा तापका दुःख नशो॥
कलिकुण्ड सु०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय.......
चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि सम उजियारो तंदुल प्यारो अखि इक सारो जुग लेवो।
हो गंध मनोहर रतन थार भर पुञ्ज सुकर मद तज देवो॥
कलिकुण्ड सु०॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डश्रीपार्श्वनाथाय......
अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बहु फूल सु वासं मधुकरराशं करके आसं आवत है।
सुरतरुके लावो पुण्य बढ़ावो काम व्यथा नश जावत है॥
कलिकुण्ड सु० ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय……
पुष्पं निर्वपामीमि स्वाहा।

पकवान बनाये बहु घृत लाये खांड पगाये मिष्ट करे ।
मन आनन्द धारें मन्त्र उचारें क्षुधा रोग तत्काल टरे॥
कलिकुण्ड सु० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय……
नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रतनन की जोतं अति उद्योतं तम क्षय होतं ज्ञान बढ़े ।
अति ही सुख पावै पाप नशावै जो मन लावै पाठ पढ़े॥
कलिकुण्ड सु० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय……
दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन कर्पूरं अगर सुचूरं लौंगादिक दश गंध मिला।
वरधूप बनाकर अगनिमांहि धर दुष्टकर्म तत्काल जला॥
कलिकुण्ड सु० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय……
धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

खजूर मंगावो श्रीफल लावो दाख अनार बदाम खरे।
पूंगीफल प्यारे मन सुखकारे अन्तराय विधि दूर करे॥
कलिकुण्ड सु० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्ड-श्रीपार्श्वनाथाय·······
फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध सुधारा तंदुल प्यारा पुष्प चरू ले दीप भली।
दश धूप सुरंगी फल लेय अभंगी करों अर्घ उर हर्ष रलो॥
कलिकुण्ड सु० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डश्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्रपद्मावतीसेवित्ताय अतुलबलवीर्यपराक्रमाय सर्वविघ्नविनाशनाय ह्म्ल्व्र्यूं झ्म्ल्व्र्यूं म्म्ल्व्र्यूं रम्ल्व्र्यूं क्म्ल्व्र्यूं भ्म्ल्व्र्यूं स्म्ल्व्र्यूं ख्म्ल्व्र्यूं अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

सर्वज्ञ परम गुणसागर हैं, तिन पद के हरि सब चाकर हैं।
सब विघ्नविनाशक सुखकर हैं, कलिकुण्डसुयंत्र नमूं वर हैं॥
नित ध्यान करैं जन मन ला, वर पूज रचै कर यंत्र भला।
सब विघ्न० ॥ २ ॥

तिन के घर ऋद्धि अनेक भरैं, मनवांछित कारज सर्व सरैं।
सब विघ्न० ॥ ३ ॥

सुरवन्दित हैं तिन के चरणं, उर धर्म बढे अघ को हरणं।
सब विघ्न० ॥ ४ ॥

भय चोर अगनि जल सांप मही, सब व्याधि नशैं छिनमें जु सही
सब विघ्न० ॥ ५ ॥

सब बन्ध खुलै छिन मांहि लखो, अरि मित्र होंय गुरु सांच अखो
सब विघ्न० ॥ ६ ॥

अतिसार संग्रहनी रोग नसैं, बंध्या नारी लह पुत्र हसैं।
सब विघ्न० ॥ ७ ॥

सब दूर अमंगल होय जान, सुख संपत दिन दिन बढ़त मान
सब विघ्न० ॥ ८ ॥

इस यंत्र की जे पूजा करंत, सुर नर सुख लह हों मुकति-कंत
सब विघ्नविनाशक सुखकर है, कलिकुंडसुयंत्र नमूं वर हैं ॥९

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डश्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्रपद्मावतिसेविताय अतुलबलवीर्यपराक्रमाय सर्वविघ्न-विनाशकाय महार्घं निर्वा० ॥

जाप्य मन्त्र ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्रपद्मावती-सेविताय ममेप्सितं कार्यं कुरु कुरु स्वाहा ॥

जयमाला

गीता छंद

नागेन्द्र प्रभु के चरण नमते मुकुटप्रभा महा बढ़ी,
बढ़ी पुण्य अपार सब दुख-क्षार अघ प्रकृती घटी

ध्याये श्री कलिकुण्ड दण्ड प्रचण्ड पारसनाथ जी।
तिनकी सुनो जयमाल भविजन कहूं नवाके माथ जी ॥१॥

त्रोटक छंद।

विधि घाति हनो वर ज्ञान लहो, सबही पदार्थ को भेद कहो।
नित यंत्र नमूं कलिकुण्ड सार, सब विघ्न विनाशन सुखकार
कुमती वसु मान विनाशत है, मुकती का मारग भासत है।
नित यंत्र० ॥ ३ ॥

दुर्गति मारग का नाश करें, एकांत मिथ्यात विवाद हरें।
नित यंत्र० ॥ ४ ॥

निराकुल निर्मल शील धरें, निर्मल मुक्ति-लक्ष्मी को वरें।
नित यंत्र० ॥ ५ ॥

नहि क्रोध मान छल लोभ पाप, अष्टादश दोष विमुक्त आप।
नित यंत्र० ॥ ६ ॥

है अजर अमर गुण के भंडार, सब विघ्न विनाशक परमसार।
नित यंत्र० ॥ ७ ॥

नागेन्द्र नरेन्द्र सुरेंद्र आय, नमि हैं आंनदित चित्त लाय।
नित यंत्र० ॥ ८ ॥

दिनेन्द्र मुनेंद्र निशेन्द्र आय, पूजत नित मन में हर्ष धार
नित यंत्र० ॥ ६ ॥

घत्ता छंद।

· सब पापनिवारण, संकटटारण, कलिकुण्ड पारस परचंड।
जग में यश पावै सपति आवै, लहै मुकति जो सुख है अखंड।
प्रतिदिन जो बन्दै मन आनन्दै हों बलवन्त पाप सब दूर,
विघ्न विनाश लहै सुख संपति दुष्ट कर्म होवैं चकचूर।

श्री पारस स्वामी अन्तर्यामी, ध्यान लगायो वन मांही,
चर कमठ जु आया क्रोध बढ़ायो पीड़ा कीनी अधिकाई।
जिन मेरु समाना अचल महाना लख नागेन्द्र ने पूजा कियो।
फण मंडप कीनो सुरबल हीनो है प्रभु को निज शीस नयो

महा अर्घ।

सोरठा।

पूजन ये सुखकार, जे भवि करि हैं प्रीतिधर।
विधि बलवंत अपार हन कर शिव सुख को लहैं॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(इस पूजा की नीचे लिखी तीन जाप हैं)

जाप मंत्र १

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डश्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्र-पद्मावतीसहिताय अतुलबलवीर्यपराक्रमाय ममात्मविद्यां, रक्ष रक्ष परविद्यां छिंद छिंद भिंद भिन्द स्फां स्फीं स्फूं स्फौं स्फः हूं फट् स्वाहा॥ १॥

जाप मंत्र २

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्रपद्मावती-सहिताय ममेप्सितं कार्यं कुरु कुरु स्वाहा ॥ २ ॥

जाप मंत्र ३

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डस्वामिन्नतुलबलवीर्य-पराक्रमाय ममात्मविद्या रक्ष रक्ष परविद्या छिंद छिंद भिंद भिंद स्फ्रॉं रँम्फ्रीं स्फ्रूँ रँम्फ्रौं स्फ्र ह्रूं फट् स्वाहा ॥ ३ ॥

नवग्रह अरिष्टनिवारक विधान

प्रणम्याद्यन्ततीर्थेशं, धर्मतीर्थप्रवर्तकं,
भव्यविघ्नोपशांत्यर्थं, ग्रहार्च्चा वर्ण्यते मया ।
मार्तण्डेन्दुकुजसौम्य-सूरसूर्यकृतांतकाः,
राहुश्च केतुसंयुक्ता, ग्रहाः शांतिकरा नव ॥

दोहा ।

आदि अन्त जिनवर नमो, धर्म प्रकाशनहार ।
भव्य विघ्न उपशांतिको, ग्रहपूजा चित धार ॥
काल दोष परभावसो, विकलप छूटे नाहिं ।
जिन-पूजामें ग्रहनकी, पूजा मिथ्या नाहि ॥
इस ही जम्बूद्वीपमें, रवि-शशि मिथुन प्रमान ।
ग्रह नक्षत्र तारा सहित, ज्योतिष चक्र प्रमान ॥

तिनहीके अनुसार सों, कर्म-चक्रकी चाल ।
सुख दुख जानै जीवको, जिन-वच नेत्रविशाल ॥
ज्ञान प्रश्न-व्याकरणमें, प्रश्न-अंग है आठ ।
भद्रबाहु मुख जनित जो, सुनत कियो सुख पाठ ॥
अवधि धार मुनिराजजी कहे पूर्वकृत कर्म ।
उनके वच अनुसार सौं, हरे हृदय को मर्म ॥

समुच्चय पूजा ।

दोहा ।

अर्क चन्द्र कुज सोम गुरु, शुक्र शनिश्चर राहु ।
केतु ग्रहारिष्ट नाशने, श्री जिन-पूज रचाहु ॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारका श्रीचतुर्विंशतिजिना अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वानं, अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधीकरणं ।

गीता छन्द ।

क्षीरसिंधु समान उज्जल, नीर निर्मल लीजिये ।
चौबीस श्रीजिनराज आगे, धार त्रय शुभ दीजिये ॥
रवि सोम भूमिज सौम्य गुरु कवि, शनितमो पुतकेतवे ।
पूजिये चौबीस जिन, ग्रहारिष्ट-नाशन हेतवे ॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पंचकल्याणकप्राप्तेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखण्ड कुमकुम हिम सुमिश्रित, घिसौ मनकरि चावसौं ।
चौवीस श्री जिनराजअघहर, चरण चरचो भावसौं ॥ रवि०

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्य. पंच-कल्याणकप्राप्तेभ्यो चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षत अखंडित सालि तंदुल, पुञ्ज मुक्ताफल समं ।
चौबीस श्रीजिनचरण पूजन, नाम ह्वै नवग्रह भ्रमं ॥रवि०॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्य पंचकल्याणकप्राप्तेभ्य अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

कुंद कमल गुलाब केतकि, मालती जाही जुही ।
कामबाण विनाश कारण, पूजि जिनमाला गुही ॥रवि०॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्य पंचकल्याणकप्राप्तेभ्य पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

फैनी सुहारी पुवा पापर, लेय मोदक घेवरं ।
शतछिद्र आदिक विविध विंजन, क्षुधाहर बहुसुखकरं ॥रवि०॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्य. पचकल्याणकप्राप्तेभ्यो नैवद्य निवपामीति स्वाहा ।

मणिदीप जगमग जोति तमहर, प्रभू आगे लाइये ।
अज्ञाननाशक जिनप्रकाशक, मोहतिमिर नशाइये ॥रवि०॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्यः पंचकल्याणकप्राप्तेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृष्णा अगर घनसारमिश्रित, लोंग चन्दन लेइये ।
ग्रहरिष्ट नाशन हेत भविजन, धूप जिनपद खइये ।।रवि०।।

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्यः पंचकल्याणकप्राप्तेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बादाम पिस्ता सेव श्रीफल, मोच नीबू सदफलं ।
चौबीस श्रीजिनराज पूजत, मनोवांछित शुभ फलं ।।रवि०।।

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्यः पंचकल्याणकप्राप्तेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंध सुमन अखण्ड तन्दुल, चरु सुदीप सुधूपकं ।
फल द्रव्य दूध दही सुमिश्रित, अर्घ देय अनूपकं ।।रवि०।।

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्यः पंचकल्याणकप्राप्तेभ्यः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा ।

श्रीजिनवर पूजा किये, ग्रह अरिष्ट मिट जांय ।
पंच ज्योतिषी देव सब, मिल सेवें प्रभु पांय ।।

पद्धरी छंद ।

जय २ जिन आदिमहन्त देव, जय अजित जिनेश्वर करहुं सेव
जय २ संभव संभव निवार, जय २ अभिनन्दन अमत तार ।।

जय सुमति सुमति दायक विशेष, जय पद्मप्रभ लख पद्म लेष
जय २ सुपार्श्व हर कर्म फास, जय जय चंद्रप्रभ सुख निवास ॥
जय पुष्पदन्त कर कर्म अंत, जय शीतल जिन शीतल करन्त
जय श्रेय करन श्रेयान्स देव, जय वासुपूज्य पूजत सुमेव ॥
जय विमल विमल कर जगतजीव, जय २ अनंत सुख अतिसदीव
जय धर्मधुरन्धर धर्मनाथ, जय शांति जिनेश्वर मुक्ति साथ ॥
जय कुंथुनाथ शिव-सुख निधान, जय अरह जिनेश्वर मुक्तिखान
जय मल्लिनाथ पद पद्म भास, जय मुनिसुव्रत सुव्रत प्रकाश ॥
जय जय नमिदेव दयाल सन्त, जय नेमिनाथ तसुगुण अनन्त।
जय पारश प्रभु संकट निवार, जय वर्द्धमान आनन्दकार ॥
नवग्रह अरिष्ट जब होय आय, तब पूजै श्रीजिनदेव पाय।
मन वच तन मन सुखसिंधु होय, ग्रहशांत रीति यह कही जोय ॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्यः पंचकल्याणकप्राप्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसौं जिनदेव प्रभु, ग्रह सम्बन्ध विचार।
पुनि पूजों प्रत्येक तुम, जो पाऊं सुख सार ॥

इत्याशीर्वादः।

सर्वग्रह शान्ति मन्त्रका जाप।

ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वशान्ति कुरु कुरु स्वाहा।
(प्रातः इस मन्त्रकी माला फेरनेसे सर्वग्रहोंकी शान्ति होती है।)

(प्रत्येक पूजा)

सूर्यग्रह अरिष्टनिवारक श्रीपद्मप्रभपूजा

सोरठा

पूजों पद्म जिनेंद्र, गोचर लग्न विषै यदा।
सूर्य करैं दुखदंद, सुख होवे सब जीव को ॥

अडिल्ल।

पंच कल्याणक सहित, ज्ञान पंचम लसै,
समोसरन सुख साध, मुक्तिमांही बसै।
आह्वानन कर तिष्ठ, सन्निधी कीजिये,
सूरज ग्रह हो शांत, जगतसुख लीजिये ॥

ॐ ह्रीं सर्यग्रहारिष्टनिवारक श्रीपद्मप्रभजिन अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानं) अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट् सन्निधीकरणं।

परिपुष्पांजलिंक्षिपेत्।

अष्टक।

छन्द त्रिभंगी।

सोने की झारी सब सुखकारी, क्षीरोदधि जल भर लीजे।
भव ताप मिटाई तृषा नसाई, धारा जिन चरनन दीजे ॥
पदूम प्रभ स्वामी शिवमग-गामी, भविक मोर सुन कूजत हैं।
दिनकर दुख जाई पाप नसाई, सब सुखदाई पूजत हैं ॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलियागिरि चन्दन दाहनिकंदन, जिनपद वंदन सुखदाई।
कुमकुम जुत लीजे, अरचन कीजे, ताप हरीजे दुख जाई॥
पद्मप्रभ स्वामी०॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्दुल गुण मंडित सुर भत्रि मंडित, पूजत पंडित हितकारी।
अक्षय पद पावो अक्षत चढ़ावो, गावो गुण शिव सुखकारी॥
पद्मप्रभ स्वामी०॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मचकुन्द मंगाके कमल चढ़ाके, बकुल बेल दृग चितहारी।
मन्दिर ले आवो मदन नसावो, शिव सुख पावो हितकारी॥
पद्मप्रभ स्वामी०॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

गौ घृत ले धरिये, खाजे करिये, भरिये हाटकमय थारी।
व्यंजन बहु लीजे, पूजा कीजे, दोष क्षुधादिक अपहारी॥
पद्मप्रभ स्वामी०॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मणिदीपक लीजे घीव भरीजे, कीजे घनसारक वाती ।
जग जोति जगावे जगमग जगमग, मोहतिमिरकी है घाती ॥
पद्मप्रभ स्वामी० ॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कालागुरु धूपं अधिक अनूपं, निर्मलरूपं घनसारं ।
खेवो प्रभु आगे पातक भागे, जागे सुख, दुख सब हरनं ॥
पद्मप्रभ स्वामी० ॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल ले आवो सेव चढ़ावो, अन्य अमरफल अविकारं ।
वांछितफल पावो जिनगुण गावो, दुख दरिद्र वसु कर्महरं ॥
पद्मप्रभ स्वामी० ॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल चन्दन लाया सुमन सुहाया, तन्दुल मुक्तासम कहिये ।
चरु दीपक लीजे धूप सुखीजे, फल लै वसु कर्मन दहिये ॥
पद्मप्रभ स्वामी० ॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल।

सलिल गंध ले फूल सुगंधित लीजिये,
तन्दुल ले चरु दीप धूप खेवीजिये।
कमल-मोदको दोष तुरत ही धूजिये,
पद्मप्रभ जिनराज सुमन्मुख हूजिये॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

जय जय सुखकारी, सबदुखहारी, मारी-रोगादिक हरनं,
इत्यादिक आवे, प्रभुगुण गावे, मंदरगिरि मज्जनकरणं।
इत्यादिक साजै, दुन्दुभि बाजै, तीन लोक सेवत चरणं,
पद्मप्रभ पूजक, पातक धूजत, भव भव भव मांगत शरणं॥

पद्धरी छंद।

जय पद्मप्रभ-पूजा कराय, सूरज ग्रह दूषण तुरत जाय।
नौ योजन समवसरन बखान, घण्टा झालर सोहत वितान॥
शतइन्द्र नमत सिस चरन आय, दशशत गणधर शोभा बताय
वाणी घनघोर सु घंटा जोर, घन शब्द सुनत भवि नचै मोर॥

भामण्डल आभा लसत भूर, चन्द्रादिक कोटिक लाजु धर ।
तरु लसत अशोक महा उतंग, सब जीवन शोक हरै अभंग ॥
सुर सुमनादिक वर्षा कराय, चौसाठ चँवर प्रभु पर ढराय ।
सिंहासन तीन त्रिलोक ईश, त्रय छत्र फिरैं नग जड़त शीस ॥
मन भई आवत मकन्दर मार, त्रय धूलिसार सुन्दर अपार ।
कल्याणक पांचों सुखनिधान, पंचमगति दाता हैं सुजान ॥
साढ़े बारा कोड़ी जु सार, बाजे जिस भेद बाजें अपार ।
धरणेंद्रनरेन्द्रसुरेन्द्र ईश, त्रयलोक नमत करधरि अधीश ॥
सुर मुक्ति रमा-वर नमत आप, दोऊ हाथ जोड़कर बारबार
याके पद नमत आनन्द होय, दुति आगे दिनकर छिपै जोय
मन शुद्ध समुद्र हृदय विचार, सुखदाता सब जनको अपार
मन वच तन कर पूजा निहार, कीजे सुखदायक जगतसार

ॐ ह्रीं श्रीसूर्यमहारिष्टनिवारकश्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

घत्ता छन्द ।

सब जन हितकारी, सुख अति भारी, मारा रागादिक हरणं
पापादिक टारैं, ग्रह निरवारैं, भव्य जीव सब सुख करणं ॥

इति आशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

सर्वग्रह निवारण जाप

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः

चंद्र अरिष्टनिवारक श्रीचंद्रप्रभ पूजा।

सोरठा

निशपति पीड़ा ठान, गोचर लग्न विषै परे।
वसु विधि चतुर सुजान, चन्द्रप्रभ पूजा करे॥

अडिल्ल छंद।

चंद्रपुरीके बीच चन्द्रप्रभ अवतरे,
लक्षण मोहे चन्द्र सबनके मन हरे।
भव्य जीव सुखकाज द्रव्य ले धरत हैं,
सोम दोषके हेत थापना करत हैं।

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्टनिवारक श्रीचन्द्रप्रभजिन अत्र अवतर २ संवौषट् आह्वानं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं, परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अष्टक।

कंचन झारी रतन जड़ात, क्षीरोदक भरि जिनहि चढ़ात।
जगत गुरु हो, जय जय नाथ जगत गुरु हो॥
चन्द्रप्रभ पूजौं मन लाय, सोम दोष तातैं मिट जाय।
जगत गुरु हो, जय जय नाथ जगत गुरु हो॥

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्टनिवारकश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलियागिर केशर घनसार, चरचत जिन भवताप निवार। जगत०

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्टनिवारकश्रीचन्द्रप्रभजिन्द्राय पंचकल्याणक-प्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

खण्डरहित अक्षत शशिरूप, पुञ्ज चढाय होय शिवभूप, । जगत०

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्टनिवारक श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणक-प्राप्ताय चदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल कुन्द कमलिनी अभंग, कल्पतरु जस हरे अभङ्ग। जगत०

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्टनिवारकश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणक-प्राप्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवर बावर मोदक लेउ, दोष क्षुधाहर थार भरेउ ॥जगत०॥

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्टनिवारकश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणक-प्राप्ताय नैवेद्य' निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमयदीपक घृत जु भरेउ, बाती बरत तिमिर जु हरेउ। जगत०

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्टनिवारकश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणक-प्राप्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कालागुरुकी कनी खिवाय, वसुविधि कर्मजु तुरत नसाय। जग०

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्टनिवारक श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणक प्राप्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल आदि सदा फल लेउ, मोचमोचअमृतफल देउ। जगत०

ॐ ह्रीं चंद्रारिष्टनिवारकश्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याण-कप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गन्ध पुष्प शालि नैवेद्य, दीप धूप फल लैं अनिवेद्य ।
जगत गुरु हो, जय जय नाथ जगत गुरु हो ॥
चन्द्रप्रभ पूजौ मन लाय, सोम दोष तातैं मिट जाय ।
जगत गुरु हो, जय जय नाथ जगत गुरु हो ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रारिष्टनिवारकश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल छंद ।

जल चन्दन बहु फल सु तंदुल लीजिये,
दुग्ध शर्करा सहित सु विंजन कीजिये ।
दीप धूप फल अर्घ बटाय धरीजिये,
पूजों सोम जिनेन्द्र सुदुःख हरीजिये ।

ॐ ह्रीं चंद्रारिष्टनिवारकश्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

चन्द्रप्रभचरणं, सब सुख भरणं, करणं आतमहित अतुलं
दर्दंजु हरणं, भव जलतरणं, मरनहनं शुभकर विपुलं ॥

त्रोटक छंद ।

भव्य-मन हृदय मिथ्यात-तम नाशकं ।
केवलज्ञान जग-सूर्य-प्रतिभासकं ॥

चंद्रप्रभचरण मनहरण सब सुखकरं ।
शाकिनी भूत ग्रह रोग सब दुखहरं ॥
वर्धनं चन्द्रमा धर्म जलनिधि महा ।
जगत सुखकारशिव-मार्ग प्रभुने गहा ॥ चन्द्रप्रभ० ॥
ज्ञान गंभीर अतिधीर वरवीर हैं ।
तीन लोक सब जगतके मीर हैं ॥ चन्द्रप्रभ० ॥
विकट कंदर्पको दर्प छिनमें हरा ।
कर्म वसु पाय सब आप ही तें झरा ॥ चन्द्रप्रभ०
सामपुर नगरमें जन्म प्रभुने लहा ।
क्रोध छल लोभ मद मान माया दहा ॥ चन्द्रप्रभ०
देह जिनराजकी अधिक शोभा धरे ।
स्फटिकमणि कांति तांहि देख लज्जा करे ॥चन्द्रप्रभ०॥
आठ अरु एक हज्जार लक्षण महा ।
दाहिने चरणको निशपति गह रहा ॥ चन्द्रप्रभ० ॥
कहत मनसुख श्रीचन्द्रप्रभ पूजिये ।
रोग दुख नाशके जगत भय धूजिये ॥
चन्द्रप्रभचरण मनहरण सबसुखकरं।
शाकिनी भूत ग्रह रोग सब दुखहरं ॥

ॐ ह्रीं चन्द्रारिष्टनिवारकश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय [illegible]-प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा ।

पाप तापके नाशको, धर्मामृत रसकूप ।
चंद्रप्रभ जिन पूजिये, होय जो आनंद भूप ॥

इति आशीर्वादः ।

(चन्द्रग्रह निवारणका जाप)

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः ।

मंगल अरिष्टनिवारक श्रीवासुपूज्यकी पूजा ।

दोहा ।

वासुपूज्यजिन चरणयुग, भूसुत दोष पलाय ।
तातें भवि पूजा करो, मनमें अति हरषाय ॥

अडिल्ल छंद ।

वासुपूज्यके जन्म समय हरषायके,
आये गज ले साज इन्द्र सुख पायके ।
ले मंदरगिरि जाय जु न्हवन करायके,
सोंपे माता जाय जो नाम धरायके ॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिन । अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधीकरणं ।

कनककारी अधिक उत्तम रतनजड़ित सु लीजिये,
पद्मद्रहको जल सुगंधित कर धार चरनन दीजिये।
भूतनय दूषण दूर नाश जु सफल आरत टारके,
श्रीवासुपूज्य जिन चरन पूजों हर्ष उरमें धारके॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखण्ड मलय जु महा शीतल सुरभि चन्दन घिस धरौं।
जिन चरन चरचों भविक हित सौ, पाप ताप सबै हरौं॥
भूतनय०॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत अखण्डित सुरभिमंडित थार भर कर मैं गहों।
अक्षत सु पुञ्ज दिवाय जिनपद, अखय पद मैं जो लहों॥
भूतनय०॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

कमल कुंद गुलाब चम्पा, पारिजातक अतिघने।
पहुप पूजत चरण प्रभुके, कुसमशर तब ही हने॥
भूतनय०॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोसपि सद्य मंगाय भविजन, दुग्ध मिश्रित शक्करी।
चरु चारु लेकर जजो जिनपद, क्षुधा वेदन सब हरी॥
भूतनय० ॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिजड़ित कंचन दीप सुन्दर, सद्य घृत तामें भरो।
उद्योत कर जिन चरण आगे, हृदय मिथ्यातम हरों॥
भूतनय० ॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

काला अगर घनसार मिश्रित, देवफूल सुहावने।
खेवत धुंआ सो सुरंग मोदित, करत वसु कर्मन हने॥
भूतनय० ॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल अनार जो आम नीबू, चोच मोच सुधाफलं।
जिन चरन चरचत फलन सेती, मोक्ष फलदाता रलं॥
भूतनय० ॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गन्ध अक्षत पुष्प व्यंजन, दीप धूप फलोत्तमं ।
जिनराज अर्घ चढ़ाय भविजन, लेउ मुक्ति सुखोत्तमं ॥
भूतनय० ॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल छन्द ।

सुरभित जल श्रीखण्ड कुसुम तंदुल भले,
व्यंजन दीपक धूप सदा फल सों रले ।
वासुपूज्य जिन चरण अर्घ शुभ दीजिए,
मंगलग्रह दुख टार सो मंगल लीजिए ॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

मंगलग्रहहरनं मंगलकरनं, सुखकर शिव-रमनी वरनं ।
आतमहितकरनं भवजलतरनं, वासुपूज्य सेवत चरनं ॥

पद्धरी छन्द ।

इन्द्र नरेन्द्र खगेन्द्र जु देव, आय करें जिनवरकी सेव ।
वासुपूज्य जिन पूजा करो, मंगल दोष सकल परिहरो ।।टेक।।
विजया जननी मन हर्षाय, जनक जु वसुपूज्य सुखदाय ।।वा०।।

शुभ लक्षण कर लक्षितकाय, चम्पापुर जनमे जिनराय ॥वा०॥
महिष अंक चरननमे परो, देखत सबको संशय हरो ॥वा०॥
फागुन असि जो चौदश जान, हो वैराग्य सुधरियो ध्यान ।वा०
घात घातिया कवल पाय, जैनधर्म जगमें प्रगटाय ॥ वा० ॥
षट शत एक मुनीश्वर भया, गिरिमन्दार शिव लहि गयो ॥वा०
मंगल हेतु जजो जिनराय, मंगल ग्रह दूषण मिटजाय ॥वा०॥

घत्ता छन्द ।

पूजन प्रभुकी कीजे, दोष हरीज छीजे पातक जन्म जरा ।
सुख हो अधिकारी ग्रहदुखहारी, भवजल भारी नीर तरा ॥

ॐ ह्रीं भौमअरिष्टनिवारकश्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(मङ्गल ग्रहनिवारन का जाप)

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः

बुधग्रह अरिष्टनिवारक पूजा ।

सोम्य ग्रह पीडा करे, पूजो आठ जिनेश ।
आठों गुण जिनमें बसें, नावत शीस सुरेश ॥

छप्पय ।

विमलनाथ जिन नमों, नमों जु अनन्तनाथ जिन ।
धर्मनाथ जिन वंदि वंदि हौं, शान्ति शान्ति जिन ॥

कुंथु अरह नमि सुमरि, सुमरि पुन वर्धमान जिन ।
इन आठों जिन जजो, भजो सुख करन चरन तिन ॥
बुध महाग्रह अशुभता, धरत करत दुख जार जब ।
आव्हानन कर तिष्ठ तिष्ठ, सन्निधी करहु पव ॥

ॐ ह्रीं बुधमहारिष्टनिवारका श्रीअष्टजिना अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वानं, अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनम्, अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट् सन्निधीकरणं ।

परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अष्टक ।

गीतिका छन्द ।

हेम झारी जड़ित मन जल, भरों क्षीरोदक तनं,
धार देत जिनराज आगे, पाप ताप जु नाशनं ।
विमलनाथ अनंतनाथ, सु धर्मनाथ जु शांत जे,
कुंथ अरह जु नमिय जिन, महावीर आठोंजिन जजे ॥

ॐ ह्रीं बुधमहारिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो जलं निर्वपामि ।

सुरभि सुरभित लेउ चन्दन, घिसों कुमकुम संगही ।
जिन चरन चरचत मिटे ग्रीषम, मोह ताप जु भागही ॥
विमलनाथ० ॥

ॐ ह्रीं बुधमहारिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यः चन्दनं निर्वपामि ।

अक्षत अखण्ड उभय कोटि, समान शुभ जो अबि घने ।
ले कनक थार भराय भविजन, पुञ्ज देत सुहावने ॥
त्रिमलनाथ० ॥

ॐ ह्रीं बुधग्रहअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो अक्षतान् निर्वपामि ।

मन्दार माली मालती, मचकुन्द मरुवो मोतिया ।
कमल कुन्द कुसुम करन, काम बान जु घातिया ॥
त्रिमलनाथ० ॥

ॐ ह्रीं बुधग्रहारिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो पुष्प निर्वपामि ।

घृत शुद्ध मिश्रित शर्करामृत, करहु व्यजन भावसों ।
ग्रह शान्तिक होत जिनके, चरन चरचों चावसों ॥
त्रिमलनाथ० ॥

ॐ ह्रीं बुधग्रहारिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो नैवेद्य निर्वपामि ।

मणिजड़ित हाटक दीप सुन्दर, वातिका घनसार है ।
सर्पि सहित शिखा प्रकाशित, आरती तमहार है ॥
त्रिमलनाथ० ॥

ॐ ह्रीं बुधग्रहारिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो दीप निर्वपामि ।

लोभान अगर कपूर चन्दन, लौंग चूरन लाइये ।
वन्हि धूम विवर्जिता, जिन चरन आगे खेइये ॥
विमलनाथ० ॥

ॐ ह्रीं बुधग्रहारिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो धूपं निर्वपामि ।

कल्पपादव जिन श्रीफले, फल समूह चढ़ाइये ।
भक्ति भाव बढ़ाय करके, सरल श्रीफल लाइये ॥
विमलनाथ० ॥

ॐ ह्रीं बुधमहारिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो फलं निर्वपामि।

शुभ सलिल चंदन सुमन अक्षत, बुधाहर चरु लीजिये ।
मणिदीप धूपक फल सहित, वसु द्रव्य अर्घ करीजिये ॥
विमलनाथ० ॥

ॐ ह्रीं बुधमहारिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो अर्घं निर्वपामि ।

दोहा ।

जल चन्दन आदिक दरव, पूजों वसु जिनराय ।
सौम्य ग्रह दूषण मिटे, पूरन अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं बुधमहारिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो महाअर्घं निर्वपामि ।

जयमाला ।

विमलनाथ जिन नमों, नमों जु अनन्तनाथ जिन,
धर्मनाथ पुनि नमो, नमों शान्तिकर्ता तिन ।
कुंथुनाथ पद वन्दि, वन्दि हों अरहनाथ जिन,
नमिय प्रणामि जिन पांय, पाय जिन वर्धमान जिम ॥

इन आठों जिनराजको, हाथजोड़ सिर धरत हों ।
सोमतनुज दुखहरनको, मंगल आरति करत हों ॥

पद्धरी छन्द ।

जय विमल विमल आतम प्रकाश,
षड् द्रव्य चराचर लोक वास ।
जय जय अनन्त गुण हैं अनन्त,
सुर नर जस गावत लहें न अन्त ॥

जय धर्म-धुरन्धर धर्मनाथ,
जगजीव उधारन मुक्ति-साथ ।
जय शान्तिनाथ जग शान्ति करन,
भव जीवनके दुख-दरिद्र हरन ॥
जय कुन्थु जिनं कुन्थादि जीव-
प्रतिपालन कर सुख दें अतीव ।
जय अरह जिनेश्वर अष्ट कर्म-
रिपु नाशि लियो शिव रमन शर्म ॥
जय नमिय नमिय सुर वर खगेश,
इन्द्रादि चन्द्र थुति करत शेष ।
जय वर्धमान जग-वर्धमान,
उपदेश देय लहि मुक्ति थान ॥
शशि-सुत अरिष्ट सब दूर जाय,
भवि पूजें अष्ट जिनेन्द्र पांय ।
मन वच तनकर जुग जोड़ हाथ,
मनसिन्धु जलधि तब नवत माथ ॥

ॐ ह्रीं बुधग्रहारिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो अर्घं निर्वपामि ।
ये आठ जिनेश्वर, नमत सुरेश्वर, भव्यजीव मंगल करनं ।
मनवांछित पूरे, पातक चूरे, जन्ममरण-सागर तरनं ॥
इत्याशीर्वादः ।

(बुधग्रहनिवारक जाप)

ॐ ह्रीं श्रीविमलानंतधर्मशान्तिकुन्थअरनमिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो नमः ।

गुरु अरिष्टनिवारक श्रीजिनपूजा ।

दोहा ।

मन वच काया शुद्ध कर, पूजो आठ जिनेश ।
गुरु अरिष्ट सब नाश हों, उपजे सुक्ख विशेष ॥

छप्पय ।

ऋषभनाथ जिनराज, अजित जिन सम्भव स्वामी ।
अभिनन्दन जिन सुमति, सुपारस शीतल स्वामी ॥
श्री श्रेयांस जिनदेव, सेव सब करत सुरासुर ।
मनवांछित दातार, मारजित तीन लोक गुरु ॥
संवौषट् ठः ठः तिष्ठ सुसन्निधि हूजिये ।
गुरु अरिष्टके नाशको, आठ जिनेश्वर पूजिये ॥

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकअष्टजिना अत्र अवतरत २ संवौषट । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । अत्र मम सन्निहिता भवत २ वषट् ।

अष्टक ।

उज्वल जल लीजे, मन शुचि कीजे, हाटकमयभृङ्गार भरं,
जिन धार दिराई, तृषा नमाई, भवजलनिधि वे पार परं ।
ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति सुपारसनाथ वरं,
शीतलनाथ श्रेयांस जिनेश्वर, पूजत सुरगुरु दोषहरं ॥

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो जलं नि० ।

मलयागिर चन्दन, दाहनिकन्दन, कुमकुम शुभ ल घनसारं
चर्चो जिनचरनं, भवतपहरनं, मनवांछित सब सुखनिकरं

ऋषभ अजित संभव० ॥

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो चन्दनं नि० ।

सरल शाली कृष्ण जीरक, वासमती जो मनहरनं ।
उभय कोटक अरु अखण्डित, अखयगुण शिवपदधरं ॥

ऋषभ अजित संभव० ॥

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो अक्षतं नि० ।

चम्पक चमेली, करन केतकी, मालती मरुवो मोलसरं ।
कमल कुमुद गुलाब कुंदव, मरन जुही शिव-तिय वरं

ऋषभ अजित संभव० ॥

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो पुष्पं नि० ।

घेवरहि सुखावर पुवा पुरैये, मोदक फैनी घेवरं ।
सुरहि घृत पय शर्कराजुत, विविध चरु क्षुधक्षयकरं ।ऋषभ०

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो नैवेद्यं नि० ।

मणिकर जड़ित, सुवर्ण थाल ले, कदलीसुत घृत मांहि तरं ।
दीपक उद्योतं, तम क्षय होतं, जिन गुण लखि भा भारभरं ॥
ऋषभ अजित संभव० ॥

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो दीपं निर्वपामि ।

चंदन अगर, लोंग सुतरंग, विविध द्रव्य ले सुरभितरं ।
खेवत जिन आगे, पातक भागे, धूवां मिस वसु कर्मजरं।ऋषभ०

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो धूपं निर्वपामि ।

बादाम सुपारी, श्रीफल भारी, चोच मोच कमरख सुवरं ।
लैके फल नाना, शिव सुख थाना, जिनपद पूजत देत तुरं ॥
ऋषभ अजित संभव० ॥

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो फलं निर्वपामि ।

जल चंदन फूलं, तंदुल तूलं, चरु दीपक लै धूप फलं ।
वसुविधिसे अरचे, वसुविधि विरचे, कीजे अविचल मुक्तिधरं ।
ऋषभ अजित० ॥

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो अर्घं निर्वपामि ।

अडिल्ल छन्द ।

मन वच काया शुद्ध पवित्र जु हूजिये,
लेकर आठों दरब आठ जिन पूजिये ।
मंगलीक वसु वस्तु पूर्ण सब लीजिये ,
पूरन अर्घ-मिलाय आरती कीजिये ॥

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो महार्घं निर्वपामि ।

जयमाला ।

सुरगुरुदुखनाशन, कमलपत्रासन, वसुविधि वसुजिन पूजकरं
भव भव अघहरनं, सबसुखकरनं भव्यजीव शिवधामकरं ॥

पद्धरी छन्द ।

जय धर्म धुरंधर ऋषभ धार, जयमुक्तिकामिनी कत सार ।
जयअजित कर्मअरि प्रवलजान, जय शीतलनाथ वसुगुणनिधान
जय संभव संभव दंभछेद, जय मुक्तिरमा लइयो अखेद ।
जय अभिनंदन आनंदकार, जय जय शिवसुखकर्त्ता अपार ॥
जय सुमतिदेव देवाधिदेव, जय शुभगतिजुत सुर करहिं सेव ।
जय जय सुपार्श्वसुख परमज्ञान, जय लोकालोकप्रकाशमान ॥
जय जन्मजरामृतवह्नि हर्न, जय तिनका हमको नित्य शर्ण ।
जय श्रेयकरन श्रेयांसनाथ, जय श्रेयसुपद दय मुक्ति साथ ॥

जय जय गुणगरिमा जगप्रधान, जय भव्य कमल परकाश भान
जय मनसुखसागर नमत शीस, जय सुरगुरु दोषन मेंट ईश ॥

ॐ ह्रीं गुरुअरिष्टनिवारकश्रीअष्टजिनेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

दोहा ।

आठ जिनेश्वर पूजते, आठ कर्म दुख जाय ।
अष्टसिद्धि नवनिधि लहैं, सुरगुरु होय सहाय ॥

इति आशीर्वादः ।

(गुरु ग्रह निवारण की जाप)

ॐ ह्रीं श्रीऋषभाजितसुपार्श्वाभिनंदनशीतलसुमतिसंभव-श्रेयासनाथजिनेन्द्रेभ्यो नमः ।

शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतपूजा ।

दोहा ।

पुष्पदंत जिनराजको, भवि पूजो मन लाय ।
मन वच काया शुद्धसो, कवि अरिष्ट मिट जाय ॥

अडिल्लछन्द ।

गोचरमें ग्रह शुक्र आय जब दुख करैं,
पुष्पदंतजिन पूज सकल पातक हरैं ।
आह्वानन कर तिष्ठ सन्निधि हूजिये,
आठ द्रव्य ले शुद्ध भावसों पूजिये ॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिन! अत्र अवतर अवतर, संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव वषट्।

अष्टक

सोरठा।

निर्मल शीत सुभाय, गंगाजल झारी भरों।
कवि अरिष्ट मिट जाय, पुष्पदंत पूजा करों॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनाय पंचकल्याणक-प्राप्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुमकुम लेइ घिसाय, कनक कटोरी मे धरौं।
कवि अरिष्ट मिट जाय, पुष्पदंत पूजा करौं॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय पचकल्याणक-प्राप्ताय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्दुल अक्षत लाय, भाव सहित तुषपरिहरों।
कवि अरिष्ट मिट जाय, पुष्पदंत पूजा करौं॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय पंचकल्याणक-प्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल चमेली जाय, जुही कुन्द जु केवरो।
कवि अरिष्ट मिट जाय, पुष्पदंत पूजा करौं॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय पंचकल्याणक-प्राप्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंजन विविध बनाय, मधुर स्वाद जुत आचरों।
कवि अरिष्ट मिट जाय, पुष्पदंत पूजा करौं॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचन दीप कराय, कदलीसुत बाती करौं।
कवि अरिष्ट मिट जाय, पुष्पदंत पूजा करौं॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर कपूर मिलाय, लोंग धूप बहु विस्तरौं।
कवि अरिष्ट मिट जाय, पुष्पदंत पूजा करौं॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चोच मोच फल पाय, सरस पक्व लीजा हरो।
कवि अरिष्ट मिट जाय, पुष्पदंत पूजा करौं॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादिक लै आय, अर्घ देय पातक हरौं।
कवि अरिष्ट मिट जाय, पुष्पदंत पूजा करौं॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल ।

जल चन्दन ले फूल और अक्षत घने,
दीप धूप नैवेद्य सुफल मनमोहने ।
गीत नृत्य गुण गाय अर्घ पूरण करों,
पुष्पदन्त जिन पूज शुक्र दूषण हरों ।

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय महाअर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

मन वच तन ध्याओ, पाप नसाओ, सब सुख पाओ अघ हरणं
ग्रहदूषण जाई, हर्ष बढ़ाई, पुष्पदंत जिनवरचरणं ॥

पद्धरी छन्द ।

जय पुष्पदन्त जिनराज देव, सुर असुर सकल मिल करहिं सेव
जय फागुन सुदि नौमी बखान, सुरपति सुर गर्भकल्यान ठान॥
जय मार्गशीर्ष शशि उदय पक्ष, नौमी तिथि जग में भये प्रत्यक्ष
जय जन्ममहोत्सव इन्द्र आय, सुरगिरि ले इन्द्र न्हवन कराय॥
जय वज्रवृषभनाराच देह, दसशतवसु लक्षण सुनहिं गेह ।
जय राजनीति कर राज कीन, मगसिरसित पड़वा तपसु लीन ॥
जय घाति घातिया कर्म धीर, जिन आतमशक्ति प्रकाश वीर ।
जय कातिक सुदि दुतिया महान, लहि केवलज्ञान उद्योत मान॥

जय भव्यजीव उपदेश देय, जग जलधि उवारन सुजस लेय।
जय भादों सुदि आठें प्रसिद्ध, हनि शेषकर्म प्रभु भये सिद्ध ॥
जय जय जगदीश्वर भये देव, भृगुतनहि दोष हर करत सेव।
जय मनवंछित तुम करत ईश, मनशुद्धजलधि तुम नमत शीश ॥

ॐ ह्रीं शुक्रअरिष्टनिवारकश्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सब गुण अधिकारी, दूषणहारी, मारी रोगादिक हरनं।
भृगुसुत दुख जाई, पाप मिटाई, पुष्पदन्त पूजत चरनं ॥

इति आशीर्वादः

(शुक्रग्रह निवारण का जाप)

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय नमः।

शनिअरिष्टनिवारक श्रीमुनिसुव्रत पूजा।

दोहा

जन्म लग्न गोचर समय, रविसुत पीड़ा देय।
तब मुनिसुव्रत पूजिये, पातक नाश करेय ॥

अडिल्ल छंद

मुनिसुव्रत जिनराज, काज निज करन को,
सूर्यपुत्र ग्रह क्रूर-अरिष्ट जु हरन को।

आह्वानन कर तिष्ठ तिष्ठ, ठः ठः करो,
होय सन्निधि जिनराय, भव्य पूजा करो।

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारक श्रीमुनिसुव्रतजिन अत्र अवतर अवतर संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक।

चाल कातक।

प्राणी गंगादक ले सीयरा, निर्मल प्रासुक ले नीर हो।
प्राणी झारी भर त्रय धारदे, जासे कर्म–कलंक मिटाय हो॥
प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये० ॥

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय जलं निवपामीति स्वाहा।

प्राणी चन्दन घिस मलियागिरो, अरु कुमकुम ताम डार हो
प्राणी जिनपद चरचो भावसों, जासों जन्म जरा जर जाय हो
प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये० ।

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी उज्वल शशिसम लीजिये, एजी तंदुल कोट समान हो
प्राणी पांच पुंज दे भावसों, अक्षय पद सुखदाय हो॥
प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये० ।

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी बेल चमेली केवड़ो, करना कुमुद गुलाब हो।
प्राणी केतकी दल ले पूजिये, तब कामबाण मिटजाय हो॥
प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये० ॥

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय पचकल्याणकप्राप्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी व्यंजन नाना भांति के, एजी षट्रस कर संयुक्त हो।
प्राणी जिनपद पूजों भावसों, तब जाय क्षुधादिक रोग हो॥
प्राणी मुनिसुव्रतजिन पूजिये० ॥

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी रतनजोत तमनाशनी, कर दीपक कंचनथार हो।
प्राणी जिनआरतिकर भावसों, एजी भवआरततम जाय हो॥
प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये० ॥

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी चन्दन अगर कपूर ले, सब खेवा पातक माहिं हो।
प्राणी अष्ट करम जर चार हों, जिन पूजत सब सुख होय हो॥
प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये० ॥

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्राणी आम अनार पियूषफल, एजी चोच मोच बादाम हो ।
प्राणी फलसों जिनपद पूजिये, एजी पावे शिवफल सार हो ॥
प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये० ॥

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्राणी नीरादिक वसु द्रव्य ले, मन वच काय लगाय हो ।
प्राणी अष्टकर्मका नाश हो, एजी अष्टमहागुण पाय हो ॥
प्राणी मुनिसुव्रत जिन पूजिये० ॥

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल छन्द ।

जल चन्दन ले फूल और अक्षत घने,
चरु दीपक बहुधूप महाफल सोहने ।
पूरण अर्घ बनाय जिन आगे हूजिये,
मुनिसुव्रत जिनराय भावसों पूजिये ॥

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

दोहा ।

मुनिसुब्रत सुब्रत करन, त्याग करन जगजाल ।
शनिग्रह पीड़ा हरनको, पढ़ो हर्ष जयमाल ॥

पद्धरी छन्द ।

जय जय मुनिसुब्रत त्रिजगराय,
शत इन्द्र आय माथा नमाय ।
जय जय पद्मावति गर्भ आय,
सावन वदि दुतिया हर्षदाय ॥

जय जय सुमित्र घर जन्म लीन,
वैशाख कृष्ण दशमी प्रवीन ।
जय जय दश अतिशय लसत काय,
त्रयज्ञान सहित हित मित कहाय ॥

जय जय तन लक्षण सहस आठ,
भवि जीवन में थुतिकरन पाठ ।
जय जय सौधर्म सुरेश आय,
जन्म कल्याणक करियो सभाय ॥

जय जय तप ले वैशाख मास,
सुदि दशमी कर्म कलंक नाश ।

जय जय वैशाख जो असित पक्ख,
नौमी केवल लहि जग प्रतक्ख ॥

जय जय रचियो तब समवपरन,
सुर नर खग मुनि के चितहरन ।
जय छियालीस गुण सहित देव,
शत इन्द्र आय तहां करत सेव ॥

जय जय फागुन वदि द्वादशीय,
शिवथान बसे मुनि सिद्ध लीय ।
जय जय शनि पीड़ा हरन हेतु,
मनसुखसागर कर सुखनिकेत ॥

ॐ ह्रीं शनिअरिष्टनिवारकश्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

घत्ता छन्द ।

मुनिसुव्रत स्वामी, सब जग नामी, भव्य जीव बहु सुखकरनं ।
मनवांछित पूरैं, पातक चूरैं, रविसुतग्रहपीड़ाहरनं ॥

इति आशीर्वादः ।

(शनि ग्रहनिवारणका जाप)

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय नमः ।

राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनपूजा ।

अडिल्ल छन्द ।

गोचर में जब आय राहु पीड़ा करे,
नेमिनाथ जिनराज तब पूजा करे ।
आठ द्रव्य ले शुद्धभाव हि आनके,
श्याम पुष्प मन लाय भक्तिको ठानके ॥

पूजों नेमि जिनेश भव्य चित्त लायके,
राहु देय दुख दुष्ट राशिमें आयके ।
कर आह्वानन तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः उच्चरों,
होय सन्निधि शक्ति भक्ति पूजा करों ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारक श्रीनेमिनाथजिन अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अष्टक ।

गीतिका छन्द ।

कनकझारी मणिजडित ले, शीत उदक भरायके,
प्रभु नेमि जिनके चरन आगे, धार दे मन लायके ।
जब राहु गोचर समय दुख दे, देव दुष्ट स्वभावसौं,
तब नेमि जिनके भावसेती, चरन पूजों चावसौं ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय जलं नि० ।

श्रीखण्ड मलय मिलाय केशर, कदलिसुत तामें घिसौं।
जिन चरण चरचत भाव धरके, पाप ताप सबै नसौं॥
जब राहु गोचर० ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय चन्दनं नि०।

अक्षत अनूपम सालिसम्भव, कनक भाजन लेइये।
जिन अग्रपुंज चढ़ाय भविजन, एक चित मन देइये॥
जब राहु गोचर० ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अक्षतं नि०।

कमल कुन्द गुलाव गुंजा, केतकी करना भले।
सुमन लेके सुमन सेती, पूजते जिन, अघ टले॥
जब राहु गोचर० ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय, पुष्पं०।

विंजन विविधरस जनित मनहर क्षुधादूषणको हरे।
भर थार कंचन भावसेती, नेमि जिन आगे धरे॥
जब राहु गोचर० ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय नैवेद्यं नि०।

मणिमई दीप अनूप भरके चन्द्रज्योति सु जगमग।
निज हाथ लै प्रभु आरती कर, मोहतम तब ही भगे॥
जब राहु गोचर० ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय दीपं।

कृष्णागरु सामान लेके, और द्रव्य सुगन्धमय।
जिन चरण आगे अग्निपर धर, धूप धूम विनमय ॥
जब राहु गोचर० ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय धूप० नि०।

अम्बा बिजोरा नारियल, श्रीफल सुपारी सेवकी।
फल ले मनोहर सरस मीठे, पूजले जिनदेवकी ॥
जब राहु गोचर० ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय फलं नि०।

जल गन्ध अक्षत पुष्प सुरभित, चरु मनोहर लीजिये।
दीप धूप फलौघ सुन्दर, अर्घ जिन पद दीजिये ॥
जब राहु गोचर०।

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं नि०।

अडिल्ल छंद

आठ द्रव्य ले सार नेमि प्रभु पूजिये,
राहु होय ग्रह शान्ति पाप सब धूजिये।
मनवंछित फल पाय होय बड़भाग सो,
जो पूजे जिनदेव बड़े अनुराग सों ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं नि०।

जयमाला ।

श्री नेमि जिनेश्वर, जगपरमेश्वर, जीवदया जु धुरंधरनं ।
मैं शरणा आयो, शीश नमायो, सिन्धुसुत दूषण हरनं ॥

पद्धरी छन्द ।

जय जय नेमि सुनेमि धार,
करुणा कर जग जन जलधि तार ।
जय कातिक सुदि छटमी प्रधान,
शिवदेवी उर अवतरे आन ॥
जय जय सावन सुदि छट सुदेव,
इन्द्रादि न्हवनविधि करहि सेव ।
जय जय यदुकुलमंडित दिनेश,
सुर नर खग स्तुति करत शेष ॥
जय जय शुचिशुक्ल उदास होय,
छठको तप कर जिन आत्म जोय ।
जय जय निर्मल तन निर्विकार,
भामंडल छवि शोभा अपार ॥
जय जय आश्विन सुदि ज्ञान भान,
तिथि प्रथम पहर जग सुख निधान ।
जय जय भवि जन उपदेश देय,
मुनि पंचम गति साधन करेय ॥

जय जय सावन सुदि आठ शुक्ल पक्ष,
सब लोकालोक कियो प्रत्यक्ष ।
जय जय वसु विधि विधि सकल नास,
लहि सुख अनन्त शिव लोक वास ॥
जय जय अजरामर पद प्रधान,
हो त्रिभुवनपति लोकाग्र थान ।
जय जय छाया-सुत परिहरान,
मनसुख समुद्र तु सहिये शरान ॥

ॐ ह्रीं राहुअरिष्टनिवारकश्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि० ।

घत्ता छन्द ।

भवि जन सुखदाई, होउ सहाई, मन वच काया ध्यावत हों ।
सब दूषण जाई, पाप नसाई, नेमि सहाई ध्यावत हों ॥

आशीर्वादः ।

(राहु ग्रहनिवारक का जाप)

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय नमः ।

केतुअरिष्टनिवारक श्रीमल्लि, पार्श्वनाथपूजा।

दोहा।

केतु आय गोचर विषे, करे इष्टकी हान।
मल्लि पार्श्व जिन पूजिये, मन वांछित सुख खान॥

अडिल्ल।

मल्लि पार्श्व जिनदेव सेव, बहु कीजिये,
भक्ति भाव वसुद्रव्य शुद्ध कर लीजिये।
आह्वानन कर तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः करों,
मम सन्निधि कर पूज हर्ष हियमें धरों॥

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकौ श्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनौ अत्र अवतरतां अवतरतां संवौषट्। अत्र तिष्ठतां तिष्ठतां ठः ठः। अत्र मम सन्निहितौ भवतां भवतां वषट्।

चाल नंदीश्वर।

उत्तम गंगाजल लाय, मणिमय भर भारी,
जिन चरण धार दे सार, जन्म जरा हारी।
मैं पूजों मल्लि जिनेश, पारस सुखकारी,
ग्रह केतु अरिष्ट निवार, मनसुख हितकारी॥

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्यां जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घी खण्ड मलय तरु ल्याय, कदलीसुत डारी।
घिस केसर चरणनि ल्याय, भवआताप हरी ॥ मैं पूजों०

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपारश्वजिनेन्द्राभ्या चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तंदुल अचत अविकार, मुक्तासम सोहै।
भरले हाटकमय थाल, सुर नर मन मोहै ॥ मैं पूजों०

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्या अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

लै फूल सुगंधित सार, अलि गुंजार करें।
पद पकज जिनहि चढ़ाय, काम विथा जु हरै ॥ मैं पूजों०

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्या पुष्पं निवपामीति स्वाहा।

विंजन बहुत प्रकार, षट्रस स्वादमई।
चरु जिनवर चरण चढ़ाय, कञ्चन थार लई ॥ मैं पूजों० ॥

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्यां नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिदीपक तृप भराय, चंद्रकनी बाती।
जगज्योति जहां लहकाय, मोहतिमिर घाती ॥ मैं पूजों० ॥

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्यां दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु चंदन लाय, धूप दहन खेई।
मोदित सुरमण हू जाय, रुचि सेती लेई ॥ मैं पूजों० ॥

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्या धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु चोच मोच बादाम, श्रीफल फल देई।
अमृत फल सुख बहु धाम, लीजे मन लेई ॥ मैं पूजों० ॥

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्या फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन सुमन सुलेय, तंदुल अघहारा,
चरु दीप धूप फल लेइ, अर्घ करू भारी।
मैं पूजों मल्लि जिनेश, पारस सुखकारी,
ग्रह केतु अरिष्ट निवार, मनसुख हितकारी ॥

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्या अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल छन्द।

लै वसु द्रव्य विशेष सु मंगल गायके,
गीत नृत्य करवाय जु तूर्य बजायकें।
मनम हर्ष बढाय, अर्घ पूरण करौं,
केतु दोषका मेंट पाप सब परिहरौ ॥

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्या महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

जय मल्लि जिनेसुर, सेव करें सुर,
पार्श्वनाथ जिन चरण नमों।
मन वच तन लाई, स्तुति गाइ,
करौं आरती पाप थमो ॥ १ ॥

पद्धरी छन्द।

जय जय त्रिभुवनपति देव देव,
इन्द्रादिक सुर नर करहिं सेव।
जय जय जिनगुण ज्ञायक महंत,
गुण वर्णन करत न लहत अंत ॥ २ ॥

जय जय परमातम गुणवरिष्ठ,
भव-पद्धति नाशन परम इष्ट।
जय जय अष्टादश दोष नाश,
कर दिनसम लोकालोक भास ॥ ३ ॥

जय जय वसु कर्म कलंक छीन,
सम्यक्त आदि वसु सुगुण लीन।
जय जय वसु प्रतिहारज अनूप,
वसुमी शुभ भूमिके भये भूप ॥ ४ ॥

जय जय अदेह तुम देह धार,
वर्णादि रहित है रूप सार ।
जय जय अजरामरपद प्रधान,
गुणज्ञान अलाकालोक भान ॥

जय जय सुखसाता बोधदर्श,
निजगुणजुत परगुण नहीं घर्श ।
जय जय चितशुद्ध समुद्रसार,
कर जोर नमों हों बार बार ॥

ॐ ह्रीं केतुअरिष्टनिवारकश्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्यां अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

आशीर्वादः ।

(केतुग्रहनिवारणजाप)

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्यां नमः ।

अथ नवग्रहशांति स्त्रोत्र ।

जगद्गुरुं नमस्कृत्य, श्रुत्वा सद्गुरुभाषितं ।
ग्रहशांतिं प्रवक्ष्यामि, लोकानां सुखहेतवे ॥
जिनेन्द्राः खेचरा ज्ञेया, पूजनीया विधिक्रमात् ।
पुष्पैर्विलेपनैर्धूपैर्नैवेद्यै स्तुष्टिहेतवे ॥

पद्मप्रभस्य मार्तण्डश्चन्द्रश्चन्द्रप्रभस्य च ।
वासुपूज्यस्य भूपुत्रो,बुधश्चाष्टजिनेशिनां ॥
विमलानन्तधर्मस्य, शांतिकुन्थनमेस्तथा ।
वर्द्धमानजिनेन्द्रस्य, पादपद्मं बुधो नमेत् ॥
ऋषभाजितसुपार्श्वाः साभिनन्दनशीतलो ।
सुमतिः सम्भवस्वामी, श्रेयांसेषु बृहस्पतिः ॥
सुविधिः कथितः शुक्रे, सुव्रतश्च शनैश्चरे ।
नेमिनाथो भवेद्राहोः, केतुः श्रीमल्लिपार्श्वयोः ॥
जन्मलग्नं च राशिं च, यदि पीडयन्ति खेचराः ।
तदा संपूजयेद् धीमान्-खेचरान् सह तान् जिनान् ॥
भद्रबाहुगुरुर्वाग्मी, पंचमः श्रुतकेवली ।
विद्याप्रसादतः पूर्वं ग्रहशांतिविधिः कृता ॥
यः पठेत् प्रातरुत्थाय, शुचिर्भूत्वा समाहितः ।
विपत्तितो भवेच्छांतिः क्षेमं तस्य पदे पदे ॥

गौतम स्वामी (गुणावा पूजा)

अडिल्ल छन्द ।

प्रान्त विहार मंझार गुणावा ग्राम है,
गौतम स्वामी जहां लयो शिवधाम है ।

सरवर केरे मध्य सिद्धथल है कहा,
करि आह्वानन थापि जजनपद है चहा ॥

दोहा ।

ग्राम गुणावा सों भये, गौतम गणि निर्वान ।
करि आह्वानन थापि तिन, जजहु जारि जुग पान ॥

ॐ ह्रीं गुणावाग्रामस्थसरोवरात् मोक्षप्राप्त श्रीगौतमस्वामिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अडिल्ल छन्द ।

निर्मल शीतल नीर गंगसों लीजिये,
करि प्रासुक तिहि गालि हेम कुंभ कीजिये ।
ग्राम गुणावा जाय सुमन हरषाय के,
गौतम स्वामी चरण जजो मन लाय के ॥

ॐ ह्रीं गुणावाग्रामसरोवरमध्यमोक्षप्राप्ताय श्रीगौतमस्वामिन जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मलयागिरि बरदारु लेय हरषाय के,
घसि कुंकुम करपूर सुकुम्भ भराय के ।
ग्राम गुणावा जाय० ॥

ॐ ह्रीं गुणावाग्रामसरोवरमध्यमोक्षप्राप्ताय श्रीगौतमस्वामिने चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

कमोद खिमकर शालि अखंडित लीजिये,
धुलि मुक्तासम हेमथाल भरि कीजिये ।
ग्राम गुणावा जाय० ॥

ॐ ह्रीं गुणावाग्रामसरोवरमध्यमोक्षप्राप्ताय श्रीगौतमस्वामिने अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुमन सुगन्धित बेल चमेली आनिये,
कर्णोड़ा पाटल अब्ज निवारा जानिये ।
ग्राम गुणावा जाय० ॥

ॐ ह्रीं गुणावाग्रामसरोवरमध्यमोक्षप्राप्ताय श्रीगौतमस्वामिने पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्धचन्द्र सा हाल मादकादि कीजिये,
फेनी खुरमा हेम थाल भरि लीजिये ।
ग्राम गुणावा जाय० ॥

ॐ ह्रीं गुणावाग्रामसरोवरमध्यमोक्षप्राप्ताय श्रीगौतमस्वामिने नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक घृत करपूर मणिन के जानिये,
जनके होत उद्योत मोह तम हानिये ।
ाम गुणावा जाय० ॥

ॐ ह्रीं गुणावाग्रामसरोवरमध्यमोक्षप्राप्ताय श्रीगौतमस्वामिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप दशांगी लेय अगिनि मह खेपिये,
धूप गंध सों अलि गण नाचत पेखिये ।
ग्राम गुणावा जाय० ॥

ॐ ह्रीं गुणावाग्रामसरोवरमध्यमोक्षप्राप्ताय श्रीगौतमस्वामिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

चोच मोच सहकार नरंगी जानिये,
नरियल पिस्ता दाख छुहारा आनिये ।
ग्राम गुणावा जाय० ॥

ॐ ह्रीं गुणावाग्रामसरोवरमध्यमोक्षप्राप्ताय श्रीगौतमस्वामिने फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल आदिक द्रव्य एकठी लीजिये,
कंचन थारा धारि अरघ शुभ कीजिये ।
ग्राम गुणावा जाय सुमन हर्षाय के,
गौतम स्वामी चरण जजों मन लाय के ॥

जयमाला ।

छन्द त्रिभंगी ।

वर ग्राम गुणावा, शिवको ठांवा भरम नशावा मनन करो,
जहं गौतमस्वामी, अतंरयामी, भे शिव गामी ध्यान धरो ।
तिहि थलपर जाई, मन हरषाई, जिन गुणगाई भाव धरो,
पुनि गौतम चरणा, भवभ्रम हरणा, गहि तिन शरणा पूजकरो ॥

पद्धरी छन्द ।

प्रान्त विहारके मध्य जान, वर ग्राम गुणावा किय बखान ।
है छोटासा यह ग्राम थान, नहिं जैनिन का कोई घर सुजान ॥
है सरवरकेरे मध्य जान, गौतम स्वामी को मोक्ष थान ।
अति सुघर बना मंदिर सुजान, मुनि गौतमचरण विराजमान ॥
मंदिर श्वेताम्बरि को कहाय, दीगाम्बरि पूजत हैं सुजाय ।
निर्वाण भये जब वीरदेव, तब रह्यो चतुर्थो काल एव ॥
तिम अंतर में गौतम सुजान, है लयो ज्ञान केवल बखान ।
तिन गंधकुटी रचो धनद आन, धर्मोपदेश बहुकियो जान ॥
फिर गमन आरज के मंझार, आये गुणावा करते विहार ।
ह्यां कर्म अघाती घात कीन, इक समय मांहि शिववाम लीन ॥
हरि इत कल्याणक कियो आय, बहु नृत्य गान उत्सव कराय ।
धरि चार शीश सुर किय पयान, भयो वंदनीक सो मोक्षथान ॥
भवि पूजे बंदे थान जाय, ते लहैं पुण्य पातक नशाय ।
सुत कन्हईराम मन मोह लाय, भगवानदास नमै शीशनाय ॥

घत्तानन्द छन्द ।

वर ग्राम गुणावैं जेभवि पूजैं गौतम ऋषिकी मुक्ति थली ।
बहु पुण्य कमावैं पाप नशावैं कीरति जग फैले उजली ॥

दोहा ।

ग्राम गुणावा जाय भवि, पूजैं गौतम स्वामि ।
ते अनधन परिवार लहि, लहैं मोक्ष को धाम ॥

इत्याशीर्वाद ।

जम्बूस्वामी पूजा ।

अडिल्ल छन्द ।

विद्युन्माली देव चयो भौ जम्बूस्वामी,
कामदेव अवतार अन्त केवलि जग नामी।
पञ्चम कारे काल मांहि शिव नारि वरी है,
करि आह्वानन थापि जोर कर पूज करी है ॥

दोहा।

जम्बू स्वामी जी भये, मथुरा सों निर्वान ।
करि आह्वानन थापि इत, पूजहुं पद धर ध्यान ॥

ॐ ह्रीं चौरासीमथुरास्थलात् मोक्षप्राप्त श्रीजम्बूस्वामिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अडिल्ल छन्द ।

निर्मल शीतल नीर गंग कौ लीजिये,
करि प्रासुक तिहि गालि हेम कुंभ कीजिये ।
मथुरा जम्बूस्वामी मुक्ति थल जायके,
पूजिय भवि धरि ध्यान सुयोग लगाय के ॥

ॐ ह्रीं चौरासीमथुरास्थलात् मोक्षप्राप्ताय श्रीजम्बूस्वामिने जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन शीतल लाय मिश्र कुंकुम करो,
घसि कदलीसुत सहित हेम कुंभन भरो ।। मथुरा० ।।

ॐ ह्रीं चौरासीमथुरास्थलात् मोक्षप्राप्ताय श्रीजम्बूस्वामिने चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

झिनवर गोरि कमोद श्याम जीरा कहे,
खण्ड रहित अनियार धोय भरि थाल हे ।।मथुरा० ।।

ॐ ह्रीं चौरासीमथुरास्थलात् मोक्षप्राप्ताय श्रीजम्बूस्वामिने अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेल चमेलि गुलाब जुही क्योड़ा कही,
कुंद ने वारि अब्ज थाल भरि के लही ।। मथुरा० ।।

ॐ ह्रीं चौरासीमथुरास्थलात् मोक्षप्राप्ताय श्रीजम्बूस्वामिने पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविध प्रकार क्षुधा गद को हरैं,
रसपूरित रसगुल्ला थाल भरि के करैं ।। मथुरा० ।।

ॐ ह्रीं चौरासीमथुरास्थलात् मोक्षप्राप्ताय श्रीजम्बूस्वामिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत करपूर मणि दीप थाल धरि आनिये,
जिनके होत उदोत मोहतम भानिये ।। मथुरा० ।।

ॐ ह्रीं चौरासीमथुरास्थलात् मोक्षप्राप्ताय श्रीजम्बूस्वामिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशांगी लेय अगिनिमह क्षेपये,
गंध पाय अलि छाय नाचते पेखिये ॥ मथुरा० ॥

ॐ ह्रीं चौरासीमथुरास्थलात् मोक्षप्राप्ताय श्रीजम्बूस्वामिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चोच मोच सहकार नरंगी लाय के,
नरियर पिस्ता दाख अनार मिलाय के ॥ मथुरा० ॥

ॐ ह्रीं चौरासीमथुरास्थलात् मोक्षप्राप्ताय श्रीजम्बूस्वामिने फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल आदिक द्रव्य आठहू लीजिये,
करि इकठी भरि थाल अर्घ शुभ कीजिये ॥ मथुरा० ॥

ॐ ह्रीं चौरासीमथुरास्थलात् मोक्षप्राप्ताय श्रीजम्बूस्वामिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

त्रिभंगी छन्द ।

जम्बू धामरं, ललित ललामर, मथुरागामर हिय सुमिरो,
बसु द्रव्यन लाई, तिहि थल जाई, अर्घ बनाई मनन करो।
बहु जिन गुण गाई, मन हरषाई, पाठ पढ़ाई भाव धरो,
पावन चौरासी, बहु सुखरासी, शिवथल वासी पूज करो ॥

पद्धरी छन्द ।

चय ब्रह्म स्वर्ग सुर गर्भ आन,
धर सेठ राजगृह नगर जान ।
लहि जन्म बाल क्रीड़ा करीन,
जग अथिर दशा तन ध्यान दीन ॥ १ ॥

वय कुंवर किया परियन उछाह,
दीन्हा कुमार चौ नारि ब्याह ।
रतनन दीपक महलन जराय,
बैठी वनिता ढिग कुँवर आय ॥ २ ॥

बहु ज्ञान वार्ता तिन कहाय,
रागादिक मोह दय छुडाय ।
तब विद्युत्प्रभ इक चोर आन,
रसभीनी आठ कथा बखान ॥ ३ ॥

ताकँ वैराग्य कथा कहाय,
निज तत्वरूप दीन्हा दिखाय ।
है जग असार नहि सार कोय,
है शरण जीव को नहीं कोय ॥ ४ ॥

मधि चौरासी लख योनि जान,
एकाकी भरमत जीव मान ।

कहि द्वादश भावन भाय देव,
बहु जनयुत कीन्हीं वीर सेव ॥ ५ ॥
धरि दीक्षा चौथो ज्ञान पाय,
अवधि सप्त तबै प्रगटी जो आय ।
सन्मति गौतम धर्मा सुजान,
शिव लहो तबै केवल लहान ॥ ६ ॥
निरअक्षर वाणी खिरी जान,
तत्वन को इम कीन्हो बखान ।
आपापर सों बहु नेह धार,
चैतन्य नचै चहुँ गति मझार ॥ ७ ॥
जब आतम ज्ञान करे प्रकाश,
तब कर्म अनादी होहि नाश ।
षट द्रव्यन को कीन्हों बखान,
जीवादिक की चर्चा महान ॥ ८ ॥
प्रभु द्विविधि धर्म कीन्हों बखान,
मुनि श्रावक को जो है सुजान ।
पुनि आरज में कीन्हो बिहार,
जम्बू वन में आयोग धार ॥ ९ ॥
तब कर्म अघाती करि विनाश,
इक समय मांहि किय शिवनिवास ।

प्रतिवर्ष कृष्ण कातिक मंझार ।
रथ यात्रा मेला होत सार ॥ १० ॥

चहुदिश सों यात्री जुटत आन,
गीतादिक उत्सव हो महान ।
बहु गुणिन के उपदेश होत,
निश दिवस बहत आनन्द स्रोत ॥ ११ ॥

जे पूजें वन्दें थान जाय,
सो बहुत पुण्य प्राणी लहाय ।
सुत कन्हईलाल सो थल निहार,
भगवानदास नमें शीश धार ॥ १२ ॥

घत्तानन्द छन्द ।

मथुरापुर जावे, मन हरषावे, जम्बूस्वामी पूज करैं ।
बहु पुण्य उपावे, पाप नशावे, आतम निर्मल भाव धरैं ॥

काव्य छन्द ।

उदय भाग्यवश भव्य मथुर चौरासी जावे,
जम्बूस्वामी चरण पूजि बहु पुण्य उपावे ।
सो अन धन परिवार बहुत संपति को पावे,
चौरासी को काटि पदै अविनाशी पावे ॥

निर्वाणक्षेत्र पूजा ।

सोरठा ।

परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँथानक शिव गये ।
सिद्धभूमि निशदीस, मनवचतन पूजा करों ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट ।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठ ।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

गीता छन्द ।

शुचि क्षीरदधिसम नीर निरमल, कनकझारीमें भरों,
संसार पार उतार स्वामी, जोर कर विनती करों ।
सम्मेदगढ़ गिरिनार चंपा, पावापुरि कैलाशकों,
पूजों सदा चौबीसजिन निर्वाणभूमि निवासको ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

केसर कपूर सुगंध चंदन सलिलशीतल विस्तरौं ।
भवतापको संताप मेटो, जोर कर विनती करौं ।
सम्मेदगढ़ गिरनार० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोती समान अखंड तंदुल, अमल आनंद धरि तरौं।
औगुन हरौ गुन करौ हमको, जोरकर विनती करौं।
सम्मेदगढ़ गिरनार० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभफूलराम सुवासवासित, खेद सब मनकौ हरौं।
दुखधाम काम विनाश मेरो, जोरि कर विनती करौं।
सम्मेदगढ़ गिरनार० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नवज अनेक प्रकार जोग, मनाग धरि भव परिहरौं।
यह भूखदूषन टार प्रभुजी, जोरकर विनती करौं॥
सम्मेदगढ़ गिरनार० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक प्रकाश उजास उज्जल, तिमिरसेती नहि डरौं।
संशयविमोहविभर्म-तमहर, जोरकर विनती करौं॥
सम्मेदगढ़ गिरनार० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ धूप परम अनूप पावन, भाव पावन आचरौं।
सब करमपुंज जलाय दीजे, जोर कर विनती करौं ॥
सम्मेदगढ़ गिरनार० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं निर्वपामी०।

बहु फल मंगाय चढ़ाय उत्तम, चारगतिसौं निरवरौं।
निहचै मुकति फल देहु मोकों, जोरकर विनती करौं ॥
सम्मेदगढ़ गिरनार० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्य फलं निर्वपामी०।

जल गंध अक्षत फूल चरु फल दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगतैं, जोरकर विनती करौं ॥
सम्मेदगढ़ गिरिनार चंपा, पावापुरि कैलाशकों।
पूजों सदा चौबीसजिन, निर्वाणभूमि निवासकों ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामी०।

जयमाला।

सोरठा।

श्री चौबीस जिनेश, गिरिकैलाशादिक नमों।
तीरथ महाप्रदेश, महापुरुष निरवान तैं ॥ १ ॥

चौपाई १६ मात्रा।

नमों ऋषभ कैलास पहारं, नेमिनाथ गिरनार निहारं।
वासुपूज्य चंपापुर वंदौं, सनमति पावापुर अभिनंदौं ॥ २ ॥

वंदौं अजित अजित पद दाता, वंदौं संभव भवदुखघाता ।
वंदौं अभिनंदन गणनायक, वंदौं सुमति सुमतिके दायक ॥३॥
वंदौं पदम मुकतिपदमाधर, वंदौं सुपार्स आशपासाहर ।
वंदौं चंद्रप्रभ प्रभु चंदा, वंदौं सुविधि सुविधिनिधि कंदा ॥४॥
वंदौं शीतल अघतपशीतल, वंदौं श्रियांस श्रियांस महीतल ।
वंदौं विमल विमलउपयोगी, वंदौं अनंत अनंतसुखभोगी ॥५॥
वंदौं धर्म धर्मविसतारा, वंदौं शांति शांतमनधारा ।
वंदौं कुंथु कुंथुरखवालं, वंदौं अर अरिहर गुनमालं ॥ ६ ॥
वंदौं मल्लि काममल चूरन, वंदौं मुनिसुव्रत व्रतपूरन ।
वंदौं नमि जिन नमित सुरासुर, वंदौं पास पासभ्रमजगहर ॥७॥
वीसौं सिद्धभूमि जा ऊपर, शिखरसमेद महागिरि भूपर ।
एक बार वंदे जो कोई, ताहि नरकपशुगति नहिं होई ॥८॥
नरगति नृप सुरशक्र कहावै, तिहुं जग भोग भोगि शिव पावै ।
विघ्नविनाशक मंगलकारी, गुणविलास वंदैं नरनारी ॥ ६ ।

छंद घत्तानन्द ।

जो तीरथ जावे, पाप मिटावै, ध्यावै गावै भगति करै ।
ताको जस कहिये, संपति लहिये गिरिके गुण को बुध उचरै ॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्योऽर्घं निर्वपामी स्वाहा ॥

श्रीऋषिमण्डलपूजाभाषा।

दोहा।

चौवीस जिन पद प्रथम नमि, दुतिय सुगणधर पांय।
तृतिय पंच परमेष्ठि को, चौथे शारद माय॥
मन वच तन ये चरनयुग, करहुं सदा परनाम।
ऋषिमण्डल पूजा रचा, बुधि बल द्यो अभिराम॥

अडिल्ल छन्द।

चौवीस जिन वसु वर्ग पंच गुरु जे कहे,
रत्नत्रय चव देव च्यार अवधी लहे।
अष्ट ऋद्धि चव दोय सूर ह्रीं तीन जू,
अरहंत दश दिकपाल यन्त्र में लीन जू॥

दोहा।

यह सब ऋषिमण्डल विषै, देवी देव अपार।
तिष्ठ तिष्ठ रक्षा करो, पूजूं वसु विधि सार॥

ॐ ह्रीं वृषभादिचतुर्विंशतितीर्थङ्करअष्टवर्गअर्हदादिपंचपद-दर्शनज्ञानचारित्रसहितचतुर्णिकायदेवचतुःप्रकारअवधिधारकश्रमणअष्टऋद्धिसंयुक्तचतुर्विंशतिसूरित्रिह्रींअर्हद्बिम्बदशदिक्पालयंत्र-सम्बन्धिपरमदेवा अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वानं। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधीकरणम्।

हरिगीता छन्द ।

क्षीर उदधि समान निर्मल तथा मुनि-चित-सारसो ।
भर भृङ्ग मणिमय नीर सुन्दर तृषा-तुरित निवार सो ॥
जहां सुभग ऋषिमण्डल विराजै पूजि मन वच तन सदा ।
तिस मनोवांछित विमल सबसुख स्वप्न में दुख नहिं कदा ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्रसम्बन्धिपरमदेवाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मलय चन्दन लाय सुन्दर गंध सों अलि झंकरै ।
सो लेहु भविजन कुंभ भरिके तप्त दाह सबै हरै ॥
जहां सुभग ऋषि० ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्रसम्बन्धिपरमदेवाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

इन्दु किरण समान सुन्दर जोति मुक्ता की हरैं ।
हाटक रकेबी धारि भविजन अक्षय पद प्राप्ती करैं ॥
जहां सुभग ऋषि० ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्रसम्बन्धिपरमदेवाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पाटल गुलाब जुही चमेली मालती बेला घने ।
जिस सुगन्धितें कलहंस नाचत फूल गुथि माला बने ॥
जहां सुभग ऋषि० ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्रसम्बन्धिपरमदेवाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्द्ध चन्द्र समान फेनो मादकादिक ले घने।
घृतपक्क मिश्रित रस सु पूरे लख क्षुधा डायनि हने॥
जहां सुभग ऋषि०॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्रसम्बन्धिपरमदेवाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि दीप ज्योति जगाय सुन्दर वा कपूर अनूपकं।
हाटक सुथाली मांहि धरिके वारि जिनपद भूपकं॥
जहां सुभग ऋषि०॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्रसम्बन्धिपरमदेवाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन सु कृष्णागरु कपूर मंगाय अग्नि जराइये।
सो धूप-धूम्र अकाश लागी मनहुं कर्म उड़ाइये॥
जहां सुभग ऋषि०॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्रसम्बन्धिपरमदेवाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दाडिम सु श्रीफल आम्र कमरख और केला लाइये।
मोक्ष फल के पायवे को आश धरि करि आइये॥
जहां सुभग ऋषि०॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्रसम्बन्धिपरमदेवाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फलादिक द्रव्य लेकर अर्घ सुन्दर कर लिया।
संसार राग निवार भगवन् वारि तुम पद में दिया॥
जहां सुभग ऋषिमण्डल विराजै पूजि मन वच तन सदा।
तिस मनोवांछित मिलत सब सुख स्वप्न में दुख नहिं कदा॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्रसम्बन्धिपरमदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घावली।

अडिल्ल छन्द।

ऋषभ जिनेश्वर आदि अन्त महावीर जी,
ये चौविस जिनराज हरें भवपीर जी।
ऋषि-मण्डल बिच ह्रीं विषैं राजैं सदा,
पूजूं अर्घ बनाय होय नहिं दुख कदा॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय वृषभादिचतुर्विंशतितीर्थङ्करपरमदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आदि कवर्ग सु अन्तजानि शाषासहा,
य वसुवर्ग महान यन्त्र में शुभ कहा।
जल शुभ गंधादिक वरद्रव्य मंगायके,
पूजहुं दोऊ करजोर शीश निज नायके॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय कवर्गादिअष्टवर्गसहिताय हल्व्यूं परमयंत्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कामनी मोहिनी छन्द ।

परम उत्कृष्ट परमेष्ठी पद पांच को,
नमत शतइन्द्र खगवृन्द पद सांच को।
तिमिर अघनाश करण को तुम अर्क हो,
अर्घ लेय पूज्य पद देत बुद्धि तर्क हो ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय पंचपरमेष्ठिपरमदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दरी छन्द ।

सुभग सम्यग्दर्शन ज्ञान जू,
कह चारित्र सुधाकर मान जू।
अर्घ सुन्दर द्रव्य सु आठ ले,
चरण पूजहुं साज सु ठाठ ले ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यः सम्यग्दर्शदज्ञानचारित्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

हरिगीता छंद ।

भवनवासी देव व्यन्तर ज्योतिषी कल्पिन्द्र जू,
जिनगृह जिनेश्वर देव राजै रत्न के प्रतिबिम्ब जू।
तोरण ध्वजा घण्टा विराजै चंवर ढरत नवीन जू,
वर अर्घ ले तिन चरण पूजों हर्ष हिय अति लीन जू ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय भवनेन्द्रव्यंतरेन्द्रज्योतिरिन्द्रकल्पेन्द्रचतुःप्रकारदेवगृहेभ्यः श्रीजिनचैत्यालयसंयुक्तेभ्यः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा।

अवधि चार प्रकार मुनि, धरत जे ऋषिराय।
अर्घ लेय तिन चरण जजि, विघन सघन मिटजाय ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यः चतुःप्रकारअवधिधारकमुनिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

भुजंगप्रयात छन्द।

कहो आठ ऋद्धि धरे जे मुनीशं,
महा कार्यकारी बखानी गनीशं।
जल गंध आदि दे जजों चर्न नेरे,
लहों सुख सबेरे हरो दुःख फेरे ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यो अष्टऋद्धिसहितमुनिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री देवी प्रथम बखानी, इन आदिक चौबीसों मानी।
तत्पर जिनभक्ति विषै हैं, पूजत सब रोग नशैं हैं ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाभ्यः श्रीआदिचतुर्विंशतिदेवीभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

हंसा छन्द।

यंत्र विषै वरन्यो तिरकोन, ह्रीं तहं तीन युक्त सुखभोन।
जल फलादि वसु द्रव्य मिलाय, अर्घ सहित पूजूं शिरनाय ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय त्रिकोणमध्ये त्रिह्रींसंयुक्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

तोमर छन्द ।

दस आठ दोष निरवारि, छियालीस महागुण धारि ।
वसु द्रव्य अनूप मिलाय, तिन चर्न जजों सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय अष्टादशदोषरहिताय षट्-चत्वारिंशत्महागुणयुक्ताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा ।

दश दिश दश दिक्पाल, दिशानाम सो नामवर ।
तिनगृह श्रीजिनआल, पूजों मैं वन्दौं सदा ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यो दशदिक्पालेभ्यो जिन-भक्तियुक्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा ।

ऋषिमण्डल शुभयन्त्र के, देवी देव चितारि ।
अर्घ सहित पूजहुं चरन, दुख दारिद्र निवारि ॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यो ऋषिमण्डलसम्बन्धिदेवी-देवेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

दोहा ।

चौबीसों जिन चरन नमि, गणधर नाऊं भाल ।
शारद पद पंकज नमूं, गाऊं शुभ जयमाल ॥

जय आदीश्वर जिन आदिदेव, शत इन्द्र जजैं मैं करहुं सेव ।
जय अजित जिनेश्वर जे अजीत, जे जीत भये भव तें अतीत ॥
जय सम्भव जिन भवकूप मांहि, डूबत राखहु तुम शर्ण आंहि
जय अभिनन्दन आनन्द देत, ज्यों कमलों पर रवि करत हेत ॥
जय सुमति सुमति दाता जिनंद, जै कुमति तिमिर नाशन दिनंद
जय पद्मालंकृत पद्मदेव, दिन रैन करहुं तव चरन सेव ॥
जय श्रीसुपार्श्व भवपाश नाश, भविजीवन कूं दियो मुक्तिवास
जय चन्द दिनेश दयानिधान, गुणसागर नागर सुख प्रमान ॥
जय पुष्पदंत जिनवर जगीश, शतइन्द्र नमत नित आत्मशीश
जय शीतल वच शीतल जिनंद, भवताप नशावत जगत चन्द ॥
जय जय श्रेयांसजिन अति उदार, भवि कंठमांहि मुक्ता सुहार
जय वासुपूज्य वासव खगेश, तुम स्तुति करि पुनि नमि हैं हमेश
जय विमल जिनेश्वर विमलदेव, मलरहित विराजत करहुं सेव ।
जय जिन अनंत के गुण अनंत, कथनी कथ गणधर लहे न अंत
जय धर्मधुरन्धर धर्मवीर, जय धर्मचक्र शुचि न्याय वीर ।
जय शांतिजिनेश्वर शांतभाव, भव वन भटकत शुभमग लखाव ॥
जय कुंथु कुंथुवा जीव पाल, सेवक की रक्षा करि कृपाल ।
जय अरहनाथ अरि कर्म शैल, तपवज्र खंड लहि मुक्ति गैल ॥
जय मल्लि जिनेश्वर कर्म आठ, मल डारे पायो मुक्ति ठाठ ।
जय मुनिव्रत मुनि सुव्रत धरन्त, जय सुव्रत व्रत पालत महन्त ॥

जय नम्मि नमत सुरवृन्द पांय, पदपंकज निरखत शीश नाय
जय नेमि जिनन्द दयानिधान, फैलायो जग में तत्वज्ञान ॥
जय पारशजिन आलस निवारि, उपसर्ग रुद्रकृत जीत धारि।
जय महावीर महाधीरधार, भवकूप थकी जग तैं निकार ॥
जय वर्ग आठ सुन्दर अपार, तिन भेद लखत बुध करत सार।
जय परमपूज्य परमेष्ठि सार, जिन सुमरत बरसे आनन्द धार॥
जय दर्शन ज्ञान चरित्र तीन, ये रत्न महा उज्वल प्रवीन।
जय चार प्रकार सुदेव सार, तिनके गृह जिन मंदिर अपार॥
जो पूजें वसुविधि द्रव्य ल्याय, मैं इत जाज तुम पद शीश नाय
जो मुनिवर धारत अवधि चारि, तिन पूजें भवि भवसिन्धु पार॥
जा आठ ऋद्धि मुनिवर धरंत, ते मोपै करुणा करि महंत।
चावीस देवि जिन भक्तिलीन, बन्दन ताको सुपरोक्ष कीन॥
जे ह्रीं तीन त्रैकोण मांहि, तिन नमत सदा आनन्द पाहिं।
जय जय जय श्रीअरहंत बिम्ब, तिन पद पूजूं मैं खोइ डिंब॥
जो दस दिक्पाल कहे महान, जे दिशा नाम सो नाम जान।
जे तिनके गृह जिनराज धाम, जे रत्नमई प्रतिमाभिराम॥
ध्वज तोरन घण्टा युक्तसार, मोतिन माला लटकें अपार।
जे तो मधि वेदी हैं अनूप, तहँ राजत हैं जिनराज भूप॥
जय मुद्रा शांति विराजमान, जो लखि वैराग्य बढ़े महान।

जे देवीदेव सु आय आय, पूजें तिन पद मन वचन काय ।
जल मिष्ट सु उज्वल पय समान, चन्दन मलयागिरि को महान
जे अक्षत अनियारे सुलाय, जे पुष्पन की माला बनाय ।
चरु मधुर विविध ताजी अपार, दीपक मणिमय उद्योतकार ॥
जे धूप सु कृष्णागरु सुखेय, फल विविध भांति के मिष्ट लेय ।
वर अर्घ अनूपम करत देव, जिनराज चरण आगे चढ़ेव ॥
फिर मुखतें स्तुति करते उचार, हो करुणानिधि संसार तार ।
मैं दुःख सहे संसार ईश, तुमतैं छानी नांही जगीश ॥
जे इहविधि मौखिक स्तुति उचार, तिन नशत शीघ्र संसारभार
इह विधि जो जन पूजन कराय, ऋषिमंडल यंत्र सुचित्त लाय ॥
जे ऋषिमण्डल पूजा करन्त, ते रोग शोक संकट हरन्त ।
जे राजा रन कुल वृद्धि जान, जल दुर्ग सुगज केहरि बखान ॥
जे विपत घोर अरु कहि मसान, भय दूर करै यह सकल जान
जे राजभ्रष्ट ते राज पाय, पद-भृष्ट थकी पद शुद्ध थाय ॥
धनअर्थी धन पावै महान, यामें संशय कछु नाहिं जान ।
भार्याअर्थी भार्या लहन्त, सुतअर्थी सुत पावे तुरन्त ॥
जे रूपा सोना ताम्रपत्र, लिख तापर यन्त्र महा पवित्र ।
ता पूजैं भागें सकल रोग, जे वात पित्त ज्वर नाशि शोग ॥
तिन गृहतैं भूतपिशाच जान, ते भाग जाहिं संशय न आन
जे ऋषिमंडल पूजा करंत, ते सुख पावत कहि लहै न अंत ॥

जब ऐसो मैं मनमाहिं जान, तब भावसहित पूजा सुठान ।
वसुविधि से सुन्दर द्रव्य न्याय, जिनराजचरण आगे चढ़ाय ॥
फिर करत आरती शुद्ध भाव, जिनराज सभी लख हर्ष आव।
तुम देवन के हो देव देव, इक अरज चित्त में धारि लेव ॥
जे दीनदयाल दया कराय, जो मैं दुखिया इह जग भ्रमाय।
जे इस भव वन में वासलीन, जे काल अनादि गमाय दीन ॥
मैं भ्रमत चतुर्गति विपिन मांहि, दुख सहे सुक्ख को लेश नांहि
ये कर्म महारिपु जोर कीन, जे मनमाने बहु दुःख दीन ॥
ये काहू को नहिं डर धरांय, इनतैं भयभीत भयो अवाय ।
यह एक जन्म की बात जान, मैं कह न सकत हूं देव मान ॥
जब तुम अनंत परजाय जान, दरशायो संसृति पथ विधान।
उपकारी तुम बिन और नांहि, दीखत नाहीं इस जगत मांह ॥
तुम सबलायक ज्ञायक जिनंद, रत्नत्रय सम्पत्ति द्यो अमंद ।
यह अरज करूं मैं श्रीजिनेश, भव भव सेवा तुम पद हमेश ॥
भव भव में श्रावक कुल महान्, भव भव में प्रकटित तत्वज्ञान।
भव भव में व्रत हो अनागार, तिस पालनतैं हों भवाब्धि पार
ये योग सदा मुझको लहान, हे दीनबन्धु करुणा-निधान ।
"दौलत आसेरी" मित्र दोय, तुम शरण गही हर्षित सुहोय ॥

घत्तानन्द छन्द ।

जो पूजैं ध्यावैं, भक्ति बढावैं, ऋषिमण्डल शुभ यंत्र तनी ।
याभव सुख पावैं, सुजस लहावैं, परभव स्वर्ग सुलक्ष धनी ।।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय रोगशोकसर्वसंकटहराय सर्वशान्तिपुष्टिकराय, श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थङ्करअष्टवर्गअर्हदादिपंचपददर्शनज्ञानचारित्रसहिताय चतुर्णिकायदेवचतुःप्रकार-अवधिधारकश्रमणअष्टऋद्धिसंयुक्तचतुर्विंशतिसूरित्रिह्रींअर्हद्बिम्बदशदिक्पालयंत्रसम्बंधिपरमदेवाय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

आशीर्वाद ।

कुण्डलिया ।

ऋषिमण्डल शुभ यंत्र को, जो पूजै मन लाय ।
ऋद्धि सिद्धि ता घर बसै, विघ्न सघन मिटजाय ।।
विघ्न सघन मिट जाय, सदा सुख वो नर पावै ।
ऋषिमण्डल शुभ यंत्र तनी, जो पूज रचावै ।।
भाव भक्ति युत होय, सदा जो प्राणी ध्यावै ।
या भव में सुख भोग, स्वर्ग की सम्पत्ति पावै ।।
या पूजा परभाव मिटे, भव भ्रमण निरन्तर ।
यातैं निश्चय मानि करो, नित भाव भक्तिधर ।।

इत्याशीर्वादः । पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

तत्त्वार्थसूत्र पूजा

गीता छन्द

षट द्रव्य को जामें कह्यो जिनराज-वाक्य प्रमाण सों,
किय तत्त्व सातों का कथन जिन-आप्त-आगम मानसों।
तत्वार्थ-सूत्र हे शास्त्र सो पूजौ भविक मन धारि के,
लहि ज्ञान तत्त्व विचार भल शिव जा भवोदधि पारके॥

दोहा।

जामें षट द्रव्यहि कह्यौ, कह्यौ तत्त्व पुनि सात।
सो दश सूत्रहिं थापि के, जजें कर्म कटि जात॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवद्वादशांगसारभूत श्रीतत्वार्थसूत्र अत्र अवतर अवतर संवोषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट्।

सुन्दर छन्द

सुरसरी कर नीर सुलाय के, करि सुप्रासुक कुम्भ भरायके।
जजन सूत्रहि शास्त्रहि को करों, लहि सुतत्त्व-ज्ञानहि शिव वरों॥

ॐ ह्रीं श्रीतत्वार्थसूत्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयदारु पवित्र मगाय के, घसि कपूरवरेण मिलाय के।
जजन सूत्रहि शास्त्रहि० ॥

ॐ ह्रीं श्रीतत्वार्थसूत्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

भिनव शालि सुगंधित लाय के, खंड विवर्जित थाल भराय के।
जजन सूत्रहि शास्त्रहि० ॥

ॐ ह्रीं श्रीतत्वार्थसूत्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुमन बेल चमेलिहि केवरा, जिन सुगंध दशोंदिश विस्तरा।
जजन सूत्रहि शास्त्रहि० ॥

ॐ ह्रीं श्रीतत्वार्थसूत्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

वर सुहाल सुफेनिहि मोदका, रसगुला रसपूरित ओदका।
जनन सूत्रहि शास्त्रहि० ॥

ॐ ह्री श्रीतत्वार्थसूत्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत कपूर मणीकर दीयरा, करि उद्योत हरौ तम हीयरा।
जजन सूत्रहि शास्त्रहि० ।

ॐ ह्रीं श्रीतत्वार्थसूत्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु सुगंधित धूप दशांग ही, धरि हुताशन धूम उठाव ही।
जजन सूत्रहि शास्त्रहि० ।

ॐ ह्रीं श्रीतत्वार्थसूत्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रमुक दाख बदाम अनार ला, नरंग नीबुहि आमहि श्रीफला।
जजन सूत्रहि शास्त्रहि० ॥

ॐ ह्रीं श्रीतत्वार्थसूत्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल सुचन्दन आदिक द्रव्य ले, अरघ के भरि थालहि ले भले
जजन सूत्रहि शास्त्रहि को करों, लहि सुतत्त्व ज्ञानहि शिवबरों

ॐ ह्रीं श्रीतत्वार्थसूत्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मनहरण छन्द

विमल विमल वाणी, श्री जिनवर बखानी,
सुन भये तत्वज्ञानी ध्यान-आत्म पाया है।
सुरपति मनमानी सुरगण सुखदानी,
सु भव्य उर आना, मिथ्यात्व हटाया है ॥
समझहि सब नीके, जीव समवशरण के,
निज २ भाषा मांहि अतिशय दिखानी है।
निरअक्षर अक्षर के अक्षरन सों शब्द के,
शब्द सों पद बने जिन जू बखानी है ॥

पादाकुलक छन्द

संसार मोह में मोह तरा, प्रगटी जिन वाणी मोहहरा।
ऊद्धरत होत तम नाश करा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणिवरा ॥
अति मान सरोवर झील खरा, करुणारस पूरित नीर भरा।
दश धर्म वहे शुभ हंस तरा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणिवरा ॥
कल्पद्रु म के सम जान तरा, रत्नत्रय के शुभ पुष्ट वरा।
गुण तत्व पदार्थन पात्र फरा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणिवरा ॥

वसुकर्म महारिपु दुष्ट खरा, तसु उपजी फैली बेलि वरा।
तसु नाशन काहि कुठार करा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणि वरा
मद मायर लोभऽरु क्रोध धरा, ए कषाय महादुखदाय तरा।
तिन नाशि भवोदधि पार करा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणिवरा
वर षोडश कारण भाव धरा, षट् कायन रक्षण नियम करा
मद आठहु मर्दि के गर्द करा, प्रणमामि सूत्रजिनवाणिवरा
जिनवाणि न जाने त्रिजगत फिरा, जड़ चेतनभाव न भिन्नकरा
नहिं पायो आतम बोध वरा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणिवरा॥
शुभकर्म उद्योत कियो हियरा, जिनवाणिहि ज्ञान जग्यो जियरा
भवभरमणहर शिवमार्ग धरा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणिवरा॥
सुत कन्हईलाल परणाम करा, भगवानदास जिहि नाम धरा।
जिनवाणि वसो नित तिहि हियरा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणिवरा

घत्तानन्द छन्द

जिन वाणी माता, सब सुख दाता, भव भरमणहर मुक्तिकरा
शुभ सूत्रहि शास्त्रहि, बारहि बारहि दास जोरिकर नमन करा
ॐ ह्रीं श्रीतत्वार्थसूत्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द

जो पूजैं ध्यावैं भक्ति बढ़ावैं जिन वाणी सेती,
ते पावहिं धन धान्य संपदा पुत्र पौत्र जेती।
निरुग शरीर लहैं कीरति जग हरैं भ्रमण फेरी,
अनुक्रम सेती लहैं मोक्षथल तहंके होय बसेरी॥

इति श्री तत्वार्थसूत्र पूजा समाप्त।

सप्तऋषि पूजा ।

छप्पय ।

प्रथम नाम श्रीमन्व दुतिय स्वरमन्व ऋषीश्वर ।
तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुन्दर चौथो वर ॥
पंचम श्रीजयवान विनयलालस षष्टम भनि ।
सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्रधाम गनि ॥
ये सातौ चारण ऋद्धिधर, करूं तासु पद थापना ।
मैं पूजूं मनवचकायकरि, जो सुख चाहूं आपना ॥

ॐ ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वरा ! अत्रावतरत अवतरत संवौषट् ।

ॐ ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वरा ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।

ॐ ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वरा ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

गीता छन्द ।

शुभतीर्थ-उद्भव जल अनूपम, मिष्ट शीतल लायके,
भव तृषा कंद निकंद कारण, शुद्ध घट भरवायके ।
मन्वादि चारण ऋद्धिधारक, मुनिनकी पूजा करूं,
ता करें, पातिक हरें सारे, सकल आनन्द विस्तरूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलालसजयमित्रर्षिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा

श्रीखण्ड कदलीनन्द केशर, मन्द मन्द घिसायके ।
तसु गंध प्रसरति दिग दिगन्तर, भर कटोरी लायके ॥

मन्वादि चारण० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलाल-सजयमित्रर्षिभ्यो चंदन निर्वपामीति स्वाहा ।

अति धवल अक्षत खण्ड-वर्जित, मिष्ट राजन भोगके ।
कलधौत थारा भरत सुन्दर, चुनित शुभ उपयोगके ॥

मन्वादि चारण० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलाल-सजयमित्रर्षिभ्यो अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा ।

बहु वर्ण सुवरण सुमन आछे, अमल कमल गुलाबके ।
केतकी चम्पा चारु मरुआ, चुने निजकर चावके ॥

मन्वादि चारण० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलाल-सजयमित्रर्षिभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पकवान नाना भांति चातुर, रचित शुद्ध नये नये ।
सदमिष्ट लाडू आदि भर बहु, पुरटके थारा लये ॥

मन्वादि चारण० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलाल-सजयमित्रर्षिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा

कलधौत दीपक जड़ित नाना, भरित गोघृतसारसों ।
अतिज्वलित जगमगज्योति जाकी, तिमिरनाशनहारसों ।।
मन्वादि चारण० ।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलाल-सजयमित्रर्षिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दिक्चक्र गंधित होत जाकर, धूप दशअंगी कही ।
सो लाय मनवचकाय शुद्ध, लगायकर खेऊं सही ।।
मन्वादि चारण० ।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलाल-सजयमित्रर्षिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायके ।
द्रावड़ी दाडिम चारु पुङ्गी, थाल भर भर भायके ।।
मन्वादि चारण० ।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वयनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलाल-सजयमित्रर्षिभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु वर, दीप धूप सु लावना ।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ।।
मन्वादि चारण० ।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलाल-सजयमित्रर्षिभ्यो अर्घं स्वाहा ।

जयमाला ।

छन्द त्रिभंगी ।

वंदू ऋषिराजा, धर्म जहाजा, निज पर काजा, करत भले ।
करुणाके धारी, गगन विहारी, दुख-अपहारी, भरम दले ॥
काटत जमफंदा, भविजनवृन्दा, करत अनंदा चरणनमें ।
जो पूजैं ध्यावैं, मंगल गावैं, फेर न आवैं भववनमें ॥

पद्धरी छन्द ।

जय श्रीमनु मुनिराजा महंत, त्रस थावरकी रक्षा करंत ।
जय मिथ्यातम नाशक पतंग, करुणारसपूरित अंग अंग ॥
जय श्रीस्वरमुन, अकलंकरूप, पद सेव करत नित अमरभूप ।
जय पंच अक्ष जीते महान, तप तपत, देह कंचन समान ॥२॥
जय निचय सप्त तत्वार्थभास, तप रमातनो तनमें प्रकाश ।
जय विषयरोध संबोध भान, परपरिणतिके नाशन अचल ध्यान ॥
जय जयहि सर्वसुन्दर दयाल, लखि इन्द्रजा[illegible] जगतजाल ।
जय तृष्णाहारी रमणराम, निज परणतिमें पायो विराम ॥४॥
जय आनंदघन कल्याणरूप, कल्याण करत सबको अनूप ।
जय मदनाशन जयवान देव, निरमद विचरत सब करत सेव ॥
जय जयहि विनयलालस अमान, सब शत्रुमित्र जानत समान ।
जय कृशितकाय तपके प्रभाव, छवि छटा उडति आनंददाय ॥

जयमित्र सकल जगके सुमित्र, अनगिनत अधम कीने पवित्र।
जय चंद्रवदन राजीवनैन, कबहूं विकथा बोलत न बैन ॥ ७ ॥
जय सातौ मुनिवर एक संग, नित गगन-गमन करते अभंग।
जय आये मथुरापुर मंझार, तहं मरी रोगको अति प्रचार ॥ ८ ॥
जय जय तिन चरणनि के प्रसाद, सब मरी देवकृत भई बाद।
जय लोक करे निर्भय समस्त, हम नमत सदा नित जोरि हस्त ॥
जय ग्रीषमऋतु पर्वतमंझार, नित करत अतापन योग सार।
जय तृषा परीषह करत जेर, कहुं रंच चलत नहिं मन सुमेर ॥
जय मूल अठाइस गुणन धार, तप उग्र तपत आनंदकार।
जय वर्षाऋतुमें वृक्षतीर, तहं अति शीतल झेलत समीर ॥११॥
जय शीतकाल चौपट मंझार, कै नदी सरोवर तट विचार।
जय निवसत ध्यानारूढ होय, रंचक नहिं मटकट रोम कोय ॥
जय मृतकासन वज्रासनीय, गोदूहन इत्यादिक गनाय।
जय आसन नाना भांति धार, उपसर्ग सहित ममता निवार ॥
जय जपत तिहारो नाम कोय, लख पुत्रपौत्र कुलवृद्धि होय।
जय भरे लक्ष अतिशय भंडार, दारिद्रतनो दुख होय छार ॥
जय चोर अग्नि डांकिन पिशाच, अरु ईति भीति सब नसत सांच
जय तुम सुमरत सुख लहत लोक, सुर असुर नवत पद देत धोक

रोला—

ये सातौ मुनिराज महातप लछमीधारी,
परम पूज्य पद धरैं सकल जगके हितकारी।
जो मनबचतन शुद्ध होय सेव औ ध्यावैं,
सो जन मनरंगलाल अष्ट ऋद्धिनकों पावै।

दोहा

नमन करत चरनन परत, अहो गरीबनिवाज।
पंच परावर्तननितैं, निरवारो ऋषिराज॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलाल-
सजयमित्रर्षिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्व पूजायें

देवपूजा।

दोहा।

प्रभु तुम राजा जगतके, हमें देय दुख मोह।
तुम पद पूजा करत हूं, हम पै करुणा होहि ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवन् अत्रावतरावतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

छंद त्रिभंगी।

बहु तृषा सतायो, अति दुख पायो, तुमपै आयो जल लायो
उत्तम गंगाजल, शुचि अति शीतल, प्रासुक निर्मल गुन गायो
प्रभु अंतरजामी त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवद्भ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

अघ तपत निरंतर, अगनिपटंतर, मो उरअंतर, खेद कर्यो
लै बावन चंदन, दाहनिकंदन, तुमपदवंदन, हरष धर्यो ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै दया धरो ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवद्भ्यो भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामि ॥२॥

औगुन दुखदाता, कह्यो न जाता, मोहि असाता, बहुत करै।
तंदुल गुनमंडित, अमल अखंडित, पूजत पंडित, प्रीति धरै ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै न्याय करीजै दया धरो ॥३॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवद्भ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामि ॥३॥

सुरनर पशुको दल, काम महाबल, बात कहत छल, मोहि लिया
ताके शर लाऊं फूल चढाऊं, भगति बढाऊं, खोल हिया ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै न्याय करीजै, दया धरो ॥४॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवद्भ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामि स्वाहा ॥४॥

सब दोषनमाही, जासम नाही, भूख सदा ही मो लागै।
सद घेवर बावर, लाडू बहुधर, थार कनकभर, तुम आगै ॥
प्रभु अन्तरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी दोष हरो।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो ॥५॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवद्भ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामि स्वाहा ॥५॥

अज्ञान महातम, छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम, दुख पावैं।
तम मेटनहारा, तेज अपारा, दीप सँभारा, जस गावैं ॥
प्रभु अन्तरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै न्याय करीजै, दया धरो ॥६॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवद्भ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामि स्वाहा ॥६॥

इक कर्म महावन, भूल रह्यो जन शिवमारग नहिं पावत है।
कृष्णागरुधूपं, अमलअनूपं, नित्यस्वरूपं, ध्यावत है ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो।
यह अरज सुनीजे, ढील न कीजे न्याय करीजै, दया धरो ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवद्भ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सबतैं जोरावर, अंतराय अरि, सुफल विघनकरि डारत है।
फलपुंज विविधभर, नयन मनोहर, श्रीजिनवरपद धारत है ॥
प्रभु अन्तरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष करो।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवद्भ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों दुखदानी, आठनिसानी, तुम हिम आनी, वारन हो ।
दीननिस्तारन, अधमउधारन, 'द्यानत' तारन कारन हो ॥
प्रभु अन्तरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ।
यह अरज सुनीजे, ढील न कीजे, न्याय करीजे, दया धरो ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-भगवद्भ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

दोहा ।

गुण अनंत को कहि सकै, छियालीस जिनराय ।
प्रगट सुगुन गिनती करूं, तुम ही होहु सहाय ॥ १ ॥

छंद चौपाई १६ मात्रा

एक ज्ञान केवल जिन स्वामी, दो आगम अध्यातम नामी ।
तीन काल विधि परगट जानी, चार अनंत चतुष्टय ज्ञानी ॥२॥
पंच परावर्तन परकासी, छहों दरब गुन परजय भासी ।
सातभंग वानी परकाशक, आठों कर्म महारिपु नाशक ॥ ३ ॥
नव तत्वनके भाषनहारे, दश लच्छनसों भविजन तारे ।
ग्यारह प्रतिमाके उपदेशी, बारह सभा सुखी अकलेशी ॥ ४ ॥
तेरहविध चारितके दाता, चौदह मारगनाके ज्ञाता ।
पंद्रह भेद प्रमादनिवारी, सोलह भावन फल अविकारी ॥५॥
तारे सत्रह अंक भरत भुव, ठारै थान दान दाता तुव ।

भाम उनीस जु कहे प्रथमगुन, बीस अंक गणधरजीकी धुन ॥
इकइस सर्व घातविध जानै, बाइस बंध नवम गुणथानैं ।
तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर, सो पूजैं चौबीस जिनेश्वर ॥
पचीस कषाय जु नाश करी हैं, देशघाति छब्बीस हरी हैं ।
तत्व दरब सताइस देखैं, मति विज्ञान अठाइस पेखैं ॥७॥
उनतिस अंक मनुष सब जानै, तीस कुलाचल सर्व बखानै ।
इकतिस पटल सुधर्म निहारे, बत्तिस दोष समाइक टारे ॥८॥
तेतिस सागर सुखकर आये, चौतिस भेद अलब्धि बताये ।
पैंतिस अच्छर जप सुखदाई, छत्तिस कारन नीति मिटाई ॥
सैंतिस मग कहि ग्यारह गुनमें, अठतिस पद लहि नरक अपुनमें
उनतालीस उदीरन तरम,चालिस भवन इंद्र पूजैं नम ॥
इकतालीस भेद आराधन, उदै बियालिस तीर्थंकर भन ।
तेतालीस बंध ज्ञाता नहिं, द्वार चवालिस नर चौथेमहिं ॥
पैंतालीस पल्यके अच्छर, छियालीस विन दोष मुनीश्वर ।
नरक उदै न छियालिस मुनिधुन, प्रकृतिछियालिस नाश दशमगुन
छियालीसघन राजु सात भुव, अंक छियालिस सरसों कहि कुब
भेद छियालिस अंतर तपवर, छियालीस पूरन गुन जिनवर ॥

अडिल्ल ।

मिथ्या तपत निवारन चंद समान हो,
मोहतिमिर वारनको कारन भान हो ।

काल कषाय मिटावन मेघ मुनीश हो,
'द्यानत' सम्यक रतनत्रय गुनईश हो ॥१५॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवद्भ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस्वतीपूजा।

दोहा।

जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जडरीति।
भवसागरसों ले तिरै, पूजें जिनवचप्रीति॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वति वाग्वादिनि! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठतिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहिता भवभव वषट्।

त्रिभंगी।

छीरोदधि गंगा, विमल तरंगा, सलिल अभंगा, सुखसंगा।
भरि कंचन झारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हित चंगा॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई॥
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जलं निर्वपामीति स्वाहा।
करपूर मंगाया, चन्दन आया, केशर लाया, रंग भरी।
शारदपद वंदौं मन अभिनंदौं, पापनिकंदौं, दाह हरी॥

तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई ।
सो जिनवर वानी, शिवसुखदादानी, त्रिभुवनमानी, पूज्यभई ॥
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुखदासकमोदं, धारप्रमोदं, अतिअनुमोदं, चंदसमं ।
बहुभक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मात ममं ॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अङ्ग रचे चुनि, ज्ञानमई ।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्यभई ॥
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

बहुफूलसुवासं, विमलप्रकाशं, आनंदरासं, लाय धरे ।
मम काम मिटायो, शीलबढ़ायो, सुखउपजायो, दोष हरे ॥
तीर्थङ्करकी धुनि, गनधरने सुनि, अङ्ग रचे चुनि, ज्ञानमई ।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्यभई ॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्वपामि ।

पकवान बनाया, बहुघृत लाया, सब विधि भाया, मिष्ट महा ।
पूजूं थुति गाऊं, प्रीति बढ़ाऊं, क्षुधा नशाऊं, हर्ष लहा ॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई ।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्यभई ॥५
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामि स्वाहा ॥

करि दीपकज्योतं तम छय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहिं चढ़ै ।

तुम हो परकाशक, भरमविनाशक, हम घटभासक, ज्ञान बढ़ै ॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्यभई ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामि स्वाहा ॥

शुभगंध दशोंकर, पावकमें धर धूप मनोहर, खेवत हैं।
सब पाप जलावैं, पुण्य कमावे, दास कहावैं, सेवत हैं ॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अङ्ग रचे चुनि, ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी पूज्यभई ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामि स्वाहा ॥

बादाम छुहारो, लोंग, सुपारी, श्रीफलभारी, ल्यावत हैं।
मनवांछित दाता, मेट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं ॥
तीर्थंकरकी धुनि गनधरने सुनि, अङ्ग रचे चुनि, ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्यभई ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामि स्वाहा ॥

नयननसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्वलभारी, मोल धरै।
सुभगंधसम्हारा, वसननिहारा, तुमतरधारा, ज्ञानकरै ॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदाना, त्रिभुवनमानी, पूज्यभई ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं निर्वपामीति स्वाहा।

जलचंदन अच्छत, फूल चरोंचत, दीपधूप अति, फल लावै।
पूजाको ठानत, जो तुम जानत, सो नर द्यानत, सुख पावै॥
तीर्थंकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्यभई॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला।

सोरठा।

ओङ्कार धुनिसार, द्वादशांग वाणी विमल।
नमों भक्ति उरधार, ज्ञान करै जड़ता हरै॥

बेसरी।

पहला आचारांग बखानो, पद अष्टादश सहस प्रमानो।
दूजा सूत्रकृतं अभिलाषं, पद छत्तीस सहस गुरु भाषं॥ १॥
तीजा ठाना अंग सुजानं, सहस बियालिस पदसरधानं।
चौथो समवायांग निहारं, चौसठ सहस लाख इकधारं॥ २॥
पंचम व्याख्याप्रगपति दरशं, दोय लाख अट्ठाइस सहसं।
छट्ठा ज्ञातृकथा विसतारं, पांचलाख छप्पन हजारं॥ ३॥
सप्तम उपासकाध्ययनंगं, सत्तर सहस ग्यारलख भंगं।
अष्टम अंतकृतं दस ईसं, सहस अठाइस लाख तेईसं॥ ४॥

नवम अनुत्तर अंग विशालं, लाख बानवें सहस चवालं।
दशम प्रश्नव्याकरण विचारं, लाख तिरानवें सोल हजारं ॥५॥
ग्यारम सूत्रविपाक सो भाषं, एक कोड़ चौरासी लाखं।
चार कोड़ि अरु पन्द्रह लाखं, दो हजार सब पद गुरुशाखं ॥६॥
द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं, इकसौ आठ कोड़ि पद वेदं।
अठसठ लाख सहस छप्पन हैं, सहित पंचपद मिथ्याहन हैं ॥
इक सौ बारह कोडि बाखने, लाख तिरासी ऊपर जाने।
अठावन सहस पंच अधिकाने, द्वादश अङ्ग मात्र पद माने ॥८॥
इकावन कोड़ि आठ ही लाखं, सहस सौरासी चहसौ माखं।
साढ़े इकीस शिलोक बनाये, एक एक पदके ये गाये ॥ ९ ॥

धत्ता।

जा बानीके ज्ञानसों, सूझे लोक अलोक।
'द्यानत' जग जयवंत हो, सदा देत हूं धोक ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्‌गतसरस्वत्यै देव्यै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरुपूजा।

दोहा।

चहुँ गति दुखसागरविषै, तारनतरनजिहाज।
रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठ ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भवभव । वषट् ।

गीता छन्द ।

शुचि नीर निरमल छीरदधिसम, सुगुरु चरन चढ़ाइया ।
तिहुं धार तिहुं गदटार स्वामी, अति उछाह बढ़ाइया ॥
भवभोगतन वैरागधार निहार, शिवतप तपत हैं ।
तिहुं जगतनाथ अराधसाधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जन्ममृत्युविनाशयनाय जलं नि० ।

करपूर चंदन सलिलसौं घसि, सुगुरुपद पूजा करों ।
सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल विस्तरों ॥
भवभोगतन वैरागधार निहार, शिवतप तपत हैं ।
तिहुँ जगतनाथ अराधसाधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

भिनवा कमोद सुवास उज्जल, सुगुरुपगतर धरत हैं ।
गुनकार औगुनहार स्वामी, वंदना हम करत हैं ॥

भवभोगतन वैरागधार निहार, शिवतप तपत हैं।
तिहुं जगतनाथ अराधसाधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा।

शुभफूलरास प्रकास परिमल, सुगुरुपायनि परत हों।
निरवार मार उपाधि स्वामी, सीलदिढ उर धरत हों ॥
भवभोगतन वैरागधार निहार, शिवतप तपत हैं।
तिहुं जगतनाथ अराधसाधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्य कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मिष्ट सलौन सुन्दर, सुगुरु पायँन प्रीतसों।
कर छुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजे रीतसौं ॥
भवभोगतन वैरागधार निहार, शिवतप तपत हैं।
तिहुं जगतनाथ अराधसाधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥५

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्य क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति।

दीपक उदोत सजोत जगमग, सुगुरुपद पूजों सदा।
तमनाश ज्ञानउजास स्वामी, मोहि मोह न हो कदा ॥
भवभोगतन वैरागधार निहार, शिवतप तपत हैं।
तिहुं जगतनाथ अराधसाधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥६॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बहु अगर आदि सुगंध खेऊं, सुगुरु पद पद्महि खरे ।
दुख पुञ्ज काट जलाय स्वामी, गुण अछय चितमें धरे ॥
भव भोगतन वैरागधार निहार, शिवतप तपत हैं ।
तिहुँ जगतनाथ अराधसाधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योअष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

भरथाल पूर बदाम बहुविधि, सुगुरुक्रम आगें धरों ।
मंगल महाफल करो स्वामी, जोरकर विनती करों ॥
भव भोगतन वैरागधार निहार, शिवतप तपत हैं ।
तिहुँ जगतनाथ अराधसाधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ।

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली ।
'द्यानत' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहि तार उतावली ॥
भव भोगतन वैरागधार निहार, शिवतप तपत हैं ।
तिहुँ जगतनाथ अराधसाधु सु पूज नित गुन जपत हैं ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योअनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

दोहा ।

कनककामिनीविषयवस, दीसै सब संसार ।
त्यागी वैरागी महा, साधु सुगुन भंडार ॥
तीन घाटि नवकोड़ सब वंदों सीस नवाय ।
गुण तिहँ अट्ठाईस लों, कहूं आरती गाय ।

छंद बेसरी ।

एक दया पालै मुनिराज, रागदोष दो हरन परं ।
तीनों लोक प्रगट सब देखैं, च्यारों आराधननिकरं ॥
पंच महाव्रत दुद्धर धारैं छहों दरब जानै सुहितं ।
सात भंगवानी मनलावे, पावै आठ ऋद्धि उचितं ॥
नवों पदारथ विधिसों भाखै, बंध दशों चूरन करनं ।
ग्यारह शंकर जानै मानै, उत्तम बारह व्रत धरनं ॥
तेरहभेद काठिया चूरे, चौदह गुनथानक लखियं ।
महाप्रमाद पंचदश नाशे, सोलकषाय सबै नखियं ॥ ४ ॥
बंधादिक सत्रह सूतर लख, ठारह जन्म न मरन मुनं ।
एक समय उनईस परीषह, वीस प्ररूपनिमें निपुनं ॥
भाव उदीक इकीसों जानै, बाइस अमखन त्याग करं ।
अहिमिंदर तेईसों बंदै, इन्द्र सुरग चौबीस वरं ॥ ५ ॥

पच्चीसों भावन नित भावैं, छहसो अंगउपंग पढ़ै।
सत्ताईसौं विषय विनाशै, अट्ठाईसौं गुन सु बढै ॥
शीतसमय सर चौपटवासी, ग्रीषमगिरिसिर जोग धरैं।
वर्षा वृक्षतरैं थिर ठाढे, आठकरमहनि सिद्धि वरैं ॥ ६ ॥

दोहा।

कहों कहाँ लों भेद मैं, बुधि थोरी गुन भूर।
हेमराज सेवक हृदय, भक्ति भरी भरपूर ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहस्रकूटजिन चैत्यालय पूजा।

हरिगीतिका छन्द।

सहसकूट जिनचैत्य परमसुन्दर सुखकारी।
पावनपुन्यनिधान दरस है जग अघहारी ॥
रोगशोकदुख हरैं विपति दारिद्र नसावैं।
जो जन प्रीति लगाय नियमसे नित गुन गावैं ॥

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयानि ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयानि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः।

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयानि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

नीरगंगको सुचि ल्यायके, कनक कुम्भनमें सु भरायके ।
धार दे जिन सम्मुख हूजिये, सहसकूट जिनालय पूजिये ॥

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयेभ्य जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जगतमें जे गध सुहावनी ल्यायकर ले अति मन भावनी
तापहर जिन सम्मुख हूजिये, सहसकूट जिनालय पूजिये ॥

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयेभ्यश्चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अमल तन्दुल स्वेत मंगाइये, जासतें अक्षयपद पाइये ।
थालभर जिन सम्मुख हूजिए, सहसकूट जिनालय पूजिये ॥

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयेभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

कल्पवृक्षनके अतिमोहने, फूल करमें ले मनमोहने ।
मदनहर जिन सन्मुख हूजिये, सहसकूट जिनालय पूजिये ॥

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचत्यालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

निज सु आतमके हितकारनें, भूखकी बाधा सु बिडारनें ।
चरु सु ले जिन सम्मुख हूजिये, सहसकूट जिनालय पूजिये ॥

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जगत जीवन मोह भरा हिये, तासुके तम नाशनके लिये ।
दीप ले जिन सम्मुख हूजिये, सहसकूट जिनालय पूजिये ॥

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप ले धूपायन डारने, अष्ट कर्मनके अघ जारने।
कर्म हर जिन सम्मुख हूजिये, सहसकूट जिनालय पूजिये॥

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मधुरफल उत्तम संसारमे, शिवप्रियाहित भरकर थारमें।
शिवपतिके सम्मुख हूजिये, सहसकूट जिनालय पूजिये॥

ॐ ह्रीं सहस्रकटजिनचैत्यालयेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल सु आदिक द्रव्य सुधामई, सुखदपद कर धर ले सही।
शुद्ध मन जिन सन्मुख हूजिये, सहसकूट जिनालय पूजिये॥

हरिगीतिका छन्द।

वसुविधि द्रव्य मिलाय, परमसुन्दर सुखदाई।
पूजैं श्रीजिनसहसकूट, मंगलमय भाई॥
ऋद्धि सिद्धि दातार, और भव रोग मिटावे।
श्रद्धा भक्तिसहित, पूर्ण जो अर्घ चढ़ावे॥ ६॥

ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

दोहा।

सहसकूट जिनभवनकी, भक्ति हियेमें धार।
सुनों सरस जयमाल यह, तज मन सकल विकार॥१॥

पद्धरी छन्द।

सहसकूट जिनभवन सार, हैं मध्यलोकके जे मझार।
कृत्रिम सु अकृत्रिम दो प्रकार, भाषे जिनवर जगमें निहार॥
जिनमें जिन प्रतिमाको प्रमाण, है सहस एक वसु अधिक जान
पाषान धातुमइ अति पवित्र, रचना है सुखदायक विचित्र॥
जिस नाम लेत सब हरे ताप, भवभवके नाशें सकल पाप।
है तीन लोक आनन्ददाय, सुर नर खग पूजन आय आय॥
कोटीभट राजा श्रीपाल, और अनेकन नृप निहाल।
सहसकूट जिनभवन बंद, कर्मनके काटे अमित फंद॥ ५॥
सोहै रचना अद्भुत अटूट, श्रीजिनवर आलय सहसकूट।
है बनो अनुपम अति विशाल, ताको कछु वर्णन करहिं लाल॥
है भरत क्षेत्रके मध्य धाम, इक आय बुन्देला खण्ड धाम।
ताको जु केन्द्रअति विशदगात, है झाँसीनगर सुजग विख्यात
तहां श्रीजिन मन्दिर है महान, तामें वेदी सोभै प्रधान।
वर सहसकूट जिन भवनसार, है धातु मई रचना अपार॥
तहं स्तुतिवन्दन करहिं भव्य, अरचें नित लै कर अठट द्रव्य
हमहू तिनकी पूजन रचाय, कर रहे सकल मन वचन काय॥

घत्ता।

सहसकूट जिनभवन हैंऽनूपम, ताकी सेव करे मन लाय।
ताके मन अति सुमति प्रकाशै, दुर्गति जगकी जाय पलाय॥

वृद्धि होय नित सम्पति गृहमें, तातैं धर्म बुद्धि हुलशाय ।
पात्र धर्मका वन "वसन्त" जग, अनुक्रम करके शिवसुख पाय ॥
ॐ ह्रीं सहस्रकूटजिनचैत्यालयेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
इत्याशीर्वादः (पुष्पाजलिं क्षिपेत)

षोडशकारणपूजा संस्कृत ।

ऐंद्रं पदं प्राप्य परं प्रमादं धन्यात्मतामात्मनि मन्यमानः ।
दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेंद्रलक्ष्म्या महाम्यहं षोडशकारणानि ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्रावतरत अवतरत संवौषट् ।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

सुवर्णभृंगारविनिर्गताभिः पानीयधाराभिरिमाभिरुच्चैः ।
दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेंद्रलक्ष्म्या महाम्यहं षोडशकारणानि ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि-विनयसम्पन्नता-शीलव्रतेष्वनतीचारा-भीक्ष्णज्ञानोपयोग-संवेग शक्तितस्त्यागतपः-साधुसमाधि-वैयावृत्यकरण-अर्हद्भक्ति-आचार्यभक्ति-प्रवचनभक्ति-आवश्यकापरिहाणि मार्गप्रभवना-प्रवचनवात्सल्येति-तीर्थंकरत्वकारणेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखंडपिंडोद्भवचंदनेन, कर्पूरपूरैः सुरभीकृतेन । दक्०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थूलैरखंडैरमलैः सुगंधैः शाल्यक्षतैः सर्वजनान्नमस्यैः । दक्०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

गुञ्जद्द्विरेफैः शतपत्रजातीसत्केतकीचंपकमुख्यपुष्पैः । दक्०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नवीनपक्वान्नविशेषसारैर्नानाप्रकारैश्चरुभिर्विशिष्टैः । दक्०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेजोमयोल्लासशिखैः प्रदीपैः दीपप्रभैर्ध्वस्तविमोवितानैः । दक्०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूरकृष्णागरुचूर्णरूपैर्धूपैर्हुताशाहुतदिव्यगंधैः । दक्०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सन्नालिकेरक्रमुकाम्रबीजपूरादिभिः सारफलैः रसालैः । दक्०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पानीयचंदनरसाक्षतपुष्पभोज्यसद्दीपधूपफलकल्पितमर्घपात्रं ।
आर्हंत्यहेत्वमलषोडशकारणानां पूजाविधौ विमलमंगलमातनोतु

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यदा यदोपवासाः स्युराकर्ण्यन्ते तदा तदा।
मोक्षसौख्यस्य कर्तॄणि कारणान्यपि षोडश ॥

(इति पठित्वा यंत्रोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्—यंत्रके ऊपर पुष्प चढ़ाना चाहिये)

अमत्यसहिता हिंसा मिथ्यात्वं च न दृश्यते।
अष्टांग यत्र सयुक्तं दर्शनं तद्विशुद्धये ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शनज्ञानचारित्रतपसां यत्र गौरवं।
मनोवाक्कायसंशुद्ध्या सा ख्याता विनयस्थितिः ॥२॥

ॐ ह्रीं विनयसंपन्नतायै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अनेकशीलसंपूर्णं व्रतपंचकसंयुतं।
पंचविंशतिक्रिया यत्र तच्छीलव्रतमुच्यते ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं निरतिचारशीलव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

काले पाठस्तवो ध्यानं शास्त्रे चिंता गुरौ नुतिः।
यत्रोपदेशना लोके शास्त्रज्ञानोपयोगता ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अभीक्ष्णज्ञानोपयोगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पुत्रमित्रकलत्रेभ्यः संसारविषयार्थतः
विरक्तिर्जायते यत्र स संवेगो बुधैः स्मृतः ॥

ॐ ह्रीं संवेगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा

जघन्यमध्यमोत्कृष्टपात्रेभ्यो दीयते भृशं ।
शक्त्या चतुर्विधं दानं सा ख्याता दानसंस्थितिः ॥

ॐ ह्रीं शक्तितस्त्यागायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

तपो द्वादशभेदं हि क्रियते मोक्षलिप्सया ।
शक्तितो भक्तितो यत्र भवेत् सा तपसः स्थितिः ॥

ॐ ह्रीं शक्तितस्तपसेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

आर्या ।

मरणोपसर्गरोगादिष्टवियोगादनिष्टसंयोगात् ।
न भयं यत्र प्रविशति, साधुसमाधिः स विज्ञेयः ॥

ॐ ह्रीं साधुसमाधयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनुष्टुप् ।

कुष्टोदरव्यथाशूलैर्वातपित्तशिरोर्तिभिः ।
कासश्वासजरारोगैः पीडिता ये मुनीश्वराः ॥
तेषां भैषज्यमाहारं शुश्रूषापथ्यमादरात् ।
यत्रैतानि प्रवर्तंते वैयावृत्यं तदुच्यते ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं वैयावृत्यकरणायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

मनसा कर्मणा वाचा जिननामाक्षरद्वयं ।
सदैव स्मर्यते यत्र सार्हद्भक्तिः प्रकीर्तिता ॥
ॐ ह्रीं अर्हद्भक्त्येऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
निर्ग्रंथभुक्तितो भुक्तिस्तस्य द्वारावलोकनं ।
तद्भोज्यालाभतो वस्तुरसत्यागोपवासता ॥
तत्पादवंदनापूजा प्रणामो विनयो नतिः ।
एतानि यत्र जायंते गुरुभक्तिर्मता च सा ॥
ॐ ह्रीं आचार्यभक्त्येऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
भवस्मृतिरनेकांतलोकालोकप्रकाशिका ।
प्रोक्ता यत्रार्हता वाणी वर्ण्यते सा बहुश्रुतिः ॥
ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्त्येऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
षद्द्रव्यपंचकायत्वं सप्ततत्वं नवार्थता ।
कर्मप्रकृतिविच्छेदो यत्र प्रोक्तः स आगमः ॥
ॐ ह्रीं प्रवचनभक्त्येऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
प्रतिक्रमस्तनूत्सर्गः समता वंदना स्तुतिः ।
स्वाध्यायः पठ्यते यत्र तदावश्यकमुच्यते ॥
ॐ ह्रीं आवश्यकापरिहाण्येऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा
जिनस्नानं श्रुताख्यानं गीतवाद्यं च नर्तनं ।
यत्र प्रवर्तते पूजा सा सन्मार्गप्रभावना ॥
ॐ ह्रीं सन्मार्गप्रभावनायै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चारित्रगुणयुक्तानां मुनीनां शीलधारिणां ।
गौरवं क्रियते यत्र तद्वात्सल्यं च कथ्यते ।

ॐ ह्रीं प्रवचनवत्सलत्वायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

भवभवहि निवारण सोलहकारण, पयडमि गुणगणसायरहं ।
पणविवि तित्थंकर असुहखयंकर, केवलणाणदिवायरहं ॥

पद्धरी छंद ।

दिढ धरहु परमदंसण विसुद्धि, मणवयणकायविरइयसुद्धि ।
मा छंडहु विणऊ चउ पयार, जो मुत्तिवरंगण हियहि हार ॥
अणुदिणु परिपालउ सीलभेउ, जो हुणि हरइ संसारहेउ ।
णाणोपजोग जो काल गमइ, तसु तणिय किट्ठि भुवणयहि भमइ
संवेउ चाउ जे अणुसरंति, वेएणा भवयणउ ते तरन्ति ।
जे चउविह दाण सुपत्त देय, ते भोइभूमि सुह सत्थ लेय ॥
जे तव तवंति बारहपयार, ते सग्गसुरिंदइहविहवसार ।
जो साधुसमाधि धरंति थक्कु, सो हवइ ण कालइहंधुवक्कु॥
जो जाणइ वैयावच्चकरण, सो होइ सव्वदोसाण हरण ।
जो चिंतइ मण अरिहंत देव, तसु विसय अणंतामलखेव ॥
पच्चयणसरिस जे गुरु णमंति, चउगइसंसार ण ते भमंति ।
बहुसुयह भत्ति जे णर करन्ति, अप्पउ रयणत्तय ते धरन्ति ॥

जे छह आवासइ चित्तदेइ, सो सिद्धपंथसहरस्थ लेइ।
जे मग्गपहावण आइरंति, ते अहमिंद सख संभवंति॥
जे पवयणकज्जसमत्थ हंति, तहं कम्म जिणंदह खवण भंति।
जे वच्छलच्छ कारण वहंति, ते तित्थयरत्तउ पुह लहंति॥

घत्ता।

जे सोलहकारण कम्मवियारण जे धरंति वयसीलधरा।
ते दिवि अमरेसुर पहुमि णरेसुर सिद्धवरंगण हियहि हरा॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

एताः षोडश भावना यतिवराः कुर्वंति ये निर्मलाः,
ते वै तीर्थंकरस्य नामपदवीमायुलभंते कुलं।
चित्तं कांचनपर्वतेषु विधिना स्नानार्चनं दवतां,
राज्यं सौख्यमनेकधा वरतपो मोक्षं च सौख्यास्पदं॥

(इत्याशीर्वादः)

सोलहकारणपूजा (भाषा)।

अडिल्ल।

सोलहकारण भाय तीर्थंकर जे भये, हरषे इन्द्र अपार मेरुपै लेगये
पूजाकरि निज धन्य लख्यो बहु चावसौं, हमहू षोडशकारन
भावैं भावसौं॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् ।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

चौपाई

कंचनझारी निरमल नीर, पूजों जिनवर गुनगंभीर ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकरपददाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवरके पाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

तंदुल धवल सुगंध अनूप, पूजौं जिनवर तिहु जगभूप ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्

फूल सुगंध मधुपगुंजार, पूजौं जिनवर जगआधार ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सदनवेज बहुविधि पकवान, पूजौं श्रीजिनवर गुणखान।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरश०॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपकजोति तिमिर छयकार, पूजूं श्रीजिन केवलधार।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥
दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकरपददाय।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योमोहान्धकारविनाशाय दीपं

अगर कपूर गंध शुभ खेय, श्रीजिनवर आगे महकेय।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरश०॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि०

श्रीफल आदि बहुत फलसार, पूजौं जिन वांछितदातार।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरश०॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं०

जल फल आठों दरव चढाय, 'द्यानत' वरत करों मनलाय।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥
दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकरपददाय।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं०

दोहा।

षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास।
पाप पुण्य सब नाशकैं, ज्ञानभान परकाश॥

चौपाई १६ मात्रा।

दरशविशुद्धि धरै जो कोई, ताको आवागमन न होई।
विनय महाधारै जो प्राणी, शिववनिताकी सखी बखानी॥
शील सदा दिढ जो नर पालै, सो औरन की आपद टालै।
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं, ताके मोहमहातम नाहीं॥
जो संवेगभाव विसतारै, सुरगमुकति पद आप निहारै।
दान देय मन हरष विशेख, इह भव जस परभव सुख देखै॥
जो तप तपै खपै अभिलाषा, चूरै करमशिखर गुरु भाषा।
साधुसमाधि सदा मन लावै, तिहुजगभोग भोगि शिव जावैं॥
निशदिन वैयावृत्य करैया, सो निहचै भवनीर तिरैया।
जो अरहंतभगति मन आनै, सो जन विषय कषाय न जानै॥
जो आचारजभगति करै है, सो निर्मल आचार धरै है।
बहुश्रुतवंतभगति जो करई, सो नर संपूरन श्रुत धरई॥
प्रवचनभगति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानंददाता।
षट्आवश्य काल जो साधै, सोही रत्नत्रय आराधै॥
धरमप्रभाव करैं जे ज्ञानी, तिन शिवमारग रीति पिछानी।
वत्सल अंग सदा जो ध्यावै, सो तीर्थंकर पदवी पावै॥

ॐ ह्रीं दर्शविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

दोहा।

एही सालह भावना, सहित धरै व्रत जोय।
देव इन्द्र नरवंद्यपद, 'द्यानत' शिवपद होय॥

(इत्याशीर्वादः)

पंचमेरु समुच्चय पूजा (संस्कृत)।

संवौषडाहूय निवेश्य ठाभ्यां सान्निध्यमानीय वषट्पदेन।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुस्थितजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमा! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

अथाष्टकं

सुसिंधुमुख्याखिलतीर्थसार्थां,—बुभिः शुभांभोजरजोभिरामैः।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां, यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः॥

आद्यः सुदर्शनो मरुर्विजयश्चाचलस्तथा।
चतुर्थो मंदरो नाम विद्युन्माली सुपंचमः॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुस्थचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा

कर्पूरस्फुरदत्युदारैः सौरभ्यसारैर्हरिचंदनाद्यैः।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शाल्यक्षतैः कैरवकुड्मलानां गुणत्रयेण भ्रममावहद्भिः।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां, यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुस्थचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रधानसंतानकमुख्यपुष्पसुगंधिताग च्छदतुच्छभृंगैः।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सद्यस्तनैः क्षीरघृतेक्षुमुख्यैः सद्‌द्रव्यभव्यश्चरुभिः सुगंधैः।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तमोविनाशप्रकटीकृतार्थैर्दीपैरशेषज्ञवचोनुरूपैः।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वपापरक्षःपरिणाशधूम्रैरिवोरुकृष्णागरुधूपधूम्रैः।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नारिंगमुख्याखिलवृक्षपक्वफलैः सुगंधैः सरसैः सुवर्णैः ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

वार्गंधपुष्पाक्षतदीपधूपनैवेद्यदूर्वाफलवद्भिरर्घैः ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

जिनमज्जणपीठं मुनिगणईठं असी चैत्यमंदिरसहितं ।
वंदौ गिरनायक महिमालायक पंचमेरु तीरथमहितं ॥

चौपाई

जंबूदीप अधिक छवि छाजै, मध्य सुदरशन मेरु विराजै ।
उन्नत जोजन लक्षप्रमाणं, छत्रोपम शिर ऋजुक विमानं ॥
दीप धातकीखंड मझारं, मेरु युगम आगम अनुसारं ।
विजय नाम पूरव दिशि सोहै, पश्चिमभाग अचल मन मोहै
पुष्कराद्धमें भी पुनि या ही, मंदर विद्युन्माली सोही ।
चारोंकी इकसार ऊंचाई, सहस असी चउ योजन गाई ॥
पांचों मेरु महागिरि ये ही, अचल अनादि निधन थिर जेही ।
मूल वज्र मधि मणिमय भासै, ऊपर कनकमई सब भासै ॥

गिरिगिरि प्रति वन चार बखाने, वन बन देवल चार वखाने।
चामीकरमय चहुंदिशि राजैं, रतनमई जोती रवि लाजैं ॥
समोसरण रचना शुभ धारैं, धुज पाननसों पाप विडारैं।
सौ योजन आयाम गणीजे, व्यास तासमें अर्ध भणीजे ॥
तुंग पौनसौ योजन भारे, भद्रसालके जिनगृह सारे।
ऊपर अर्ध अर्ध सब जानो, पांडुक वन पर्यंत प्रमानो ॥
पांचों मेरुनिका गुन लाजै, गुन वर्णन सरधा यह कीजे।
शोभा वर्णत पार न लहिये, बुधि ओछी कैस करि कहिये ॥
बिंब अठोतरसौ इक माहीं, रतनमई देखत दुख जाई।
आनन जो अरविंद लसैं हैं, लक्षण व्यंजन सहित हसैं हैं ॥
तीन पीठपर शोभित ऐसैं, जगशिर सिद्ध बिराजत जैसैं।
पद्मासन वैराग्य बढावैं, सुर विद्याधर पूजन आवैं ॥
महिमा कौन कहै जिनकेरी, त्रिभुवन नैनानंद जिनेरी।
धनुष पांचसै तन चित चोरैं, वंदों भाव सहित कर जोरैं ॥
गजदंतादि शिखर परके हैं, कृत्य अकृत्रिम जिनगृह जेहैं ॥
अरु त्रिभुवनमें प्रतिमा सारी, तिन प्रति धोक त्रिकाल हमारी

घत्ता

भूधर प्रति जेहा करमन एहा, भक्तिविषैं दृढ भव्य जनौ।
करि पूजा सारी अष्टप्रकारी, पंचमेरु जयमाल भणो ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुस्थचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति पंचमेरुसमुच्चयपूजा।)

पंचमेरु पूजा भाषा ।

गीता छन्द

तीर्थंकरोंके न्हवनजलतैं, भये तीरथ शर्मदा,
तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पंचमेरुनकी सदा ।
दो जलधि ढाईद्वीपमें सब, गनतमूल विराजही,
पूजौं असीजिनधामप्रतिमा, होहि सुख, दुख भाजही ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहतो भव भव वषट् ।

चौपाई आंचलीबद्ध (१५ मात्रा) ।

सीतलमिष्टसुवास मिलाय, जलसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥
पांचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमाको करों प्रनाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलकेशरकरपूर मिलाय, गंधसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छतसौं पूजौं जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बरन अनेक रहे महकाय, फूलसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मनबांछित बहु तुरत बनाय, चरुसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तमहर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिबिंबेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

खेऊं अगर अमल अधिकाय, धूपसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरम सुवर्ण सुगंध सुभाय, फलसों पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौ श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पांचों मेरु असी जिनधाम सब प्रतिमाको करों प्रनाम।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसंबन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

सोरठा।

प्रथम सुदर्शनस्वामि, विजय अचल मंदर कहा।
विद्युन्माली नाम, पंच मेरु जगमें प्रगट ॥

बेसरी छन्द।

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजे, भद्रशाल वन भूपर छाजै।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥
ऊपर पंचशतकपर सोहै, नंदनवन देखत मन मोहै।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारा ॥

साढे बासठ सहस ऊंचाई, वनसुमनस शोभै अधिकाई ॥
चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी ॥
ऊंचा जोजन सहसछत्तीसं, पांडुकवन सोहै गिरिसीसं ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी ॥
चारों मेरु समान वखाने, भूपर भद्रसाल चहुं जाने ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी ॥
ऊंचे पांच शतक पर भाखे, चारों नंदनवन अभिलाखे ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी ॥
साढेपचपन सहस उतंगा, वन सौमनस चार बहुरंगा ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी ॥
उच्च अठाइस सहस बताये, पांडुक चारों वन शुभ गाये ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारा ॥
सुरनर चारन वंदन आवैं, सो शोभा हम किहमुख गावै ।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी ॥

दोहा।

पंचमेरुकी आरती, पढै सुनै जो कोय ।
'द्यानत' फल जानै प्रभू, तुरत महासुख होय ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

नंदीश्वर पूजा संस्कृत ।

स्थानासनार्घ्यप्रतिपत्तियोग्यं, सद्भावसन्मानजलादिभिश्च ।
लक्ष्मीसुतागमनवीर्यसुखदर्भगर्भैः, संस्थापयामि भुवनाधिपतिं
जिनेंद्रम् ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टकं ।

तीर्थोदकैर्मणिसुवर्णघटोपनीतैः, पीठे पवित्रवपुषि प्रविकल्पितार्थैः
नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः, समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्भागे एकअंजनगिरिचतुर्दधिमुखाष्टरतिकरेति त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्भागे एकअंजनगिरिचतुर्दधिमुखाष्टरतिकरेति त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्भागे एकअंजनगिरिचतुर्दधिमुखाष्टरतिकरेति त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्भागे एकअंजनगिरिचतुर्दधिमुखाष्टरतिकरेति त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखंडपूरसुकुंकुमाद्यैर्गंधैः सुगंधीकृतदिग्विभागैः ।
नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ।

ॐ ह्रीं नदीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शाल्यक्षतैः क्षतदीर्घमात्रैः सुनिर्मलैश्चंद्रकरावदातैः ।
नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

अंभोजनीलोत्पलपारिजातैः कदंबकुंदादितरुप्रसूनैः ।
नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चा समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नैवेद्यकैः कांचनपात्रसंस्थैर्न्यस्तैरुदस्तैर्हरिणासुहस्तैः ।
नन्दीश्वरद्वीपजिनालयार्चा समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपाङ्कुरैर्ध्वस्ततमोवितानैरुद्योतिताशेषदार्थजातैः ।
नन्दीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ॐ ह्री नन्दीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूरकृष्णागरुचंदनाद्यैर्धूपैर्विचित्रैर्वरगंधयुक्तैः ।
नन्दीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

लवंगनारिंगकपित्थपूगश्रीमाचचोचादिफलैः पवित्रैः ।
नन्दीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चय चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
यजे त्रिकालोद्‌भवजैनबिंबान्, भक्त्या स्वकर्मक्षयहेतवेऽहं ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
सद्भावनावासजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ॐ ह्रीं भावनामरजिनालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
जंब्वाख्यद्वीपस्थजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रजये मनोज्ञान् ॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
श्रीधातकीखंडजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रजये मनोज्ञान् ॥

ॐ ह्रीं धातकीखंडद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
श्रीपुष्करद्वीपजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
सत्कुंडलाद्रिस्थजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥
ॐ ह्रीं कुण्डलगिरिद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
श्रीमन्नगे व रुचिके हि संस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥
ॐ ह्रीं रुचिकगिरिस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचन्दनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
सद्व्यंतराणां निलयेषु संस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥
ॐ ह्रीं अष्टप्रकारव्यन्तरदेवानां गृहेषु जिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
चंद्रार्कताराग्रहऋक्षज्योतिष्काणां यजे वै जिनबिंबवर्यान् ॥
ॐ ह्रीं पंचप्रकारज्योतिष्काणां देवानां गृहेषु जिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कल्पेषु कल्पातिगकेषु चैव देवालयस्थान् जिनदेवबिंबान् ।
सक्षीरगंधाक्षतपुष्पचरुद्रव्यैर्यजे मनोवाक्तनुभिर्मनोज्ञान् ॥
ॐ ह्रीं कल्पकल्पातीतसुरविमानस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकींगतान्,
वंदे भावनव्यंतरद्युतिवरस्वर्गामरावासगान् ।

सद्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः,
द्रव्यैर्नीरमुखैर्नमामि सततं दुष्कर्मणां शांतये ॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमजिनालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्षेषु वर्षांतरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु ।
यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुङ्गवानां ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानां ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥

जम्बूधातकिपुष्करार्धवसुधाक्षत्रत्रये ये भवा-
श्चंद्राम्भोजशिखण्डिकंठकनकप्रावृड्घनाभा जिनाः ।
सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेंधना,
भूतानागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचके कुण्डले मानुषांके ।
इष्वाकारेंजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥

द्वौ कुन्देंदुतुषारहारधवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ
द्वौ बन्धूकसमप्रभ जिनवृष द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।

शेषाः षोडश जन्ममृत्युरहिताः सन्तप्तहेमप्रभा-
स्ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥

नौकोडिसया पणवीसा तेपणलक्खाण सहससत्ताईसा ।
नौसेते पडियाला जिणपडिमा किट्टिमा वन्दे ॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अतीतचतुर्विंशतितीर्थंकरनामानि ।

निर्वाणसागराभिख्यो माधुर्यो विमलप्रभः ।
शुद्धवाक् श्रीधरो धीरो दत्तनाथोऽमलप्रभः ॥

उद्धराह्वोग्निनाथश्च संयमः शिवनायकः ।
पुष्पांजलिर्जगत्पूज्यस्तथा शिवगणाधिपः ॥

उत्साहो ज्ञाननेता च महनीयो जिनोत्तमः ।
विमलेश्वरनामान्यो यथार्थश्च यशोधरः ॥

कर्मसंज्ञोऽपरो ज्ञान–मतिः शुद्धमस्तिथा ।
श्रीभद्रपदकांतश्चातीता एते जिनाधिपाः ॥

नमस्कृतसुराधीशैर्महीपतिभिरर्चिताः ।
वन्दिता धर्म्मेंद्राद्यैः सन्तु नः सिद्धिहेतवे ॥

ॐ ह्रीं अतीतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरनामानि ।

ऋषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनन्दनः ।
सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥

चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च शीतलो भगवान्मुनिः ।
श्रेयांसो वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥
अनन्तो धर्मनामा च शांतिकुन्थू जिनोत्तमौ ।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥
हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।
ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेंद्रपूजितः ॥
कर्मांतकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसंभवः ।
एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥
पूजिता भरताद्यैश्च भूपेंद्रैर्भूरिभूतिभिः ।
चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वंतु शाश्वतीं ॥

ॐ ह्रीं वर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनागततीर्थङ्करनामानि ।

तीर्थकृच्च महापद्मः सूरदेवो जिनाधिपः ।
सुपार्श्वनामधेयोऽन्यो यथार्थश्च स्वयंप्रभुः ॥
सर्वात्मभूत इत्यन्यो देवदेवप्रभोदयः ।
उदयः प्रश्नकीर्तिश्च जयकीर्तिश्च सुव्रतः ॥
अरश्च पुण्यमूर्तिश्च निष्कषायो जिनेश्वरः ।
विमलो निर्मलाभिख्याश्चित्रगुप्तो वरः स्मृतः ॥
समाधिगुप्तनामान्यौ स्वयंभूरनिवर्तकः ।
जयो विमलसंज्ञश्च दिव्यपाद इतीरितः ॥

चरमोऽनंतवीर्योऽमी वीर्यधैर्यादिसद्गुणाः ।
चतुर्विंशतिर्संख्याता भविष्यत्तीर्थकारिणः ॥

ॐ ह्रीं अनागतचतुर्विंशतिजिनेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

कम्पिल्लाणयरीमंडणस्स विमलस्स विमलणाणस्स,
आरत्तिय वरसमये णच्चंति अमररमणीओ,

छन्द ।

अमररमणीउ णच्चंति जिणमंदिरं,
विविहवर तालतूरहिं सुचंगमपुरं ।
जडियबहुरयणचामीयरं पत्तयं,
जोइयं सुन्दरं जिणप आरत्तियं ॥

रुणभणंकारणेवरघचलणुट्ठिया,
मोतियादाम वच्छच्छले संठिया ।
गीय गायन्ति णच्चंति जिणमंदिरं,
जोइयं सुन्दरं जिणप आरत्तियं ॥

केशभरिकुसुमपयसरसढोलन्तिया,
वयण छणइंद समकंतवियसंतिया ।
कमलदलणयण जिणवयणपेखंतिया,
जोइयं सुन्दरं जिणप आरत्तियं ॥

इन्दधरिणिंदजक्खेंदवाहंतिया,
मिलिव सुर असुर घणरासि खेलंतिया।
के वि सियचमर जिणबिंब ढोलंतिया,
जाइयं सुन्दरं जिणप आरत्तियं॥

गाथा

णंदीसुरम्मि दीवे वावएणजिणालयेसु पडिमाणं।
अट्ठाहीवरपव्वे इन्दो आरत्तियं कुणई।

छन्द।

इन्द आरत्तियं कुणइ जिणमंदिरं,
रयणमणिकिरणकमलेहि वरसुन्दरं।
गीय गायंति णच्चंति वरणाडियं,
तूर वज्जंति णाणाविहप्पाडियं॥

गाथा।

एक्केक्कम्मि य जिणहरे चउचउ सोलहवावीओ।
जोयणलक्खपमाणं अट्ठमे णंदीसुरे दीवे॥
अट्ठमं दीवणंदीसुरं भासुरं,
चैत्यचैत्यालये वंदि अमरासुरं।
देवदेवीउ जइ धम्म सन्तोसिया,
पंचमं गीय गायंति रसपोसिय

गाथा

दिव्वेहिं खीरखीरेहि गंधड्ढाइहिं कुसुममालाहिं ।
सव्वसुरलोयसहिया पुज्जा आरंभए इन्दो ॥

इन्दसोहम्मिसग्गाववज्जोसयं,
आयऊ सज्जि ऐरावयं वरगयं ।
सव्वदव्वेहिं भव्वेहिं पूजाकरा,
मिलिव पडिवक्खया तस्स तिहु दसया ॥

गाथा

कंसालतालतिवली, झल्लरभरभेरिवेणुविणाओ ।
वज्जंति भावसहिया भव्वेहिं णउज्जिया सव्वे ॥

छन्द ।

सव्वदव्वेहि भव्वेहिं करताडियं,
सद्दए संभिगणझिगणणिद्धाडयं ।
भिभिनिभं भिगिनिभं वज्जये झल्लरी,
णच्चये इंदइंदायणी सुन्दरी ॥

णयणकज्जलसलायामयं दिएणयं,
हेमहीरालयं कुएडलं कंकणं ।
भंझणं भंकरं तं पि ये णेवरं,
जिणपआरचियं ओइयं सुन्दरं ॥

दिट्ठिणासग्गि अंगुलियदावंतिया,
खिणहिं खिण खिणहिं जिणबिंब जोइंतिया।
णारि णच्चंति गायंति कोहलसुरं,
जिणप आरत्तियं जोइयं सुन्दरं ॥

रुणुझुणंकारणे वरधकरकंकणं,
णाइ जंपंति जिणणाहवं बहुगुणं।
जुवइ णच्चंति समरंति णउ णियघरं,
जिणपआरत्तियं जोइयं जोइयं सुन्दरं ॥

कंठकदलीह मणिहार झुल्लंतऊ,
जिणइ थुइ थुइ सो णाय संतुट्ठऊ, ।
विविहकोऊहलं रयहि णारीघरं,
जिणपआरत्तियं जोइयं सुन्दरं ।

घत्ता।

आरत्तिय जोवइ कम्मइ धोवइ, सग्गावग्ग हलहु लहइ ।
जं जं मण भावइ तं सुहपावइ, दीणुवि कासुण भासुणइ ।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिन-नालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यावंतिं जिनचैत्यानि, विद्यंते भुवनत्रये,
तावंति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहं ।

(इत्याशीर्वादः)

इति नंदीश्वर पूजा

श्रीनंदीश्वरद्वीप की भाषापूजा ।

अडिल्ल ।

सरब परबमें बड़ो अठाई परव है,
नंदीश्वर सुर जांय लेय वसु दरब है ।
हमें सकति सो नाहिं इहां करि थापना,
पूजें जिनगृह प्रतिमा है हित आपना ॥

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

कंचनमणिमय भृङ्गार, तीरथनीर भरा,
तिहुँ धार दयी, निरवार जामन मरन जरा ।
नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पूज करों,
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनंदभाव धरों ॥

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपेपूर्वदिग्भागेएकअंजनगिरिचतुर्दधिमुखाष्टरतिकरेतित्रयोदयजिनालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्भागे एकअञ्जनगिरिचतुर्दधिमुखाष्टरतिकरेतित्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीपेपश्चिमदिग्भागे एकअञ्जनगिरिचतुर्दधिमुखाष्टरतिकरेति त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्भागे एकअञ्जनगिरिचर्दधिमुखाष्टरतिकरेतित्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवतपहर शीतल वाच, सो चंदन नांहीं,

प्रभु यह गुन कीजै सांच, आयौ तुम ठांहीं।

नंदीश्वरश्रीजिनधाम०

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहैं,

सब जीते अक्षसमाज, तुम सम अरु को है।

नंदीश्वरश्रीजिनधाम०

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

तुम कामविनाशक देव, ध्याऊं फूलनसौं,

लहिं शील लच्छमी एव, छूटूं सूलनसौं।

नंदीश्वर श्रीजिनधाम० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व०।

नेवज इंद्रियबलकार, सो तुमने चूरा,

चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा।

नंदीश्वरश्रीजिनधाम० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ।

दीपककी ज्योति प्रकाश, तुम तनमांहि लसै,
टूटै करमनकी राशि, ज्ञानकणी दरसै ।
नंदीश्वर श्रीजिनधाम०

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदाक्षणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व० ।

कृष्णागरुधूपसुवास, दसदिशिनारि वरै,
अति हरषभाव परकाश, मानों नृत्य करै ।
नंदीश्वरश्रीजिनधाम०

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बहुविधिफल ले तिहुँकाल, आनंद राचत हैं ।
तुम शिवफल देहु दयाल, तो हम जाचत हैं ।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह अरघ कियो निज हेत, तुमको अरपतु हों ।
'द्यानत' कीनों शिवखेत,–भूमि समरपतु हों ।।
नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन, पूज करों ।
वसुदिन, प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरों ।।

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

दोहा ।

कातिक फागुन साढके, अंत आठ दिनमांहिं ।
नंदीश्वर सुर जात हैं, हम पूजैं इह ठांहिं ॥

एकसौ त्रेसठ कोडि जोजनमहा,
लाख चौरासि एक एक दिशमें लहा ।
अष्टमं द्वीप नंदीश्वरं भास्वरं,
भौन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ॥

चारदिशि चार अंजनगिरा राजही,
सहस चौरासिया एकदिश छाजही ।
ढ लपम गोल ऊपर तले सुन्दरं ॥ भौन० ॥

एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी,
एक इक लाख जोजन अमल जलभरी ।
चहुँदिशा चार वन लाख जोजन वरं ॥ भौन० ॥

सोल वापीनमधि सोल गिरि दधिमुखं,
सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं ।
बावरीकौन दोमाहिं दो रतिकरं ॥ भौन० ॥

शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे,
चार सोले मिले सर्व बावन लहे ।
एक इक सीसपर एक जिनमंदिरं ॥ भौन० ॥

बिंब अठ एकसौ रतनमय सोहही,
देवदेवी सरव नयनमन मोहही ।
पांचसै धनुष तन पद्म-आसन परं ।। मौन० ।।
लाल नख मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं,
स्यामरंग भौंह सिरकेश छवि देत हैं ।
वचन बोलत मनो हंसत कालुषहरं । मौन० ।।

कोटि शशि भानदुति तेज छिप जात है,
महाविराग परिणाम ठहरात है ।
वयन नहिं कहैं लखि होत सम्यकधरं
मौन बावन्न प्रतिमा नमौ सुखकरं ।।

सोरठा ।

नंदीश्वर निजधाम, प्रतिमा महिमा को कहै,
'द्यानत' लीनो नाम, यहै भगति सब सुख करै ।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(इत्याशीर्वादः)

दशलक्षणपूजा संस्कृत ।

उत्तमादिक्षमाद्यन्तब्रह्मचर्यसुलक्षणं ।
स्थापयेद्दशधा धर्ममुत्तमं जिनभाषितं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलाक्षणिकधर्म ! अत्रावतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

(यन्त्र की स्थापना करनी चाहिये ।)

प्रालेयशैलशुचिनिर्गतचारुतोयैः,
शीतैः सुगंधिसहितैर्मुनिचित्ततुल्यैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं,
संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-सत्य-शौच संयम-तपस्त्यागा-किंचन्य-ब्रह्मचर्यधर्मेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनैर्बहलकुंकुमचंद्रमिश्रैः,
संवाससवासितदिशामुखदिव्यसंस्थैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं
संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशधर्मेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शालीयशुद्धसरलामलपुण्यपुञ्जैः,
रम्यैरखंडशशिलक्षणरूपतुल्यैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं
संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशधर्मेभ्योऽक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

मंदारकुन्दवकुलोत्पलपारिजातैः
पुष्पैः सुगंधसुरभीकृतमूर्ध्वलोकैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं
संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशधर्मेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

अत्युत्तमैः रसरसादिकमद्यजातै-
नैवेद्यकैश्च परितोषितभव्यलोकैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं,
संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशधर्मेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपैर्विनाशिततमोत्करसद्यताशैः
कर्पूरवर्तिज्वलितोज्वलभाजनस्थैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं
संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशधर्मेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृष्णागरुप्रभृतिसर्वसुगन्धद्रव्यै-
धूपैस्तिरोहितदिशामुखदिव्यधूम्रैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं,
संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशधर्मेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूगीलवंगकदलीफलनालिकेरैः
हृद्घ्राणनेत्रसुखदैः शिवदानदक्षैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं
संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशधर्मेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

पानीयस्वच्छहरिचन्दनपुष्पसारैः
शालीयतन्दुलनिवेद्यसुचन्द्रदीपैः ।
धूपैःफलावलिविनिर्मितपुष्पगंधैः
पुष्पांजलिभिरपि धर्ममहं समर्चे ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवा-र्जव-सत्य-शौच-संयम-तपस्त्यागा-किंचन्य-ब्रह्मचर्यधर्मेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगपूजा ।

(उत्तम क्षमा)

येन केनापि दुष्टेन पीडितेनापि कुत्रचित् ।
क्षमा त्याज्या न भव्येन स्वर्गमोक्षाभिलाषिणा ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तमखममद्दउ अज्जउ सच्चउ पुणु सउच्च संजम सुतऊ।
चाउवि आकिंचणु भव भयवंचणु, बंभचेरु धम्मजु अखऊ ॥

उत्तमखम तिल्लोयहसारी, उत्तमखम जम्मोवहितारी।
उत्तमखम रयणत्तयधारी, उत्तमखम दुग्गइदुहहारी॥
उत्तमखम गुणगणसहयारी, उत्तमखम मुणिविंदपयारी।
उत्तमखम बुहयण चिंतामणि, उत्तमखम संपज्जइ थिरमणि॥
उत्तमखम महणिज्ज सयलजणु, उत्तमखम मिच्छत्त विहंडणु।
जह अममत्थहदोसु खमिज्जइ, जहि अममत्थह णवि रूसिज्जइ॥
जहि आकोसणवयण सहज्जइ, जहिं परदोस ण जंण भासिज्जइ
जह चेयणगुण चित्त धरिज्जइ, तहिं उत्तमखम जिणे कहिज्जइ॥

घत्ता।

इस उत्तमखमजुया सुरखगणुया केवलणाण लहइ वि थिरू।
हय सिद्धणिरंजण भवदुहभंजणु अगणियरिसि पुंगमजि चिरू॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(उत्तम मार्दव)

मृदुत्वं सर्वभूतेषु कार्यं जीवेन सर्वदा।
काठिन्यं त्यज्यते नित्यं धर्मबुद्धि विजानता॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणे उत्तममार्दवधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्व०

मद्दव भवमद्दगु माणणिकंदगु दयधम्म जु मूल हु विमलु ।
सव्वह हिययारउ गुणगणसारउ तिस उंचऊ संजम सयलु ॥
मद्दउ माणकषाय विहंडणु, मद्दउ पंचंदियमण दंडणु ।
मद्दउ धम्मैं करुणावल्ली, पसरइ चित्तमहीरुहवल्ली ॥
मद्दउ जिणवर भत्तिपयासइ, मद्दउ कुमइपसरु णिण्णासइ ।
मद्दवेण बहुविणय पवट्टइ, मद्दवेण जणवइरी हुट्टइ ॥
मद्दवेण परिणामविसुद्धी, मद्दवेण विहु लोयह सिद्धी ।
मद्दवेण दोविहि तव सोहइ, मद्दवेण तीजो यर मोहइ ॥
मद्दउ जिणसासण जाणिज्जइ, अप्पापर सरूव भासिज्जइ ।
मद्दउ दोष असेस णिवारउ मद्दउ जणणसमुद्दहतारउ ॥

घत्ता

सम्मइ मण अंगु मद्दउपरिणाम जु मुणहु
इय परियाण विचित्त मद्दउ धम्म अमल थुणहु ॥
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(उत्तम आर्जव)

आर्जवं क्रियते सम्यक् दुष्टबुद्धिश्च त्यज्यते ।
पापचिन्ता न कर्त्तव्या श्रावकैर्धर्मचितकैः ॥
ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे आर्जवधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

धम्मह वरलक्खणु अज्जउ थिरमणु,
दुरियविहंडणु सुहजणणु ।

तं इत्थु जि किज्जइ तं पालिज्जइ,

तं णि सुणिज्जइ खयजणणु ॥ १ ॥

जारिसु णिजयचित्त चिंतिज्जइ,

तारिसु अण्णहु पुण भासिज्जइ ।

किज्जइ पुण तारिसु सुहसंचणु,

तं अज्जवगुण मुणहु अवंचणु ॥ २ ॥

मायासल्ल मणहु णीसारहु,

अज्जउ धम्म पवित्त वियारहु ।

वउ तउ मायावियउ णिरत्थउ,

अज्जउ सिवपुर पंथ सउत्थउ ॥ ३ ॥

जत्थ कुटिलपरिणाम चइज्जइ,

तहिं अज्जउ धम्मजु संपज्जइ ।

दंसणणाणसरूव अखंडो,

परम अतींदिय सुक्खकरंडो ॥ ४ ॥

अप्पे अप्पउ भवहतरंडो,

एरिसु चेयणभावपयंडो ।

सो पुण अज्जउ धम्मे लब्भइ,

अज्जवेण वैरियमण खुब्भइ ॥५ ॥

घत्ता।

अज्जउ परमप्पउ गयसंकप्पउ,
चिम्मितु सासय अभयपऊ।
तं णिरुजाइज्जइ संसउ हिज्जइ,
पाविज्जइ जिहि अचलपऊ॥ ६॥

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(उत्तम सत्य)

असत्यं सर्वथा त्याज्यं दुष्टवाक्यं च सर्वदा।
परनिंदा न कर्तव्या भव्येनापि च सर्वदा॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमसत्यधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्व०

दयधम्मह कारण दोसणिवारण, इहभवपरभव सुक्खयरू।
सच्चुजि वयणुल्लउ भुवणिअतुल्लउ, बोलिज्जइ वीसासयरू॥

सच्चुजि सव्वह धम्मपहाणु, सच्चु जि महियलगरुवविहाण।
सच्चु जि संसारसमुद्दसेउ, सच्चु जि भव्वह मण सुक्खहेउ॥
सच्चेण जि सोहइ मणुवजम्मु, सच्चेण पवित्तउ पुण्णकम्म।
सच्चेण सयलगुणगण सुहंति, सच्चेण तियस सेवा वहंति॥
सच्चेण अणुव्वमहव्वयाइ, सच्चेण विणासिय आवयाइ।
हियमिय भासिज्जइ णिच्चभास, णवि भासिज्जइ परदुहपयास
परबाहायर म सहु ण भव्व, मच्चु णि छंडउ विगयगव्व।
सच्चु जि परमप्पा अत्थि एक्कु, सो भावहु अवतमदलणअक्कु
हम्मिज्जइ मुणिणा अयहरु त्ति, जेंखणकिट्टइ संसार अत्ति।

घत्ता ।

मच्चु जि धम्मपलेश, केवलणाण वहेइ थणु ।
तं पालइ जो भव्व, मइहु ण अलियउ इह वयणु ॥

ॐ ह्रीं सत्यधर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(उत्तम शौच)

बाह्याभ्यंतरं श्चापि मनोवाक्कायशुद्धिभिः
शुचित्वेन सदा भाव्यं पापभीतैः सुश्रावकैः ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमशौचधर्माङ्गाय जलाद्यर्घं निर्व०

मच्चु जि धम्मंगो तं जि अभंगा भिएणंगो उवओगमई ।
जरमरणविणासणु तिजयपयासणु झाइज्जइ अहिणिसु जि थुऊ

धम्म सउच्च होइ मणसुद्धिय, धम्म सउच्च वयणधण गिद्धिय ।
धम्म सउच्च लोह वज्जतउ, धम्म सउच्च सुतव पहिजंतउ ॥
धम्म सचउ बंभवयधारणु, धम्म सउच्च मयट्ठणिवारणु ।
धम्मसउच्च जिणायमभणणे, धम्म सउच्च सुगुण अणुमणणे
धम्म सउच्च सल्लकयचाए, धम्म सउच्च जि णिम्मलभाए।
धम्म सउच्च कसाय अहावे, धम्मं सउच्च ण लिप्पइ पावे ॥
अहवा जिणवर पूजविहाणे, णिम्मल फासुपजलकयण्हाणे ।
तं पि सउच्च गिहत्थउ भासइ, णवि मुणिवरइ कहिउ लोयासिउ

घत्ता ।

भव मुणि वि अणिच्चो धम्म सउच्चउ पालिज्जइ एयग्गमणि ।
सिवमग्ग सहाओ सिवपयदाओ अणुमणिवतहि किं बहुमणि ॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्माङ्गायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(उत्तम संयम)

संयमं द्विविधं लोके कथितं मुनिपुङ्गवैः।
पालनीयं पुनश्चित्ते भव्यजीवेन सर्वदा॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमसंयमधर्माङ्गाय जलाद्यर्घं निर्व०

संजम जणि दुल्लहु, तं पाविल्लहु, जो छंडइ पुण मूढमई।
सो भमै भवावलि जरमरणावलि, किम पावइ सुइ पुण सुगई॥

संजम पंचेंदिय दंडणेण, संजम जि कसाय विहंडणेण।
संजम दुद्धर तव धारणेण, संजमरस चाय वियारणेण॥

संजम उववास वियंभणेण, संजम मणुपसरहु थंभणेण।
संजम गुरुकायकलेसणेण, संजम परिग्गहगिहचायएण॥

संजम तसथावररक्खणेण, संजम तिणिजोयणियत्तणेण।
संजमसुतत्थपरिरक्खणेण, संजम बहुगमणचयतणेण॥

संजम अणुकंपकुरंतएण, संजम परमत्थवियारणेण।
संजम पोसइ दंसण हु अत्थ, संजम तिसहू णिरुमोक्खपत्थ॥

संजमविणु णरभवसयल सुण्णु, संजम विणुदुग्गइजि उपवण्णु।
संजमविण घडियम इत्थ जाउ, संजमविणविहली अत्थिआउ

घत्ता।

इहभवपरभवसंजमसरणा, हाज्जउ जिणणाहे भणिओ।
दुग्गइसरसोसण खरकिरणोवम जेणभवारि विसम हणिओ॥

ॐ ह्रीं उत्तम संयमधर्मा ङ्गायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(उत्तम

द्वादशं द्विविधं लोके बाह्याभ्यन्तरभेदतः ।
स्वयंशक्तिप्रमाणेन क्रियते धर्मवेदिभिः ॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमतपोधर्मांगाय जलाद्यर्घं निर्व० ।

णरभवपावेप्पिणु तच्च मुणेप्पिणु खंड वि पंचेंदियसमणु ।
णिव्वेउ वि मंडिवि संगइ छंडिवि तव किज्जइ जाये विवणु ॥

तं तउ जहि परिगहछंडिज्जइ, तं तउ जहि मयणुजि खंडिज्जइ
तं तउ जहि णग्गत्तणु दीसइ, तं तउ जहि गिरिकंदर णिवसइ
त तउ जहि उवसग्ग सहिज्जइ, तं तउ जहि रायाइ जिणिज्जइ
तं तउ जहि भिक्खइ भुञ्जज्जइ, सावयगेह कालणिविसज्जइ
तं तउ जत्थसमिदिपरिपालणु, तं तउ गुत्तित्तयहणिहालणु ।
त तउ जहि अप्पापर बुज्झिउ, त तउ जहि भव माणुजि
उज्झिउ ॥

तं तउ जहि ससरूव मुणिज्जइ, तं तउ जहि कम्महगण खिज्जइ
तं तउ जहि सुरभत्तिपयासहि, पवयणत्थ भवियणह पभासहि
जेण तवं केवल उपवज्जइ, सासय सुक्ख णिच्च संपज्जइ ॥

घत्ता ।

बारहविहु तउवरु दुग्गइ परिहरु, तं पूजिज्जइ थिरगणिणा ।
मच्छरमयछंडिवि करणइ दंडिवि, तं पि धरिज्जइ गौरविणा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(उत्तम त्याग)

चतुर्विधाय संघाय दानं चैव चतुर्विधं ।
दातव्यं सर्वथा सद्भिश्चितकैः पारलौकिकैः ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणे उत्तमत्यागधर्मांगाय जलाद्यर्घ निर्वपामीति स्वाहा

चाउ वि धम्मगो करहु अभंगो णियसत्तिइ भत्तिय जगहु ।
पत्तह सुपवित्तह तवगुणजुत्तह परगइसवलु तं मुणहु ॥,
चाए आवागवणउ हट्टइ, चाए णिम्मल कित्ति पविट्टइ ।
चाए वयरिय पणमिइ पाये, चाए भोगभूमि सुह जाए ॥
चाउ विणिज्जइ णिच्च जि विणए, सुयवयणे भासेप्पिणु पणए
अभयदाण दिज्जइ पहिलारउ, जिमि णासइ परभवदुहयारउ
सत्थदाण वीजो पुण किज्जइ, णिम्मलणाण जेण पाविज्जइ
ओसह दिज्जइ रायविणासणु, कह वि ण पित्थइ वहिपयासणु
आहारे धणरिद्धि पविट्टइ, चउविह चाउ जि एहु पविट्टइ ।
अहवा दुट्ठवियप्पह चाए, चाउ जि एहु मुणहु समवाए ॥

घत्ता ।

दुहियहं दिज्जइ दाण, किज्जइ माणु जि गुणियणहिं ।
दयभावीय अभग, दंसण चिंतिज्जइ मणहं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(उत्तम आकिंचन) ६॥

चतुर्विंशतिसंख्यातो यो परिग्रह ईरितः ।
तस्य संख्या प्रकर्तव्या तृष्णारहितचेतसा ॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय जलाद्यं निर्व०

आकिंचणु भावहु अप्पा ज्झावहु देहभिण्णउ ज्झाणमऊ ।
निरुवम गयवण्णउ सुहसंपण्णउ, परम अतींदिय विगयभउ ॥
आकिंचणु वउसंगहणिविति, आकिंचणु वउसुज्झाणसचि ।
आकिंचणु वउवियलियममत्ति, आकिंचणु रयणत्तयपवित्त ॥
आकिंचणु आउ चिण्णहिचित्त, पसरंतउ इन्दियवणिविचित्त ।
आकिंचणु देहहणेहचित्त, आकिंचणु जं भवसुह विरत्त ॥
तिणमत्त परिग्गह जत्थ णत्थि, मणिराउ विहिज्जइ तव अवत्थि
अप्पापर जत्थ वियारसत्ति, पयडिज्जइ जहि परमेट्ठिभत्ति ॥
जह छडिज्जइ संकप्पदुट्ठ, भोयण वंछिज्जइ जह अणिट्ठ ।
आकिंचण धम्म जि एम होइ, त ज्झाइज्जइ णरुइत्थलोइ ॥

घत्ता ।

ए हुज्जि पहावे लद्धसहावे, तित्थेसर सिवनयरिगया ।
त पुण रिसिसारा मयणवियारा, वंदणिज्ज एतेण सया ॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचनधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(उत्तम ब्रह्मचर्य)

नवधा सर्वदा पाल्यं शील संतापधारिभिः ।
भेदाभेदेन संयुक्तं सद्गुरूणां प्रसादतः ॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलाद्यं निर्वपा० ।

बंभव्वउ दुद्धरु धारिज्जइवरु केडिज्जइ विषयासणिरु।
तियसुक्खयरत्तो मणकरिमत्तो तं जि भव्व रक्खेहु थिरु॥
चित्तभूमि मयणु जि उपज्जइ, तण जु पीडउ करइ अकज्जइ
तियह सरीरइ णिदह सेवइ, णिय परणारि ण मूढउ वेवइ॥
णिवडइ णिरय महादुह भुञ्जइ, जो हीणुजि बंभव्वउ भंजइ।
इय जाणविणु मणवयकाए, बंभचेरु पालहु अणुराए॥
णवपयार सत्थिय सुहयारउ, बंभव्वे विणु वउतउजिअमारउ।
बभव्वे विणु काय किलेसइ, विहल सयल भासीय जिणेसइ॥
बाहिर फरसेंदियसुरक्खउ, परमबंभ आभितर पिक्खउ।
एण उवाए लब्भइ सिवहरु, इम रइधू बहु भणइ विणयरु॥

घत्ता।

जिणणाह महिज्जइ मुणि पणविज्जइ, दहलक्खण पालीइणिरु
भो खेमसियासुय भव्व विविणजुय होलिवम्मयहु करहु थिरु॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय आरती।

इय काऊण णिज्जरं जे हणंति भवपिंजरं।
नीरोयं अजरामरं ते लहंति सुक्खं परं॥
जेण मोक्खफलं तं पाविज्जइ, सो धम्मंगो एहहु णिज्जइ।
खमखमायलु तुंगय देहउ, मद्दउ पल्लउ अज्जउ सेहउ॥

सच्ज सउच्च मूल संजमदलु, दुविह महातव णवकुसुमाउलु
चउविह चाउय साहियपरमलु, पीणियभव्वलोयछप्पइयलु ॥
दियसंदोह सद्द कलकलयलु, सुरणरवरखेयर सुहसयफलु ।
दीणाणाह दीह सम णिग्गहु, सुद्ध सोमतणुमित्तपरिग्गहु ॥
बंभचेरु छायइ सुहासिउ, रायहंस नियरेहि समासिउ ।
एहहु धम्मरुक्ख लाखिज्जइ, जीवदया वयणहि राखिज्जइ ॥
भाणट्ठाण मल्लारउ किज्जइ, मिच्छामई पवेस ण दिज्जइ ।
सीलसलिलधारहि सिंचिज्जइ, एम पयत्तण वड्ढारिज्जइ ॥

घत्ता ।

कोहानल चुक्कउ, हाउ गुरुक्कउ, जाइ रिमिंदिय मिट्ठगई ।
जगताइ सुहंकरु धम्ममहातरु, देइ फलाइ सुमिट्ठमई ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

इत्याशीर्वादः ।

दशलक्षणधर्मभाषापूजा ।

अडिल्ल ।

उत्तम छिमा मारदव आरजवभाव हैं,
सत्य सौच संयम तप त्याग उपाव हैं ।
आकिंचन ब्रह्मचरज धरम दश सार हैं,
चहुंगतिदुखतैं काढि मुकति करतार हैं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा।

हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभि।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजों सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिंचन्य-ब्रह्मचर्येतिदशलक्षणधर्मेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजों सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखंडितसार, तंदुल चन्द्रसमान शुभ।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजों सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

फूल अनेकप्रकार, महकें ऊरधलोकलों।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजों सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविध निहार, उत्तम षट्रससंजुगत।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजों सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाति कपूर सुधार, दीपकजोति सुहावनी ।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगंधता ।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल की जाति अपार, घ्रान नयन मनमोहने ।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आठों दरव संवार, द्यानत अधिक उछाहसों ।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंगपूजा ।

सोरठा ।

पीडैं दुष्ट अनेक, बांध मार बहुविधि करैं ।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजै पीतमा ॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द ।

उत्तमछिमा गहोरे भाई, इहभव जस परभव सुखदाई ।
गाली सुनि मन खेद न आनो, गुनको औगुन कहै अयानो ॥

कहि है अयानो वस्तु छीनै, बांध मार बहुविधि करै।
घरतैं निकारै तन विदारै, वैर जो न तहां धरै॥
तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा।
अति क्रोधअगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान महाविषरूप करहि नीचगति जगतमें।
कोमल सुधा अनूप सुख पावै प्रानी सदा॥

उत्तम मार्दवगुन मन माना, मान करनको कौन ठिकाना।
वस्यो निगोदमाहितैं आया, दमरी रूकन भाग बिकाया॥

रूकन बिकाया भागवशतैं देव इकइंद्री भया,
उत्तम मुआ चांडाल हूवा, भूप कीडोंमें गया।
जीतव्य जोवन-धनगुमान कहा करै जलबुदबुदा,
करि विनय बहुगुन बड़े जनकी ज्ञानका पावैं उदा॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कपट न कीजे कोय, चोरनके पुर ना वसै।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु संपदा॥

उत्तमआर्जवरीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुखदानी।
मनमें हो सो वचन उचरिये, वचन होय सो तनसौं करिये॥

करिये सरल तिहुंजोग अपने, देख निरमल आरसी।
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपटप्रीति अंगारसी॥

नहिं लहै लछमी अधिक छलकरि, करमबंध विशेषता ।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवैं, आपदा नहि देखता ॥

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कठिन वचन मति बोल, परनिंदा अरु झूठ तज ।
सांच जवाहर खोल, सतवादी जगमें सुखी ॥

उत्तम सत्यबरत पालीजै, परविश्वासघात नहिं कीजै ।
सांचे झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो ॥
पेखो तिहायत पुरुष सांचेका दरब सब दीजिये ।
मुनिराज श्रावककी प्रतिष्ठा, साचगुण लख लीजिये ॥
ऊंच सिंहासन बैठि वसुनृप, धरमका भूपति भया ।
बच झूठसेती नरक पहुंचा, सुरगमें नारद गया ॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

धरि हिरदै संतोष, करहु तपस्या देहसों ।
शौच सदा निरदोष, धरम बडो संसारमें ॥

उत्तम शौच सर्व जग जाना, लोभ पापको बाप बखाना ।
आशापास महा दुखदानी, सुख पावै संतोषी प्रानी ॥
प्रानी सदा शुचि शीलजपतप ज्ञान ध्यान प्रभावतैं ।
नित गंगजमुन समुद्र न्हाये, अशुचिदोष सुभावतैं ॥
ऊपर अमल, मल भर्यो भीतर, कौन विधिघट शुचि कहै ।
बहु देह मैली सुगुनथैली, शौचगुन साधू लहै ॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

काय छहों प्रतिपाल, पंचेंद्री मन वश करो।
संजमरतन संभाल, विषय चोर बहु फिरत हैं॥
उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव भवके भाजें अघ तेरे।
सुरग नरकपशुगतिमें नाहीं, आलसहरन करन सुख ठाहीं॥
ठाहीं पृथी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो।
सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो॥
जिस विना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग कीचमें।
इक घरी मन विसरो करो नित, आव जमसुख वीचमें॥

ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तप चाहैं सुरराय, करमसिखरको वज्र है।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करे निज सकति सम॥
उत्तम तप सबमाहिं बखाना, करमशैलको वज्र समाना।
वस्यो अनादिनिगोदमंझारा, भूविकलत्रय पशुतन धारा॥
धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता।
श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषयपयोगता॥
अति महादुरलभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरै।
नरभव अनूपम कनक घरपर मणिमयी कलसा धरै॥

ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दान चार परकार, चारसंघको दीजिये ।
धन विजुली उनहार, नरभवलाहो लीजिये ॥
उत्तमत्याग कह्या जगसारा, औषध शास्त्र अभय आहारा ।
निहचै रागद्वेष निरवारै, ज्ञाता दानों दान संभारै ॥
दोनों संभारै कूपजलसम, दरब घरमें परिनया ।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाया खोया वह गया ॥
धनि साध शास्त्र अभयदिवैया, त्याग राग विरोधको ।
बिन दान श्रावक साध दोनों, लहैं नाहीं बोधको ॥
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
परिग्रह चोवस भेद, त्याग करैं मुनिराज जी ।
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइए ॥
उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रहचिंता दुख ही मानो ।
फांस तनकसी तनमें सालै, चाह लंगोटीकी दुख भालै ॥
भालै न समता सुख कभी नर, बिना मुनिमुद्रा धरैं ।
धनि नगनपर तन-नगन ठाडे, सुर असुर पायनि परैं ॥
घरमाहिं तिसना जो घटावै, रुचि नहीं संसारसौं ।
बहुधन बुरा हू भला कहिये, लीन पर-उपगारसौं ॥
ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
शीलबाड़ नौ राख, ब्रह्मभाव अंतर लखो ।
करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नरभव सदा ॥

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ, माता बहिन सुता पहिचानौ।
सहैं बानबरषा बहु सूरे, टिकै न नैनबान लखि कूरे ॥
कूरे तियाके अशुचितनमें, कामरोगी रति करैं।
बहु मृतक सडहिं मसान माहीं, काक ज्यों चौंचैं भरैं ॥
संसारमें विषबेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा।
'द्यानत' धरमदश पैंडि चढिकैं, शिवमहलमें पग धरा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला।

दोहा।

दशलच्छन बंदौं सदा, मनवांछित फलदाय।
कहों आरती भारती, हमपर होहु सहाय ॥ १ ॥

वेसरी छन्द।

उत्तमछिमा जहां मन होई, अंतरबाहिर शत्रु न कोई।
उत्तमार्दव विनय प्रकासै, नानाभेद ज्ञान सब भासै ॥
उत्तमआर्जव कपट मिटावै, दुरगति त्यागि सुगति उपजावै।
उत्तम सत्यवचन मुख बोलै, सो प्रानी संसार न डोलै ॥
उत्तमशौच लोभपरिहारी, सन्तोषी गुणरतनभंडारी।
उत्तमसंयम पालै ज्ञाता, नरभव सफल करै ले साता ॥
उत्तमतप निरवांछित पालै, सो नर करमशत्रुको टालै।
उत्तमत्याग करै जो कोई, भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥

उत्तमआकिंचनव्रत धारै, परमसमाधिदशा विसतारै।
उत्तमब्रह्मचर्य मन लावै, नरसुरसहित मुकतिफल पावै॥

दोहा।

करै करमकी निरजरा, भवपींजरा, विनाश।
अजर अमरपदको लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्य-ब्रह्मचर्यदशलक्षणधर्मेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रयपूजा (संस्कृत)।

श्रीमंतं सन्मतिं नत्वा श्रीमतः सुगुरूनपि।
श्रीमदागमतः श्रीमत् वक्ष्ये रत्नत्रयार्चनं॥ १॥

अनंतानंतसंसारकर्मसंबंधविच्छिदे॥
नमस्तस्मै नमतस्मै जिनाय परमात्मने॥ २॥

ध्रौव्योत्पादव्ययानेकतत्वसंदर्शनत्विषे। नम०। ३।
संसारार्णवमग्नानां यः समुद्धर्तुमीश्वरः। नम०। ४।
लोकालोकप्रकाशात्मा यश्चैतन्यमयं महः। नम०। ५।
येन ध्यानाग्निना दग्धं कर्मकक्षमलक्षणं। नम०। ६।
येनात्मात्मनि विज्ञातः परंधर्ममिदं वपुः। नम०। ७।
ए यर्च परमं ज्योतिर्यः परंब्रह्मयः पुमान्। नम०। ८।

सर्वानंदमयो नित्यं सर्वसत्त्वहितंकरः । नम० । ६ ।
इत्याद्यनेकधास्तोत्रैः स्तुत्वा सज्जिनपुंगवं ।
कुर्वे दृग्बोधचारित्रार्चनं संक्षेपतोऽधुना ॥ १० ॥

(इत्युच्चार्य पूजनप्रतिज्ञानार्थं रत्नत्रयस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् । यह श्लोक पढ़कर रत्नत्रय यंत्रके ऊपर पुष्प चढ़ाने चाहिये)

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपरत्नत्रय ! अत्रावतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

संसारदुःखज्वलनावगूढप्रगूढसंतापमलापशांत्यै ।
सद्दर्शनज्ञानचरित्रपंक्तेर्जलस्य धारां पुरतो ददामि ।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्दर्शनाय ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय, ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नत्रयं भूषितभव्यलोकमशोकमंतर्गतभावगम्यं ।
काश्मीरकर्पूरसुचंदनाद्यैः सुगंधगंधैरहमर्चयामि ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षतमक्षतपुंजैः, शालीयैः शुद्धगंधिभिः शुद्धैः ।
दर्शनबोधचरित्रं त्रितयं तत्संयजे भवस्या ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

विकसितकुसुमशतपत्रसुजातसमूहशोभया,
घनकर्पूरनीरसुभचंदनचर्चितआमगंधया ।

अलिकुलरणितकलितमधुरध्वनिश्यामसमूहस्रालया,
सकलितमातनोति रत्नत्रयमत्र पवित्रमालया ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रसिद्धसद्द्रव्यमनन्यलभ्यं वचो गुरूणामिव साधुसिद्धं ।
सुदृष्टिसद्बोधचरित्ररत्न-त्रयाय नैवेद्यमहं ददामि ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपैः सुकर्पूरपरागभृंगैं रंगद्भिरंगद्युतिदीप्यमानैः ।
सद्दर्शनज्ञानचरित्ररत्न-त्रयंत्रयावाप्तिकरं यजेऽहं ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपैः कालागरुभिः विशुद्धसंशुद्धकर्मसंधूपैः ।
दर्शनज्ञानचरित्रत्रितयं संधूपयामि संसद्‌र्ध्यैः ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूगैरनर्घ्यैर्वरनालिकेरैर्नारिंगजंभीरकपित्थपुञ्जैः ।
रत्नत्रय तर्पितभव्यलोकं, शक्यावलोकं तदहं यजामि ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलगंधाक्षतपुष्पै,-श्चरुदीपैर्धूपसत्फलैः सर्वैः ।
दर्शनबोधचरित्रं त्रितयं त्रेधा यजामहे भक्त्या ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

मोहाद्रिसंकटतटीविकटप्रपात-
संपादिने सकलसत्त्वहितंकराय ।

रत्नत्रयाय शुभहेतिसमप्रभाय,
पुष्पांजलिं प्रविमलां ह्यवतारयामि ।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत)

दर्शनपूजा ।

परस्याभिमुखी श्रद्धा, शुद्धचेतन्यरूपतः ।
दर्शनं व्यवहारेण निश्चयेनात्मनः पुनः ॥

यदधिगम्य नराः शिवसंपदामधिपदं प्रतिपद्य विरेजिरे ।
तदिह मानममात्मरमे लसदिशतु दर्शनमष्टविधं मम ॥

ॐ ह्रा ह्रीं ह्रूं ह्रौ ह्रः अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्रावतर अवतर संवौषट्

अनंतानंतसंसारसागरत्तारकारणम् ।
तीर्थं तीर्थकृतामत्र स्थापयामि सुदर्शनम् ॥

ॐ ह्रा ह्रीं ह्रूं ह्रौ ह्रः अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ ठः ठः
(इति प्रतिष्ठापनम्)

अष्टांगैरष्टधापूतमष्टैकगुणसंयुतं ।
मदाष्टनिर्मुक्तं दर्शनं सन्निधापये ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौ ह्रः । अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् । (इति सन्निधीकरणम्)

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।
सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं नि०

कर्पूरक्षीरकाश्मीरमिश्रसच्चंदनैर्घनैः ।

सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय चंदनं नि० ।

अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः ।

सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय अक्षतं नि० ।

शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः ।

सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय पुष्पं नि० ।

न्यायैरिव जिनेंद्रस्य सन्नाज्यैः पुष्टिकारिभिः ।

सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं नि० ।

चंचत्काचनसंकाशैर्दीपैः सद्दीप्तिहेतुभिः ।

सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय दीपं नि० ।

कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः ।

सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय धूपं नि० ।

पूगनारिंगजंभीरमातुलिंगफलोत्करैः ।

सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय फलं नि०

जलगंधकुसुममिश्रं, फलतंदुलकलितललिताढ्यं ।
सम्यक्त्वाय सुभव्यं भव्यां कुसुमांजलिं दद्यात् ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय अर्घं नि०

अंगपूजा

यस्य प्रभावाज्जगतां त्रयेऽपि पूज्या भवंतीह घना जनौघाः ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निःशंकितांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥

ॐ ह्रीं निःशंकितांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुदर्शनं येन बिना प्रयुक्तं मतं फलं नैव भवेज्जनानां ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निःकांक्षितांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥

ॐ ह्रीं निकांक्षितांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यदंगतः संयमवृक्षसेको तस्मात्फलं संलभते शरीरी ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निर्विदितांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥

ॐ ह्रीं निर्विचिकित्सितांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यदुज्झितं चारुचरित्रमेतत्सिद्ध्यै भवेन्नैव मुनीश्वराणां ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निर्मूढतांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥

ॐ ह्रीं निर्मूढतांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरेंद्रनागेंद्रनरेंद्रवृन्दैर्वंद्यं पदं यद्वशतो लभंते ।
सुदुर्लभायामरपूजितायोपगूहनांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥

ॐ ह्रीं उपगूहनांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भर्वति वृद्धा गुणवृद्धिसिद्धा येनानुबद्धा जगति प्रसिद्धाः ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय सुस्थापनांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥

ॐ ह्रीं सुस्थितिकरणांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरत्नवद्दुर्लभतामुपेतं भव्यावनौ यत्प्रतिभासमानं ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय वात्सल्यतांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥

ॐ ह्रीं वात्सल्यांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रबंधभूयिष्ठमलञ्चकार यच्छासने शासितभव्यलोकः ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रभावनांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥

ॐ ह्रीं प्रभावनांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सौरभ्याहृतसद्भृंगसारया जलधारया ।
निःशंकितादिकान्यस्य सदंगानि यजामहे ॥

ॐ ह्रीं निःशंकितादिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चारुचन्दनकाश्मीरकर्पूरादिविलेपनैः ।
निशंकितादिकान्यस्य सदंगानि यजामहे ॥

ॐ ह्रीं नि शंकितादिभ्यः चंदन निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षतैरक्षतानंतसौख्यदानविधायकैः ।
निशंकितादिकान्यस्य सदङ्गानि यजामहे ॥

ॐ ह्रीं निःशंकितादिभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

जातीकुन्दादिराजीवचम्पकानेकपल्लवैः ।
निःशंकितादिकान्यस्य सदंगानि यजामहे ॥

ॐ ह्रीं निःशंकितादिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सन्नाज्यैः सुकृतैरिव ।
निःशंकितादिकान्यस्य सदंगानि यजामहे ॥

ॐ ह्रीं निःशंकितादिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दशाग्रैः प्रस्फुरद्रूपैर्दीपैः पुण्यजनैरिव ।
निःशङ्कितादिकान्यस्य सदङ्गानि यजामहे ॥

ॐ ह्रीं निःशंकितादिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपैः संधुवितानेककर्मभिधूपदायिनां ।
निःशंकितादिकान्यस्य सदङ्गानि यजामहे ॥

ॐ ह्रीं निःशंकितादिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

नालिकेराम्रपूगादिफलैः पुण्यफलैरिव ।
निःशंकितादिकान्यस्य सदंगानि यजामहे ॥

ॐ ह्रीं निःशंकितादिभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलगंधकुसुममिश्रं फलतंदुलकमलकलितललिताढ्यं ।
सम्यक्त्वाय सुभव्यं भव्यां कुसुमांजलिं दद्यात् ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय इदं जलं गन्धं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नमः, ॐ ह्रीं निःशंकितांगाय नमः, ॐ ह्रीं निःकांक्षितांगाय नमः, ॐ ह्रीं निर्विचिकित्सांगाय नमः ॐ ह्रीं निमूढतांगाय नमः । ॐ ह्रीं उपगूहनांगाय नमः । ॐ ह्रीं सुस्थितीकरणांगाय नमः । ॐ ह्रीं वात्सल्यांगाय नमः, । ॐ ह्रीं प्रभावनांगाय नमः ।

(इति जाप्यं कुर्यात्—इस मंत्रका जप करना चाहिये)

जयमाला ।

तत्त्वानां निश्चयो यस्तदिह निगदितं दर्शनं शुद्धबुद्धैः
तस्मादानष्टकर्माष्टकघनतिमिरो जायते ज्ञानसूरः ।
ज्ञानात्सिद्धिप्रसिद्धिं भुवि वचनमिदं शाश्वतं सिद्धिसौख्यं,
चंचच्चंद्रांशुशुद्धं तदहमिह महे दर्शनं पूजयामि ।

जय सम्यग्दर्शन दर्शिताश,
कमलाचित हतघनकर्मपाश ।
जय निःशंकित निश्चितसुतत्त्व,
शतपत्रशतार्चित मुदितसत्त्व ॥
जय निःकांक्षित वर्जितविकार,
कुंदार्चित कृतसंसारपार ।
जय निर्विचिकित्सित भावभंग,
कुमुदप्रसूनपूजित सुसंग ॥
जय निर्मूढांग महाप्ररूढ,
शुभचंपकचर्चित चारुरूढ ।
जय जय उपगूहन परमपक्ष,
वरमल्लिकाचर्चित दर्शितसुलक्ष ॥
जय जय सुस्थित सुस्थितीकरण,
जातीकुसुमार्चित दुःखहरण ।

वात्सल्यमल्ल जय जय विशाल,
केतकिदलधृजित दलितकाल ॥
प्रतिभावनांग जय जय वरेश,
वसुविधकुसुमार्चित सुरेश ।

घत्ता।

इति दर्शनमार्गं भावनिमग्नं दर्शनमिष्टमनिष्टहरं ।
सुमनःसत्पुंजं शर्मनिकुंजं, भव्यजनाय ददातु वरं ॥
पंचातिचारातिशयप्रपूतं, पंचप्रदं पंचमबोधहेतुं ।
सद्दर्शनं रत्नमनर्घ्यमर्घैर्भक्त्या सुरत्नैरहमर्चयामि ॥

मुक्ताः श्रेणिगता विभांति नितरां यत्प्रस्फुरत्तेजसा,
येनालंकृतांवग्रहं ग्रहमुचं सिद्ध्यंगना मुंचति ।
यत्संसारमहार्णवे भवभृतां दुःप्राप्यमापृच्छतः
तत्सम्यक्त्वसुरत्नमर्चितधियां देयादनिंद्यं पदं ।

रत्नांजलि।

अतुलसुखनिधानं सर्वकल्याणवीजं
जननजलधि पोतं भव्यसत्वैकपात्रम् ।
दुरिततरुकुठारं पुण्यतीर्थप्रधानं,
पिबतु जितविपक्षं दर्शनाख्यं सुधांबु ।

(इत्याशीर्वादः)

ज्ञानपूजा ।

प्रणम्य श्रीजिनाधीशमधीशं सर्वसंपदां ।
सम्यग्ज्ञानमहारत्नपूजां वक्ष्ये विधानतः ॥

श्रीजिनेंद्रस्य सद्विद्यामुत्तरेण महाधियः ।
पुस्तकं स्थापनीयं चेत्तस्यैवादर्शमव्ययं ॥

कल्पनातिगता बुद्धिः परमाथविभाविका ।
ज्ञानं निश्चयतो ज्ञेयं तदन्यद्व्यवहारतः ॥

ज्ञानाचारोऽष्टधा पुंसां पवित्रीकरणक्षमः ।
प्रभावेन तु पूजायै समागच्छतु निर्मलं ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्

सम्यग्ज्ञानप्रभापूर्तं कर्मकक्षक्षयानलं ।
पूजाक्षणे तु गृह्णातु स्थित्वा पूजामनिंदितां ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (प्रतिस्थापनं)

अचिंत्यमाहात्म्यमचिंत्यवैभवं भवार्णवोत्तीर्णविसारि सर्वतः ।
प्रबोधचारित्रमिहांतरंतरं निरंतरं तिष्ठतु सन्निधौ मम ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचार ! मम सन्निहितो भव भव वषट् । (सन्निधीकरणं)

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।
बोधतत्त्वसमाचारं संयजे सयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचाराय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूरनीरकाश्मीरमिश्रसच्चन्दनैर्घनैः ।
बोधतत्वसमाचारं संयजे सयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचाराय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अखंडैः खंडितानेकदुरितः शालितदुलैः ।
बोधतत्वासमाचारं संयजे सयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचाराय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः
बोधतत्वममाचारं संयजे सयजात्रहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचाराय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

न्यायैरिव जिनेंद्रस्य सन्नाज्यैः पुष्टिकारिभिः ।
बोधतत्वसमाचारं संयजे सयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचाराय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंचत्कांचनसंकाशैर्दीपैः सदुदीप्तिहेतुभिः ।
बोधतत्वसमाचारं संजये सयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचाराय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः ।
बोधतत्वसमाचारं संजये सयजावहं ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचाराय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पूगनारंगजंबीरमातुलिंगफलोत्करैः ।
बोधतत्वसमाप्त्यर्थं संजये सयजावहं
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचाराय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मोहाद्रिसंकटतटीविकटप्रपातसंपादिने सकलसत्वहितंकराय ।
बोधाय शक्रशुभहेतिसमप्रभाय पुष्पांजलिं प्रविमलां ह्यवतारयामि
ॐ ह्रीं सम्यग्बोधतत्वायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अतीवदुःखाशुभकर्मनाशप्रकाशिताशेषविशेषकाय ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्वाय नमोऽस्तु तस्मै ॥
सुव्यंजनैर्व्यंगितव्यंगभावप्रभावनाभावितभाववृद्धं ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्वाय नमोऽस्तु तस्मै ॥
ॐ ह्रीं व्यंजनव्यंगितायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पदार्थसंबंधमुपेत्य नीतं समग्रतामग्रपदप्रदायि ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्वाय नमोऽस्तु तस्मै ॥
ॐ ह्रीं अर्थसमग्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
शब्दार्थश्रद्धानवितानमानद्वयेन बंधं सुनिबंधमेति ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्वाय नमोऽस्तु तस्मै ॥
ॐ ह्रीं तदुभयसमग्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
पवित्रकालाध्ययनप्रभावप्रदर्शितानेककलाकलापं ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्वाय नमोऽस्तु तस्मै ॥
ॐ ह्रीं कालाध्ययनपवित्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

समृद्धशुद्धोपधिशुद्धमिद्धं सुभावभंतःस्फुरदंगसंगम् ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्वाय नमोऽस्तु तस्मै ॥
ॐ ह्रीं उपाध्यानोपहितायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

विनीतचेतो वितनोति नीतिप्रणीतमानंत्यमनंतरूपं ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्वाय नमोऽस्तु तस्मै ।
ॐ ह्रीं विनयलब्धप्रभावनांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अपन्हुते निन्हवतो गुरूणां गुरुप्रभावप्रहतांधकारे ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्वाय नमोऽस्तु तस्मै ॥
ॐ ह्रीं गुर्वाद्यपन्हवसमृद्धायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनेकधामान्यवितानवृद्धं प्रभावितानंतगुणं गुणानां ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्वाय नमोऽस्तु तस्मै ।
ॐ ह्रीं बहुमानोन्मुद्रितायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सौरभ्याहृतसद्भृंगसारया जलधारया ।
व्यंजनाद्यमलांगानि संयजे जन्मविच्छिदे ॥
ॐ ह्रीं व्यंजनाद्यंगेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चारुचंदनकाश्मीरकर्पूरादिविलेपनैः ।
व्यंजनाद्यमलांगानि संयजे जन्मविच्छिदे ॥
ॐ ह्रीं व्यंजनाद्यंगेभ्योः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षयैरक्षयानंतसुखदानविधायकैः ।
व्यंजनाद्यमलांगानि संयजे जन्मविच्छिदे ॥

ॐ ह्रीं व्यंजनादूर्यंगेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

जातीकुंदादिराजीवचंपकानेकपल्लवैः ।
व्यंजनाद्यमलांगानि संयजे जन्मविच्छिदे ॥

ॐ ह्रीं व्यंजनादूर्यंगेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सकाज्यैः सुकृतैरिव ।
व्यंजनाद्यमलांगानि संयजे जन्मविच्छिदे ॥

ॐ ह्रीं व्यंजनादूर्यंगेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशाग्रैः प्रस्फुरद्रूपैर्दीपैः पुण्यजनैरिव ।
व्यंजनाद्यमलांगानि संयजे जन्मविच्छिदे ॥

ॐ ह्रीं व्यंजनादूर्यंगेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपैः संधूपितानेककर्मभिर्धूपदायिनां ।
व्यंजनाद्यमलांगानि संयजे जन्मविच्छिदे ॥

ॐ ह्रीं व्यंजनादूर्यंगेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नालिकेराम्रपूगादिफलैः पुण्यफलैरिव ।
व्यंजनाद्यमलांगानि संयजे जन्मविच्छिदे ॥

ॐ ह्रीं व्यंजनादूर्यंगेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहाद्रिसंकटतटीविकटप्रपातसंपादिने सकलसत्वहितंकराय ।
बोधाय शक्रशुमहेतिसमप्रभाय पुष्पांजलिं प्रविमलां ह्यवतारयामि

ॐ ह्रीं सम्बोधतत्वाय इदं जलं गन्धं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं व्यंजनव्यंजिताय नमः, ॐ ह्रीं अर्थसमग्राय नमः ॐ ह्रीं तदुभयसमग्राय नमः, ॐ ह्रीं कालाध्ययनपवित्राय नमः ॐ ह्रीं उपाध्यानोपहिताय नमः, ॐ ह्रीं विनयलब्धिप्रभावाय नमः, ॐ ह्रीं गुर्वाद्यपन्हवसमृद्धाय नमः, ॐ ह्रीं बहुमानोन्मुद्रिताय नमः। (इस मंत्रका जाप करना चाहिये)

जयमाला ।

व्योम्नीव व्यक्तरूपं विगतघनमलं भाति नक्षत्रमेकं,
जीवाजीवादितत्त्वं स्थगितगतमलं यस्य दृग्गोचरस्थं ।
तत्त्वज्ञैः प्राथ्यते यत्प्रविपुलमतिभिर्मोक्षसौख्याय जज्ञे,
तद्भव्यांभोजभानुं ललितगुणमणि बोधमभ्यर्चयामि ॥

घनमोहतमःपटलापहरं, यमसंयमसंगमभारधरं ।
भुवि भव्यपयोजविकासमहं, प्रणमामि सुबोधदिनेशमहं
कृतदुष्कृतकौशिकचारुहरं, भृतभूरिभवार्णवशोषकरं ।
भुवि भव्यपयोजविकासमहं, प्रणमामि सुबोधदिनेशमहं
निखिलामलवस्तुविकाशपदं, हतदुर्धरदुर्जयमथ्मद ।
भुवि भव्यपयोजविकासमहं, प्रणमामि सुबोधदिनेशमहं ॥
कलिकल्मषरुद्धमशोषकरं, हृदयाद्वसर्पितकर्मजलं ।
भुवि भव्यपयोजविकासमहं प्रणमामि सुबोधदिनेशमहं ॥
जडतामपहारकसूर्यसमं, सुमनोद्भवसंगविभंगसमं ।
भुवि भव्यपयोजविकासमहं, प्रणमामि सुबोधदिनेशमहं ॥

हृदयामललोचनलच्चमितं, निजभासुरभानुसहस्त्रयुतं ।
भुवि भव्यपयोजविकासमहं, प्रणमामि सुबोधदिनेशमहं ॥

अलिकज्जलनीलतमालतमं, प्रतिमर्धिकभावनिशापगमं ।
भुवि भव्यपयोजविकासमहं, प्रणमामि सुबोधदिनेशमहं ॥

निजमंडलमंडितलोकमुखं, नतसत्वसमर्पितसर्वसुखं ।
भुवि भव्यपयोजविकासमहं, प्रणमामि सुबोधदिनेशमहं ॥

घत्ता ।

स्तुत्वेति बहुधा स्तोत्रैर्बहुभक्तिपरायणाः ।
नानाभव्यैः समं धीमानर्घं चापि समुद्धरेत् ॥

संसारपाथोनिधिशोषकारि प्रबंधधूर्यिष्ठमनंतरूपं ।
सज्ज्ञानरत्नंबहुयत्नभृंगैः रत्नैः शुभैरर्चितमर्चयामि ।

रत्नांजलि ।

चिंतामूलमहादृढस्तदमलस्थूलस्थलस्कंधमान्,
नांगोपांगसदागमैकविसरच्छाखोपशाखार्चितः ।
एकानेकविधावधिप्रभृतिभिः सत्पात्रपुष्पैर्वरै,
देयाद् बोधतरुः सदा शिवसुखान्यासेवितोऽनेकशः ।

आशीर्वादः ।

दुरिततिमिरहंसं मोक्षलक्ष्मीसरोजं,
मदनभुजगमंत्रं चित्तमार्तंडसिंहं ।
व्यसनघनसमीरं विश्वतत्त्वैकदीपं
विषयसफरजालं ज्ञानमाराधय त्वं ॥

(इत्याशीर्वादः)

चारित्रपूजा ।

देवश्रुतगुरून्नत्वा कृत्वा शुद्धिमिहात्मनः ।
सम्यक्चारित्ररत्नस्य वक्ष्ये संक्षेपतोऽर्चनं ॥

सम्यक्रत्नत्रयस्याथ पुस्तकं चोत्तरेण तु ।
गणेशपादुकायुग्मं स्नापयित्वा महोत्सवे ॥

गौणं चारित्रमाख्यातं यत्सावद्यनिवर्तनं ।
आनंदसांद्रमानात्मा पवित्रं परमार्थतः ॥

त्रयोदशविधानेकभव्यलोकैकपावनं ।
चारित्राचारकर्मैत कमलं विमलं शिवः ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचार ! अत्रावतर अवतर संवौषट् ।

(यंत्रके ऊपर पुष्पांजलि चढ़ाना चाहिये)

विषमकर्ममहाकुलपर्वतप्रकटकूटविभंजनसत्पविः ।
य इह तिष्ठतु तिष्ठतु मोक्षद त्रिमलहारि चरित्रमहामहः ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचार ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । (प्रतिष्ठापनं)

सकलभव्यपयोजविकासकृत् प्रकटिताग्रिमभावविभावकः ।
प्रबलमोहनिशाचरचारहृत् चरणभानुरुदेतु मनोंबरे ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचार ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । (सन्निधिकरणं)

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।
सच्चारित्रसमाचारं संयजे संयजावहं ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय जलं निर्व० ।
कर्पूरनीरकाश्मीरमिश्रसच्चंदनैर्घनैः
सच्चारित्रसमाचारं संयजे संयजावहं ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय चंदनं निर्व० ।
अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः ।
सच्चारित्रसमाचारं संयजे संयजावहं ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय अक्षतं निर्व० ।
शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः ।
सच्चारित्रसमाचारं संयजे संयजावहं ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय पुष्पं निर्व०
न्यायैरिव जिनेंद्रस्य सदाज्यैः पुष्टिकारिभिः ।
सच्चारित्रसमाचारं संयजे संयजावहं ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय नैवेद्यं निर्व० ।
चंचरकांचनसंकाशैर्दीपैः सद्दीप्तिहेतुभिः ।
सच्चारित्रसमाचारं संयजे संयजावहं ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय दीपं निर्व० ।
कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः ।
सच्चारित्रसमाचारं संयजे संयजावहं ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय धूपं निर्व०।

पूगनारंगजंबीरमातुलिंगफलोत्करैः।
सच्चारित्रसमाचारं संयजे संयजावहं ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय फलं निर्व०।

कर्माणि हि महारोगा नराणां यत्प्रयोगतः।
सच्चारित्रौषधायास्मै ददामि कुसुमांजलिं ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय इदं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं नैवेद्यं दीपं धूपं फलं अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणातिपातविरतिरूपं सर्वत्र तत्त्वतः।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥

ॐ ह्रीं अहिंसापूर्णमहाव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

असत्यविरते प्राप्तपरभावमनेकधा।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥

ॐ ह्रीं असत्यविरतिमहाव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

चौर्याद्यावृत्तवृत्तात्मा सर्वथा सुमनीषिणां।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥

ॐ ह्रीं चौर्यविरतिमहाव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्राम्यधर्मविनिर्मुक्तं यद् वंद्यं त्रिदशैरपि।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥

ॐ ह्रीं मैथुनविरतिमहाव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वग्रहविनिर्मुक्त मनकग्रंथसंयुतं ।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥

ॐ ह्रीं परिग्रहविरतिमहाव्रतायाघ निर्वपामीति स्वाहा ।

सौरभ्याहृतसद्गंधसारया जलधारया ।
अहिंसाव्रतपूर्वाणि यजाम्यंगानि सर्वदा ॥

ॐ ह्रीं अहिंसादिपञ्चमहाव्रतेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चारुचंदनकाश्मीरकर्पूरादिविलेपनैः ।
अहिंसाव्रतपूर्वाणि यजाम्यंगानि सर्वदा ।

ॐ ह्रीं अहिंसादिपञ्चमहाव्रतेभ्य चदन निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षतैरक्षतानतसुखदानविधायकैः ।
अहिंसाव्रतपूर्वाणि यजाम्यंगानि सर्वदा ॥

ॐ ह्रीं अहिंसादिपञ्चमहाव्रतेभ्योऽक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

जातीकुन्दादिराजीवचंपकानेकपल्लवैः ।
अहिंसाव्रतपूर्वाणि यजाम्यंगानि सर्वदा ।

ॐ ह्रीं अहिंसादिपञ्चमहाव्रतेभ्य पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सदाज्यैः सुकृतैरिव ।
अहिंसाव्रतपूर्वाणि यजाम्यंगानि सर्वदा ॥

ॐ ह्रीं अहिंसादिपञ्चमहाव्रतेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दशाग्रैः प्रस्फुरत्सूक्ष्मैर्दीपैः पुण्यजनैरिव ।
अहिंसाव्रतपूर्वाणि यजाम्यंगानि सर्वदा ॥

ॐ ह्रीं अहिंसादिपञ्चमहाव्रतेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपैः संधूपितानेककर्मभिर्धूपदायिनां।
अहिंसाव्रतपूर्वाणि यजाम्यङ्गानि सर्वदा॥

ॐ ह्रीं अहिंसादिपञ्चमहाव्रतेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नालिकेरादिभिः पूगैः फलैः पुण्यफलैरिव।
अहिंसाव्रतपूर्वाणि यजाम्यंगानि सर्वदा॥

ॐ ह्रीं अहिंसादिपञ्चमहाव्रतेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्माणि हि महारोगा नश्यंति यत्प्रयोगतः।
सच्चारित्रौषधायास्मै ददामि कुसुमांजलिं॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय इदं जलं गधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अधृष्यं सर्वलोकानां यन्मनस्तन्नियामकं।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं॥

ॐ ह्रीं मनोगुप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यद्वाग्व्यापारजानेकदोषसंगविवर्जितं।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं॥

ॐ ह्रीं वाग्गुप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शरीरास्रवसंचारपरिहारविनिर्मलं।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं॥

ॐ ह्रीं कायगुप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ईर्यासमितिसंशुद्धमतीचारविवर्जितं ।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥
ॐ ह्रीं ईर्यासमितयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्विधमहाभाषाशुद्धसंयमसंगतं ।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥
ॐ ह्रीं भाषासमितयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

एषणासमितिसंशुद्धं यत्प्रवृद्धं विभागतः ।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥
ॐ ह्रीं एषणासमितयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यस्मिन्नादाननिक्षेपैः सतां संयमवृद्धये ।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥
ॐ ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

व्युत्सर्गेण विशुद्धं यत्कर्मव्युत्सर्गकारणं ।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥
ॐ ह्रीं प्रतिष्ठापनसमितयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।
मनोगुप्तिप्रपूर्वाणि यजाम्यंगानि संमुदा ॥
ॐ ह्रीं मनोगुप्तिप्रभृतिचारित्राचारेभ्यो जलं निर्व० ।

कर्पूरनीरकाश्मीरमिश्रसच्चंदनैर्घनैः ।
मनोगुप्तिप्रपूर्वाणि यजाम्यंगानि संमुदा ॥

ॐ ह्रीं मनोगुप्तिप्रभृतिचारित्राचारेभ्यः चंदनं निर्व० ।

अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः ।
मनोगुप्तिप्रवर्तीणि यजाम्यंगानि संमुदा ॥
ॐ ह्रीं मनोगुप्तिप्रभृतिचारित्राचारेभ्योऽक्षतं निव०

शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः ।
मनोगुप्तिप्रवर्तीणि यजाम्यगानि संमुदा ॥
ॐ ह्रीं मनोगुप्तिप्रभृतिचारित्राचारेभ्यः पुष्पं निर्व०

न्यायैरिव जिनेन्द्रस्य सन्नाज्यैः पुष्टिकारिभिः ।
मनोगुप्तिप्रवर्तीणि यजाम्यंगानि संमुदा ॥
ॐ ह्रीं मनोगुप्तिप्रभृतिचारित्राचारेभ्यो नैवेद्यं निर्व० ।

चंचत्कांचनसंकाशैर्दीपैः सद्दीप्तिहेतुभिः ।
मनोगुप्तिप्रवर्तीणि यजाम्यंगानि संमुदा ॥
ॐ ह्रीं मनोगुप्तिप्रभृतिचारित्राचारेभ्यो दीपं निर्व० ।

कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः ।
मनोगुप्तिप्रवर्तीणि यजाम्यंगानि संमुदा ॥
ॐ ह्रीं मनोगुप्तिप्रभृतिचारित्राचारेभ्यो धूपं निर्व० ।

पूगनारंगजंबीरमातुलिंगफलोत्करैः ।
मनोगुप्तिप्रवर्तीणि यजाम्यंगानि संमुदा ॥
ॐ ह्रीं मनोगुप्तिप्रभृतिचारित्राचारेभ्यः फलं निर्व० ।

कर्माणि हि महारोगा नश्यंति यत्प्रयोगतः ।
सच्चारित्रौषधायास्मै ददामि कुसुमांजलिं ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय इदं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अहिंसापूर्णमहाव्रताय नमः, ॐ ह्रीं असत्यविरति-महाव्रताय नमः, ॐ ह्रीं चौर्यविरतिमहाव्रताय नमः, ॐ ह्रीं मैथुनविरतिमहाव्रताय नमः, ॐ ह्रीं परिग्रहविरतिमहाव्रताय नमः, ॐ ह्रीं मनोगुप्तये नमः, ॐ ह्रीं वाग्गुप्तये नमः, ॐ ह्रीं कायगुप्तये नमः, ॐ ह्रीं ईर्यासमितये नमः, ॐ ह्रीं भाषासमितये नमः, ॐ ह्रीं एषणासमितये नमः, ॐ ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितये नमः, ॐ ह्रीं प्रतिष्ठापनसमितये नमः, (इस मंत्र का जाप करना चाहिये)

जयमाला ।

न द्वेषो द्वेषवृत्तिन्यकृणदृशि कृतानेकघोरोपसर्गे,
यस्मिन् रागोऽपि न स्यात् मलयजकुसुमं दीयते भक्तिभाजा ।
स्वर्णे जीर्णे तृणे वा भवति समतुला पुण्यपापास्रवेऽपि,
सम्यक्चारित्रमेतत्तदहमिह महे पूजयाम्यादरेण ॥

स्वात्मानं योगिनो यस्माल्लभंते शुद्धचेतसा ।
नमः समयसाराय चारित्रायामलत्विषे ॥
यानि कानि तु सौख्यानि जायंते तानि तद्वशात् ।
नमः समयसाराय चारित्रायामलत्विषे ॥

दौर्गत्यानि तु दुःखानि यद्दते लभते नरः ।
नमः समयसाराय चारित्रायामलत्विषे ॥
लोकालोकविभागात्मा यतः प्राप्नोति केवलं ।
नमः समयसाराय चारित्रायामलत्विषे ॥
यच्छ्रद्धानान्नृणां जन्म सकलं सफलं भवेत् ।
नमः समयसाराय चारित्रामलत्विषे ॥
लक्ष्मीलोचनलक्ष्यांगं यत्करोति नरं वरं ।
नमः समयसाराय चारित्रायामलत्विषे ॥
चक्रिभिस्तीर्थकृत्त्वणां येनांचति पदं नरः ।
नमः समयसाराय चारित्रायामलत्विषे ॥
मुक्ता यस्मिन्परा: किंच योगिनो योगजन्मकृत् ।
नमः समयसाराय चारित्रायामलत्विषे ॥
विधायेत्थं मनः पूजां चारित्रस्य विशुद्धधीः ।
करोमि पूर्ववत्सर्वमर्घादिमनिंदितं ॥

घत्ता ।

स्तुत्वेति बहुधा स्तोत्रैर्बहुभक्तिपरायणः ।
नानाभव्यैः समं लोके करोत्यानंदनाटनं ॥
अलंकृता येन सदाश्रयंति सत्साधवः सिद्धिवधूवरत्वं ।
मालामुपक्षिप्य सुरत्नपूतां चारित्ररत्नं परिपूजयामि ॥
(रत्नांजलिं निक्षिपेत्)

अन्तर्लीनमलीमसप्रसरविच्छिन्नीलोल्लसत्केवलं,
लोकालोकविलोकनक्रमगुणग्रामैकशुद्धिं नयत् ।
येनालंकृतविग्रहा क्षणमपि क्षीणा नरा नर्मला,
नैर्मल्यं प्रतिपद्य शाश्वततमं वंदे चरित्रं च तत् ॥

ततोऽपि गुरुणा दत्तामाशिषं शिरसा सुधीः ।
गृहणाति ग्रहनिर्मुक्तो मुक्तये व्रतकारकः ॥

अनंतानंतसंसारकर्मविच्छित्तिकारकं ।
देयाद् वः संपदः श्रीमच्चरणं शरणं नृणां ॥

विरम विरम संगान्मुञ्च मुञ्च प्रपंचं,
विसृज विसृज मोहं विद्धि विद्धि स्वतत्वं ।
कलय कलय वृत्तं पश्य पश्य स्वरूपं,
कुरु कुरु पुरुषार्थं निर्वृतानंतहेतोः ॥

(इत्याशीर्वादः)

समुच्चय जयमाला

रयणत्तयसारउ भव्वपियारउ सयलह जीवह दुरियहरो ।
सुणियणगणमहियउ गुणगणसहियउ मिच्छमोहमयणासहरो
पणवीस दोसवज्जिउपवित्त, अइयाररहिउ वसुगुणविजुत्त ।
अट्ठंगइ णिम्मल विप्फुरंति, जो तिरहं देवत्तण विलिंति ॥
णारईय वि तित्थयरा हवंति, देव वि एइंदिय पउलहंति ।
जे मिच्छत्तय सम्मत्तहीण, दालिद्दय णाणिय ते पवीण ॥

मइसुय अवही मणपज्जणाण, केवलु वि कहिज्जइ मइपवाण ।
अएणाणे तिएणइ अवइ ओह, कुच्छियमिच्छत्तजईस होइ ॥
वोसुव णिम्मल पवणु वि असंग, परिअजिउविकसायरमुत्तिसंग ।
लोयालोहावि जयउ णियाइ, बहुभयेयहजउ चारित होइ ॥
पंचाइमहव्वय समिदिपंच, गुत्तणउ तिणिपयजियअवंच ।
पुण पंचायारतिभेयजुत्त, मुणिधम्मकहहि देविंदवुत्त ॥

घत्ता।

जिहिं तिण्णिविणरचिरु गहण मुणेमुइ,
अंधउ आलस्सउ पंगुलत्ति ।
जिणवरभासिय निएणतरइ विणु,
मुत्तिण भणइ मणि ॥

(इत्याशीर्वादः)

रत्नत्रयपूजा भाषा ।

दोहा।

चहुँगतिफनिविषहरनमणि, दुखपावक जलधार ।
शिवसुखसुधासरोवरी, सम्यकत्रयी निहार ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

सोरठा ।

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनों ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय—भजूं ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं नि०

चंदन केसर गारि, परिमल महासुरंगमय ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय—भजूं ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवतापविनाशनाय चंदनं नि०

तंदुल अमल चितार, वासमती सुखदासके ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय—भजूं ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०

महकैं फूल अपार, अलिगुंजैं ज्यों थुति करैं ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय—भजूं ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगंधयुत ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय—भजूं ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०

दीप रतनमय सार, जोत प्रकाशै जगतमें ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय—भजूं ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि०

धूप सुवास विथार, चंदन अगर कपूरकी ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय—भजूं ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि०

फल शोभा अधिकार, लोंग छुहारे जायफल ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय—भजूं ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०

आठदरब निरधार, उत्तमसों उत्तम लिये ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय—भजूं ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ नि०

सम्यकदरशनज्ञान, व्रत शिवमग तीनोंमयी ।
पार उतारन जान, 'द्यानत' पूजों व्रतसहित ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दर्शनपूजा ।

दोहा ।

सिद्ध अष्टगुनमय प्रगट, मुक्त जीवसोपान ।
जिहबिन ज्ञानचरित अफल, सम्यकदर्श प्रधान ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

सोरठा।

नीर सुगंध अपार, तृषा हरैं मल छय करैं ।
सम्यकदर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल केसर घनसार, ताप हरैं सीतल करैं ।
सम्यकदर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अछत अनूप निहार, दारिद नाशैं सुख भरैं ।
सम्यकदर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पहुप सुवास उदार, खेद हरैं मन शुचि करैं ।
सम्यकदर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविधप्रकार, छुधा हरैं थिरता करैं ।
सम्यकदर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा ।
सम्यकदर्शनसार आठ अंग पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जड़ता हरैं ।
सम्यकदर्शनसार आठ अंग पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै।
सम्यकदर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फलफूल चरु।
सम्यकदर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

दोहा।

आप आप निहचै लखै, तत्त्वप्रतीति व्योहार।
रहितदोष पच्चीस है, सहित अष्ट गुन सार॥

चौपाई-मिश्रित गीता छंद।

सम्यकदरशन रतन गहीजै, जिनवचमें संदेह न कीजै।
इहभव विभवचाह दुखदानी, परभवभोग चहै मत प्रानी॥
प्रानी गिलान न करि अशुचिलखि, धरमगुरुप्रभु परखिये,
परदोष ढकिये धरम डिगतेको, सुथिर कर हरखिये।
चहुसंघको वात्सल्य कीजे, धरमकी परभावना,
गुन आठसों गुन आठ लहिकै, इहां फेर न आवना॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसहितपञ्चविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानपूजा।

दोहा।

पंचभेद जाके प्रगट, ज्ञेयप्रकाशन भान।
मोह-तपन-हर-चन्द्रमा, सोई सम्यकज्ञान॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट्।

नीरसुगंध अपार, तृषा हरै मल छय करै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठभेद पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलकेसर घनसार, ताप हरै शीतल करै।
सम्यकज्ञान विचार आठभेद पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै।
सम्यकज्ञान विचार, आठभेद पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पहुपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै।
सम्यकज्ञान विचार, आठभेद पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविधप्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
सम्यकज्ञान विचार, आठभेद पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा ।
सम्यकज्ञान विचार, आठभेद पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जड़ता हरै ।
सम्यकज्ञान विचार आठभेद पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचैं सुरशिवफल करै ।
सम्यकज्ञान विचार, आठभेद पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीति स्वाहा

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यकज्ञान विचार, आठभेद पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

दोहा ।

आप आप जानै नियत, ग्रंथपठन व्योहार ।
संशय विभ्रम मोह बिन, अष्टअंग गुनकार ॥

चौपाई-मिश्रित गीताछंद ।

सम्यकज्ञान रतन मन भाया, आगम तीजा नैन बताया ।
अच्छर शुद्ध अरथ पहिचानौं, अच्छर अरथ उभय संग जानौं
जानौं सुकालपठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये ।
तपरीति गहि बहु मान देकैं, विनयगुन चित लाइये ॥
ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञान-दर्पन देखना ।
इस ज्ञानहीसों भरत सीझा, और सब पटपेखना ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घं निवपामीति स्वाहा ।

चारित्रपूजा ।

दोहा ।

विषयरोग औषध महा, दवकषायजलधार ।
तीर्थंकर जाकौं धरैं, सम्यकचारितसार ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

सोरठा ।

नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।
सम्यकचारितसार, तेरहविधि पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वा० ।

जल केशर घनसार, ताप हरैं शीतल करैं ।
सम्यकचारितसार, तेरहविधि पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय चंदनं निर्व०

अक्षत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरैं ।
सम्यकचारितसार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय अक्षतान् निर्व० ।

पहुपसुवास उदार, खेद हरैं मन शुचि करैं ।
सम्यकचारितसार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय पुष्पं निर्व० ।

नेवज विविधप्रकार, छुधा हरैं थिरता करैं ।
सम्यकचारितसार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय नवेद्य निव० ।

दीपजोति तमहार, घटपट परकाशै महा ।
सम्यकचारितसार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय दीपं निव० ।

धूप घ्रान सुखकार, रोग विघन जड़ता हरैं ।
सम्यकचारितसार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय धूपं निर्व० ।

श्रीफलआदिविथार, निहचै सुरशिवफल करैं ।
सम्यकचारितसार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्व०।

जल गंधाक्षत चारु, दीप, धूप फलफूल चरु।
सम्यकचारितसार, तेरहविध पूजौं सदा ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घं निर्व०।

जयमाला।

दोहा।

आप आप थिर नियत नय, तपसंजम व्योहार।
स्वपर दया दोनों लिये, तेरहविधिदुखहार ॥

चौपाई-मिश्रित गीताछंद।

सम्यकचारित रतन संभालौ,
पांच पाप तजिकैं व्रत पालौ।
पञ्चसमिति त्रय गुपति गहीजै,
नरभव सफल करहु तन छीजै ॥

छीजै सदा तनको जतन यह,
एक संजम पालिये।
बहु रुल्यो नरक निगोदमाहीं,
विषयकषायनि टालिये ॥

शुभकरम जोग सुघाट आया,
पार हो दिन जात है।

'द्यानत' धरमकी नाव बैठो,
शिवपुरी कुशलात है ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय महार्घं निर्व०।

समुच्चय जयमाला।

दोहा।

सम्यकदरशन-ज्ञान-व्रत, इन विन मुकति न होय।
अंध पंगु अरु आलसी, जुदे जलैं दव लोय ॥

चौपाई (१६ मत्रा)

जापै ध्यान सुथिर बन आवै, ताके करमबंध कट जावे।
तासों शिवतिय प्रीति बढावै, जो सम्यक रतनत्रय ध्यावै ॥
ताको चहुगतिके दुख नाहीं, सो न परै भवसागरमाहीं।
जनमजरामृतु दोष मिटावै, जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥
सोई दसलच्छनको साधै, सो सोलहकारण आराधै।
सो परमातम-पद उपजावै, जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥
सोई शक्रचक्रि पद लेई, तीनलोकके सुख विलसेई।
सो रागादिक भाव बहावै, जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥
सोई लोकालोक निहारै, परमानन्द दशा विसतारै।
आप तिरै औरन तिरवावै, जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥

एकस्वरूपप्रकाश जिन, वचन कह्यो नहिं जाय।
तीन भेद व्योहार सब, 'द्यानत' कों सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय महार्घ्य निर्व०।

क्षमावणीपूजा (संस्कृत) ।

देवश्रुतगुरून्नत्वा स्थापयित्वा महोत्सवं ।
ततश्चाष्टविधां पूजां कुर्याद् व्रतविधायकः ॥
अष्टौ पुंजाः प्रकर्तव्याः दर्शनाग्रे जिनाग्रतः ।
ज्ञानार्थं पुस्तकस्याग्रे वृत्तार्थं पुण्यपुंजकः ॥
गुरुपादयुगस्याग्रे त्रयोदशविधानतः ।
तंदुलानां प्रकर्तव्यं वृत्तार्थं पुण्यपुंजकः ॥
तेषामुपरि पूतानि फलानि विविधानि च ।
दातव्यानि प्रयत्नेन यथाविधिमनीषिभिः ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टकम् ।

सौगन्ध्याहृतसद्‌गंधसारयाजलधारया ।
अर्चयामि जिनाधीशं सदामयगुणगुरून् गुरून् ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
चारुचंदनकाश्मीरकर्पूरादिविलेपनैः । अर्चया०
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।
अक्षतैरक्षतानंतसुखज्ञानविधायकैः । अर्च०
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

जातिकुन्दादिराजीवचंपकाशोकपल्लवैः । अर्च०
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
स्वाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सन्नाद्यैः शुद्धकारिभिः । अर्च०
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दशाग्रैः प्रस्फुरद्रूपैः दीपैः पुण्यजनैरिव । अर्चया०
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
धूपैः संधूपितानेककर्मभिर्धूपदायिनां । अर्चया०
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
नालिकेरादिभिः पूर्णैः फलैः पुण्यजनैरिव ।
अर्चयामि जिनाधीशं सदागमगुणागुरून् गुरून् ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जलंगंधकुसुमभिश्रं फलतंदुलकलितललिताव्यम्
सम्यक्त्वाय सुभव्यैर्भव्यां कुसुमांजलिं दद्यात् ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पुनरष्टकम् ।

स्थानासनार्घप्रतिपत्तियोग्याम्, सद्भावसन्मानजलादिभिश्च ।
रत्नत्रयार्चां विदधे त्रिकालं, भक्त्या स्वकर्मक्षयहेतवेऽहम् ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रीखण्डकर्पूरसुकुंकुमाद्यैः, गंधैः सुवासीकृतदिग्विभागैः रत्न०
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः चंदनं निर्व० ।

शाल्यक्षतैरक्षतदीर्घमात्रैः, सुनिर्मलैश्चंद्रकरावदातैः । रत्न०

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्योऽक्षतं निर्व० ।

अंभोजनीलोत्पलपारिजातैः कदंबकुंदादितरुप्रसूनैः । रत्न०

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः पुष्पं निर्व० ।

नैवेद्यकैः कांचनपात्रसंस्थैः, न्यस्तैरुदस्तैर्हरिणांशुहस्तैः । रत्न०

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नैवेद्यं निर्व० ।

दीपोत्करैर्ध्वस्ततमोवितानैः, उद्योतिताशेषपदार्थजातैः । रत्न०

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो दीपं निर्व० ।

कर्पूरकृष्णागरुचंदनाद्यैः, सच्चूर्णजैरुत्तमधूपवर्गैः । रत्न०

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो धूपं निर्व०

लवंगनारिंगकपित्थपूगैः, श्रीमोचचोचादिफलैः पवित्रैः । रत्न०

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः फलं निर्व० ।

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रैः, विकाशपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
रत्नत्रयार्चां विधते त्रिकाल, भक्त्या स्वकर्मक्षयहेतवेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्योऽर्घं निर्व० ।

जयमाला ।

दुरंतसंसारवने निपण्णे, संभ्रम्यते येन विनाशतोयं ।
भवांबुधौ यत्र विनामरत्नं, रत्नत्रयं नौमि परं पवित्रं ॥
अलब्धलब्धप्रतिबिंबवेदी, योगीश्वरो यत्र तत: सुबोध ।
भवांबुधौ यत्र विनामरत्नं, रत्नत्रयं नौमि परं पवित्रं ॥

अनेकपर्यायगतैरभावे, यस्मादनन्तं लभते शरीरी ।
भवांबुधौ यज्ञविनामरत्नं, रत्नत्रयं नौमि परं पवित्रं ॥
विनामहाधर्मविधर्मलोके, लभ्यं भवेन्नैव जगत्त्रयेपि ।
भवांबुधौ यज्ञविनामरत्नं, रत्नत्रयं नौमि परं पवित्रं ॥
जनो भवेद्येन जितांतराग: स्वर्गापवर्गामलमोख्यकानि ।
भवांबुधौ यज्ञविनामरत्नं, रत्नत्रयं नौमि परं पवित्रं ॥
तन्नारकं दुःखमसह्यमस्माद्, दुःखाशयानां प्रलयं प्रयाति ।
भवांबुधौ यज्ञविनामरत्नं, रत्नत्रयं नौमि परं पवित्रं ॥
प्रभावतो यस्य पृथग्जनाद्याः, तीर्थाधिपत्यं चणतो लभंते ।
भवांबुधौ यज्ञविनामरत्नं, रत्नत्रयं नौमि परं पवित्रं ॥
यदुज्झितं संयमिनोपि वंद्यो, नित्यं लभंते तपसः सकाशात् ।
भवांबुधौ यज्ञविनामरत्नं, रत्नत्रयं नौमि परं पवित्रं ॥

हत्वा विघ्नानि सर्वाणि यानि कानि पुराकृतं ।
सम्यक्रत्नत्रयीपूतं मगलं वितनोतु वः ॥
नरामरकृतानेकोपसर्गोपनिवारणं । सम्यक्रत्न०
विपत्संपत्तिनाशाय संपत्संपत्तिकारणं । सम्यक्०
तुष्टिपुष्टिकरं नित्यं सर्वरोगापहारकं । सम्यक्०
यद्दारिद्रमहावल्लोदहनैकदवानलं । सम्यक्०
संकल्पकल्पितानेकदानकल्पद्रुमोपमं । सम्यक्०
यज्ञवांबुधिमग्नानां दुर्लभं भवकोटिभिः । सम्यक्०
मंगलानां च सर्वेषां यदेव मंगलं मतं । सम्यक्०

दुर्भिक्षादिमहादोषनिवारणपरंपराः ।
कुर्वंतु जगतः शांतिं जिनश्रुतमुनीश्वराः ॥
यत्संस्मरणमात्रेण विघ्नाः नश्यंति मूलतः । कुर्वंतु जग०
यदर्थात् लभते प्राणी यत्प्रसादात्प्रमादतः । कुर्वंतु जग०
दृष्ट्वा स्पर्शासतो येन येऽनंतसुखदायकाः । कुर्वंतु जग०
येषामाराधका नित्यमज्ञया त्रिदशैरपि । कुर्वंतु जग०
सिद्धाः शुद्धाः विशुद्धा ये प्रसिद्धा जगतां त्रये । कुर्वंतु जग०
नानागुणमहारत्नालंकृता निरलंकृताः । कुर्वंतु जग०
स्वर्गावतरणे वै रत्नवृष्टिः शक्राज्ञया षण्णवमास यावत् ।
स्वप्नावलीढाः प्रमुखादनुज्ञास्ते संतु कल्याणकरा जिना वः ॥
संस्थापितो जन्मनि मूर्ध्नि मेरोः शक्रेण दुग्धार्णववारिपूर्णैः ।
बाल्ये गता हेमघटैः सुराणां ते संतु कल्याणकरा जिना वः ॥
यत्नेन ये स्नाप्य विभूष्य नीतास्तपोवनं सन्निहितोकृतोद्याः ।
सौपाटितालिक्तसुरेश्वराणां ते सतु कल्याणकरा जिना वः ।
जगत्त्रये द्योतकरीं प्रयाता, घातिक्षये केवलबोधलक्ष्मीः ।
सत्प्रातिहार्याभरणार्चितांगाः ते संतु कल्याणकरा जिना वः ॥
प्रदग्धरज्वाकृतकर्मनाशे तदंगपूजा मुकुटानलेन ।
कृत्वामरैश्चंदनदेवकाष्ठैः, ते संतु कल्याणकरा जिना वः ॥
सद्रत्नवृष्टिकुसुमासनगंधवारि भेर्य्या रवस्त्रिदशवर्णनकंजनास्ते ।
साश्चर्यपंचकमशेषगणं सुराणां कल्याणपंचकमिदं विदधातुशांतिं
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

क्षमावणीपूजा भाषा ।

छप्पय ।

अंग क्षमा जिन धर्मतनो दृढ मूल बखानो ।
सम्यक रत्न सँभाल हृदय में निश्चय जानो ॥
तज मिथ्या विष मूल और चित निर्मल ठानो ।
जैन धर्म सों प्रीति करो सब पातिक भानो ॥
रत्नत्रय गह भविक जन जिनआज्ञा सम चालिये ।
निश्चय कर आराधना करम बंध को जालिये ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय अत्रावतरावतर संवौषट आह्वानं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनं । अत्र मम सन्निहितं भव भव सन्निधिकरणं । पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अथाष्टक ।

क्षमा गहो उर जीवड़ा जिनवर वचन गहाय । टेक ।
नीर सुगंध सुहावनो पदम द्रह को लाय ।
जन्म रोग निर्वारिये, सम्यकरतन लहाय ॥क्षमा०॥

ॐ ह्रीं निःशंकिताङ्गाय ॥ १ ॥ निःकांक्षिताङ्गाय ॥ २ ॥ निर्विचिकित्सिताङ्गाय ॥३॥ निर्मूढताङ्गाय ॥४॥ उपगूहनाङ्गाय ॥५॥ सुस्थितिकरणाङ्गाय ॥६॥ वात्सल्यताङ्गाय ॥७॥ प्रभावनाङ्गाय ॥८॥ अष्टाङ्गसहिताय सम्यग्दर्शनाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० ॐ ह्रीं व्यंजनव्यंजिताय ॥ ॥ अर्थसमग्राय ॥२॥ तदुभयसमग्राय ॥३॥ कालाध्ययनाय ॥४॥ उपध्यानोपहिताय ॥५॥ विनयलब्धिप्रभावनाय ॥६॥ गुर्वपन्हवाय ॥७॥ बहुमानोन्मानसमेताय ॥८॥

अष्टागसम्यग्ज्ञानाय जलं नि० । ॐ ह्रीं अहिंसाव्रताय ॥१॥ सत्यव्रताय ॥२॥ अचौर्यव्रताय ॥३॥ ब्रह्मचर्यव्रताय ॥४॥ अपरिग्रहमहाव्रताय ॥५॥ मनोगुप्तये ॥६॥ वचनगुप्तये ॥७॥ कायगुप्तये ॥८॥ ईर्यासमितये ॥९॥ भाषासमितये ॥१०॥ एषणासमितये ॥११॥ आदाननिक्षेपणसमितये ॥ ०॥ प्रतिष्ठापनासमितये ॥१३॥ त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

केसर चंदन लीजिये, संग कपूर घिसाय ।
अलि पंकति आवत घनी वास सुगंध सुहाय ॥
छमा गहो उर जीवड़ा जिनवर वचन गहाय ।

ॐ ह्रीं अष्टागसम्यग्दर्शनाय अष्टागसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शालि अखंडित लीजिये, कंचन थाल भराय ।
जिनपद पूजौं भावसौं अक्षय पदको पाय ॥
छमा गहो उर जीवड़ा जिनवर वचन गहाय ।

ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय अष्टागसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

पारिजात अरु केतकी, पहुप सुगंध गुलाब ।
श्रीजिन चरण सराज कूं, पूज हरष चितलाय ॥
छमा गहो उर जीवड़ा जिनवर वचन गहाय ।

ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय अष्टागसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

शक्कर घृत सुरभी तनो, व्यंजन षट्‌रस स्वाद ।

जिनके निकट चढ़ायकर हिरदे धरि अह्लाद ॥
क्षमा गहो उर जीवड़ा जिनवर वचन गहाय ।

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टांगसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

हाटकमय दीपक रचो, बाति कपूर सुधार ।
शोधक घृत कर पूजिये, मोह तिमिर निवार ॥
क्षमा गहो उर जीवड़ा, जिनवर वचन गहाय ।

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टांगसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृष्णागर करपूर हो, अथवा दस विध जान ।
जिन चरणां ढिंग खेइये, अष्ट करम की हान ।
क्षमा गहो उर जीवड़ा, जिनवर वचन गहाय ।

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टांगसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

केला अम्ब अनार ही, नारिकेल ले दाख ।
अग्र धरो जिनपद तने, मोक्ष होय जिन भाख ॥
क्षमा गहो उर जीवड़ा, जिनवर वचन गहाय ।

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टांगसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलफल आदि मिलाय के, अरघ करों हरषाय ।
दुःख जलांजलि दीजिये, श्रीजिन होय सहाय ॥

क्षमा गहो उर जीवड़ा, जिनवर वचन गहाय ।

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टांगसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

दोहा ।

उनतीस अंग की आरती, सुनो भविक चितलाय ।
मन वच तन सरधा करो, उत्तम नर भव पाय ॥

चौपाई ।

जैनधर्म में शंक न आनै, सो निःशंकित गुण चित ठानै ।
जप तप कर फल वाछै नाहीं, निःकांचित गुण हो जिस माहीं ॥
पर को देख गिलानि न आनै, सो तीजा सम्यक गुण ठानै ।
अन्य देव को रंच न मानो, सो निमूढता गुण पहिचानो ॥
पर को औगुण देख जु ढांकै, सो उपगूहन श्री जिन भाखै ।
जैनधर्म तैं डिगता देखै, थापै बहुर थिति कर लेखै ॥
जिनधरमी सों प्रीति निवहिये, गऊ बच्छावत बच्छल कहिये ।
ज्यौं त्यौं जैन उद्योत बढ़ावै, सो प्रभावना अंग कहावै ॥
अष्ट अंग यह पाले जाई, सम्यकदृष्टी कहिये सोई ।
अब गुण आठ ज्ञान के कहिये, भाषे श्री जिन मन में गहिये ॥
व्यंजन अक्षर सहित पढ़ीजै, व्यंजन व्यंजित अंग कहीजै ।
अर्थ सहित शुध शब्द उचारै, दूजा अर्थ समग्रह धारै ॥

बहुभय तीजा अंग लखीजे, अक्षर अर्थ सहित जु पढ़ीजे।
चौथा काल्याध्ययन विचारै, काल समय लखि सुमरण धारै॥
पंचम अंग उपधान बतावै, पाठ सहित तब बहुफल पावै।
षष्टम विनय सुलब्धि सुनीजे, वाणी बहुत विनय सु पढ़ीजे॥
जापे पढे न लोपे जाई, अंग सप्तम गुरुवाद कहाई।
गुरुकी बहुत विनय जु करीजे, सो अष्टम अंगधर सुख लीजे
यह आठों अंग ज्ञान बढ़ावे, ज्ञाता मन वच तन कर ध्यावे।
अब आगे चारित्र सुनीजे, तेरह विधि धर शिव सुख लीजे॥
छहों काय की रक्षा करहै, सोई अहिंसा व्रत चित धर है।
हित मित सत्य वचन सुख कहिये, सो सतवादी केवल लहिये
मन वच काय न चोरी करिये, सोइ अचौर्यव्रत चित धरिये।
मनमथ भय मन रंच न आने, सो मुनि ब्रह्मचर्य व्रत ठाने॥
परिग्रह देख न मूर्छित होई, पंच महाव्रत धारक सोई।
महाव्रत ये पांचों खरे, सब तीर्थंकर इनको करे॥
मन में विकलप रंच न होई, मनोगुप्ति मुनि कहिये सोई।
वचन अलीक रंच नहि भाखें, वचनगुप्ति सो मुनिवर राखें॥
कायोत्सर्ग परीषह सहि हैं, ता मुनि कायगुप्ति जिन कहि हैं।
पंच समिति अब सुनिये भाई, अर्थ सहित भाषे जिनराई॥
हाथ चार जब भूमि निहारे, तब मुनि ईर्या समिती धारे।
मिष्ट वचन मुख बोले सोई, भाषा समिति तास मुनि होई॥

भोजन छयालिस दूषण टारैं, सो मुनि एषण शुद्ध विचारैं ।
देखकैं पाथी ले अरु धर हैं, सो आदाननिक्षेपन वर हैं ॥
मल मूत्र एकान्त जु डारैं, परतिष्ठापन समिति संभारैं ।
यहसब अंग उनतीस कहेहैं, श्रीजिन भाषे गणधरने गहेहैं
आठ आठ तेरह विधि जानों, दर्शन ज्ञान चरित्र सु ठानौं ।
तातैं शिवपुर पहुँचो जाई, रत्नत्रय की यह विधि भाई ॥
रतनत्रय पूरण जब होई, क्षमा क्षमा करियौ सब कोई ।
चैत माघ भादों त्रय बारा, क्षमा क्षमा हम उर में धारा ॥

ॐ ह्रीं रत्नत्रयाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह क्षमावणि आरती, पढ़े सुने जो कोय ।
कहे मल्ल सरधा करो, मुक्ति श्री फल होय ॥

इत्याशीर्वादः ।

सोरठा ।

दोष न गहिये कोय, गुण गहि पढ़िये भाव सों ।
भूल चूक जो होय, अर्थ विचारि जु शोधियो ॥

स्वयंभूस्तोत्रम् (संस्कृत)

येन स्वयंबोधमयेन लोका, आश्वासिता केचन वित्तकार्ये ।
प्रबोधिता केचन मोक्षमार्गे, तमादिनाथं प्रणमामि नित्यम् ॥
इन्द्रादिभिः क्षीरसमुद्रतोयैः, संस्नापितो मेरुगिरौ जिनेन्द्रः ।
यः कामजेता जनसौख्यकारी, तं शुद्धभावादजितं नमामि ॥

ध्यानप्रबंधप्रभवेन येन, निहत्य कर्मप्रकृतीः समस्ताः ।
मुक्तिस्वरूपां पदवीं प्रपेदे, तं संभवं नौमि महानुरागात् ॥
स्वप्ने यदीया जननी क्षपायां, गजादिवन्ह्यन्तमिदं ददर्श ।
यत्तात इत्याह गुरुः परोऽयं, नौमि प्रमादादभिनंदनं तम् ॥
कुवादिवादं जयता महांतं, नयप्रमाणैर्वचनैर्जगत्सु ।
जैनं मतं विस्तरितं च येन, तं देवदेवं सुमतिं नमामि ॥
यस्यावतारे सति पितृधिष्ण्ये, ववर्ष रत्नानि हरेर्निदेशात् ।
धनाधिपः षण्णवमासपूर्वं, पद्मप्रभं तं प्रणमामि साधुं ॥
नरेन्द्रसर्पेश्वरनाकनाथैः, वाणी भवती जगृहे स्वचित्ते ।
यस्यात्मात्मबोधः प्रथितः सभायामहं सुपार्श्वं ननु तं नमामि
सत्प्रातिहार्यातिशयप्रपन्नो, गुणप्रवीणो हतदोषसंगः ।
यो लोकमोहांधतमःप्रदीपश्चन्द्रप्रभं तं प्रणमामि भावात् ॥
गुप्तित्रयं पंच महाव्रतानि, पंचोपदिष्टा समितिश्च येन ।
बभाण यो द्वादशधा तपांसि, तं पुष्पदंतं प्रणमामि देवं ॥
ब्रह्मव्रतांतो जिननायकेनोत्तमक्षमादिर्दशधापि धर्मः ।
येन प्रयुक्तो व्रतबंधबुद्ध्या, तं शीतलं तीर्थकरं नमामि ॥
गणे जनानंदकरे धरांते विध्वस्तकोपे प्रशमैकचित्ते ।
यो द्वादशांगं श्रुतमादिदेश, श्रेयांसमानौमि जिनं तमीशं ॥
मुक्त्यंगनायै रचिता विशाला, रत्नत्रयीशेखरता च येन ।
यत्कंठमासाद्य बभूव श्रेष्ठा तं वासुपूज्यं प्रणमामि वेगात् ॥

ज्ञानी विवेकी परमस्वरूपी, ध्यानी व्रती प्राणिहितोपदेशी ।
मिथ्यात्वघाती शिवसौख्यभोजी, बभूव यस्तं विमलं नमामि ॥
आभ्यंतरं बाह्यमनेकधा यः, परिग्रहं सर्वमपाचकार ।
यो मार्गमुद्दिश्य हितं जनानां, वद जिनं तं प्रणमाम्यनंतं ॥
सार्द्धं पदार्था नव सप्ततत्वैः, पंचास्तिकायाश्चन कालकायाः ।
षड्द्रव्यनिर्णीतिरलोकयुक्तिर्येनोदितं तं प्रणमामि धर्मम् ॥
यश्चक्रवर्ती भुवि पंचमोऽभूत् श्रीनंदनो द्वादशको गुणानां ।
निधिप्रभुः षोडशको जिनेंद्रस्तं शांतिनाथं प्रणमामि भेदात् ॥
प्रशंसितो यो न बिभर्ति हर्षं, विराधितो यो न करोति रोषं ।
शीलव्रताद् ब्रह्मपदं गतो यस्तं कुंथुनाथ प्रणमामि हर्षात् ॥
यः संस्तुस्तो यः प्रणतः सभाया, यः सेवितोऽन्तगुणमुरणाय
पदाच्युतैः केवलिभिर्जिनस्य, देवाधिदेवं प्रणमाम्यरं तम् ॥
रत्नत्रयं पूर्वभवांतरे यो व्रतं पवित्रं कृतवानशेषं ।
कायेन वाचा मनसा विशुद्ध्या, तं मल्लिनाथं प्रणमामि भक्त्या
ब्रुवन्नमः सिद्धिपदाय वाक्य-मित्यग्रहीद्यः स्वयमेव लोचं ।
लौकांतिकेभ्यः स्तवनं निशम्य, वंदे जिनेशं मुनिसुव्रतं तं ॥
विद्यावते तीर्थकराय तस्मा,-याहारदानं ददतो विशेषात् ।
गृहे नृपस्याजनि रत्नवृष्टिः, स्तौमि प्रणामाक्षपतो नमिं तम् ॥
राजीमतीं यः प्रविहाय मोक्षे, स्थितिं चकारापुनरागमाय ।
सर्वेषु जीवेषु दयां दधान, स्तं नेमिनाथं प्रणमामि भक्त्या ॥

सर्पाधिराजः कमठारितोयै, ध्यानस्थितस्यैव फणावितानैः ।
यस्योपसर्गं निरवर्तयत्तं, नमामि पार्श्वं महतादरेण ॥२३॥
भवार्णवे जंतुसमूहमेन,-माकर्षयामास हि धर्मपोतात् ।
मज्जंतमुद्वीक्ष्य य एनसापि, श्रीवर्द्धमानं प्रणमाम्यहं तं ॥२४॥

यो धर्मं दशधा करोति पुरुषः स्त्री वा कृतोपस्कृतं,
सर्वज्ञध्वनिसंभवं त्रिकरणव्यापारशुद्ध्यानिशं ।
भव्यानां जलमालया विमलया पुष्पांजलिं दापयन्,
नित्यं संश्रियमातनोति सकलं स्वर्गापवर्गस्थितिं ॥

स्वयंभूस्तोत्र (भाषा)

राजविषे जुगलनि सुखि कियो, राज त्याग भवि शिवपद दियो
स्वयंबोध स्वंभू भगवान, बंदौं आदिनाथ गुणखान ॥१॥
इंद्र चीरसागर जल लाय, मेरु न्हवाये गाय बजाय ।
मदनविनाशक सुखकरतार, बंदौं अजित अजितपदकार ॥
शुक्लध्यानकरि करमविनाशि, घाति अघाति सकल दुखराशि
लह्यो मुकतिपद सुख अविकार, बंदौं संभव भवदुख टार ॥३॥
माता पच्छिम रयनमंझार, सपने सोलह देखे सार ।
भूप पूछि फल सुनि हरषाय, बंदौं अभिनंदन मनलाय ॥४॥
सब कुवादवादीसरदार, जीते स्यादवादधुनिधार ।
जैनधरमपरकाशक स्वाम, सुमतिदेवपद करहुं प्रनाम ॥५॥

गर्भ अगाऊ धनपति आय, करी नगरशोभा अधिकाय ।
बरसे रतन पंचदश मास, नमौं पदमप्रभ सुखकी रास ॥६॥
इंद फनिंद नरिंद्र त्रिकाल, वानी सुनि सुनि होहिं खुस्याल ।
द्वादश सभा ज्ञानदातार, नमों सुपारसनाथ निहार ।७॥
सुगुन छियालिस हैं तुममाहिं, दोष अठारह कोई नाहि ।
मोहमहातमनाशक दीप, नमौ चंद्रप्रभ राखि समीप ॥८॥
द्वादशविधि तप करम विनाश, तेरह भेद चरित परकाश ।
निज अनिच्छ भविइच्छकदान, बंदों पुष्पदंत मनआन ॥९॥
भावसुखदाय सुरगतै आय, दशविधि धरम कह्यो जिनराय ।
आप समान सबनि सुखदेह, बंदौं शीतल धर्मसनेह ॥१०॥
समता सुधा कोपविषनाश, द्वादशांगवानी परकाश ।
चारसंघ आनंददातार, नमौं श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥११॥
रतनत्रयचिरमुकुट विशाल, सोभै कंठ सुगुन मनिमाल ।
मुक्तिनार भरता भगवान, वासुपूज बंदों धर ध्यान ॥१२॥
परम समाधिसरूप जिनेश, ज्ञानी ध्यानी हितउपदेश ।
कर्मनाशि शिवसुख विलसंत, बंदों विमलनाथ भगवंत ॥१३॥
अंतर बाहिर परिग्रह डारि, परमदिगंबरव्रतको धारि ।
सर्वजीवहित राह दिखाय, नमो अनंत वचनमनलाय ॥१४॥
सात तत्व पंचासतिकाय, अरथ नमों छदरब बहुभाय ।
लोक अलोक सकल परकाश, बंदों धर्मनाथ अविनाश ॥१५॥
पंचम चक्रवरति निधिभोग, कामदेव द्वादशम मनोग ।

शांतिकरन सोलम जिनराय, शांतिनाथ बंदों हरषाय ॥१६॥
बहुथुति करें हरष नहिं होय, निंदे दोष गहै नहिं कोय ।
शीलवान परब्रह्मस्वरूप, बंदों कुंथुनाथ शिवभूप ॥१७॥
द्वादशगण पूजें सुखदाय, थुतिबंदना करें अधिकाय ।
जाकी निज थुति कबहू न होय, बंदों अरजिनवर पददोय ।
परभव रतनत्रय अनुराग, इहभव ब्याहसमय वैराग ।
बालब्रह्मपूरनव्रतधार, बंदों मल्लिनाथ जिनसार ॥१६॥
बिन उपदेश स्वयं वैराग, थुति लोकांत करैं पगलाग ।
नमःसिद्ध कहि सब व्रत लेहिं, बंदों मुनिसुव्रत व्रत देहिं ॥
श्रावक विद्यावंत निहार, भगतिभावसों दियो अहार ।
बरसे रतनराशि ततकाल, बंदौं नमिप्रभु दीनदयाल ॥२१॥
सब जीवनकी बंदी छोर, रागद्वेष दो बंधन तोर ।
रजमति तजि शिवतियसों मिले, नेमिनाथ बंदौं सुखनिले ॥
दैत्य किया उपसर्ग अपार, ध्यान देखि आयो फनधार ।
गयो कमठ शठ मुख कर श्याम, नमों मेरुसम पारसस्वाम ॥२३
भवसागरतैं जीव अपार, धरमपोतमें धरे निहार ।
डूबत काढे दया विचार, वर्द्धमान बंदों बहुवार ॥२४॥

दोहा ।

चौबीसौं पदकमलजुग, बंदौं मनवचकाय ।
'द्यानत' पढै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ॥

अर्घावली ।

समुच्चय अर्घ ।

प्रभूजी अष्ट द्रव्यजु ल्यायो भावसों,
प्रभूजी थां का हरष हरष गुण गाऊँ, महाराज ।
यो मन हरष्यो प्रभू थां की पूजा जीरे कारणे,
प्रभूजी थांकी तो पूजा भवि जनि नित करे ।
जाका अशुभ कर्म कटजाय, महाराज । यो मन० ।
प्रभूजी थांकी तो पूजा भवि जीव जो करे,
मा तो सुरग मुकतिपद पावे, महाराज । यो मन० ।
प्रभूजी इन्द्र धरणेंद्रजी सब मिलि गाय,
प्रभूका गुणांको पार न पायो, महाराज । यो मन० ।
प्रभूजी थे छोजी अनन्ताजी गुणवान,
थांने तो सुमरया संकट परिहरे महाराज । यो मन० ।
प्रभूजी थे छोजी साहिब तीनों लोक का,
जिनराज मैं छूं जी निपट अज्ञानी, महाराज । मो मन०
प्रभूजी थां का तो रूपजी निरखन कारणे,
सुरपति रचिया छै नयन हजार, महाराज । मो मन० ।
प्रभूजी नरक निगोद में भव भव मैं रुल्यो,
जिनराज सहिया छै दु:ख अपार, महाराज । यो मन०
प्रभूजी अब तो शरणोजी थारो मैं लियो,

किम विध कर पार लगावो महाराज । यो मन० ।
प्रभूजी म्हारे तो मनडो थामेंजी घुल रयो,
ज्यों चकरी विच रेशमकी डोरी, महाराज। यो मन० ।
प्रभूजी तीन लोक में है जिन-बिम्ब,
कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय पूजस्यां महाराज। यो मन०
प्रभूजी जल चंदन अक्षत पुष्प नवद,
दीप धूप फल अर्घ चढ़ाऊं महाराज । यो मन० ।
जिनचैत्यालय महाराज सब चैत्यालय जिनराज।यो मन०
प्रभूजो अष्ट द्रव्य जु ल्यायो बनाय,
पूज रचाऊं श्रीभगवानकी महाराज । यो मन० ।
यो मन हरष्यो प्रभू था की पूजा जी रे कारणे ।

ॐ ह्रीं भावपूजां भाववंदनां त्रिकालपूजां त्रिकालवंदनां कुर्यात् कारयेत् भावयेद्वा, श्रीअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः, प्रथमानुयोगकरणानुयोगचरणानुयोगद्रव्यानुयोगेभ्यो नमः। दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो नमः। उत्तमक्षमादिदशलाक्षणिकधर्मेभ्यो नमः। सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्रेभ्यो नमः। जले स्थले आकाशे गुहासु पर्वतेषु नगरेषु ग्रामेषु ऊर्ध्वलोके, मध्यलोके पाताले च कृत्रिमाकृत्रिमजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो नमः। विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो नमः। पंचभरतपंचैरावतपंचपूर्वापरविदेहक्षेत्रसम्बन्धित्रिंशत् चातुर्विंशतीर्थंकरेभ्यो नमः। नन्दीश्वरद्वीपसम्बन्धि-जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। पंचमेरुसम्बन्धि-अशीतिजिनचैत्यालयेभ्यो नमः। सम्मेद-

शिखरकैलाशचंपापुर-पावापुर-गिरनारादिसिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः । जैनबद्रीमूलबद्रीराजगृहशत्रुञ्जयतारंगा-चमत्कार श्रीमहावीरजी पद्मपुरी आदि अतिशयक्षेत्रेभ्यो नमः, श्रीचारण-ऋद्धिधारक सप्त-परमर्षिभ्यो नमः।

ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवन्तं श्री वृषभादि महावीर-पर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करपरमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बू द्वीपे भरतक्षेत्रे आर्य-खण्डे.........नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे मासे....... मासेशुभे....... पक्षे शुभ.........तिथौ... ...वासरे मुनिआर्यिकानां श्रावकश्राविकानां क्षुल्लकक्षुल्लिकानां सकलकर्मक्षयार्थं अनर्घपदप्राप्तये महार्घं सम्पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करो-म्यहम् ।

(यहां पर कायोत्सर्गपूर्वक नौ बार णमोकारमन्त्र जपना चाहिये ।)

सोलहकारणका अर्घ !

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।

धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनहेतुमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घं निर्व० ।

सोलहकारण का अर्घ (भाषा) ।

जल फल आठों द्रव्य मिलाय, 'द्यानत' वरत करों मन लाय,

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।

दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पद पाय,

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घं नि०।

दशलक्षणधर्मका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्भूतोत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्यदशलाक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षण धर्मका अर्घ (भाषा)।

आठों द्रव्य सम्भार, द्यानत अधिक उछाह सों।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजों सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मेभ्यो अर्घं नि०।

रत्नत्रयका अर्घ

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनरत्नमहं यजे॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधाचारसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशप्रकारसम्यक्चारित्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

रत्नत्रयका अर्घ (भाषा)

आठों द्रव्य बनाय, उत्तम से उत्तम लिये।
जन्म रोग निरवार, सम्यक रत्नत्रय भजों॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशप्रकारसम्यक्चारित्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

पंचममेरु का अर्घ।

आठ दरब मय अर्घ बनाय, द्यानत पूजों श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥
पांचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करूं प्रणाम
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिअशीतिजिनालयेभ्यो अर्घं निर्व०।

नन्दीश्वर द्वीप का अर्घ।

यह अर्घ कियो निज हेत, तुमको अरपत हों।
द्यानत कीनों शिव खेत, भूमि समरपत हों॥
नन्दीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भाव धरों॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशतजिनालयेभ्यो अर्घं निर्व०।

महाव्रतों का अर्घ।

उदकचंदनतन्दुलपुष्पकैः, चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले, जिनगृहे जिनवृत्तमहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्रीमहाव्रतेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी का अर्घ।

वीरहिमाचल तैं निकसी गुरु गौतम के मुख कुंड ढरी है,
मोह महागिरि भेदि चली जगकी जड़ता-तप दूर करी है।

ज्ञान-पयोदधि मांहिरली सत भंग तरंगन सों उछरी है,
ता शुचि शारद गंगनदी प्रणमों अंजलि करि शीश धरी है

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गजिनवाण्यै अर्घं निर्व०।

महामुनियों का अर्घ।

ज्ञान के उजागर सहज सुखसागर,
सुगुण रतनाकर वैराग रस भरे हैं।
शरण को माते हरि मरण को भय न करि,
करण सों पटि दे चरण अनुसरे हैं ॥
धर्म मंडन भरम के विहण्डन,
परम नरम होय कर करमन मो अड़े हैं।
ऐसे मुनिराज भूमि लोक में विराजमान,
निरखत बनारसी नमस्कार करे हैं ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधचारित्रधारकमुनिवरेभ्योऽर्घं निर्व०।

महार्घ

गीता छन्द।

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूं, सिद्ध पूजूं चाव सों,
आचार्य श्री उवझाय पूजूं, साधु पूजूं भाव सों।
अर्हन्त-भाषित बैन पूजूं, द्वादशांग रचे गनी,
पूजूं दिगम्बर गुरुचरन, शिव हेत सब आशा हनी ॥

सर्वज्ञभाषित धर्म दशविधि, दया-मय पूजूं सदा,
जजि भावना षोडश रत्नत्रय, जाबिना शिव नहिं कदा।
त्रैलोक्य के कृत्रिम अकृत्रिम, चत्य चैत्यालय जजूं,
पनमेरु नन्दीश्वर जिनालय, खचर सुर पूजित भजूं ॥
कैलाश श्री सम्मेद श्री, गिरनार गिरि पूजूं सदा,
चम्पापुरी पावापुरी पुनि, और तीरथ सर्वदा।
चौबीस श्रीजिनराज पूजूं बीस क्षेत्र विदेह के,
नामावली इक सहस वसु, जय होय पति शिवगेह के॥

दोहा।

जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूज हूँ, बहु विध भक्ति बढ़ाय॥

इति महार्घं।

शान्ति पाठ।

गीता छन्द।

शास्त्रोक्तविधि पूजा महोत्सव सुरपती चक्री करें,
हम सारिखे लघु पुरुष कैसे यथाविधि पूजा करें।
धन क्रिया ज्ञान रहित न जाने रीति पूजन नाथ जी,
हम भक्तिवश तुम चरण आगे जोड़ लीने हाथ जी॥१॥
दुखहरण मंगलकरण आशाभरण जिनपूजा सही,
यह चित्त में सरधान मेरे शक्ति वो स्वयमेव ही।

तुम सारिखे दातार पाये काज लघु जांचूं कहा,
मुझ आप सम कर लेहु स्वामी यही इक वांछा महा ॥२॥
संसार भीषण विपिन में वसु कर्म मिलि आतापियो,
तिस दाहतें आकुलित चित मैं शान्ति थल कहुं ना लियो।
तुम मिले शान्तिस्वरूप शान्तिकरण समरथ जगपती,
वसु कर्म मेरे शान्ति करदो शान्तिमय पंचमगती ॥३॥
जबलों नहीं शिव लहूँ तबलों देव ये धन पावना,
सतसंग शुद्धाचरण श्रुत-अभ्यास आतम-भावना।
तुम बिन अनन्तानन्त काल गयो रुलत जगजाल में,
अब शरण आयो नाश दुखकर जोड़ नावत भाल मैं ॥

दोहा।

कर प्रमाण के मान तें, गगन नपे किहि भंत।
त्यों तुम गुण वर्णन करूं, कवि नहिं पावे अन्त ॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

भजन (पंचपरमेष्ठी)

हमारे परमेष्ठी आधार ॥ टेक ॥
पांचों पद के पैंतिस अक्षर मंत्र जपो णमोकार। हमारे०।
अष्ट दरब ले पूजा कीनी आठों कर्म निवार। हमारे०।
तुम्हीं कल्पतरु तुम चिन्तामणि तुम हो दीनदयाल। हमारे०।
भवसागर से डूबत डूबत तुम्हीं उतारो पार। हमारे०।

'सेवक' की प्रभु अर्ज यही है आवागमन निवार ।हमारे०।
दान ये मुझको दीजिये स्वामी कर भवसागर पार,
हमारे परमेष्ठी आधार ।

विसर्जनपाठ ।

गीता छन्द ।

सम्पूर्ण विधि कर वीनऊँ इस परम पूजन ठाठ में,
अज्ञान वश शास्त्रोक्त विधितैं चूक कीन्हीं पाठ में ।
सो होहु पूर्ण समस्त विधिवत् तुम चरण की शरणतैं,
वन्दिहौं कर जोडकर उद्धार जन्मन मरण तैं ॥१॥
आह्वान स्थापन तथा सन्निधीकरण विधान जी,
पूजन विसर्जन यथाविधि जानूं नहीं गुणवान जी ।
जो दोष लागे सो नसो सब तुम चरण की शरण तैं,
बन्दों तुम्हें कर जोड़ कर उद्धार जन्मन मरण तैं ॥२॥
तुम रहित आवागमन आह्वानन कियो निज भाव में,
विधि यथाक्रम निजशक्ति सम पूजन कियो अतिचाव में ।
करहू विसर्जन भाव ही मैं तुम चरण की शरण तैं,
बन्दों तुम्हें कर जोड़ कर उद्धार जन्मन मरण तैं ॥३॥

दोहा ।

तीन भुवन तिहु काल में, तुम सा देव न और ।
सुख कारन संकटहरन, नमों युगल कर जोर ॥

सलूना पर्व पूजा

श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतमुनि पूजा

(चाल जोगीरासा)

पूज्य अकम्पन साधु-शिरोमणि सात-शतक मुनि ज्ञानी ।
आ हस्तिनापुरके काननमें हुए अचल दृढ़ ध्यानी ।
दुखद सहा उपसर्ग भयानक सुन मानव घबराये ।
आत्म-साधनाके साधक वे, तनिक नहीं अकुलाये ॥
योगिराज श्री विष्णु त्याग तप, वत्सलता-वश आये ।
किया दूर उपसर्ग, जगत-जन मुग्ध हुए हर्षाये ॥
सावन शुक्ला पन्द्रस पावन शुभ दिन था सुखदाता ।
पर्व सलूना हुआ पुण्य-प्रद यह गौरवमय गाथा ॥
शान्ति दया समताका जिनसे नव आदर्श मिला है ।
जिनका नाम लियेसे होती जागृत पुण्य-कला है ।
करूं वन्दना उन गुरुपदकी वे गुण मैं भी पाऊं ।
आह्वानन संस्थापन सन्निधिकरण करूँ हर्षाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः प्रतिष्ठापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकम्

गीता-छन्द।

मै उर-सरोवरसे विमल जल भाव का लेकर अहो।
नत पाद-पद्मोंमें चढ़ाऊँ मृत्यु जनम जरा न हो॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सन्तोष मलयागिरिय चन्दन निराकुलता सरस ले।
नत पादपद्मोंमें चढ़ाऊं, विश्वताप नहीं जले॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तंदुल अखंडित पूत आशाके नवीन सुहावने।
नत पाद-पद्मोंमें चढ़ाऊं दीनता क्षयता हने॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

ले विविध विमल विचार सुन्दर सरस सुमन मनोहरे ।
नत पाद-पद्मोंमें चढ़ाऊं काम की बाधा हरे ॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें ।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें ॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ भक्ति घृतमें विनयके पकवान पावन मैं बना ।
नत पाद-पद्मोंमें चढ़ा मेटूँ क्षुधाकी यातना ॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें ।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें ॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम कपूर विवेकका ले आत्म-दीपकमें जला ।
कर आरती गुरुकी हटाऊं मोह-तमकी यह बला ॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें ।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें ॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले त्याग-तपकी यह सुगन्धित धूप मैं खेऊं अहो ।
गुरुचरण-करुणासे करमका कष्ट यह मुझको न हो ॥

श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि-साधनाके मधुरतम प्रिय सरस फल लेकर यहां।
नत पाद-पद्मोंमें चढ़ाऊं मुक्ति मैं पाऊं यहां॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह आठ द्रव्य अनूप श्रद्धा स्नेहसे पुलकित हृदय।
नत पाद-पद्मोंमें चढ़ाऊं भव-पार मैं होऊं अभय॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

(सोरठा)

पूज्य अकम्पन आदि सात शतक साधक सुधी।
यह उनकी जयमाल वे मुझको निज भक्ति दें॥

(पद्धड़ी छन्द)

वे जीव दया पालें महान, वे पूर्णअहिंसक ज्ञानवान् ।
उनके न रोष उनके न राग, वे करें साधना मोह त्याग ॥
अप्रिय असत्य बोलें न वैन, मन वचन कायमें भेद है न ।
वे महासत्य धारक ललाम, है उनके चरणोंमें प्रणाम ॥
वे लें न कभी तृणजल अदत्त, उनके न धनादिकमें ममत्त ।
वे व्रत अचौर्य दृढ़ धरें सार, है उनको सादर नमस्कार ॥
वे करें विषयकी नहीं चाह, उनके न हृदयमें काम-दाह ।
वे शील सदा पालें महान, कर मग्न रहें निज आत्मध्यान ॥
सब छोड़ वसन भूषण निवास, माया ममता स्नेह आस ।
वे धरें दिगम्बर वेष शान्त, होते न कभी विचलित न भ्रांत ॥
नित रहें साधनामें सुलीन, वे सहें परीसह नित नवीन ।
वे करें तत्वपर नित विचार, है उनको सादर नमस्कार ॥
पंचेन्द्रिय दमन करें महान, वे सतत बढ़ावें आत्म ज्ञान ।
संसार देह सब भोग त्याग, वे शिव-पथ साधें सतत जाग ॥
"कुमरेश" साधु वे हैं महान, उनसे पाये जग नित्य त्राण ।
मैं करूं वन्दना बार बार, वे करें भवार्णव मुझे पार ॥
मुनिवर गुण-धारक पर-उपकारक, भव-दुख-हारक सुख-कारी ।
वे करम नशायें सुगुण दिलायें, मुक्ति मिलायें भय-हारी ॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यो महार्घं निर्व० ।

सोरठा ।

श्रद्धा भक्ति समेत जो जन यह पूजा करे ।
वह पाये निज ज्ञान, उसे न व्यापे जगत दुख ॥

इत्याशीर्वादः ।

श्री विष्णुकुमार महामुनि पूजा

(लावनी छन्द)

श्री योगी विष्णुकुमार बाल वैरागी ।
पाई वह पावन ऋद्धि विक्रिया जागी ॥
सुन मुनियोंपर उपसर्ग स्वयं अकुलाये ।
हस्तिनापुर वे वात्सल्य-भरे हिय आये ॥
कर दिया दूर सब कष्ट साधना-बलसे ।
पा गये शान्ति सब साधु अग्निके झुलसे ॥
जन जनने जय-जयकार किया मन भाया ।
मुनियोंको दे आहार स्वयं भी पाया ॥
हैं वे मेरे आदर्श सर्वदा स्वामी ।
मैं उनकी पूजा करूँ बनूँ अनुगामी ॥
वे दें मुझमें यह शक्ति भक्ति प्रभु पाऊँ ।
मैं कर आतम कल्यान मुक्त हो जाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुने अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः प्रतिष्ठापम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम् ।

(चाल जोगीरासा)

श्रद्धाकी वापीसे निर्मल, भावभक्ति जल लाऊँ ।
जनम मरण मिट जायें मेरे इससे विनत चढ़ाऊँ ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दू यति रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मलयागिरि धीरजसे सुरभित समता चन्दन लाऊँ ।
भव-भवकी आताप न हो यह इससे विनत चढ़ाऊँ ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दू यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्द्रकिरन सम आशाओं के अक्षत सरस नवीने ।
अक्षय पद मिल जाये मुझको गुरु सन्मुख धर दीने ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दू यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्व० ।

उर उपवनसे चाह सुमन चुन विविध मनोहर लाऊँ ।
व्यथित करे नहिं काम वासना इससे विनत चढ़ाऊँ ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दू यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये कामवाणविनाशनाय पुष्पं नि० ।

नव नव व्रत के मधुर रसीले मैं पकवान बनाऊँ ।
क्षुधा न बाधा यह दे पाये इससे विनत चढ़ाऊँ ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दू यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

मैं मनका मणिमय दीपक ले ज्ञान-वातिका जारूँ ।
मोह-तिमिर मिट जाये मेरा गुरु सन्मुख उजियारूँ ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दू यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये मोहतिमिरविनाशनाय दीपं नि० ।

ले विरागकी धूप सुगन्धित त्याग धूपायन खेऊँ ।
कर्म आठका ठाठ जलाऊँ गुरुके पद नित सेऊँ ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दू यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व० ।

पूजा सेवा दान और स्वाध्याय विमल फल लाऊँ ।
मोक्ष विमल फल मिले इसीसे विनत गुरू पद ध्याऊँ ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर बन्द यति रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०

यह उत्तम वसु द्रव्य संजोये हर्षित भक्ति बढ़ाऊँ ।
मैं अनर्घपदको पाऊँ गुरुपदपर बलि बलि जाऊँ ॥
विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दू यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदयमें मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्व०

जय-माला

दोहा

श्रावण-शुक्ला पूर्णिमा यति रक्षा दिन जान ।
रक्षक विष्णु मुनीशकी यह शुभमाल महान ॥

पद्धड़ी छन्द

जय योगिराज श्रीविष्णु धीर, आकर वह हर दी साधु-पीर ।
हतिनापुर वे आये तुरन्त, कर दिया विपतका शीघ्र अन्त ॥
वे ऋद्धि सिद्धि-साधक महान्, वे दयावन वे ज्ञानवान ।
धर लिया स्वयं वामन सरूप, चल दिये विप्र बनकर अनूप ॥

पहुँचे बलि नृपके राजद्वार, वे तेज-पुञ्ज धर्मावतार ।
आशीष दिया आनन्दरूप, होगया मुदित सुन शब्द भूप ॥
बोला वर मांगो विप्रराज, दूंगा मनवांछित द्रव्य आज ।
पग तीन भूमि याचो दयाल, बस इतना ही तु दो नृपाल ॥
नृप हँसा समझ उनको अज्ञान, बोला यह क्या लो, और दान
इससे कुछ इच्छा नहीं शेष, बोले वे ये ही दो नरेश ॥
संकल्प किया दे भूमि दान, ली वह मनमें अति मोद मान ।
प्रगटाई अपनी ऋद्धि सिद्धि, हो गई देहकी विपुल वृद्धि ॥
दो पगमें नापा जग समस्त, हो गया भूप बलि अस्त-व्यस्त ।
पग एक और दो भूमि दान, बोले बलिसे करुणानिधान ॥
नतमस्तक बलिने कहा अन्य, है भूमि न मुझपर हे अनन्य ।
रख लें पग मुझपर एक नाथ, मेरी हो जाये पूर्ण बात ॥
कह कर तथास्तु पग दिया आप, सह सका न बलि वह भार-ताप
बोला तुरन्त ही कर विलाप, करदें अब मुझको क्षमा आप ॥
मैं हूं दोषी मैं हूँ अज्ञान, मैंने अपराध किया महान् ।
ये दुखित किये सब साधुसन्त, अब करो क्षमा हे दयावन्त ॥
तब श्री मुनिवरने दया-दृष्टि, हो उठी गगन से महावृष्टि ।
पागये दग्ध वे साधु-त्राण, जन-जनके पुलकित हुए प्राण ॥
घर घरमें छाया मोद-हास, उत्सवने पाया नव प्रकाश ।
पीड़ित मुनियोंका वृद्धमान, रख मधुर दिया आहार दान ॥
युग युग तक इसकी रहे याद, कर-सूत्र बंधाया साल्हाद ।

बन गया पर्व पावन महान, रक्षाबन्धन सुन्दर निधान ॥
वे विष्णु मुनीश्वर परम सन्त, उनकी गुण-गरिमाका न अन्त ।
वे करें शक्ति मुझको प्रदान, कुमरेश प्राप्त हो आत्मज्ञान ॥

घत्ता

श्री मुनि विज्ञानी आतम-ध्यानी,
मुक्ति-निशानी सुख-दानी ।
भव-ताप विनाशे सुगुण प्रकाशे ।
उनकी करुणा कल्यानी ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

विष्णुकुमार मुनीशको, जो पूजे धर प्रीत ।
वह पावे कुमरेश शिव, और जगत में जीत ॥

[दीपावली के दिन कातिक वदी अमावस्या की रात्रि के अन्त में यानी कातिक सुदी प्रतिपदा के प्रातः भगवान महावीर का निर्वाण समय है उस समय भगवान महावीर का पूजन होता है पावापुर क्षेत्र की पूजा होती है और प्राकृत भाषा तथा हिन्दी भाषा का निर्वाणकाड पढ़ा जाता है। इसके सिवाय उसी दिन गौतम गणधर को केवलज्ञान हुआ था। हम भगवान महावीर की पूजा पीछे चौवीसी पाठ में दे चुके हैं यहां पर गौतम गणधर (गणपति) की पूजा देते हैं। तदनन्तर निर्वाण काण्ड रखते हैं। इस प्रकार पाठक महानुभाव दीपावली विधान कर सकेंगे।]

श्री गौतम गणपति पूजा

श्री गौतम गणईश शीश यह तुम्हें नमाकर,
आह्वानन अब करूँ आय तिष्ठो मानस पर।
पाके केवल ज्योति ज्ञाननिधि हुए गुणाकर,
निज लक्ष्मी का दान करो मेरे घट आकर॥
श्री गौतम गणईश जी, तिष्ठो मम उर आय।
ज्ञान-लक्ष्मी-पति बने, मेरी मानव काय॥

ॐ ह्री कार्तिककृष्णामावस्यायां कैवल्यलक्ष्मी-प्राप्त श्रीगौतम-गणपतिजिनेन्द्र ! अत्र, अवतर अवतर सम्वौषट्।

अत्र तिष्ठ, तिष्ठ, ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् इति सन्निधिकरणम्।

गाङ्गेय वारि शुचि प्रासुक दिव्य ज्योति,
जन्मादि कष्ट निज वारण को लिया मैं।
मसार के अखिल त्रास निवारने को
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज-में चढ़ाता।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां कैवल्यलक्ष्मीप्राप्ताय श्रीगौतम-गणेशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूरयुक्त मलयागिरि को घिसाया,
संसार ताप शमनार्थ इसे बनाया।
संसार के अखिल त्रास निवारने को,
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज-में चढ़ाता॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां कैवल्यलक्ष्मीप्राप्ताय श्रीगौतमगणेशाय सुगन्ध निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ताभ अक्षत सुगन्धि चुना चुना के,
व्याधिघ्न अक्षत-पदार्थ सजा सजा के।
संसार के अखिल त्रास निवारने को,
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज-में चढ़ाता॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां कैवल्यलक्ष्मीप्राप्ताय गौतमगणेशायऽक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कन्दर्प दर्प दलनार्थ नवीन ताजे,
बेला गुलाब मचकुन्द सु पारजाती।
संसार के अखिल त्रास निवारने को,
योगीन्द गौतम-पदाम्बुज- में चढ़ाता॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां कैवल्यलक्ष्मीप्राप्ताय गौतमगणेशाय पुष्प निवपामीति स्वाहा।

क्षीरादि मिश्रित अमोघ बल प्रदाता,
पक्वान्न थाल यह भूख निवारने को।
संसार के अखिल त्रास निवारने को,
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज-में चढ़ाता॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां कवल्यलक्ष्मीप्राप्ताय गौतमगणेशाय नैवेद्यं निवपामीति स्वाहा।

रत्नादि दीप नवज्योति कपूर-वर्ती,
उद्दाम-मोह-तम तोम सभी हटाने ।
संसार के अखिल त्रास निवारने को,
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज-में चढ़ाता ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां कैवल्यलक्ष्मीप्राप्ताय गौतम-गणेशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अज्ञान मोह मद से भव में भ्रमाता,
ये दुष्ट कर्म, तिस नाशन को दशांगी ।
संसार के अखिल त्रास निवारने को
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज में चढ़ाता

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां कैवल्यलक्ष्मी प्राप्ताय गौतम-गणेशाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

केला अनार सहकार सुपक्व जामू,
ये सिद्धमिष्ट फल मोक्षफलाप्ति को मैं ।
संसार के अखिल त्रास निवारने को,
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज में चढ़ाता ।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां कैवल्यलक्ष्मीप्राप्ताय गौतम-गणेशाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

पानीय आदि वसु द्रव्य सुगन्धयुक्त,
लाया प्रशान्त मन से निज रूप पाने ।

संसारके अखिल त्रास निवारने को,
योगीन्द्र गौतम-पदाम्बुज में चढ़ाता।

ॐ ह्रीं कातिककृष्णामावस्यायां कैवल्यलक्ष्मीप्राप्ताय श्रीगौतम-गणेशाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

वीरजिनेश्वर के प्रथम गणधर-गौतम पाँय
नमन करूं कर जोड़ कर स्वर्ग मोक्ष फल दाय ॥

हरिगीतिका

जय देव ! श्रीगौतम गणेश्वर प्रार्थना तुमसे करूं,
सब हटा दो कष्ट मेरे अर्घ्य ले आरति करूं।
दुष्ट काल कराल पंचम में सहारा उठ गया,
नेतृत्वहीन हुए सभी जन आर्ष पथ सब मिट गया ॥१॥
तत्वार्थ चिन्तन सत्यपथ औ सत्य सत्याचार का,
है ठिकाना अब न भारत में गृहस्थाचार का।
मार्ग नाना पकड़ जगजन मुक्ति अपनी चाहते,
आत्म वैभव शून्य हो भौतिक विभूति विगाहते ॥२॥
आत्म तंत्र-स्वतंत्रता का सत्य शिव था पंथ जो,
खोदिया वह ज्ञान सारा मोह ममता तंत्र हो।
हे गणेश ! कृपा करो, अब आत्मज्योति पसार दो,
हम हैं तुम्हारे सदय हो दुर्वासनायें मार दो ॥३॥

क्या दशा तुमको सुनाऊँ जो हमारी हो गई,
आत्मनिधि सब खो गई विज्ञान धारा सोगई ।
ज्ञानभौतिक, शानभौतिक मानभौतिक शेष है,
विज्ञान भौतिक रक्तसारा बना भारतदेश है ॥
न्याय नीति तिलाञ्जली देकर निकाले देश से,
देशके बाजार काले कर दिये निज वेश से ।
कालिमा से व्याप्त सब व्यापार धन्दे कर दिये,
नैतिक पतन की चरम सीमायुक्त नयपथ कर दिये ॥
वीर प्रभुनिर्वाण-क्षणमें था सम्हाला आपने,
अब छोड़ तुमको जाऊँ कहां घेरा चहूँ दिशि पापने ।
है दिवस वह ही नाथ ! स्वामी वीरके निर्वाण का,
जगके हितैषी विज्ञ गौतम ईश केवल ज्ञान का ॥
नाथ ! अब करके कृपा हमको सहारा दीजिये,
दीपमाला आरती पूजा ग्रहण मम कीजिये ।
ऐसी दशा जब देशकी तब धर्म का क्या रूप हो,
तुमही बताओ नाथ! जब यह जगत तमका तूप हो ॥
कैसे बचावें सत्य अपना और सत्याचार को,
जब हाय ! पैसा ! हाय पैसा ! कर रहा संसार हो ।
इस विषम-भवकी भंवरसे कैसे नौका पार हो,
मांझी लुटेरे, पथिक डाकू, दस्यु-कर-पतवार हो ॥
महावीर स्वामी की प्रव्रज्या के समय जो हाल था,

दीन दुखया प्राणियों का जीवनत्व मुहाल था ।
वह ही दशा भारतधरा की नीति भ्रष्टाचार से,
आओ! सम्हालो! सदय होकर आत्म करुणाधार से॥
हैं सभी जन आपके अब ज्ञानसे भरदो हिया,
गौतम दिया गणपति दिया, बोले सभी अनुपम दिया
तेरे दिये बिन जग अंधेरा क्योंकि वह केवल दिया,
इसलिये हे नाथ! अब चहु ओर कर दो निज दिया॥
है अनूठा शक्तिशाली उदय जहँ पाता दिया,
अज्ञान तम के तामको चैतन्य 'मणि' करता दिया।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां कैवल्यलक्ष्मीप्राप्ताय गौतमगणेशाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—ज्योतिपुञ्ज गणपति प्रभो! दूर करो अज्ञान।
समता रस से सिक्त हो नया उगे उर भानु॥

इत्याशीर्वादः।

निर्वाणकांड भाषा।

दोहा।

वीतराग बंदौं सदा, भावसहित सिरनाय।
कहूं कांड निर्वाणकी भाषा सुगम बनाय॥

चौपाई।

अष्टापद आदीश्वर स्वामि, वासुपूज्य चंपापुरिनामि।
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, बंदौं भावभगति उर धार॥

चरम तीर्थंकरचरम शरीर, पावापुरि स्वामी महावीर ।
शिखरसमेद जिनेसुर बीस, भावसहित बंदौं निश दीस ॥
बरदतराय रु इन्द मुनिंद, सायरदत्त आदिगुणवृंद ।
नगरतारवर मुनि उठ कोड़ि, बंदौं भावसहित कर जोड़ि ॥
श्री गिरनार शिखर विख्यात, कोडि बहत्तर अरु सौ सात ।
संबुप्रदुम्न कुमर द्वै भाय, अनिरुध आदि नमूं तसु पाय ॥
रामचन्द्रके सुत द्वै वीर, लाडनरिंद आदि गुणधीर ।
पांचकोडि मुनि मुनि मुक्तिमझार, पावागिरि बंदौं निरधार ॥
पांडव तीन द्रविड़राजान, आठकोडि मुनि मुकति पयान ।
श्रीशत्रुंजयगिरिके सीस, भावसहित बंदौं निशदीस ॥
जे बलभद्र मुकतिमें गये, आठकोडि मुनि औरहु भये ।
श्रीगजपंथ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूं तिहुंकाल ॥
राम हनू सुग्रीव सुडील, गवयगवाख्य नील महानील ।
कोडि निन्याणवै मुक्ति पयान, तुंगीगिरि बंदौं धरि ध्यान ॥
नंग अनंग कुमार सुजान, पांचकोडि अरु अर्ध प्रमान ।
मुक्ति गये सोनागिरि शीस, ते बंदौं त्रिभुवनपति ईस ॥
रावणके सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवातट सार ।
कोटि पंच अरु लाख पचास, ते बंदौं धरि परम हुलास ॥
रेवा नदी सिद्धवर कूट, पश्चिम दिशा देह जहँ छूट ।
द्वै चक्री दश कामकुमार, ऊठकोडि बंदौं भव पार ॥
बडवानी बडनयर सुचंग, दक्षिण दिशि गिरिचूल उतंग ।

इन्द्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण, ते वंदौं भवसागर तर्ण ॥
सुवरणभद्र आदि मुनि चार, पावागिरिवर शिखर मँझार ।
चेलना नदी तीरके पास, मुक्ति गये वंदौं नित तास ॥
फलहोड़ी बडगाम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिरि रूप ।
गुरुदत्तादि मुनीसुर जहां, मुक्ति गये वंदौं नित तहां ॥
बालि महाबालि मुनि होय, नागकुमार मिले त्रय होय ।
श्रीअष्टापद मुक्तिमँझार, ते वंदौं नित सुरत सँभार ॥
अचलापुरकी दिश ईसान, तहां मेंढगिरि नाम प्रधान ।
साढे तीन कोडि मुनिराय, तिनके चरण नमूं चितलाय ॥
वंसस्थल वनके ढिग होय, पश्चिमदिशा कुंथुगिरि सोय ।
कुलभूषण दिशभूषणनाम, तिनके चरणनि करूं प्रणाम ॥
जसरथ राजाके सुत कहे, देश कलिंग पांचसौ लहे ।
कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान, वंदन करूं जोर जुगपान ॥
समवसरण श्रीपार्श्वजिनंद, रेसिंदीगिरि नयनानंद ।
वरदत्तादि पंच ऋषिराज, ते वंदौं नित धरम जिहाज ॥
मथुरापुर पवित्र उद्यान, जंबूस्वामीजी निर्वान ।
चरम केवली पंचम काल, ते वंदौं नित दीन दयाल ॥
तीनलोकके तीरथ जहां, नित प्रति वंदन कीजै तहां ।
मनवचकायसहित सिर नाय, वंदन करहिं भविक गुणगाय ॥
संवत सतरहसौ इकताल, आश्विन सुदि दशमी सुविशाल ।
'भैया, वंदन करहि त्रिकाल, जय निर्वाणकांड गुणमाल ॥

महावीराष्टकस्तोत्र

छंद शिखरिणी।

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः, समं भांति ध्रौव्यव्ययजनिलसंतोंतरहिताः। जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो, महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)॥१॥ अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पंदरहितं, जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यंतरमपि। स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला, महावीरस्वामी० ॥ २ ॥ नमन्नाकेंद्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं, लसत्पादांभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां। भवज्वालाशांत्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि, महावी० ॥३॥ यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दु र इह, क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः। लभंते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा, महावी० ॥ ४ ॥ कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो, विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः। अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिः, महावी० ॥५॥ यदीया वाग्गंगा विविधनयकल्लोलविमला, बृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति। इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता, महावीर० ॥६॥ अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी कामसुभटः, कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः। स्फुरन्नित्यानंदप्रशमपदराज्याय स जिनः, महावीर० ॥ ७ ॥

महामोहातंकप्रशमनपराकस्मिकभिषङ्, निरापेक्षो बंधुर्विदित-महिमा मंगलकरः। शरण्यः साधूना भवभयभृतामुत्तमगुणो, महावीर० ॥ ८ ॥ महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेंदुना कृतं। यः पठेच्छ्रुणुयाच्चापि स याति परमां गति ॥ ९ ॥

तिलक मन्त्र

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंमलं कुंदकुंदाद्यो, जैनधर्मोऽस्तु मंगलं॥ १ ॥

जिनवाणी माता की आरती

जय अम्बे वाणी, माता जय अम्बे वाणी।
तुमको निश दिन ध्यावत सुरनर मुनि ज्ञानी। टेर ॥ श्रीजिन गिरितें निकसी, गुरु गौतम वाणी। जीवन भ्रम तम नाशन दीपक दरशाणी ॥ जय० ॥ १ ॥ कुमत कुलाचल चूरण, बज्र सु सरधानी। नव नियोग निक्षेपण, देखन दरपाणी ॥ जय० ॥ २ ॥ पातक पंक पखालन, पुण्य परम पाणी। मोहमहार्णव डूबत, तारण नौकाणी ॥ जय० ॥ ३॥ लोका-लोक निहारण, दिव्य नत्र स्थानी। निज पर भेद दिखावन, सूरज किरणानी ॥ जय० ॥ ४ ॥ श्रावक मुनिगण जननी, तुमही गुणखानी। सेवक लख सुखदायक, पावन परमाणी
जय अम्बे वाणी माता जय अम्बे वाणी ॥

अनन्तव्रत पूजा

अडिल्ल छन्द ।

श्रीजिनराज चतुर्दश, जग जयकारजी,
कर्म नाश भवतार सु, शिवसुखधारजी ।
संवौषट ठः ठः सु, वषट यह उच्चरूं,
आह्वानन स्थापन, निज सन्निधि करूं ।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रा अत्र अवतरत अवतरत, संवौषट । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधापनम् ।

गीता छन्द ।

गंगादि तीरथका सुजल भर, कनकमय भृङ्गार मैं,
चउदशजिनेश्वर चरणयुगपरि, धार डारो सार मैं ।
श्री वृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यन्त पूजो ध्यान के,
करि व्रत अनंत सुकर्म हनिके, लहो शिवसुख जाय के ।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो जलम् ।

चन्दन अगर घनसार आदि, सुगन्ध द्रव्य घसाय के ।
सहजहिं सुगध जिनेन्द्रके पद, चर्चे हो सुखदाय के ।।श्री०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यः चन्दनम् ।

तंदुल अखंडित अतिसुगन्ध, सुमिष्ट लेके कर धरौं ।
जिनराज तुम चरनन निकट, भविपाय पूजो शुभ धरौं ।।श्री०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो अक्षतम् ।

चम्पा चमेली केतकी पुनि, मोगरा शुभ लायके ।
कवड़ा कमल गुलाब गैंदा, जुही सुमाल बनाय के ।।श्री०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यः पुष्पम् ।

लाड्डू कलाकंद सेव घेवर, और माता चूर ले ।
गूजा सुपेड़ा चीर व्यंजन, थाल में भरपूर ले ।। श्री०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यम् ।

ले रत्न जड़ित सुआरती, तामांहि दीप संजोय के ।
जिनराज तुम पद आरतीकर, तिमिर मिथ्या खायके ।। श्री०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्य दीपम् ।

चन्दन अगर तगर सिलारस, कपूरकी करि धूप का ।
तागन्ध ते अलि हो चकित सा, खेऊ निकट जिन भूपका ।श्री०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो धूपम् ।

नारिग केला दाख दाड़िम, बीजपूर मंगाय के ।
पुनि आम्र और बादाम खारक, कनक थार भराय के ।।श्री०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो फलम् ।

जल सुचन्दन अक्षत पुष्प, सुगन्ध बहुविध लाय के ।
नैवेद्य दीप सु धूप फल इन, को जु अर्घ बनाय के ।।श्री०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यम् ।

जयमाला, पद्धरी छन्द ।

जय वृषभनाथ वृषको प्रकाश, भविजनको तारे पाप नाश ।

जय अजितनाथ जीते सुकर्म, ले क्षमा खड्ग भेदे जु मर्म ॥
जय संभव जग सुखके निधान, जग सुखकरता तुम दियो ज्ञान
जय अभिनंदन पद धरो ध्यान, तासों प्रगटे शुभज्ञान भान ॥
जय सुमति सुमति के देनहार, जासों उतरे भवउदधि पार ।
जय पद्म पद्म पदकमल तोहि, भविजन अति सेवें मगनहोहिं॥
जय२सुपार्श्व तुम नमत पांय, क्षय होत पाप बहु पुन्य थांय।
जय चंद्रप्रभ शशकोटि भान, जगका मिथ्यातम हरो जान ॥
जय पुष्पदंत जग मांहि सार, पुष्पकको मार्‌यो अति सुमार।
करि धर्मभाव जग में प्रकास, हरपापतिमिर दियो मुक्तिवास॥
जय शीतलजिन हरभव प्रवीन, हर पापताप जग सुखी कीन।
श्रेयांस कियो जग को कल्यान, दे धर्म दुखित तारे सुजान ॥
जय वासुपूज्य जिन नमों तोहि, सुर नर मुनि पूजत गर्व खोहि
जय विमल२ गुण लीन मेय, भवि करें आप सम सगुण देय॥
जय अनंतनाथ करि अनंतवीर्य, हरि घातकर्म धरि अनंत धीर्य
उपजायो केवल ज्ञानभान, प्रभु लखे चराचर सब सुजान॥

दोहा।

ये चौदह जिन जगत में, मंगलकरण प्रवीन ।
पापाहरन बहुसुख करन, सेवक सुखमय कीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं ।

श्रीरविव्रत पूजा ।

अडिल्ल छन्द ।

यह भविजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही ।
करहु भव्यजन सर्व, सुमन देकें सही ॥
पूजों पार्श्व जिनेन्द्र, त्रियोग लगायकें ।
मिटै सकल सन्ताप, मिलै निधि आयकें ॥
मतिसागर इक सेठ, सुग्रन्थन में कही ।
उनहीं ने यह पूजा कर आनंद लही ॥
तातें रविव्रत सार सो भविजन कीजिये ।
सुख सम्पति सन्तान, अतुल निधि लीजिये ॥
प्रणमों पार्श्व जिनेश को, हाथ जोड़ सिर नाय ।
परभव सुख के कारने, पूजा करूं बनाय ॥
ऐतवार व्रत के दिना, येही पूजन ठान ।
ता फल सम्पति को लहैं, निश्चय लीजे मान ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

उज्वल जल भरकें अतिलायो, रतन कटोरन मांही ।
धार देत अति हर्ष बढ़ावत, जन्म जरा मिट जांहीं ॥
पारसनाथ जिनेश्वर पूजों, रविव्रत के दिन भाई ।
सुखसम्पति बहु होय तुरतही, आनंद मंगल दाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलम् ।

मलयागिरि केशर अतिसुन्दर, कुमकुम रङ्ग बनाई।
धार देत जिन चरनन आगे, भव आताप नशाई॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं

मोतीसम अतिउज्वल तन्दुल, लावो नीर पखारो।
अक्षयपद के हेतु भाव सों, श्रीजिनवर ढिंग धारो॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतम्।

बेला अरु मचकुन्द चमेली, पारिजात के ल्यावो।
चुन चुन श्रीजिन अग्र चढ़ाऊँ, मनवांछित फल पावो॥पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वसनाय पुष्पम्।

बावर फैनी गोजा आदिक, घृत में लेत पकाई।
कंचन थार मनोहर भर के, चरनन देत चढाई॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम्।

मणिमय दीप रतनमय लेकर, जगमग जोति जगाई।
तिनके आगे आरति करके, मोहतिमिर नश जाई॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपारश्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपम्।

चूरन कर मलयागिर चन्दन, धूप दशांग बनाई।
तट पावक में खेय भाव सों, कर्मनाश हो जाई॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपारश्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपम्।

श्रीफल आदि बदाम सुपारी, भांति भांति के लावो।
श्रीजिन चरन चढाय हरषकर, तातैं शिव फल पावो॥पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलम् ।

जल गंधादिक अष्ट द्रव्य ले, अर्घ बनावो भाई ।
नाचत गावत हर्षभाव सों, कंचनथार भराई ।।पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यम् ।

गीतिकाछन्द ।

मन वचन काय त्रिशुद्ध करके, पार्श्वनाथ सु पूजिये ।
जल आदि अर्घ बनाय भविजन, भक्तिवन्त सु हूजिये ।।
पूज्य पारसनाथ जिनवर, सकल सुखदातार जी ।
जे करत हैं नर नारि पूजा, लहत सौख्य अपार जी ।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला, दोहा ।

यह जग में विख्यात हैं, पारसनाथ महान ।
तिन गुण की जयमालिका, भाषा करों बखान ।।

जय जय प्रणमों श्रीपार्श्व देव,
इन्द्रादिक तिनकी करत सेव ।
जय जय सु बनारस जन्म लीन,
तिहुं लोक विषैं उद्योत कीन ।।
जय जिनके पितु श्री विश्वसैन,
तिनके घर भये सुखचैन ऐन ।
जय वामादेवी माय जान,
तिनके उपजे पारस महान ।।

जय तीन लोक आनन्द देव,
भविजन के दाता भये ऐन ।
जय जिनने प्रभु का शरण लीन,
तिनको सहाय प्रभुजी सो कोन ॥

जय नाग नागिनी भये अधीन,
प्रभु चरणन लाग रहे प्रवीन ।
तजि के सो देह स्वर्ग सु जाय,
धरणेन्द्र पद्मावति भये आय ॥

जय चोर अञ्जना अधम जान,
चोरी तज प्रभु को धरो ध्यान ।
जय मृत्यु भये स्वर्ग सु जाय,
ऋद्धी अनेक उनने सो पाय ॥

जय मतिसागर इक सेठ जान,
जिन रविव्रतपूजा करी ठान ।
तिनके सुत थे परदेश माँहि,
जिन अशुभकर्म काटे सुताँहि ॥

जय रविव्रत पूजन करी सेठ,
ता फल कर सब से भई भेंट ।
जिन जिन ने प्रभु का शरण लीन,
तिन ऋद्धि सिद्धि पाई नवीन ॥

जे रविव्रत पूजा करहिं जेय,
ते सौख्य अनन्तानन्त लेय।
धरणेन्द्र पद्मावति हुये सहाय,
प्रभुभक्त जान तत्काल आय ॥
पूजा विधान इहिविधि रचाय,
मन वचन काय तीनों लगाय।
जो भक्तिभाव जयमाल गाय,
सोही सुखसम्पति अतुल पाय ॥
बाजत मृदंग बीनादि सार,
गावत नाचत नाना प्रकार।
तन नन नन नन नन ताल देत,
सन नन नन नन सुर भर सो लेत,
ता थेइ थेइ थेइ पग धरत जाय,
छम छम छम छम घुंघरू बजाय।
जे करहिं निरत इहि भांत भांत,
ते लहहिं सुक्ख शिवपुर सुजात ॥
रविव्रत पूजा पार्श्व की, करै भविक जन जोय।
सुख सम्पति इह भव लहै, तुरत सुरग पद होय ॥
ॐ ह्रीं पार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा

रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र, पूज भवि मन धरें ।
भव भव के आताप, सकल छिन में टरें ॥
होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवी लहें ।
सुख सम्पति सन्तान, अटल लक्ष्मी रहे ॥
फेर सर्व विधि पाय, भक्ति प्रभु अनुसरें ।
नानाविध सुख भोग, बहुरि शिवतिय वरें ॥

इत्याशीर्वादः,

———

श्री सिद्ध क्षेत्र पूजायें

श्री निर्वाण क्षेत्र पूजा

दोहा।

वंदौं श्रीभगवान को, भावभगति सिर नाय।
पूजा श्रीनिर्वाण की, सिद्धक्षेत्र सुखदाय॥
द्वीप अढाई के विषै, सिद्धक्षेत्र जो जान।
तिनिको मैं वंदन करौं, भव भव होउ सहाय॥

अडिल्ल।

परम महा उत्कृष्ट मोक्ष मंगल सही,
आदि अनादि संसार भानि मुक्ती लही।
तिनके चरन अरु क्षेत्र जजों शिवदायही,
आह्वानन विधि ठानि वार त्रय गायही॥

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्र आर्यखड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्र, अत्रावतराव-तर संवौषट आह्वाननं। ॐ ह्रीं भरतक्षेत्र के आर्य खड संबधी सिद्ध क्षेत्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं भरत क्षेत्र के आर्य खण्ड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक ढाल पंचमेरु पूजाभाषाकी चालमें।

शीतल उज्जल निर्म्मलनीर, पूजौं सिद्धक्षेत्र गम्भीर।
लहौं निर्वाण, पूजौं मन बच तन धरि ध्यान॥

अब मैं शरण गही तुम आन, भवदविपार उतारन जान।
लहौं निर्वाण पूजों मन वच तन धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं भरत क्षेत्र के आर्य खंड संबंधी सिद्ध क्षेत्रेभ्यो जन्म-जरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन घिसौं कपूर मिलाय, भव आताप तुरत मिट जाय।
लहौं निर्वाण पूजो मन वच तन धरि ध्यान ॥ अबमैं०

ॐ ह्रीं भरत क्षेत्र के आर्य खंड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्रेभ्यो भवाताप विनाशनाय चंदनं निवपामीति स्वाहा।

अमल अखंडित अक्षत धोय, पूजों सिद्ध क्षत्र सुखहोय।
लहो निर्वाण पूजो मन वच तन धरि ध्यान ॥ अब०

ॐ ह्रीं भरत क्षेत्र के आर्य खंड सम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निवपामीति स्वाहा।

पुष्प सुगध मधुप झंकार, पूजों सिद्ध क्षेत्र मंझार।
लहौं निर्वाण पूजों मन वच तन धरि ध्यान ॥ अब०

ॐ ह्रीं भरत क्षेत्र के आर्य खण्ड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

वर नैवेद्य मिष्ट अधिकाय, पूजों सिद्ध क्षेत्र समभाय।
लहौं निर्वाण पूजों मन वच तन धरि ध्यान ॥ अब०

ॐ ह्रीं भरत क्षेत्र के आर्य खण्ड सम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यः क्षुधावेदनीरोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप रतनमय तेज प्रकाश, पूजों सिद्ध क्षेत्र समभास।
लहौं निर्वाण पूजों मन वच तन धरि ध्यान ॥ अब०

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्र के आर्य खण्ड सम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप सुगंध लहै दश अंग, पूजों सिद्ध क्षेत्र सरवंग।
लहों निर्वाण, पूजों मन वच तन धरि ध्यान॥ अब०

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड सम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल प्रासुक उत्तम अतिसार, सिद्ध क्षेत्र वांछित दातार।
लहों निर्वाण पूजों मन वच तन धरि ध्यान॥ अब०

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्र के आर्य खण्ड सम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ करों निज माफिक शक्ति, पूजों सिद्ध क्षेत्र करि भक्ति।
लहों निर्वाण, पूजों मन वच तन धरि ध्यान॥ अब०

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्र के आर्य खण्ड सम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थ सिद्ध क्षेत्र के सबै, बांछा मेरी पूरो अबै,
लहों निर्वाण, पूजों मन वच तन धरि ध्यान।
अब मैं सरन गही तुम आन, भवदधि पार उतारन जान॥

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्र के आर्य खण्ड सम्बन्धी सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक निर्वाणक्षेत्र के अर्घ ।

अडिल्ल

श्री आदीश्वरदेव भये निर्वाणजू ।
श्री कैलाश शिखर पर मानजू ॥
तिन के चरन जजों मैं मन वच काय के ।
भवदधि उतरों पार शरन तुम आय के ॥

ॐ ह्रीं कैलाशपर्वत सेती श्री ऋषभदेव तीर्थंकर दश हजार मुनि सहित मुक्ति पधारे और वहाँ तें और मुनि मुक्ति पधारे होहिं तिनि को अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

चंपापुर में मुक्ति भये जिनराजजी ।
वासुपूज्य महाराज करम क्षयकारजी ॥
तिनि के चरन जजों मैं मन वच कायकै ।
भवदधि उतरों पार शरन तुम आयकै ॥

ॐ ह्रीं चंपापुर सेती श्री वासुपूज्य तीर्थंकर हजार मुनि सहित मुक्ति पधारे और वहाँ तें और मुनि मुक्ति पधारे होहिं तिनको अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

श्री गिरनार शिखर जग में विजी ।
सिद्ध वधू के नाथ भये नेमिनाथजी ॥
तिन के चरन जजों मैं मनवचकाय कै ।
भवदधि उतरों पार शरन तुम आय कै ॥

ॐ ह्रीं गिरनार शिखर सेती श्री नेमिनाथ तीर्थंकर पांच सौ छत्तीस मुनि सहित मुक्ति पधारे अर बहत्तरि कोडि सात सौ मुनि और हू मुक्ति पधारे तिनको अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

पावापुर सरवर के बीच महावीरजी ।
सिद्ध भये हनि कर्म करें सुर सेवजी ॥
तिन के चरन जजों मैं मनवचकाय कै ।
भवदधि उतरों पार शरन तुम आय कै ॥

ॐ ह्रीं पावापुर के पद्म सरोवर मध्य सेती श्री महावीर तीर्थंकर छत्तीस मुनि सहित मुक्ति पधारे और वहाँ ते और मुनि मुक्ति पधारे होहिं तिनि को अर्घ महार्घं निवपामीति स्वाहा ॥४॥

श्री सम्मद् शिखर शिवपुर को द्वार है ।
बीस जिनेश्वर मुक्ति भये भवतार है ॥
तिन के चरन जजों मैं मनवचकाय कै ।
भवदधि उतरों पार शरन तुम आय कै ॥

ॐ ह्रीं सम्मेद शिखर सेती श्री बीस तीर्थंकर मुक्ति पधारे अर उस शिखर तें और मुनि मुक्ति पधारे होहिं तिनि-को अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

नंगानंग कुमर दोय राजकुमार जू ।
मुक्ति भये सोनागिर जग हितकार जू ॥
साढे पांच कोडि भये शिवराजजी ।
पूजों मन वच काय लहों सुखसारजी ।

ॐ ह्रीं सोनागिर पर्वत सेती नंगानंगकुमारादि साढ़े पांच कोड़ि मुनि मुक्ति पधारे तिनको अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

राम हनू सुग्रीव नील महानील जी ।
गवगवाख्य इत्यादि भये शिवतीरजी ॥
कोडि निन्यानवै मुक्ति तुंगी गिरि पाय कैं ।
तिनि के चरन जजों मैं मन वच काय कैं ।

ॐ ह्रीं तुंगीगिरि पर्वत सेती श्रीरामचन्द्र हनूमान सुग्रीव नील महानील गवगवाद्य इत्यादि निन्यानवै कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

वरदत्तादिवरंग मुनीन्द्र सुनामजी ।
सायरदत्त महान महा गुण धाम हैं ।
तारवरनयरतें मुक्ति भये सुखदायजी ।
तीन कोडि अरु लाख पचास सुगाय जी ॥

ॐ ह्रीं तारवरनयर सेती वरदत्तवरंग सायरत्तादि साढे तीन कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिनिको अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥८॥

श्री गिरिनार शिखर जग में विख्यात है ।
कोटि बहत्तर अधिकै अरु सौ सात है ॥
संबू प्रदुमन अनिरुद्ध मुक्ति को पाय कैं,
तिन के चरन जजों मैं मन वच काय कैं ॥

ॐ ह्रीं श्री गिरिनार शिखर सेती शम्बुकुमार प्रद्युम्नकुमार अनिरुद्ध कुमारादि बहत्तर कोडि सात सौ मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

रामचंद के सुत दोय जिन दिक्षा धरी,
लाडनरिंद आदि मुनि आठ कर्मन हरी ।

पावागिरि के शिखर ध्यान धरिके सही,

पांच कोडि मुनि सहित परम पदवी लही ॥

ॐ ह्रीं पावागिरि शिखर सेती लाडनरिंद आदि पाच कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिनको अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

पांडव तीन बड़े राजा तुम जानियो।

आठ कोडि मुनि चरमशरीरी मानियो ॥

श्री सेतुरंज शिखर मुक्ति वर पाय के।

तिन के चरन जजों मैं मन वच काय के ॥

ॐ ह्री शत्रुञ्जय शिखर सेती पांडव तीन को आदि दे आठ कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिन को अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री गजपंथ शिखर पर्वत सुखधाम है।

मुक्ति गये बलभद्र सात अभिराम है ॥

आठ कोडि मुनि सहित नमों मन लाय के।

तिन के चरन जजों मै मन वच काय के ॥

ॐ ह्रीं गजपंथ शिखर सेती सात बलभद्र को आदि ले आठ कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिनको अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

रावण के सुत आदि पंच कोडि जानिये।

ऊपर लाख पचास परम सुख मानिये ॥

रेवा नदी के तीर मुक्ति में जाय के।

तिन के चरन जजों मैं मन वच काय के ॥

ॐ ह्रीं रेवा नदी के तीर सेती रावण के सुत को आदि दे साढ़े पांच कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिनको अर्घं महार्घं निर्व-पामिति स्वाहा।

द्वै चक्री दश काम कुमार महाबली।
रेवा नदी के पच्छिम कूट सिद्ध है भली॥
साढे तीन कोडि मुनि शिव को पाय के,
तिन के चरण जजौं मैं मन वच काय के॥

ॐ ह्रीं रेवानदी के पश्चिम भाग तें सिद्ध कूट सेती द्वैचक्री दश कामदेव कूं आदि दे साढ़े तीन कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण दिशि में चूल उतंग शिखर है जहां,
बडनयरी बडनयर तहां शोभित महा।
इन्द्रजीत अरु कुंभकरण व्रत धारि के,
मुक्ति गये वसु कर्म जीति सुख कारिके॥

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा में चूलगिरि उतंग शिखर सेती इन्द्रजीत कुम्भकरण मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घं महार्घं निर्व०

अचला नदी के तीर व पावाशिखरजी,
समंतभद्र मुनि च्यार बड़ो है ऋद्धजी।
तहां तें परम धाम के सुख को पाय के,
तिनके चरन जजों मैं मन वच काय के॥

ॐ ह्रीं अचलानदी के तीर पावागिरि शिखर सेती समंत-भद्रादि च्यार मुनि मुक्ति पधारे तिनको अर्घं महार्घं निर्व०।

फलहोडी बडगांव अनूप जहां बसे,
पश्चिम दिशि में द्राण महा पर्वत लसे।
गुरुदत्तादि मुनीश्वर शिव को पाय के,
तिनि के चरण जजों मैं मन वच काय के॥

ॐ ह्रीं फलहोडी बडगांव की पश्चिम दिशा में द्रोणगिरि पर्वत सेती गुरुदत्तादि मुनि मुक्ति पधारे तिनको अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

व्याल महाव्याल मुनीश्वर दोय हैं,
नागकुमार मिलाय तीन ऋषि होय हैं।
श्री अष्टापद शिखर तें मुक्ति में जाय के,
तिनि के चरण जजों मैं मन वच काय के॥

ॐ ह्रीं श्रीअष्टापद सेती व्याल महाव्याल नागकुमार तीन मुनि मुक्ति पधारे अर वहासे और जो जो मुनि मुक्ति पधारे होहिं तिनिको अघ महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलापुर की दिशि ईशान महा बसे,
तहां मेढगिरि शिखर महा पर्वत लसे।
तीन कोडि अरु लाख पचास महामुनी,
मुक्ति गये धरि ध्यान करम अरि तिन हनी॥

ॐ ह्रीं अचलापुर की ईशान दिशि मेढगिरि पर्वत के शिखर सेती साढे तीन कोडि मुनि मुक्ति पधारे तिनको अर्घं महाघ निर्वपामीति स्वाहा।

वंशस्थल वन पश्चिम कुंथ पहार है,
कुलभूषण देशभूषण मुनि सुखकार है।
तहां तें शुकल ध्यान कार मुक्ति मे जाय के,
तिनि के चरण जजों मैं मन वच कायके ॥

ॐ ह्रीं वंशस्थल वन के पच्छिम दिशा मे कुन्थलगिरि शिखर सेती कुलभूषण देशभूषण मुनि मोक्ष पधारे तिनको अर्घं महार्घं निवपामीति स्वाहा।

जसहर राजाके सुत पंच शत कहे,
देश कलिंग मझार महा मुनि ते भये।
शुकल ध्यान तें मुक्ति रमनि सुख पायके,
तिनिके चरन जजों मै मन वच कायके ॥

ॐ ह्रीं कलिंगदेश सेती जसहर राजा के पाच सौ पुत्र मुनि होय मुक्ति पधारे-तिनिको अर्घं महार्घं निवपामीति स्वाहा।

कोटि शिला एक दक्षिण दिशि में है सही,
निहचै सिद्धक्षेत्र है श्री जिनवर कही।
कोटि मुनीश्वर मुक्ति भये सुख पायके,
तिनके चरण जजों मैं मन वच कायके ॥

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशिमें कोटि शिला सेती कोडि मुनि मक्ति पधारे तिनकों अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण श्रीपार्श्व जिनेश्वर देवको,
करें सुरासुर सेव परम पद लेव को,

रिसिंदीगिर उत्तम थान सु पायके,
वरदत्तादि पाँच मुनि मुक्ति सुजाय के ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ स्वामी के समवशरण रेसिन्दीगिर शिखर सेती वरदत्तादि पांच मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

पोदनपुर को राज त्याग न जे भये,
बाहुबलि स्वामी तहां तें सिद्ध भये ।
तिन के चरण जजों मैं मन वच काय के,
भवदधि उतरों पार सरन तुम आय के ॥

ॐ ह्रीं पोदनपुर को राज त्यागि बाहुबलि मुनि मुक्ति पधारे तिनि को अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री तीर्थंकर चतुरवीस भगवान हैं,
गर्भ जन्म तप ज्ञान भये निरवान हैं ।
तिनि के चरण जजों मैं मन वच काय के,
भवदधि उतरों पार शरण तुम आय के ॥

ॐ ह्रीं पंच कल्याणक धारक चतुर बीस तीर्थंकर तिन को अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

तीन लोक में तीर्थ जे सुखदाय हैं,
तिनि प्रति बन्दों भाव सहित सिरनाय हैं ।
तिनि की भक्ति करूं मैं मन वच काय के ।
भवदधि उतरों पार सरन तुम आय के ॥

ॐ ह्रीं तीनलोक में जे जे तीर्थ क्षेत्र हैं तिनि को अर्घ महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

पद्धरी छन्द ।

श्री आदीश्वर वंदों महान, कैलाश शिखर तें मोच्छ जान,
चंपापुर तें श्री वासुपूज्य, तिन मुक्ति लही अात हर्ष हूज्य ।
ऊर्जंत नेमजी मुक्ति पाय, पावापुर तें श्री वीर राय,
सम्मेद शिखर श्री मुक्तिद्वार, श्री वीस जिनेश्वर मोच्छ धार ॥

सोनागिर साढ़े पांच काड़ि, तुंगीगिरि राम हनू सुजोडि,
निन्यानवे कोडि मुक्ति मझार, तिनिके हम चरण नमें त्रिकाल
वरदत्तादि वरंग मुनीन्द्र चंद्र, तहां सायरदत्त महान विंद,
तारवरनयरतें मोच्छ पाय, तिनि के चरननि हम सिर नमाय ॥

संबूप्रदमुनि अनिरुद्ध भाय, गिरिनारि शिखर तें मोच्छ पाय,
बहत्तर कोडि सै सात जान, तिनको मैं मनवच करहों ध्यान
श्रीरामचंद्र के दो सुत पूत, अरु पांचकोडि मुनि सहित हूत,
लाडनरिंद इत्यादि जानि, श्री पावागिर तें मोच्छ थान ॥

अष्ट काडि मुनिराज जान, पांडव त्रय वहि राजा महान,
श्री सेतुञ्जयतें मुक्ति पाय, तिनि को मैं वंदों सिर नमाय ।
गजपंथ शिखर जग में विशाल, मुनि आठकोडि हूजे दयाल,
वलिभद्र सात मुक्तीसुजाय, तिनिको हम मनवच शीसनाय ॥

रावण के सुत अरु पांच कोडि, पंचास लाख ऊपरि सुजोडि ।
रेवा तट तें तिनि मुक्ति लीन, करि शुक्ल ध्यान तें कर्म छीन,

द्वै चक्रवर्ति दश कामदेव, आहूट कांडि मुनिवर सुएव,
रेवा के पच्छिम कूट जानि, तिनि वरी मुक्ति वसुकर्म हानि।
दक्षिण दिशमें गिरिचूल जानि, तहां इन्द्रजीत कुंभकरण मानि
ते मुक्ति गए वसु कर्म जीत, सो सिद्धक्षेत्र बंदौं विनीत॥

पावागिर शिखर मंझार जानि, तहां समतभद्रमुनि च्यारि मानि
तिनि मुक्तिपुरी को गमन कीन, शिव मारग हमकों सोधि दीन
फलहोडी बडगांव सु अनूप, पश्चिम दिसि दौंनार रूप,
गुरुदत्तादिक शिवपद लहाय, तिनिको हम बंदें सीस नाय॥

व्याल महाव्याल मुनीश दोइ, श्रीनागकुमार मिलि तीन होइ,
श्री अष्टापद तें मुक्ति होइ, तिनि आठ कर्म मलको सुधोइ।
अचलापुर की दिसि में ईशान, तहां मेढगिरि नामा प्रमान,
मुनि तीनकोडि ऊपरि सुजोय, पंचासलाख मिलि मुक्तिहोय,

वंशस्थलवन कुंथू पहार, कुलभूषण देशभूषण सुसार॥
भारी उपसर्ग कर्यो वितीत, तिनि मुक्ति लई अर कर्म जीत,
जसरथके सुत शत पंच सार, कलिंग देश तें मुक्ति धार।
मुनि कोडि शिलातें मुक्ति लीन, तिनको बंदन मनवचन कीन

वरदत्तादि पांचों मुनीश, तिन मुक्ति लई वंदौं सईस॥
श्री बाहुबलि बल अधिक जान, वसु कर्म नाशि के मोक्ष थान,
जहां पचकल्याण जिनेंद्रदेव, तिनकी हम निति मांगें सुसेव।
यह अरज गरीबन की दयाल, निर्वाण देउ हमको सुहाल,

ॐ ह्रीं भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड सम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल

यह गुणमाल महान सुभविजन गाइयो,
स्वर्ग मुक्ति सुखदाय कंठ में लाइयो ।
यातें सब सुख होय सुजस को पाय के,
भवदधि उतरों पार सरन प्रभु आय के ॥

इत्याशीर्वादः ।

दोहा ।

नर भव उत्तम पायके, औसर मिलियो मोहि ।
चोखो ध्यान लगाय के, सरन गही प्रभु तोहि ॥
बालक सम हम बुद्धि हैं, भक्ति थकी गुण गाय ।
भूल चूक तुम सोधियो, सुनियो सज्जन भाय ॥
औगुन तुम मति दीजियो, गुण गह लीजो मीत ।
पूजा नित प्रति कीजियो, कर जीवन सों प्रीत ॥
संवत अष्टादश शतक, सत्तरि एक महान ।
भादों कृष्ण जु सप्तमी, पूरण भयो सुजान ॥

इति श्री निर्वाणक्षेत्र पूजा संपूर्णम् ।

———

श्रीसम्मेदशिखरपूजा विधान

दोहा

सिद्धक्षेत्र तीरथ परम, है उत्कृष्ट सुथान ।
शिखरसम्मेद सदा नमौं, होय पापकी हानि ॥१॥
अगणित मुनि जहतैं गये लोक शिखरके तीर ।
तिनके पदपंकज नमूं, नाशैं भवकी पीर ॥२॥

अडिल्ल

है उज्जवल वह क्षेत्र सुअति निरमल सही । परम पुनीत सुठौर महा गुणकी मही । सकल सिद्धिदातार महा रमणीक है । बन्दौं निज सुखहेत अचल पद देत है ॥३॥

सोरठा

शिखरसमेद महान, जगमें तीर्थ प्रधान है ।
महिमा अद्भुत जान, अल्पमती मैं किमि कहों ॥

सुन्दरी छंद

सरस उन्नत क्षेत्र प्रधान है । अति सु उज्ज्वल तीर्थ महान है ॥ करहिं भक्ति सु गुण गण गायकें । वरहिं सुर शिवके सुख जायकें ॥

अडिल्ल

सुर हरि नर इन आदि और बंदन करें । भवसागरतैं तिरें, नहीं भवमें परें । सफल होय तिन जन्म शिखरदरशन करें, जनम जनमके पाप सकल छिनमें टरें ॥

पद्धरी छन्द

श्री तीर्थंकर जिनवर जु वीस, अरु मुनि असंख्य सबगुणन ईस। पहुंचे जहंतें कैवल्यधाम, तिनको अब मेरी है प्रणाम ॥ ७ ॥

गीतिका छंद

सम्मेदगढ़ है तीर्थ भारी सबहिकों उज्ज्वल करें।
चिरकालके जे कर्म लागे दर्शतें छिनमें टरें ॥
है परम पावन पुण्यदायक अतुल महिमा जानिये।
अरु है अनूप सुरूप गिरिवर तास पूजन ठानिये ॥ ८ ॥

दोहा

श्रीसम्मेद शिखर सदा, पूजौं मनवचकाय।
हरत चतुर्गतिदुःखको, मनवांछित फलदाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्

अष्टक।

अडिल्ल

क्षीरोदधिसम नीर सुनिरमल लीजिये, कनक कलशमें भरकैं धारा दीजिये। पूजौं शिखरसम्मेद सुमनवचकायजी, नरकादिक दुख टरें अचलपद पायजी ॥

ॐ ह्रीं विंशतितीर्थंकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तेभ्यो सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व०

पयसों घसि मलयागिरिचंदन लाइये । केसरि आदि कपूर सुगन्ध मिलाइये ॥ पूजों शिखरसम्मेद० ।

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरक्षेत्राय चन्दनं निर्व०

तंदुल धवल सुवासित उज्ज्वल धोयकै । हेमरतनके थार भरों शुचि होयकैं ॥ पूजौं० शिखरसम्मेद० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरक्षेत्राय अक्षतान निर्व०

सुरतरुके सम पुष्प अनूपम लीजिये । कामदाहदुखहरण-चरण प्रभु दीजिये ॥ पूजौं शिखरसम्मेद० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरक्षेत्राय पुष्पं निर्व०

कनकथार नैवेद्य म षटरमतैं भरे । देखत क्षुधा पलाय सुजनि आगैं धरे ॥ पूजौं शिखरसम्मेद० ।

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरक्षेत्राय नैवेद्यं निर्व०

लेकर मणिमय दीप सुज्योति प्रकाश है । पूजत होत सुज्ञात मोहतम नाश है ॥ पूजौं शिखरसम्मेद०

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरक्षेत्राय दीपं निर्व०

दशविधि धूप अनूप अगनिमें खेवहू । अष्टकर्म को नाश होत सुख लेवहूँ ॥ पूजौं शिखरसम्मेद० ।

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरक्षेत्राय धूपं निर्व०

सरस सुगंधित आम बदामादिक जिते, उत्तम फल ले पूज करौं शिवफल हिते । पूजौं शिखर सम्मेद० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरक्षेत्राय फलं निवपामीति स्वाहा।

जल गंधाक्षतपुष्प सुनेवज लीजिये । दीप धूप फल लेकर अर्घ सु दीजिये ॥ पूजौं शिखरसम्मेद०

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरक्षेत्राय अर्घ्यं निर्व०

पद्धरी छन्द

श्रीविंशति तीर्थंकर जिनेन्द्र, अरु असंख्यात अर्हते मुनेन्द्र । तिनकों करजोरि करौ प्रणाम, जिनको पूजों तजि सकल काम ॥ महार्घं ॥

अडिल्ल

जे नर परम सुभावननैं पूजा करैं, हरि हलि चक्री होंय राज छह खंड करैं। फेरि होंय धरणेंद्र इन्द्रपदवी धरैं, नानाविध सुखभोगि बहुरि शिवतिय वरैं ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

छन्द जोगीरासा।

श्रीसम्मेदशिखरगिरि उन्नत, शोभा अधिक प्रमानों ।
विंशति तिहिंपर कूट मनोहर, अद्भुत रचना जानो ॥
श्रीतीर्थंकर बीस तहातैं, शिवपुर पहुचे जाई ।
तिनके पदपंकजजुग पूजौं, अर्घ प्रत्येक चढ़ाई ॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

नं० २४ अजितनाथ सिद्धवर कूट ।

प्रथम सिद्धिवरकूट सुजानो, आनंद मंगलदाई ।
अजितनाथ जहतैं शिव पहुंचे पूजों मनवचकाई ॥

कोडि जु अस्सी एक अरब मुनि, चौवन लाख जु गाई।
कर्म काटि निर्वाण पधारे, तिनकों अर्घ चढाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र सिद्धवर कूटते, अजितनाथ जिन अरु मुनि एक अर्ब अस्सीकोटि चौवनलाख सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

नं० १४ संभवनाथ धवलकूट।

धवलदत्त है कूट दूसरा, सब जियका सुखकारी।
श्रीसंभवप्रभु मुक्ति पधारे पापतिमिर को टारी ॥

धवलदत्त दे आदि मुनी, नवकोडाकोडी जानो।
लाख बहत्तरि सहस बियालिस, पंचशतक ऋषि मानो ॥
कर्मनाशकरि शिवपुर पहुँचे, वंदों शीश नवाई।
तिनके पदयुग जजहुँ भावसों, हरषि चितलाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रधवलकूटतै सम्भवनाथजिनेन्द्रादि मुनि नौकोड़ाकोड़ी बहत्तरलाखब्यालीसहजारपांचसौसिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

नं० १६ अभिनन्दननाथ आनन्दकूट।

चौपाई।

आनन्दकूट महासुखदाय, अभिनन्दन प्रभु शिवपुर जाय।
कोडाकोडी बहत्तर जान, सत्तर कोडि लखछत्तिस मान ॥
सहस बियालिस शतक जु सात, कहे जिनागममें इह भांत।
ए ऋषि कर्म काटि शिव गये, तिनके पदजुग पूजत भये ॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रे आनन्दकूट श्रीअभिनन्दनजिनेन्द्रादि मुनि बहत्तरकोड़ाकोड़ी सत्तरकोड़छत्तीसलाखब्यालीसहजारसातसौसिद्धपदप्राप्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्व०।

नं० १६ सुमतिनाथ अविचलकूट

अविचल चौथो कूट महासुख धामजी, जहँतैं सुमतिजिनेश गये निर्वाणजी। कोडाकोडि एक मुनीश्वर जानिये, कोटि चुरासी लाख बहत्तरि मानिये॥ सहस इक्यासी और सातसौ गाइये, कर्म काटि शिवगये तिन्हें शिर नाइये। सो थानक मैं पूंजूं मनवचकायजो, पाप दूर हो जांय अचलपद पायजी॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रअविचलकूटतैं सुमतिनाथजिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ी चौरासीकोड़ि बहत्तरलाख इक्यासी हजार सातौ सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्व०।

नं० ८ पद्मप्रभ मोहनकूट अडिल्ल।

मोहन कूट महान परम सुन्दर कह्यो, पद्मप्रभु जिनराज जहां शिवपुर लह्यो। कोटि निन्यानवे लाख सतासी जानिये, सहस तियालिस और मुनीश्वर मानिये॥ सप्त सैंकरा सत्तर ऊपर बीस जू, मोक्ष गए मुनि तिन्हें नमूं नित शीशजू। कहै जवाहरलाल दायकर जोरिकैं, अविनाशी पद दे प्रभु कर्मन तारिकैं॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रमोहनकूटतें पद्मप्रभजिनेन्द्रादिमुनि निन्यानवे कोड़ि सतासीलाख तितालिसहजार सातसौ नब्बे सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

नं० २२ सुपार्श्वनाथ प्रभासकूट । सोरठा ।

कूट प्रभास महान, सुन्दर जगमन-मोहनो । श्रीसुपार्श्वभगवान, मुक्ति गये अघ नाशिकैं ॥ कोडाकोडी उनचास, कोडि चुरासी जानिये । लाख बहत्तर खास, सात सहस हैं सातसौ ॥ और कहे ब्यालीस, जहँतैं मुनि मुक्ती गए । तिनहिं नमैं नित शीश, दास जवाहर जोरकर ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रप्रभासकूटश्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्रादि मुनि उनचास कोड़ीकोड़ी चौरासीकोड़ि बहत्तरलाख सातहजार सातसौ बियालिस सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं नि० ।

नं० ६ चंद्रप्रभ ललितकूट ।

दोहा

पावन परम उतंग है, ललितकूट है नाम । चंद्रप्रभ शिवको गये, वंदों आठों जाम ॥ कोडाकोडी जानिये, चौरासी अभिमान । कोडि बहत्तर अरु कहे, अस्सीलाख प्रमान ॥ सहस चुरासी पंचशत, पचपन कहे मुनिंद । वसुकरमनको नाशकर, पायो सुखको कंद ॥ ललितकूटतैं शिवगये, वंदों शीश नवाय । जिनपद पूजौं भावसों, निजहित अर्घ चढ़ाय ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रललितकूटतै चंद्रप्रभजिनेन्द्रआदिमुनि चौरासीकोड़ाकोड़ी बहत्तरकोड़ि अस्सीलाख चौरासी पांचसौ पचपन सिद्धपदप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नं० ७ पुष्पदन्त सुप्रभकूट । पद्धरी छन्द ।

श्री सुप्रभकूट सु नाम जान, जहँ पुष्पदंतको मुक्तिथान । मुनि कोडाकोडी कहे जु भाख, नव ऊपर नवधर कहे लाख ॥ शतचारि कहे अरु सहससात, ऋषिअस्सी और कहे विख्यात । मुनि मोक्ष गए हनि कर्म जाल । वंदौं कर जोरि नमाय भाल ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र सुप्रभकूटतै पुष्पदन्तजिनेन्द्रादिमुनि एक कोड़ाकोड़ी नित्यानवेलाख सात हजार चारसौ अस्सी सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ ६ ॥

नं० १० शीतलनाथ विद्युतकूट । सुन्दरी छन्द ।

सुभग विद्युतकूट सु जानिये, परम अद्भुत तापर मानिये । गये शिवपुर शीतलनाथजी, मनहुँ तिन इह करधर माथजी ॥ मुनि जु कोडाकोडि अठारहू, मुनि जु कोडि वियालिस जानहू । कहे और जु लाखबत्तीस जू, सहसव्यालिस कहे यतीश जू ॥ अवर नौसौ पांच जु जानिये । गए मुनि शिवपुरको मानिये । करहिं जे पूजा मन लायकैं, धरहिं जन्म न भवमें आयकैं ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रविद्युतकूटतैं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ि व्यालीसकोड़ि बत्तीसलाख व्यालीसहजार नौसौ पांच सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्व०

नं० ६ श्रेयांसनाथ संकुलकूट । जोगीरासा ।

कूट जु संकुल परममनोहर, श्रीश्रेयांस जिनराई । कर्म-नाशकर शिवपुर पहुँचे, बंदौं मनवचकाइ ॥ छ्यानव कोडा-कोड़ी जानो, छ्यानवकोडि प्रमानो । लाख छ्यानवे सहस मुनीश्वर, साढ़े नव अब जानो ॥ ता ऊपर ब्यालीस कहे हैं श्रीमुनिके गुण गावैं । त्रिविधयोग करि जो कोइ पूजैं, सहजानंद तहं पावै ॥ सिद्ध नमों सुखदायक जगमें, आनंदमंगलदाई । जजों भावसों चरण जिनश्वर, हाथ जोड़ शिरनाई ॥ परम मनोहर थान सु पावन, देखत विघन पलाइ । तीन काल नित नमत जवाहर मेटो भवभटकाई ॥ जहंतें जे मुनि सिद्ध भये हैं, तिनको शरण गहाइ जापद को तुम प्राप्त भए हो, सो पद देहु मिलाई ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेसंकुलकूटतैं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्रादिमुनि छ्यानवेकोड़ाकोड़ी छ्यानवेकोडि छ्यानवेलाख नवहजार पांचसौ वियालिस सिद्धिप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं नि०

नं० २३ विमलनाथ सुवीरकुलकूट । कुसुमलता छंद ।

श्रीसुवीरकुलकूट परम सुन्दर सुखदाई, विमलनाथ भगवान जहां पंचमगति पाई । कोडि सु सत्तर सातलाख षट सहस जु गाई, सात शतक मुनि और वियालिस जानो भाई ॥

दोहा

अष्टकर्मको नष्टकर, मुनि अष्टमछिति पाय ।
तिन प्रति अर्घ चढ़ावहूँ, जनम मरण दुखजाय ॥
विमलदेव निरमल करण, सब जीवन सुखदाय ।
मातीसुत वंदत चरण, हाथ जोरि शिरनाय ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रस्वयभूकूटतैं विमलनाथजिनेन्द्रादि मुनि सत्तरकोडि सातलाख छहहजारसातसौ ब्यालीससिद्ध पदप्राप्तेभ्य सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ १२ ॥

नं० १३ अनतनाथ स्वयभूकूट । अडिल्ल ।

कूट स्वयंभू नाम परम सुन्दर कह्यो । प्रभु अनत जिननाथ जहां शिवपद लह्यो ॥ मुनि जु कोडाकोडि छ्यानवे जानिय । सत्तर कोडि जु सत्तरलाख प्रमानिये ॥ सत्तर सहस जु और मुनीश्वर गाइये । सात शतक ता ऊपर तिनको ध्याइये ॥ कहै जवाहरलाल सुनो मनलायकैं । गिरिवरको नित पूजो अति सुखपायकैं ॥

सोरठा

पूजत विघन पलाय, ऋद्धिसिद्धि आनंद करें ।
सुरशिवको सुखदाय, जो मनवच पूजा करें ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र स्वयभूकूटतैं अनतनाथजिनेन्द्रादि मुनि छ्यानवेकोड़ाकोड़ि सत्तरकोड़ि सत्तरलाख सत्तर हजार सातसौ सिद्धपदप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १३ ॥

नं० १८ धमनाथ सुदत्तकूट । चौपाई ।

कूट सुदत्त महाशुभ जान, श्रीजिनधर्मनाथको थान ।
मुनि कोड़ाकोड़ी उनईस, और कहे ऋषि कोड़ि उनीस ॥
लाख जु नव नवसहस सुजान, सात शतक पंचावन मान ।
मोक्ष गये वे कर्मनचूर, दिवसरु रयन नमों भरपूर ॥
महिमा जाकी अतुल अनूप । ध्यावत वर इंद्रादिक भूप ॥
शोभत महा अचलपदपाय । पूजों आनन्द मंगलगाय ॥

दोहा

परमपुनीत पवित्र अति, पूजत शत सुरराय ।
तिह थानकको देखकर, मानीसुत गुणगाय ॥
पावन परम सुहावनो, सब जीवन सुखदाय ।
सेवत सुरहरिनर सकल, मनवांछित पदपाय ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसुदत्तकूटतै धर्मनाथजिनेन्द्रादि मुनि उन्नीस कोड़ाकोड़ी उन्नीसकोड़ि नौलाख नौहजार सातसौ पंचानवे सिद्धपदप्राप्तेभ्यो अर्घं ॥ १४ ॥

नं० २० शान्तिनाथ-शांतिप्रभकूट । सुगीतिका छन्द ।

श्रीशांतिप्रभ है कूट सुन्दर, अति पवित्र सुजानिये ।
श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्र जहतैं, परम धाम प्रमानिये ॥
नवजु कोड़ाकोड़ि मुनिवर, लाख नव अब जानिये ।
नौ सहस नवसै मुनि निन्यानव, हृदयमें धर मानिये ॥

दोहा

कर्मनाश शिवको गए, तिन अर्घ प्रति चढ़ाय ।
त्रिविधयोग करि पूज हैं, मनवांछित फलपाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रशांतिप्रभकूटतैं शान्तनाथ-जिनेन्द्रादिमुनि नौकोड़ाकोड़ी नौलाख नौहजार नौसै निन्यानव सिद्धपदप्राप्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० २ कुन्थुनाथ ज्ञानधरकूट । गीतिका छन्द ।

ज्ञानधर शुभकूट सुन्दर, परम मनमोहन मही ।
जहंतैं श्रीप्रभुकुन्थुस्वामी, गये शिवपुरकी मही ।
कोड़ा सु कोड़ी छ्यानवे, मुनि कोड़िछ्यानव जानिये ।
अर लाखबत्तीस सहसछ्यानव, शतक सात प्रमानिये ॥

दोहा

और कहे ब्यालीस मनि, सुमिरों हिय मझार ।
तिनपद पूजा भावसों, करै जु भवदधिपार ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रज्ञानधरकूटतैं श्रीकुन्थुनाथ-जिनेन्द्रादिमुनि छ्यानवे कोड़ाकोड़ी छ्यानवे कोड़ि बत्तीसलाख छ्यानवे हजार सातसौ बियालीस सिद्धपदप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्व०।

नं० ४ अरनाथ नाटककूट । दोहा ।

कूट जु नाटक परमशुभ, शोभा अपरम्पार । जहंतै अरजिनराजजी, पहुंचे मुक्ति-मझार ॥ कोडिनिन्यानव जानि मुनि, लखनिन्यानव और । कहे सहस निन्यानवै बंदौं कर जुग जोर ॥ अष्ट कर्मको नष्टकरि, मुनि अष्टमक्षिति पाय । ते गुरु मो हिरदै बसो, भवदधि पार लगाय ॥

सोरठा

तारणतरण जिहाज, भवसमुद्रके बीचमें। पकरो मेरी बांह, डूबतसे राखो मुझे॥ अष्टकरम दुखदाय, ते तुमने चूरे सबै। केवलज्ञान उपाय, अविनाशी पद पाइयो॥ मोतीसुत गुणगाय, चरणन शीश नवायकै। मेटोभवभटकाय, मांगत अब बरदान यो॥ १७॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रनाटककूटतैं अरनाथजिनेन्द्रादिमुनि निन्यानवैकोड़ि निन्यानवै लाख निन्यानव हजार सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

नं० ५ मल्लिनाथ सम्बलकूट। सुन्दरी छन्द।

कूट सम्बल परमपवित्र जू, गये शिवपुर मल्लिजिनेश जू। मुनि जु छयानवकोड़ि प्रमानिये, पद जजत हिरदय मुख आनिये॥ मोतीदामछंद—प्रभो प्रभुनाम सदा सुखरूप, जजों मनमें धर भाव अनूप। टरें अघपातिक जाहिं सुदूर, सदा जिनको सुख आनंदपूर॥ डरें ज्यों नाग गरुड़को देखि, भजै गजजुत्थ जु सिंहहि पेख। तुमनाम प्रभू दुख हरण सदा, सुखपूर अनूपम होय मुदा॥ तुम देव सदा अशरण शरणं, भट मोहबलो प्रभुजी हरणं। तुम शरण गही हम आय अबैं, मुझ कर्मबली दिढ़ चूर सबै॥१८॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रसम्बलकूटतैं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्रादि छयानवैकोड़ि मुनिसिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धपदक्षेत्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा॥

नं० ६ मुनिसुव्रत निर्जरकूट । मदअवलिप्तकपोल छंद ।

मुनिसुव्रत जिननाथ सदा आनंदके दाई । सुन्दर निर्जरकूट जहांतें शिवपुर जाई ॥ निन्यानवकोड़ाकोड़ि कहे मुनि कोड़ि सत्याना । नवलख कोड़ि मुनिंद कहे नौसौ निन्याना ॥

सोरठा

कर्म नाशि ऋषिराज, पंचमगतिके सुख लहे ।
तारणतरणजिहाज, मो दुख दूर करो सकल ॥

भुजंगप्रयात

बली मोहकी फौज प्रभुजी भगाई, जग्यो ज्ञानपंचम महा सुक्खदाई । समोशरण धरणेंद्रने तब बनायो, तवैं देव सुरपति सबै शीश नायो ॥ जयो जय जिनेन्द्र सुशब्द उचारी, भये आज सुदर्शन सबै सु क्खकारी । गए सर्व पातक प्रभू दूरहीतैं, जबै दर्श कीने प्रभू दूरहीतैं ॥ मुनी नाथ श्रवनों जु तेरी बड़ाई, गही शरण हमने तुम्हारी सुहाई । बली कर्म नाशै जबै मुक्ति पाई, तिन्हें हाथ जोरें सदा शीश नाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रनिर्जरकूटतैं मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्रादिमुनि निन्यानवेकोड़ाकोड़ि सत्तानवे कोड़ि नौलाख नौसौनिन्यानवे सिद्धपदप्राप्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्व०

नं० ३ नमिनाथ मित्रधरकूट । जोगीरासा ।

कूट मित्रधर परम मनोहर, सुन्दर अति छविदाई । श्रीनमिनाथ जिनेश्वर जहंतें, अविनाशी पद पाई ॥

नौ सौ कोड़ाकोड़ि मुनीश्वर, एक अरब ऋषि जानो । लाख पैंतालिस सात सहस अरु, नौसौ ब्यालिस मानो ॥

दोहा

वसु कर्मनको नाश कर अविनाशी पद पाय ।,
पूजों चरणसरोजकों, मनवांछित फलदाय ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रमित्रधरकूटतैं नमिनाथजिनेन्द्रादिमुनि नौसौकोड़ाकोड़ि एकअरब पैंतीसलाख सातहजार नौसौ ब्यालिस सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्व०

नं० २६ पार्श्वनाथ । सुवर्णभद्रकूट ।

दोहा

सुवरणभद्र जु कूटपै, श्रीप्रभुपारसनाथ ।
जहतै शिवपुरको गये, नमों जोरिजुग हाथ ॥

त्रिभंगी छन्द

मुनि कोडिबियासी, लाख चुरासी, शिवपुरवासी सुखदाई । सहसहि पैंतालिस, सातसौ ब्यालिस, तजिके आलस गुणगाई ॥ भवदधितैं तारण, पतितउतारण, सब दुखहारण सुख कीजे । यह अरज हमारी, सुनि त्रिपुरारी, शिवपद भारी मो दीजै ॥

छन्द

यह दर्शनकूट अनंत लहो, फलषोडशकोटि उपासकहो।
जगमें यह तीर्थ कह्यो भारी, दर्शन करि पाप कटैं सारी ॥

मोतीदामछंद

टरैं गति वन्दन नव तिर्यंच, कबहुँ दुखको नहिं पावैं रंच।
यही शिवको जगमें है द्वार, अरे नर वन्दौ कहत 'जवार' ॥

दोहा

पारशप्रभुके नामतैं, विघन दूरि टरि जांय ॥
ऋद्धि सिद्धि निधि तासको, मिलिहैं निशिदिन आय ॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रसुवर्णकूटतैं श्रीपार्श्वनाथादि-मुनि वियासी करोड़ चुरासीलाखपैंतालिसहजारसातसौ वियालीस सिद्धिपदप्राप्तेभ्यः सिद्धिक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ २१ ॥

अडिल्ल

जे नर परम सुभावचतैं पूजा करैं। हरि हलि चक्री होंय राज्य षटखंड करैं ॥ फेरि होय धरणेंद्र इन्द्रपदवी धरैं।
नानाविधि सुख भोगि बहुरि शिवतिय वरैं ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

श्रीपोदनपुरबाहुबली पूजा।

(पं० दीपचंदजी परवार कृत)

अडिल्ल छंद

आदीश्वरके द्वितीय पुत्र बाहूबली,
कामदेव भये प्रथम श्रीबाहूबली।
नये न मस्तक युद्ध कियो बाहूबली,
चक्री अरु विधि जीत जजूं बाहूबली ॥

ॐ ह्रीं श्रीपोदनापुरोद्याने मोक्षपदप्राप्त श्रीबाहुबलिस्वामिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं । तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

अष्टक ।

पंचम उदधितनो जल लेकर, कंचन झारी मांहि भरूं ।
जन्म जरामृतु नाश करनको, बाहुबली पद धार करूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

केशर संग घिसूं मलयागिरि, चन्दन अधिक सुगंध रचूं ।
भव आताप विनाशन कारन, श्रीबाहूबलि पद चरचूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीमद्वाहुबलिस्वामिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

उज्ज्वल मुक्ताफल सम तंदुल, धोकर कंचन थाल भरूं ।
अक्षयपदके हेतु विनयसे, बाहुबली ढिग पुंज करूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीमद्वाहुबलिस्वामिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि० ॥३॥

कमल केतुकी चंप चमेली, सुमन सुगंधित लाय धरूं ।
मदनवान निरवारन कारन, बाहुबली को भेंट करूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीमद्वाहुबलिस्वामिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नाना विध पकवान मनोहर, खाजे ताजे षट् रसमय ।
क्षुधारोग विध्वंस करनको, जजूं बाहुबलि चरन उभय ॥

ॐ ह्रीं श्रीमद्वाहुबलिस्वामिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

सजो दीप घृत वा कपूरका, जासों दश दिक् तम भागे।
नाशन अंतर तमको आरति, करूं बाहूबलि प्रभु आगे॥

ॐ ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं

अगर तगर कपूर धूप दश-अंगी अगनीमें खेऊं।
दुष्ट अष्ट विधि नष्ट करनको, श्रीबाहुबलि पद सेऊं॥

ॐ ह्रीं श्रीमद्बाहूबलिस्वामिने अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥७॥

आम अनार जाम नरंगी, पुंगी खारक श्रीफलको।
मोक्ष महाफल प्राप्त हेतु मैं, अर्पन करूं बाहुबलिको॥

ॐ ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥८॥

ऐसे मनहर अष्ट द्रव्य सब, हेम थाल भरके लाऊं।
पद अनर्घके प्राप्ति हेतु मैं, श्रीबाहुबलीके गुण गाऊं॥

ॐ ह्रीं श्री मद्बाहुबलिस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ॥९॥

दोहा।

बाहुबली निज बाहु बल, हरे शत्रु बलवान।
जये नये नहिं सिद्ध भये पोदनपुर उद्यान॥१॥

जयमाला।

पद्धरी छंद

श्रीआदीश्वर के सुत सुजान, हैं प्रथम भरत चक्री महान।
दूजे बाहूबलि बल अपार, पुनि एकऊनशत हैं कुमार॥ २॥
सब ही हैं चर्म शरीर सोय, सब ही पहुंचे शिव कर्म खोय।
तिनमें बाहुबलि द्वितिय पुत्र, रतिपति तिनको सुनिये चरित्र॥३॥

जब ऋषभ ऋषीपद धरो सार, तब राज भाग कीने विचार।
अरु दिये यथाविधि नृपन दान, सब करें प्रजा पालन सुजान ॥४॥
तिनमे श्रीबाहूबलि कुमार, पायो पोदनपुर राज्यसार ।
अरु भरत अवधिपुर भये नरेश, सुख भोगे बहु विधि सम सुरेश ॥५॥
जब उदय चक्रपद भयो आय, षट् खंड साधने गये राय ।
अरु किये बहुत नृप निजाधीन, फिर लौटे राजधानी प्रवीन ॥६॥
पर चक्र करो नहिं पुर प्रवेश, तब निमती भाष्यो सुन नरेश ।
तुम भ्रात पोदनापुर नरेन्द्र, नहीं आज्ञा माने तुम नृपन्द्र ॥७॥
सुन भरत तबहि पाती लिखाय, पोदनपुर दूत दियो पठाय ।
आ नमों भेटयुत विनय धार, या हो जावो रणको तयार ॥८॥
वैश्वानर जिमि घृत परे आय, तिमि कोपो भुजबलि पत्र पाय ।
फिर फाड़ पत्र कहे सुनहु दूत, हम और भरत द्वय ऋषभ पूत ॥९॥
हम भोगे पितुको दियो राज, भरतहिं शिर नावें कौन काज ।
यदि भरत अधिक कर है गरूर, तो करिहो रणमें चूर चूर ॥१०॥
सुन भज्यो दूत गयो भरत पास, कह दीनों सब वृत्तान्त खास।
तब सजी सैन्य लख उभय ओर, मंत्री गण माचे हिय बहोर ॥११॥
ये उभय बली अरु चरम देह, लड व्यर्थ सैन्यको क्षय करेह ।
इमि सोच गये निज नृपन पास, विनती सुनिये प्रभु कहहिं दास१२
तुम उभय बली अरु स्वयंबुद्ध, नहिं सैन्य मरे कीजे सु युद्ध ।
तब नेत्र मल्ल जल तीन युद्ध, कीने द्वय भ्रात स्वयं प्रवुद्ध ॥१३॥
तीनोंमे हारे भरत राय, तब कोप चक्र दीनो चलाय ।
सो चक्र करे नहिं गोत्र घात, चक्री इमि सब विधि खाई मात॥१४
यह देख चरित भुजबलि कुमार, उपजौ हिय दृढ़ वैराग्य सार।
अरु त्याग राज तृणवत असार, कर क्षमा महाव्रत धरे सार ॥१५॥

तप एकासन कीनो महान, पर उपजो नहिं केवल सुज्ञान ।
इक शल्य लग रही चित्त लार, मैं खड़ो भरत पृथ्वी मझार ।।१६।।
तब शल्य दूर की भरतराय, नहिं वसुधापति कोई जग बनाय ।
यह आदि अंत बिन जग महान, बहुते भये ह्वै है मुझ समान।।१८।।
इमि सुनत शल्य हनि घाति चार, उपजायो केवलज्ञान सार ।
फिर पोदनपुरके वन मझार, पंचमगति लहि कर कर्म छार ।
तिन प्रतिमा अतिशययुत अपार, है श्रवणबेलगोला मझार ।
गोमटस्वामी तिहँ कहत सोय, नहिं छाया ताकी पड़त कोय ।।१६।।
अरु तुंग हाथ छव्वीस धार, निरधार खड़ी पर्वत मझार ।
यात्री आवें वंदन अपार, दर्शन कर पातक करें छार ।।२०।।
इत्यादि और अतिशय अपार, कथ 'दीपचन्द' नहिं लहे पार ।
ॐ ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

घत्ता

सब विधि सुखकारी, महिमा भारी, भुजबलि थारी अपरम्पार।
सुन विनय हमारी शिव सुखकारी, हे त्रिपुरारी अचल अपार ।।

इत्याशीर्वादः

——

कैलाश गिरि पूजा

काव्य छन्द

श्री कैलाश पहाड़ जगत् परधान कहा है,
आदिनाथ भगवान जहाँ शिव-वास लहा है ।
नागकुमार महाव्याल व्याल आदिक मुनिराई,
भये तिहि गिरिसों मोच थापि पूजों शिरनाई ।।

दोहा

श्री कैलाश पहाड़सों, आदिनाथ जिनदेव।
मुनी आदि जे शिव गये, थापि करौं पद सेव ॥

ॐ ह्रीं कैलाशपर्वत से श्रीआदिनाथ स्वामी और नागकुमारादि मुनि मोक्ष-पद-प्राप्त अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्। तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

पद्धरी छन्द।

नद गंग सु निरमल नीर लाय, करि प्रासुक भरु कुंभन भराय। जिन आदि मोक्ष कैलाश थान, मुन्यादि पाद जजु जोरि पान ॥

ॐ ह्रीं कैलाशपर्वत से श्रीआदिनाथ भगवान और नागकुमारादि मोक्षपदप्राप्तेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा

मलयागिर चंदन को घसाय, कुकुंमयुत भरु कुम्भन भराय ॥
जिन आदि मोक्ष कैलाश थान, मुन्यादि पाद जजु जोरि पान ॥

ॐ ह्रीं कैलाशपर्वत से श्रीआदिनाथ भगवान और नागकुमारादि मोक्षपदप्राप्तेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा

भिनवा कमोद वर शालि लाय, खंड हीन धोय थारा भराय।
जिन आदि मोक्ष कैलाश थान०

ॐ ह्रीं कैलाशपर्वतसे श्रीआदिनाथ भगवान और नागकुमारादि मोक्षपदप्राप्तेभ्यो अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा

सुम बेल चमेली जुही लेय, पाटिल वारिज थारा भरेय ॥ जिन०

ॐ ह्रीं श्रीकैलाशपवतसे श्रीआदिनाथभगवान और नागकुमारादि मोक्षपदप्राप्तेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोदक घेवर खाजे बनाय, गोझा सुहाल भरि थाल लाय ॥जि०

ॐ ह्रीं श्रीकैलाशपर्वतसे श्रीआदिनाथ भगवान और नागकुमारादि मोक्षपदप्राप्तेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत करपुर मणिके दीप जाय, जिनसे प्रकाश तम क्षीण हाय।
जिन आदि मोक्ष कैलाश थान०

ॐ ह्रीं श्री कैलाशपर्वत से श्री आदिनाथ भगवान और नागकुमारादि मोक्षपदप्राप्तेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा

वर धूप दशांगी अग्नि धार, जसु धूम घटा छावे अपार। जि०

ॐ ह्रीं श्री कैलाश पर्वत से श्री आदिनाथ भगवान और नागकुमारआदि मोक्षपदप्राप्तेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा

फल चोच मोच नरियार जेय, दाड़िम नारँग भरि थार लेय।
जिन आदि मोक्ष कैलाश थान०

ॐ ह्रीं श्री कैलाशपवत से श्रीआदिनाथ भगवान और नागकुमाादि मोक्षपदप्राप्तेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा

जलआदिक आठौद्रव्य लेय, भरि स्वर्णथारअर्घहिकरेय। जिन०

ॐ ह्रीं श्रीकैलाशपर्वत अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द त्रिभंगी।

कैलाशपहारा, जग उजियारा, जिन शिव गाया ध्यान धरो।
वसु द्रव्यन लाई, तिहि थल जाई, जिन गुण गाई पूज करो॥२

पद्धरी छन्द

अयोध्यापुरि बहु शोभ मान, है आदिनाथ जिन जन्मथान।
भये भोगभूमिको अंत जान, प्रभु कर्मभूमि रचना करान।।
असि मसि कृषि वाणिज वृत्तिजान,पशु पालन बतालायो जनान
करि राजजगतसों ह्वै उदास, दे सुतहिं कियो जा वन निवास।।
तप धरते मनपर्यय लहाय, रिपु घाति नाश केवल लहाय।
हरि आज्ञा सों धनदेव आय, तिन समवशरण रचना कराय।।
तामध्य गंधकुटी बनाय, मणि सिंहासन तापर दिपाय।
ता ऊपर वारिज हेम मान, अंतरीक्ष विराजैं देव जान।।५।।
प्रभु वाणि खिरैं वृष वृष्टि होय, सुनि २ समुझै सबजीव सोय।
निज वैभवयुत भरतेश आय, है पूजौ जिनपद शीश नाय।।
हरि आन जजत जिन चरण कीन, करिवे विहार हित विनय कीन
प्रभु विहरे आरज देश जान, कैलाश शैल दिय ध्यान आन।।
प्रभु कर्म अघाती घात कीन, पंचम गति स्वामी प्राप्त कीन।
हरि आन चितारचि दाहदीन, धरि धार शीश सुर गमन कीन
ह्याँ सों औरहु मुनि सुजान, हनि कर्म लयो है मोक्षथान।
गिरि को वेढ़े खातिक सुजान, अरु मान सरोवर झील मान।।
तासों यात्रा है कठिन जान, नहिं सुलभ किसू दिश सों बखान।
है आठ सहस्र पैड़ी प्रमान, तासों अष्टापद नाम जान।।१०।।
सुत कन्हईलाल भगवानदास, कर जोरि नमैं थल शिव निवास
मांगत जिनवर मुनिवरदयाल, भव भ्रमण काटियो शिव विशाल

घत्ता नंदा छन्द ।

आदीश्वर ध्यावै, भाव लगावै, पूज रचावैं, चावन सों।
सो होय निरोगी, बहु सुख भोगी, पुण्य उपावै भावन सों ।

ॐ ह्रीं श्री कैलाशपर्वत से श्री आदिनाथ भगवान और नाग-कुमारादि मोक्षप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

अडिल्ल छन्द ।

जे पूजैं कैलास आदिजिनराय को, पढ़ें पाठ बहुभांति सु भाव लगाय को । ते धन धान्यहि पुत्र पौत्र सम्पति लहैं, नर सुर सुखको भोगि अन्त शिवपुर रहैं ॥

इत्याशीर्वादः ।

श्री चंपापुरसिद्धक्षेत्र पूजा

दोहा

उत्सव किय पनवार जहं, सुरगनयुत हरि आय ।
जजों सुथल वसुपूज्यसुत, चंपापुर हर्षाय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचंपापुरसिद्धक्षेत्र ! अत्रावतरावतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं चम्पापुरसिद्धक्षेत्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं चंपापुरसिद्धक्षेत्र ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट

अष्टक । चाल नन्दीश्वरपूजनकी ।

सम अमिय विगतत्रस वारि, लें हिमकुंभ भरा ।
लख सुखद त्रिगदहरतार, दे त्रय धार धरा ॥

श्रीवासुपूज्य जिनराय, निर्वृतिथान प्रिया।
चंपापुर थल सुखदाय, पूजौं हर्ष हिया॥

ॐ ह्रीं श्रीचम्पापुरसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

कश्मीरी केशर सार, अति ही पवित खरी।
शीतल चन्दनसंग सार, लै भव ताप हरी॥ श्रीवासु०॥

ॐ ह्रीं श्रीचम्पापुरसिद्धक्षेत्राय चन्दनं निवपामीति स्वाहा

मणिद्युतिसम खंडविहीन, तंदुल लें नीके।
सौरभयुत नव वर बीन, शालि महा नीके॥ श्रीवासु०॥

ॐ ह्रीं श्रीचंपापुरसिद्धक्षेत्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा

अलि लुभन सभन दृग घ्राण, सुमन जु सरद्र मके।
लै वाहिम अर्जु नवान, सुमन दमन झुमके॥ श्रीवासु०

ॐ ह्रीं श्रीचंपापुरसिद्धक्षेत्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा

रस पुरित तुरित पकवान, पक्व यथोक्त घृती।
क्षुधगदमदप्रदमन जान, लै विध युक्तकृती॥श्रीवासु०॥

ॐ ह्रीं श्रीचंपापुरसिद्धक्षेत्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा

तमअज्ञप्रनाशक सूर, शिवमग परकाशी।
लै रत्नद्वीप द्युतिपूर, अनुपम सुखराशी॥ श्रीवासु०॥

ॐ ह्रीं श्रीचंपापुरसिद्धक्षेत्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा

वर परिमल द्रव्य अनूप, सोध पवित्र करी।
तस चूरण कर कर धूप, ले विधिकुंज हरी॥श्रीवासु०॥

ॐ ह्रीं श्रीचम्पापुरसिद्धक्षेत्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा

फल पक्व मधुररसवान, प्रासुक बहुविधिके ।
लखि सुखद रसनदृग घ्रान, ले प्रद पदसिधके ।।श्रीवासु०

ॐ ह्रीं श्रीचम्पापुरसिद्धक्षेत्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा

जल फल वसु द्रव्य मिलाय, लै भर हिमथारी ।
वसुअंग धरापर ल्याय, प्रमुदित चितधारी ।।श्रीवासु०।।

ॐ ह्रीं श्रीचम्पापुरसिद्धक्षेत्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

जयमाला ।

दोहा

भये द्वादशम तीर्थपति, चंपापुर निर्वान ।
तिन गुणकी जयमाल कछु, कहों श्रवण सुखदान ।।

पद्धरीछन्द ।

जय जय श्री चंपापुर सु धाम, जहं राजत नृप वसुपूज नाम । जय पौन पल्यसे धर्महीन, भवभ्रमन दुःखमय लख प्रवीन ।।१।। उर करुणाधर सो तम विडार, उपजे किरणावलिधर अपार । श्री वासुपूज्य तिनके जु बाल, द्वादशम तीर्थकर्त्ता विशाल ।।२।। भवरोग देहतैं विरत होय, वह बालमाहि ही नाथ सोय । सिद्धन नमि महाव्रत धार लीन, तप द्वादशविधि उग्रोग्र कीन ।। ३ ।। तहँ मोक्ष सप्तत्रय आयु येह, दश प्रकृति पूर्व ही क्षय करेह । श्रेणी जु क्षपक आरूढ़ होय, गुण नवमभाग नवमाहिं सोय ।।४।। सोलहवसु इक इक

षट इकेय, इक इक इक इम इन कुल संहय । पुन दशम थान इक लोभ टार, द्वादशमथान सोलह विडार ॥५॥ ह्वै अनंत चतुष्टय युक्त स्वाम, पायो सब सुखद सयाग ठाम । तहं काल त्रिगोचर सर्व ज्ञेय, युगपतहि समय इकमहि लखेय ॥६॥ कछु काल दुविध वृष अमिय वृष्टि, कर पोषे भविभुविधान्यसृष्टि । इक मास आयु अवशेष जान, जिन योगनको सु प्रवृत्ति हान ॥ ७ ॥ ताही थल तृति शितध्यान ध्याय, चतुदशम थान निवसे जिनाल । तहँ दुचरम समय-मझार ईश, प्रकृति जु बहत्तर तिनहि पीश ॥८॥ तेरह नर चरम समयमझार, करके श्रीजगतेश्वर प्रहार । अष्टमि अवनी इक समयमद्ध, निवसे पाकर निज अचल ऋद्ध ॥९॥ युत गुण वसु प्रमुख अमित गणेश, ह्वै रहे सदा ही इमहि वेश । तबहीतैं सो थानक पवित्र, त्रैलोक्यपूज्य गायो विचित्र ॥१०॥ मैं तसु रज निज मस्तक लगाय, बन्दौं पुन पुन भुवि शीश नाय । ताही पद बांछा उरमझार, धर अन्य चाहबुद्धी विडार ॥ ११ ॥

दोहा

श्रीचंपापुर जो पुरुष, पूजै मन वच काय ।
वर्णि "दौल" सो पाय ही, सुखसम्पत्ति अधिकाय ॥

इत्याशीर्वादः ।

श्री गिरनारक्षेत्र पूजा ।

दोहा।

वंदों नेमि जिनेश पद, नेमि-धर्म-दातार ।
नेमधुरंधर परम गुरु, भविजन सुख कर्तार ॥१॥
जिनवाणीको प्रणमिकर, गुरु गणधर उरधार ।
सिद्धक्षेत्र पूजा रचो, सब जीवन हितकार ॥२॥
उर्जयंत गिरिनाम तस, कह्यो जगत विख्यात ।
गिरिनारी तासों कहत, देखत मन हर्षात ॥३॥

द्रुतविलंबित तथा सुन्दरी छंद ।

गिरि सु उन्नत सुभगाकार है, पञ्चकूट उत्तङ्ग सुधार है ।
वन मनोहर शिला सुहावनी, लखत सुन्दर मनको भावनी ॥
अवर कूट अनेक बने तहां, सिद्ध थान सु अति सुन्दर जहां ।
देखि भविजन मन हर्षावते, सकल जन बंदनको आवते ॥

त्रिभंगी छंद ।

तहँ नेमकुमारा व्रत तप धारा, कर्म विदारा शिवपाई ।
मुनि कोड़िबहत्तर सातशतक धर, ता गिरिऊपर सुखदाई ॥
है शिवपुरवासी गुणके राशी, विधिथितिनाशी ऋद्धिधरा ।
तिनके गुण गाऊं पूज रचाऊं, मन हर्षाऊं सिद्धिकरा ॥

दोहा।

ऐसे क्षेत्र महान तिहिं, पूजों मन वच काय ।
स्थापन त्रय बार कर, तिष्ठ तिष्ठ इत आय ॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारसिद्धक्षेत्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीगिरनारसिद्धक्षेत्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीगिरनारसिद्धक्षेत्र ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट्

अष्टक कवित्त ।

लेकर नीर सुक्षीरसमान महा सुखदान सुप्रासुक भाई,
दे त्रय धार जजों चरणा हरना मम जन्म, जरा दुखदाई ।
नेमिपती तज राजमती भयो बालयती तहँतैं शिवपाई ।
कोड़ि बहत्तरि सातसौ सिद्ध मुनीश भये सु जजों हर्षाई ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारिसिद्धक्षेत्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदनगारि मिलाय सुगंध हु, ल्याय कटोरीमें धरना ।
मोहमहातममटनकाज सु चर्चतु हों तुम्हरे चरना ॥ नेमि०

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारिसिद्धक्षेत्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षत उज्वल ल्याय धरो तहँ, पुंज करो मनको हर्षाई ।
देहु अखयपद प्रभु करुणाकर, फेर न या भववासकराई ॥नेमि०

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारिसिद्धक्षेत्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

फूल गुलाब चमेली बेल कदंब सु चंपकबीन सुल्याई ।
प्रासुकपुष्प लवंग चढ़ाय सु गाय प्रभू गुणकाम नसाई ॥नेमि०

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारिसिद्धक्षेत्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज नव्य करों भरथाल सुकंचन भाजनमें धर भाई ।
मिष्ट मनोहर क्षेपत हों यह रोग क्षुधा हरियो जिनराई ॥नेमि०

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारिसिद्धक्षेत्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप दशांग सुगंधमई कर खेवहु अग्निमंझार सुहाई ।
शीघ्रहि अर्ज सुनो जिनजी मम कर्ममहावन देउ जराई ।।ने०

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारिसिद्धक्षेत्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ले फल सार सुगंधमई रसनाहृद नेत्रनको सुखदाई ।
क्षेपत हों तुम्हरे चरणप्रभु देहु हमें शिवकी ठकुराई ।।नेमि०

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारिसिद्धक्षेत्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ले वसु द्रव्य सु अर्घ करों धर थाल सुमध्य महा हरषाई ।
पूजत हों तुमरे चरणा हरिये वसुकर्मबली दुखदाई ।।

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारिसिद्धक्षेत्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा ।

पूजत हों वसुद्रव्य ले, सिद्धक्षेत्र सुखदाय ।
निजहितहेतु सुहावनो, पूरण अर्घ चढ़ाय ।।

ॐ ह्रीं श्रीगिरनारिसिद्धक्षेत्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कार्तिकसुदिकी छठि जानो, गर्भागम तादिन मानो ।
उत इंद्र जजैं उस थानी, इत पूजत हिम हरषानी ।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लाषष्ठ्यां गर्भमंगलप्राप्ताय नेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रावणसुदि छठि सुखकारी, तब जन्ममहोत्सवधारी
सुरराज सुमेर न्हवाई, हम पूजत इत सुखदाई ।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषठ्यां जन्ममंगलमंडिताय नेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सित सावनकी छटि प्यारी, तादिन प्रभु दीक्षा धारी।
तप घोर वीर तहँ करना, हम पूजत तिनके चरणा ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठीदिने दीक्षामंगलप्राप्ताय नेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

एकम सुदि आश्विन मासा, तब केवलज्ञान प्रकाशा।
हरि समवशरण तब कीना, हम पूजत इत सुख लीना ॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदि केवलज्ञानप्राप्ताय नेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सित अष्टमि मास अषाढ़ा, तब याग प्रभूने छांड़ा।
जिन लई मोक्ष ठकुराई, इत पूजत चरणा भाई ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठ्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय नेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल।

कोड़िबहत्तरि सप्त सैंकड़ा जानिये, मुनिवर मुक्ति गये तहँतें सुप्रमाणिये। पूजों तिनके चरण सु मनवचकाय कैं। वसुविध द्रव्य मिलाय सुगाय बजायकैं ॥ पूर्णार्घं ॥

जयमाला।

दोहा।

सिद्धक्षेत्र गिरनारशुभ, सब जीवन सुखदाय।
कहों तासु जयमालिका सुनतहि पाप नशाय ॥

पद्धरीछंद।

जय सिद्धक्षेत्र तीरथ महान, गिरिनारि सुगिरि उन्नत बखान।
तहँ जूनागढ़ है नगर सार, सौराष्ट्रदेशके मधिविथार॥
तिस जूनागढ़से चले सोइ, समभूमि कोस वर तीन होइ।
दरवाजेसे चल कोस आध, इक नदी बहत हैं जल अगाध॥
पर्वत उत्तरदक्षिण सु दोय, मधि बहत नदी उज्वल सु तोय।
ता नदीमध्य कइकुंड जान, दोनों तट मंदिर बने मान॥
तहँ वैरागी वैष्णव रहाय, भिक्षाकारण तीरथ कराय।
इक कोस तहां यह मच्यो ख्याल, आगैं इक वरनदि बहत नाल॥
तहँ श्रावकजन करते स्नान, धो द्रव्य चलत आगैं सुजान।
फिर मृगीकुंड इक नाम जान, तहँ वैरागिनके बने थान॥
वैष्णव तीरथ जहँ रच्यो सोइ, वैष्णव पूजत आनंद होइ।
आगे चल डेढ़ सु कोस जाव, फिर छोट पर्वतको चढ़ाव॥
तहँ तीन कुंड सोहैं महान, श्रीजिनके युगमंदिर बखान।
मंदिर दिगंबरी दोय जान, श्वेतांबरके बहुते प्रमान॥
जहँ बनी धर्मशाला सु जोय, जलकुंड तहां निर्मल सु तोय।
तहँ श्वेतांबरगण दिशा जांय, ता कुंडमाहिं नितही नहांय॥
फिर आगैं पर्वतपर चढ़ाव, चढ़ि प्रथम कूटको चले जाव।
तहँ दर्शन कर आगे सुजाय, तहं दुतिय टोंकका दर्श पाय॥
तहं नेमिनाथके चरण जान, फिर है उतार भारी महान।
तहं चढ़कर पंचम टोंक जाय, अति कठिन चढ़ाव तहां लखाय

श्रीनेमिनाथका मुक्तिथान, देखत नयनों अति हर्षमान ।
इक बिंब चरनयुग तहां जान, भवि करत बंदना हर्ष ठान ॥
कोउ करते जय जय भक्ति लाय, कोऊ थुति पढते तहं सुनाय
तुम त्रिभुवनपति त्रैलोक्यपाल, मम दुःख दूर कीजे दयाल ॥
तुम राजऋद्धि भुगती न कोय, यह अथिररूप संसार जोय ।
तज मातपिता घर कुटुम्ब द्वार, तज राजमतीसी सतीनार ॥
द्वादशभावन भाई निदान, पशुबंदि छोड़ दे अभयदान ।
सहसावनमें दीक्षा सुधार, तप करके कर्म किये सुछार ॥
ताही वन केवल ऋद्धि पाय, इंद्रादिक पूजे चरण आय ।
तहं समवशरण रचियो विशाल, मणिपन्थ वर्णकर अति रसाल॥
तहं वेदी कोट सभा अनूप, दरवाजे भूमि बनी सुरूप । वसु
प्रातिहार्य छत्रादि सार, वर द्वादशि सभा बनी अपार ॥
करके विहार देशों मझार, भवि जीव करे भवसिंधु पार । पुन
टोंक पंचमीको सुजाय, शिवनाथ लह्यो आनंद पाय ॥ सो
पूजनीक यह थान जान, बंदत जन तिनके पाप हान । तहतें
सु बहत्तर कोड़ि और, मुनि सप्तशतक सब कहे जोर ॥ उस
पर्वतसों सब मोक्ष पाय, सब भूमि सु पूजन योग्य थाय ।
तहं देश देशके भव्य आय, वंदन कर बहु आनंद पाय ॥
पूजन कर कीने पाप नाश, बहु पुण्यबंध कीनो प्रकाश । यह
ऐसो क्षेत्र महान जान, हम करी बंदना हर्ष ठान ॥ उनईस
शतक उनतीस जान, संवत अष्टमि सित फाग मान ।

सब संघसहित बंदन कराय, पूजा कीनी आनंद पाय ॥ अब दुःख दूर कीजै दयाल, कहै 'चंद' कृपा कीजै कृपाल । मैं अल्पबुद्धि जयमाल गाय, भवि जीव शुद्ध लीज्यो बनाय ॥

घत्ता ।

तुम दयाविशाला सब छितिपाला, तुम गुणमाला कंठ धरी
ते भव्य विशाला तज जगजाला, नवता माला मुक्ति वरी ॥
ॐ ह्रीं श्रीगिरिनारसिद्धक्षेत्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्र पूजा ।

जिहिं पावापुर छिति अघति, हत सन्मति जगदीश ।
भये सिद्ध शुभथान सो, जजों नाय निज शीश ॥
ॐ ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्र ! अत्र मम सन्निहितं भव भव । वषट् ।

अष्टक ।

गीताछन्द ।

शुचि सलिल शीतौ कलिलरीतौ श्रमन चीतो लै जिसो,
भर कनकझारी त्रिगदहारी दै त्रिधारी जित तृषा ।
वर पद्मवन भर पद्मसरवर बहिर पावाग्राम ही,
शिवधाम सन्मति स्वामि पायो, जजों सो सुखदा मही ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्राय वीरनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भ्रमन भ्रमत अशर्म तपकी, तपन कर तपताइयो।
तसु बलयकंदन मलय-चंदन, उदक संग घिस ल्याइयो ॥ वर०

ॐ ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तंदुल नवीने अखंड लीने, ले महीने ऊजरे।
मणिकुन्द इंदु तुषार द्युति-जित, कनरकाबीमें धरे ॥ वर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीपावापुरक्षेत्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मकरंदलोभन सुमन शोभन सुरभि चोभन लेय जी।
मद समर हरवर अमर तरुके, प्रान-दृग हरखेय जी ॥ वर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य पावन छुध मिटावन सेव्य भावन युत किया।
रस मिष्ट पूरित इष्ट सूरति लेयकर प्रभु हित हिया ॥वर०॥

ॐ ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तम अज्ञनाशक स्वपरभासक ज्ञेय परकाशक सही।
हिमपात्रमें धर मोल्यबिन वर द्योतधर मणि दीपही ॥वर०॥

ॐ ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आमोदकारी वस्तुसारी विध दुचारी-जारनी।
तसु तूप कर कर धूप ले दश दिशा-सुरभि-विस्तारनी ॥वर०॥

ॐ ह्रीं श्रीपावापुरक्षेत्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कल भक्ष पक्ष सुचक्ष्य सोहन, सुक्ष जनमन मोहने।
वर सुरस पूरित त्वरित मधुरत लेयकर अति सोहने ॥ वर० ॥
ॐ ह्रीं श्रीपावापुरक्षेत्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।
जल गंध आदि मिलाय वसुविध थारस्वर्ण भरायकें।
मन प्रमुद भाव उपाय कर ले आय अर्घ बनायके ॥ वर० ॥
ॐ ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

दोहा।

चरम तीर्थकरतार श्री वर्द्धमान जगपाल।
कलमलदलनिर्धाविकल ह्वै, गाऊं तिन जयमाल ॥

पद्धरी छन्द।

जय जय सुवीर जन मुक्तिथान, पावापुरवनसर शोभ-वान। जे सित अषाढ़ छट स्वर्गधाम, तज पुष्पोत्तर सुविमान ठाम ॥१॥ कुंडलपुर सिद्धारथ नृपेश, आये त्रिशला जननी उरेश। सित चैत्र त्रयोदशि युत त्रिज्ञान, जनमे तम अज्ञ-निवार भान ॥ २ ॥ पूर्वान्ह धवल चउदिश दिनेश, किय न्हवन कनकगिरि-शिर सुरेश। चय वर्ष तीस पद कुमरकाल, सुख दिव्य भोग भुगते विशाल ॥ ३ ॥ मारगसिर अलि दशमी पवित्र, चढ चंद्रप्रभा शिविका विचित्र। चलि पुरसों सिद्धन शीशनाय, धारयो संजम वर शर्मदाय ॥४॥ गतवर्ष दुदश कर तप-विधान, दिन शित वैशाख दशैं महान।

रिजुकूला सरिता तट स्व सोध, उपजायो जिनवर चरम बोध ॥५॥ तब ही हरि आज्ञा शिर चढाय, रचि समवसरण वर धनदराय। चउसंघ प्रभृति गौतम दिनेश, युत तास वरष विहरे जिनेश ।६॥ भविजीवदेशना विविध देत, आये वर पावानगर खेत। कातिक अलि अंतिम दिवस ईश, कर योग निरोध अघातिपीस ॥७॥ ह्वै पूर्ण अमल इक समयमाहिं, पंचम गति पाई श्रीजिनाह। तब सुरपति जिनरवि अस्तमान आये तुरंत चढि निज विमान ॥८॥ करि वपु अरचा थुति विविध भाँत, लै विविध द्रव्य परिमल विख्यात। तब हौ अगनींद्र नवाय शीश, संस्कार देह की त्रिजगदीश ॥९॥ कर भस्म वंदना निज महीय, निवसे प्रभु गुन चितवन स्वकीय पुनि नरमुनि गनपति आय आय, बंदी सो रज शिर नायनाय ॥१०॥ तब हीसों सो दिन पूज्य मान, पूजत जिनगृह जन हर्ष मान। मैं पुन पुन तिस भुवि शीशधार, बंदौं तिन गुण धर उर मझार ॥११॥ तिनही का अब भी तीर्थ एह, वरतत दायक अति शर्म गेह। अरु दुषमकाल अवसान ताहि, वर्तेगो भवथितिहर सदाहि ॥१२॥

कुसुमलता छन्द।

श्रीसन्मति जिन अंघ्रिपद्म युगजजैं भव्य जो मन वचकाय,
ताके जन्म जन्म संचित अघ जावहिं इक छिन माहिं पलाय।

धनधान्यादिक शर्म इंद्रपद लहे सो शर्म अतीन्द्री थाय,
अजर अमर अविनाशी शिवथल वर्णो दौल रहे शिर नाय ॥
ॐ ह्रीं श्रीपावापुरक्षेत्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखंडगिरिक्षेत्र पूजा

(मुनीम मुन्नालालजी कृत)

अंगबंग के पास है देश कलिंग विख्यात।
तामें खंडगिरी बसत दर्शन भये सुखात ॥ १ ॥

जसरथ राजा के सुत अतिगुणवान जी।
और मुनीश्वर पंच सैकड़ा जान जी ॥
अष्टकरम कर नष्ट मोक्षगामी भये।
तिनके पूजहुँ चरण सकल मम मल छये ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीकलिंगदेशमध्य खंडगिरीजी सिद्धक्षेत्र से सिद्धपद प्राप्त दशरथ राजा के सुत तथा पंचशतक मुनि अत्र अवतरत अवतरत। अत्र तिष्ठत २ ठः ठः। अत्र मम सन्निहिता भवत, भवत वषट्।

अष्टक

अति उत्तम शुचि जल ल्याय, कंचन कलशभरा।
करुं धार सुमनवचकाय, नाशत जन्म जरा ॥
श्री खंडगिरी के शीश जसरथ तनय कहे।
मुनि पञ्चशतक शिवलीन देश कलिंग दहे ॥

ॐ ह्रीं श्री खंडगिरि क्षेत्र से दशरथराजा के सुत तथा पांचशतक मुनि सिद्धपदप्राप्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० ।

केशर मलयागिरि सार, घिसके सुगंध किया ।
संसार ताप निरवार, तुमपद वसत हिया ॥ २ ॥ श्री० ॥

ॐ ह्रीं श्रीखंडगिरिसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं नि० ।

मुक्ताफल की उनमान, अक्षत शुद्ध लिया ।
मम सर्व दोष निरवार, निजगुण मोय दिया ॥ ३ ॥ श्री० ॥

ॐ ह्रीं श्री खंडगिरिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि० ।

ले सुमन कल्पतरु थार, चुन २ ल्याय धरूं ।
तुम पदढिग धरतहि वाण काम समूल हरूं ॥ ४ ॥ श्री० ॥

ॐ ह्रीं श्रीखंडगिरिसिद्धक्षेत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०

लाडू घेवर शुचि ल्याय, प्रभुपद पूजनको ।
धारूं चरनन ढिंग आय, मम क्षुध नाशनको ॥५॥ श्री० ॥

ॐ ह्रीं श्रीखंडगिरिसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं नि०

ले मणिमय दीपक धार दोय कर जोड़ धरो ।
मम मोहांधेर निवार, ज्ञान प्रकाश करो ॥ ६ ॥ श्री० ॥

ॐ ह्रीं श्रीखंडगिरिसिद्धक्षेत्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ।

ले दशविधि गंध कुटाय, अग्निमझार धरूं ।
मम अष्ट करम जल जांय, यातें पांय परूं ॥ ७ ॥ श्री० ॥

ॐ ह्रीं श्रीखंडगिरिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि० ।

श्रीफल पिस्ता सुबदाम, आम नरंगि धरूं ।
ले प्रासुक हेमके थार, भवतर मोक्ष वरूं ॥ ८ ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्रीखंडगिरिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

जल फल वसु द्रव्य पुनीत, लेकर अर्घ करूं ।
नाचूं गाऊं इहभांत, भवतर मोक्ष वरूं ॥ ९ ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्रीखंडगिरिसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

जयमाला ।

दोहा ।

देश कलिंगके मध्य है, खंडगिरी सुखधाम ।
उदयागिरि तसु पास है, गाऊं जय जय धाम ॥

पद्धड़ी छंद ।

श्री सिद्ध खंडगिरिक्षेत्र पात, अतिसरल चढाइ ताकी सुजात ।
अतिसघनवृक्ष फलरहे आय, तिनकी सुगंध दशोंदश जुछाय ॥
ताके सुमध्यमें गुफा आय, तब मुनि सुनाम ताको कहाय ।
तामें प्रतिमा दशयोग धार, पद्मासन हैं ढारि चंवरढार ॥
ता दक्षिण हैं सु गुफा महान, तामें चौबीसो भगवान जान ।
प्रतिप्रतिमा इन्द्र खडे दुओर, करचंवर धरें प्रभुभक्ति जोर ॥
आजूबाजू खडि देवि द्वार, पद्मावति चक्रेश्वरी सार ।
करि द्वादश भुजि हथियार धार, मानहुं निदक नहिं आवें द्वार ॥

ताके दक्षिण चलि गुफा आय, सतबखरा है ताको कहाय।
तामें चौवीसी बनी सार, अरु त्रय प्रतिमा सब योग धार ॥
सबमें हरि चमर सुधरहिं हाथ, नित आय भव्य नावहिं सुमाथ।
ताके ऊपर मंदिर विशाल, देखत भविजन होते निहाल ॥६॥
ता दक्षिण टूटी गुफा आय, तिनमें ग्यारह प्रतिमा सुहाय।
पुनि पर्वतके ऊपर सु जाय, मंदिर दीरघ बन रहा भाय ॥७॥
तामें प्रतिमा मुनिराज मान, खडगासन योग धरें महान्।
ले अष्ट द्रव्य तसु पुजकीन, मन वचतन करि भव धोक दीन ॥
मानों जन्म सफल अपनो सुभाय, दर्शन अनूप देखा है आय।
अब अष्टकरम होंगे चूर-चूर, जातें सुख पाहें पूर पूर ॥८॥
पूरब उत्तर द्वय जिन सुधाम, प्रतिमा खडगासन अति तमाम।
पुनि चबूतरामें प्रतिमा बनीय, चारह भुजी है दर्शनीय ॥
पुनि एक गुफामें बिम्बसार, ताको पूजनकर फिर उतार।
पुनि और गुफा खाली अनेक, ते हैं मुनिजनके ध्यान हेत ॥
पुनि चलकर उदयगिरी सुजाय, भारी भारी गुफा हैं लखाय।
एक गुफामें बिम्ब विराजमान, पद्मासन धर प्रभु करत ध्यान ॥
ताको पूजन मनवचनकाय, सो भवभवके दुख जावें पलाय।
तिनमें एक हाथीगुफ महान्, तामें इक लेख विशाल धाम ॥
पुनि और गुफामें लेख जान, पढ़ते जिनमत मानत प्रधान।
नृ जसरथ नृपके पुत्र आय, संगमुनि पंचशतक ध्याय ॥

तप बारह विधिका यह करंत, बाईस परीषह बह सहंत ।
पुनि समिति पंचयुत चलें सार, दोषा छयालिस टल कर आहार
इस विध तप दुद्धर करत जाय, सो उपजे केवलज्ञान साय ।
सब इन्द्र आय अति भक्तिधार, पूजा कीनो आनंद धार ॥
पुनि धर्मोपदेश दे भव्यपार, नाना देशनमें कर विहार ।
पुनि आय याही शिखर थान, सो ध्यानयोग्य आघाति हान ।
भये सिद्ध अनंत गुणन ईश, तिनके युगपदपर धरत शीष ।
तिन सिद्धनको पुनि २ प्रणाम, सो सुक्ख लेय अविचल सुधाम ॥
वंदत भवदुख जावे पलाय, सेवक अनुक्रम शिवपद लहाय ।
ता क्षेत्रको पूजत मैं त्रिकाल, कर जोड़ नमत हैं मुन्नालाल ॥

घत्ता ।

श्री खंडगिरि क्षेत्रं, अतिसुख दतं तुरतहि भवदधि पार करे ।
जो पूजे ध्यावे करम नशावे, वांछित पावे मुक्ति वरे ॥
ॐ ह्रीं श्रीखंडागिरिसिद्धक्षेत्राय जयमालार्घं नि० ।

दोहा ।

श्री खंडगिरी उदयागिरी, जो पूजे त्रैकाल ।
पुत्र पौत्र संपति लहे, पावे शिवसुख हाल ॥
इत्याशीर्वादः ।

श्रीपावागिरि सिद्धक्षेत्र पूजा ।

पावागिरिवर सिहरे, सुवण्णभद्दाइ मुणिवरा चउरो ।
चेलणाणाई तडग्गे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१३॥

[निर्वाण-काण्ड ।]

स्थापना

चाल—जोगीरासा ।

वरनगरी के निकट सुसुन्दर पावागिरिवर जानो,
ताके समीप सु नदी चेलना, तट ताका परमानो ।
सुवरणभद्र आदि मुनि चारों तहँ त मोक्ष विराजे,
हम थापन कर पूजें तिनको पाप ताप सब भाजे ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीसुवर्णभद्रादिचतुर्णाम् मुनीनां निर्वाणास्पदं चेलना-नदीतटे श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्र—अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं । तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितं भव २ वषट् सन्निधिकरणं ।

हरिगीतिका छन्द ।

शुद्ध प्राशुक नीर निरमल लायकर झारी भरौं,
तव चरणतल त्रय धार देकर जन्ममृत्यु जरा हरौं ।
श्री पावगिरिवर चेलन.तट सिद्धक्षेत्र महान है,
गये मोक्ष चारों सुवर्णभद्रादि मुनोंको प्रणाम है ॥१॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिचतुर्णाम् मुनीनां निर्वाणास्पदे चेलना-नदीतटे श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं नि० ।

केशर कपूर मिलाय चन्दन घिस कटोरी लाय हूँ,
इस भवताप नशायवे को नाथ चरण चढ़ाय हूँ।
श्रीपावागिरिवर चेलना तट सिद्धक्षेत्र महान है,
गये मोक्ष चारों सुवर्णभद्रादि मुनी को प्रणाम है ॥२॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिचतुर्णाम् मुनीनां निर्वाणास्पदे चेलना-नदीतटे श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं नि०

उज्वल अखण्डित लेय अक्षत धोय थाली में भरां,
देवो अक्षयपद हमें प्रभु जी चरण में अक्षत धरौं।
श्री पावागिरिवर चेलना तट सिद्धक्षेत्र महान है,
गये मोक्ष चारों सुवर्णभद्रादि मुनीको प्रणाम है ॥३॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिचतुर्णाम् मुनीनां निर्वाणास्पदे चेलनानदी-तटे श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ।

मकरन्द लोभन विविध पुष्प सुलाय थाली में धरौं,
चरण में करके समर्पित कामवाण सबै हरौं।
श्रीपावागिरिवर चेलना तट सिद्धक्षेत्र महान है,
गये मोक्ष चारों सुवर्णभद्रादि मुनी को प्रणाम है ॥४॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिचतुर्णाम् मुनीनां निर्वाणास्पदे चेलनानदी-तटे श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान नाना भांतिके लेकर कनक थाली भरौं,
क्षुध रोग नाशन कारणे नैवेद्य ले आगे धरौं।

श्रीपावागिरिवर चेलना तट सिद्धक्षेत्र महान है,
गये मोक्ष चारों सवर्णभद्रादि मुनी को प्रणाम है ॥५॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिचतुर्णाम् मुनीनां निर्वाणास्पदे चेलनानदीतटे श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं नि०।

अज्ञानध्वान्त महान् अंधकार कार राख्यो सबै,
निज-पद सुभेद पिछान कारण दीप ले आयो अबै।
श्रीपावागिरिवर चेलना तट सिद्धक्षेत्र महान है,
गये मोक्ष चारों सुव भद्रादि मुनी को प्रणाम है ॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिचतुर्णाम् मुनीनां निर्वाणास्पदे चेलनानदीतटे श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वसुकर्म दुष्ट महाबली ने सब जगत वश में किया,
हों धूमके मिस नाश कारण धूप प्रभु ढिंग क्षेपिया।
श्रीपावागिरिवर चेलना तट सिद्धक्षेत्र महान है,
गये मोक्ष चारों सुवर्णभद्रादि मुनी को प्रणाम है ॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिचतुर्णाम् मुनीनां निर्वाणास्पदे चेलनानदीतटे श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि०।

लेय करके फल मनोहर पक्वयुक्त सुपावना,
इस फल का फल हो मोक्षफल ये ही हमारा भावना।
श्रीपावागिरिवर चेलनातट सिद्धक्षेत्र महान है,
गये मोक्ष चारों सुवर्णभद्रादि मुनी को प्रणाम है ॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिचतुर्णाम मुनीनां निर्वाणास्पदे चेलना-नदीतटे श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

जल से लेकर फल तलक सब अष्टद्रव्य मिलायकर,
हम मांगते हैं अनर्घपद प्रभु अर्घ चरण चढ़ाय कर ।
श्री पावागिरिवर चेलना तट सिद्धक्षेत्र महान है,
गये मोक्ष चारों सुवर्णभद्रादि मुनी को प्रणाम है ॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिचतुर्णां मुनीनां निर्वाणास्पदे चेलनानदी-तटे श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

दोहा ।

पावागिरि सिद्धक्षेत्र है, पावन परम विशाल ।
अल्प बुद्धिमे कहत हों, तिनकी यह जयमाल ॥

पद्धरी छन्द ।

श्री सिद्धक्षेत्र पर्वत सुजान, श्रीपावागिरि ताको सुनाम ।
तहां नदी चेलना बहे नीर, सरिता छोटी पर है गँभीर ॥
तहाँ सुवरणभद्र मुनीश चार, कर कर्मछार गये शिवमँझार ।
तातैं श्रीसिद्धक्षेत्र जान, बन्दौ पुनि-पुनि सो सुखदथान ॥३
ताके समीप है ऊन ग्राम, है छोटा पर सुन्दर सुजान ।
दक्षिणदिशिका भूपति बलाल, था रोग भयङ्कर कठिन हाल ।
कछु कारणवश इस थान आय, तब रोगमुक्त नैरोग्य थाय ।
तब हर्षधार हिय भक्ति लाय, निन्यानवे चैत्यालय बनाय ॥

शत चैत्यालय में एक न्यून, होने से नाम हुआ है ऊन ।
गिरि पर है मन्दिर एक हाल, कारीगिरीमें अद्भुत विशाल ॥
तहँ प्रतिमा तीन विराजमान, कायोत्सर्ग स्थित हैं महान् ।
उनमें दो प्रतिमा पांच हाथ, है मध्य की प्रतिमा आठ हाथ ॥
तीनों प्रतिमा सुन्दर ललाम, करजोड़ि करौं तिनको प्रणाम।
सम्वत् उन्नीसजु शतक और, ता ऊपर इक्यानवे जोड़ ॥८॥
है कृष्णपक्ष आषाढ़ मास, बुधवार तिथी अष्टमी खास ।
ताही दिन आया स्वप्न सांच, अरु प्रतिमा प्रगटी तहां पांच ॥
तामें एक प्रतिमा है मनोज्ञ, श्री वीर प्रभु की दरशयोग्य ।
अङ्कित सम्वत बारासौ जान, अरु ता ऊपर बावन प्रमाण ॥
तिन प्रतिमाकी छवि कहि न जाय, देखतहीं सम्यक् प्रगट थाय
दरशनही से कालुष हरन्त, मिथ्यात्व पाप सबही दुरन्त ॥
जुत विभव परम वर्जित सुसङ्ग, लखि नग्न अङ्ग लाजे अनङ्ग ।
ऐसे पावागिर सिद्धथान, अरु अतिशय क्षेत्र जु है महान् ॥
इसलिए पुनीत सु है अपार, दर्शन करि हो जग-जलधि-पार
इमि जानि वंदना कर उदार, लूटो शुभ पुण्यतणो भंडार ॥
तुम धारत हो करुणा अपार, हे देव ! सुनो मेरी पुकार ।
मेरी करनी पर मत निहार, निज प्रणतपाल प्रणको विचार ॥
विधिबंधयोग्य दुरभाव हानि, करि क्षायिक भव कृपानिधान।
यह मांगतहूं कर जोड़ि देव, भव भव पाऊँ तुव चरण सेव ॥

घत्ता-छन्द

पावागिरिक्षेत्रं अतिसुख देतं, तुरतहिं भवदधि पार करें ।
'विष्णु' नित ध्यावे, कर्म नशावे, वांछित पावे मुक्ति वरै ॥

ॐ ह्रीं सुवर्णभद्रादिचतुर्णां मुनीनां निर्वाणास्पदे चेलना-नदी-तटे, श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय अनर्घपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल-छन्द

श्रीपावागिरिक्षेत्र की नित पूजा करो,
गुण को गावो भक्तिभाव हिरदे धरो ।
इस जगमें हो धर्म कृपासे सुख घना,
'विष्णु' मनमें धरो नित्य शुभ भावना ।

इति आशीर्वादः

श्रीसोनागिरि पूजा ।

(कवि आशारामजी कृत)

अडिल्ल छंद ।

जम्बू द्वीप मझार भरत क्षेत्र सु कहो,
आर्यखंड सुजान भद्रदेशे लहो ।
सुवर्णगिरि अभिराम सु पर्वत है तहां,
पंच कोड़ि अरु अर्द्ध गये मुनि शिव तहां ॥

दोहा ।

सोनागिरिके शीसपर, बहुत जिनालय जान ।
चन्द्रप्रभ जिन आदि दे, पूजों सब भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्रसे साढ़े पांच करोड़ मुनि सिद्धपद प्राप्ता अत्र अवतरत २ संवौषट् आव्हाननं । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधिकरणं ।

अष्टक ।

सारंग छन्द ।

पद्मद्रहको नीर ल्याय, गंगामे भरके,
कनक कटोरी मांहि, हेम थारनमें भरके ।
सोनागिरिके शीस, भूमि निर्वाण सुहाई,
पंच कोडि अरु अर्द्ध, मुक्ति पहुंचे मुनिराई ॥
चन्द्रप्रभ जिन आदि सकल जिनवर पद पूजो,
स्वर्गमुक्ति फल पाय, जाय अविचल पद हूओ ॥

दोहा ।

सोनागिरिके शीमपर, जेते सब जिनराज ।
तिन पद धारा तीन दे, तृषा हरनके काज ॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं

केशर आदि कपूर, मिले मलयागिरि चन्दन ।
परिमल अधिकी तास, और सब दाह निकंदन ॥सोना०

दोहा ।

सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज ।

ते सुगंध कर पूजिये, दाह निकन्दन काज ॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि०

तंदुल धवल सुगन्धित ल्याय, जल धोय पखारों ।

अक्षयपदके हेतु, पुंज द्वादश तहां धारों ॥ सोना०

दोहा ।

सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज ।

तिनपद पूजा कीजिये, अक्षयपदके काज ॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि० ।

बेला और गुलाब मालती कमल मँगाये ।

पारिजातके पुष्प ल्याय, जिन चरन चढ़ाये ॥सोना०

दोहा ।

सोनागिरिके शीसपर, जेत सब जिनराज ।

ते सब पूजों पुष्प ले, मदन विनाशन काज ॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय कामबाणविध्वसनाय पुष्पं नि०

व्यंजन जो जग मांहि, खांड़ घृत मांहि पकाये,

मीठे तुरत बनाय, हेम थारी भर ल्याये ॥सोना०

दोहा ।

सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज ।

ते पूजों नैवेद्य ले, क्षुधा हरणके काज ॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०

मणिमय दीपप्रजाल धरों पंकति भर थारी।
जिनमंदिर तमहार, करहु दर्शन नर नारी ।।सो०

दोहा।

सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
करों दीप ले आरती, ज्ञान प्रकाशन काज ।।

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीप नि०

दश विध धूप अनूप, अग्नि भाजनमें डालो।
जाकी धूम सुगंध रहै, भर सर्व दिशा लो ।।सोना०

दोहा।

सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
धूप कुंभ आगे धरों, कर्म दहनके काज ।।

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निव० ।।

उत्तम फल जग मांहि, बहुत मीठे अरु पाके।
अमित अनार अवार, आदि अमृतरस छाके ।। सोना०

दोहा।

सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
उत्तम फल तिनको मिलो, कर्म विनाशन काज ।।

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फल नि० ।।

जल आदिक वसु द्रव्य, अर्घ करके धर नांचो।
बाजे बहुत बजाय, पाठ पढ़के सुख सांचो ।। सो० ।।

दोहा।

सोनागिरिके शीसपर, जेते सब जिनराज।
ते हम पूजें अर्घ ले मुक्ति रमनिके काज ॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ॥

अडिल्ल छन्द।

श्रीजिनवरकी भक्ति, सु जे नर करत हैं,
फलवांछा कुछ नाहिं, प्रेम उर धरत हैं।
ज्यों जगमाँहि किसान, सु खेतीको करे,
नाज काज जिय जान सु भुस आपहिं भरे ॥
एसे पूजा दान, भक्ति वश कीजिए,
सुख सम्पति गति मुक्ति, सहज कर लीजिये ॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जयमाला।

दोहा।

सोनागिरिके शीसपर, जिनमन्दिर अभिराम।
तिन गुणकी जयमालिका, वर्णत 'आशाराम' ॥१॥

पद्धरी छन्द।

गिरि नीचे जिनमन्दिर सु चार, ते यतिन रचे शोभा अपार। तिनके अति दीरघ चौक जान, तिनमें यात्री मेलें सु आन ॥२॥ गुमटी छज्जे शोभित अनूप, ध्वज पंकति सोहे विविध रूप। वसुप्रातिहार्य तहांधरे आन, सब मंगल द्रव्य-

निकी सु खान ॥३॥ दरवाजोंपर कलशा निहार, कर जोर सु जय जय ध्वनि उचार । इक मन्दिरमें यतिराज मान, आचार्य विजयकीर्ती सु जान ॥४॥ तिन शिष्य भगीरथ विवुध नाम, जिनराज भक्ति नहि और काम । अब पर्वतको चढ़ चलो जान, दरवाजो तहां इक शोभे महान ॥५॥ तिस ऊपर जिन प्रतिमा निहार, तिन वंदि पूज आगे सुधार । तहां दुखित सुखितको देत दान, याचकजन तहां है अप्रमान ॥६॥ आगे जिनमन्दिर दुहु ओर, जिनगान होत वादित्र शोर । माली बहु ठाड़े चौक पौर, ले हार कलंगा तहां देत दौर ॥७॥ जिन-यात्री तिनके हाथ माहिं, बखशीस रीझ तहां देते जाहि । दरवाजो तहां दूजो विशाल, तहां क्षेत्रपाल दोऊ ओर लाल ॥८॥ दरवाजे भीतर चौक माहिं, जिनभवन रचे प्राचीन आहि । तिनकी महिमा वरणी न जाय, दो कुंड सुजल कर अति सुहाय ॥९॥ जिनमन्दिरकी वेदी विशाल, दरवाजा तीजो बहु सुठाल । ता दरवाजे पर द्वारपाल, ले मुकुट खड़े अरु हाथ माल ॥१०॥ जे दुर्जनको नहिं जान देत, ते निंदकको ना दरश देत । चल चन्द्रप्रभूके चौक माहिं, दालाने तहां चौतर्फ आय ॥११॥ तहां मध्य सभामंडप निहार, तिसकी रचना नाना प्रकार । तहां चन्द्रप्रभूके दरश पाय, फल जात लह्यो नर जन्म आय ॥१२॥ प्रतिमा विशाल तहां हाथ सात, कायोत्सर्ग मुद्रा

सुहात । बंदें पूजें तहां देय दान, जन नृत्य भजन कर मधुर आन ॥१३॥ ता थेई थेई थेई बाजत सितार, मृदंग बीन मुहचंग सार । तिनकी ध्वनि सुन भवि होत प्रेम, जयकार करत नाचत सुएम ॥१४॥ ते स्तुतिकर फिर नाय शीस, भवि चले मनोकर कर्म खीस । यह सोनागिरि रचना अपार, वरणन कर को कवि लहे पार ॥१५॥ अति तनक बुद्धि 'आशा' सुपाय, वश भक्ति कही इतनी सु गाय । मैं मन्द-बुद्धि किमि लहों पार, बुधिमान चूक लीजो सुधार ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीसोनागिरिसिद्धक्षेत्राय महार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा ।

सोनागिरि जयमालिका, लघुमति कहा बनाय ।
पढ़े सुने जे प्रीतसे, सो नर शिवपुर जाय ॥१७॥

इत्याशीर्वादः ।

श्रीनयनागिरि (रेसन्दीगिरि) पूजा ।

(स्व० स्वामी दौलतरामजी वर्णी कृत)

दोहा

पावन परम सुहावनो, गिरि रेशिन्दि अनूप ।
जजहुँ मोद उर धार अति, कर त्रिकरण शुचिरूप ॥

ॐ ह्रीं श्रीनयनागिरिसिद्धक्षेत्रसे वरदत्तादि पंच ऋषिराज सिद्धपद प्राप्त अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आव्हाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

अष्टक ।

(ढार नदीश्वरपूजाकी)

अति निर्मल क्षीरधि वारि, भर हाटक झारी ।
जिन अग्र देय त्रय धार, करन त्रिरुग छारी ॥
पन वरदत्तादि मुनीन्द्र, शिवथल सुखदाई ।
पूजों श्रीगिररेशिन्दि, प्रमुदित चित थाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० ॥ १ ॥

मलयागिरि चन्दन सार, केशर संग घसो ।
शीतल वासित सुखकार, जन्मताप कसी ॥ पन वरदत्ता०

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं

शुचि विमल नवल अति श्वेत, द्युति जित सोमतनी ।
मो ले पद अक्षय हेत, अक्षत युक्त अनी ॥ पन वरदत्तादि०

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि० ।

शुभ सुमन त्रिदश-तरुकेय, स्वच्छ करण्ड भरा ।
मदब्रह्म-तनुज हरनय, भेंट जिनाग्र धरो ॥ पन वरदत्तादि०

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिक्षेत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ।

छुध फणहि विहंगमनाथ नवज सद्यानी ।
कर विविध मधुर रस साथ, विधियुत अमलानी ॥ पन०

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं

मिथ्यातम भानन भानु, स्वपर उजास कृती ।
ले मणिमय दीप सुभानि, विमल प्रकाश धृती ॥ पन०
ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं

कर्मेन्धन जारन काज, पावक भाव मही ।
वर दश विधि धूपहि साज, खय उछाह गही ॥ पन०
ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।

दृग घ्राण रसन मन प्रीय, प्रासुक रस भीने ।
लख दायक मोक्षपदीय, लै फल अमलीने ॥ पन० ॥
ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

शुचि अमृत आदि समग्र, सजि वसु द्रव्य प्रिया ।
धारों त्रिजगतपति अग्र, धर वर भक्त हिया ॥ पन० ॥
ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

जयमाला ।

दोहा ।

जग बाधक विधि बाधकर, है अबाध शिव धाम ।
निवसे तिन गुण धर सुहृद, गाऊँ वर जयदाम ॥१॥

पद्धरी छंद ।

जय जय जिन पार्श्व जगत्रि स्वाम । भवदधि तारण तारी ललाम । हति घाति चतुक है युक्त सन्त, दृगज्ञान शर्म वीरज अनन्त ॥१॥ सो समवशरण कमलासमेत, विहरत विहरत पुर ग्राम खेत । सुर नर मुनिगण सेवत कृपाल,

आये भवि हितु तिहिं अचल भाल ॥ २ ॥ अरु वरदत्तादि मुनीन्द्र पंच, चतुविधि हनि केवल ज्ञान संच। लख सर्व चराचर त्रिजग केय, त्रैकालिक युगपत पद अमेय ॥ ३ ॥ निज आनन द्वेविध वृषस्वरूप, उपदेश भरण भवि मर्म कूप। दृगज्ञान चरण सम्यक प्रकार, शिवपथ साधक कह त्रिजग तार ॥ ४ ॥ अरु सप्त तत्व षट द्रव्य केव, पञ्चास्तिकाय नव पदन भेव। दृग कारण सो दरशाय ईश, तिहि भूधर शिर पुनि अघति पीश ॥ ५ ॥ पंचमगति निवसे तब सुरेश, आके ले सुरगण सँग अशेष। रेशिन्दि शिखर रज शीस ल्याय, किय पंचम कल्यानक उछाय ॥ ६ ॥ मै तिन पद पावन चाह ठान, बंदों पुनिपुनि सो सुखद थान। मन वच तन तिन गुण स्व उर धार, 'वर्णी दौलत' अनचाह हार ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरिरेशिन्दिसिद्धक्षेत्राय महार्घं निवपामीति स्वाहा।

दोहा

आनन्द कन्द मुनीन्द्र गुण, धर उरकोष मझार।
पूजें ध्यावें सो सुधी, ह्वैं लघु महि भव पार ॥ ५ ॥

इत्याशीर्वादः।

श्रीद्रोणागिरि पूजा।

(पं० दरयावजी चौधरी कृत)

दोहा।

सिद्धक्षेत्र परवत कहो, द्रोनागिरि तसु नाम।
गुरुदत्तादि मुनीश नमि, मुक्ति गये इहि ठाम ॥ १ ॥
इहि थल जिन प्रतिमा भवन, बने अपूरव धाम।
तिन प्रति पुष्प चढ़ाइये, और सकल तज काम ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रसे गुरुदत्तादिमुनिसिद्धपदप्राप्ता अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आव्हाननं। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट सन्निधिकरणं ॥

अष्टक।

सुन्दरी छन्द।

सरस छीर सु नीर गहीर ले, जिन सुचरनन धारा दीजिए।
नशत जन्मजरामृतु रोग हैं, मिटत भवदुख शिवसुख होत हैं
ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०
अगर कुमकुम चन्दन गारिये, जिन चढ़ाय सो ताप निवारिये
जगत जन जे भव आताप ते, चर्चे जिनपद अघ इमि नाशते ॥
ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्रायसंसारतापविनाशनाय चन्दनं नि०
देवजीरो उर सुख दासके, पावनी घन केशर आदिके।
सरस अनियारे अनवीध ले,पुंज जिनपद आनन तीन दे ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि० ।

सरस बेला और गुलाब ले, केवरा इत्र आदि सुवास ले ।
जिन चढ़ाय सुहर्ष सु पावते, मदन काम व्यथा सब नाशते

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ।

पूरियां पेड़ादि सु आनिये, खोपरा खुरमादिक जानिये ।
सरस सुन्दर थार सु धारिये, जिन चढ़ाय क्षुधादि निवारिये ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०

रतन मणिमय जोति उद्योत है, मोह तम नशि ज्ञानहु होत है
करत जिन तट भविजन आरती, सकल जन्मन ज्ञान सु भासती

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि०

कूट वसु विधि धूप अनूप है, महका रहि सुन्दर अग्नि है ।
खेइये जिन अग्र सु आयकें, ज्वलनमध्य सु कर्म नशायकें ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।

नारियल सु छुहार ल्याइये, जायफल बादाम मिलाइये ।
लायची पुंगी फल ले सही, जजत शिवपुरकी पात्र मही ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

जल सु चन्दन अक्षत लीजिये, पुष्प धर नैवेद्य गनीजिये ।
दीप धूप सुफल बहुसाजहीं, जिन चढ़ाय सु पातक भाजहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

करत पूजा जे मन लायकें, हेत निज कल्यान सु पायकें ।
सरस मंगल नित नये होत हैं, जजत जिनपद ज्ञान उदोत है

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

दोहा ।

ये ही भावन भायकें, करों आरती गाय ।
सिद्धक्षेत्र वर्णन करों, छंद पद्धरी गाय ॥१॥

पद्धरी छन्द ।

श्रीसिद्धक्षेत्र पर्वत सु जान, श्रीद्रोणागिरि ताको सु नाम ।
तहँ नदी चन्द्रभागा प्रमान, मगरादि मीन तामें सुजान ॥१
ताको अति सुन्दर बहे नीर, सरिता सुजान भारी गँभीर ।
यात्री सु देश देशनके आय, स्नान करत आनंद पाय ॥
फलहोड़ी ग्राम कहा बखान, जिनमन्दिर तामें एक जान ।
पूजा सु पाठ तहां होत नित्त, स्वाध्याय वाचनाम सुवत्त ॥
अब गिरि उतंग जानों महान, ता ऊपर को लागे शिवान ।
तरुवर उन्नत अति सघन पांत, फल फूल लगे नाना सु भांत
तहँ गुफा रही सुन्दर गहीर, मुनिराज ध्यान धारे तपीस ।
गिरि शीस बीस जिन बने धाम, अब और होय तिनको प्रनाम
तहँ झालर घंटा बजे सोय, वादित्र बजें आनन्द होय ।
तहँ प्रातिहार्य मंगल सु दर्व, भामंडल चंद्रोपक सु सर्व ॥६
जिनराज विराजत ठाम ठाम, वन्दत भविजन तज सकल काम
पूजा सु पाठ तहँ करें आय, ताथेई थेई थेई आनंद पाय ॥
अब जन्म सुफल अपनो सु जान, श्रीजिनवर पद पूजे सु आन
मैं भ्रम्यो सदा या जग मझार, नहिं मिली शरन तुमरी अपार

सोरठा।

सिद्धक्षेत्र सु महान, विघन हरन मंगल करन।
वन्दत शिवसुख थान, पावत जे निश्चय भजे ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीद्रोणागिरिसिद्धक्षेत्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

गीतिका छन्द।

जाके सुपुत्र पौत्रादि सम्पति, होय मंगल नित नये,
जो जजत भजत जिनेन्द्रपद अब, तासु विघन सु नसि गए।
मैं करों थुति निज हेत मंगल, देत फल वांछित सही,
'दरयाव' है जिन दास तुमरो, आश हम पूरन भई ॥

इत्याशीर्वादः।

श्रीशत्रुञ्जय पूजा।

(श्रीयुत भगोतीलालजी कृत)

चौपाई।

श्रीशत्रुञ्जयशिखर अनूप, पांडव तीन बड़े शुभ भूप।
आठ कोडि मुनि मुक्ति प्रधान, तिनके चरण नमूं धर ध्यान॥
तहाँ जिनेश्वर बहुत सरूप, शान्तिनाथ शुभ मूल अनूप।
तिनके चरण नमूं त्रिकाल, तिष्ठ तिष्ठ तुम दीनदयाल॥

ॐ ह्रीं श्रीशत्रुञ्जय सिद्धक्षेत्रसे आठ कोडि मुनि और तीन पांडव मोक्षपद प्राप्त अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत-भवत वषट्। सन्निधिकरणं।

अष्टक ।

त्रोटक छन्द ।

क्षीरोदधि नीरं उज्जल सीरं, गंध गहीरं ले आया ।
मैं सन्मुख आया धार दिवाया, शीस नवाया खोल हिया ।
पांडव शुभ तीनं सिद्ध लहीनं, आठ कोडि मुनि मुक्ति गये ।
श्रीशत्रुञ्जय पूजों सन्मुख हूजो, शान्तिनाथ शुभ मूल नये ॥
ॐ ह्रीं श्रीशत्रुञ्जयसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

मलयागिरि लाऊं गंध मिलाऊं, केशर डारी रंग भरी ।
जिन चरन चढ़ाऊं सन्मुख आऊं, व्याधि नशाऊं तपत हरी ॥
पांडव शुभ तीनं सिद्ध लहीनं० ॥
ॐ ह्रीं श्रीशत्रुंजयसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं नि० ।
तन्दुल शुभ चोखे बहुत अनोखे, लखि निर्दोषे पुंज धरूं ।
अक्षयपद दीजो सब सुख कीजो, निजरस पीजो चरण परूं ॥
पांडवशुभ तीनं सिद्ध लहीनं० ॥
ॐ ह्रीं श्रीशत्रुंजयसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि० ।
शुभ फूल सुवासी मधुर प्रकासी, आनंद रासी ले आयो ।
मो काम नशाया शील बढ़ाया, अमृत छाया सुख पायो ॥
पांडवशुभतीनं सिद्ध लहीनं० ॥
ॐ ह्रीं श्रीशत्रुंजयसिद्धक्षेत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ।
नेवज शुभ लाया थार भराया, मंगल गाया भक्ति करी ।

मा क्षुधा नशाया सुख उपजाया, ताल लजाया मेव करी ॥
पांडवशुभ तीनं सिद्ध लहीनं० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशत्रुंजयसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

दीपक ले आया जोति जगाया, तुम गुण गाया चरण परूं ।
मैं शरणे आया शीस नवाया, तिमिर नशाया नृत्य करूं ॥
पांडवशुभ तीनं सिद्ध लहीनं० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशत्रुंजयसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं नि० ।

दश गंध कुटाई धूप बनाई, अग्नि डार जिन अग्र धरों ।
तुम कर्म जराई शिव पहुँचाई, होय सुहाई कष्ट हरो ।पांडव० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशत्रुंजयसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।

फल प्रासुक चोख बहुत अनोखे,लग निर्दोख भेट धरूं ।
मेवककी अरजी चितमें धरजी,कर अब मरजी मोक्ष वरूं
पांडव शुभ तीनं सिद्ध लहीनं० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशत्रुंजयसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

वसु द्रव्य मिलाई, थार भराई, सन्मुख आई नजर करो ।
तुम शिवसुखदाई धर्म बढ़ाई,हर दुखदाई अर्घ करो ।पांडव० ॥

ॐ ह्रीं श्रीशत्रुंजयसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

दोहा ।

पूरण अर्घ बनाय कर, चरणनमें चित लाय ।
भक्तिभाव जिनराजकी, शिव रमणी दरशाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीशत्रुंजयसिद्धक्षेत्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

जयमाला ।

पद्धरी छन्द ।

जय नमन करूं शिर नाय नाय, मोकूं वर दीजे हे जिनाय । तुम भक्ति हियेमें रही छाय, सो उमग उमग अरु प्रीति लाय ॥१॥ जय तुम गुण महिमा है अपार, नहिं कवि पंडितजन लहैं पार । जय तुच्छ बुद्धि मैं करत गान, तुम भक्ति हियेमें रही आन ॥२॥ जय श्रीशत्रुंजय शिखर जोय, निर्वाणभूमि जानो जु सोय । जहां पांडव तीन जु मुक्ति होय, जय राय युधिष्ठिर भीम जोय ॥३॥ जय अरजुन जानो धनुष धीर, तासम नहिं जाना कोइ वीर । जय आठ कोडि मुनि और सोय, तिन वरी नारि मुक्ती जु लोय ॥४॥ जय सही परीषह बीस दोय, जय यथाख्यात चारित्र होय । जय कायर कँपैं सुनो जोय, वे ध्यानारूढ़ भये जु सोय ।५। जय बारह भावन भाव सोय, तेरह विधि चारित धरा सोय । जय कर्म करे चकचूर जोय, अरु सिद्ध भये संसार खोय ॥६॥ जय सेवक जनको करहु सोय, जय दर्शन ज्ञान चरित्र होय । जय छूटो नहीं संसार माय, अरु थोड़े दिनमें मुक्ति पाय ॥७॥ जय 'धर्मचन्द्रजी' मुनीम सोय, सो अल्प बुद्धि-सों मेल होय । वे धर्मीजन हैं बहुत जोय, सो कही उन्होंने मोहि सोय ॥८॥ तुम शत्रुंजय पूजा बनाय, तो बांचें भवि-जन प्रीति लाय । जय 'लाल भगोतीलाल' मोय, तिन

रची पाठ पूजन जु सोय ॥९॥ जय घाट बाढ़ कछु अर्थ होय, सोधो संभार जैसे जु सोय। जय भूलचूक जामें जु होय, सों पंडितजन शोधो जु लोय ॥१०॥ जय सम्बतसर गुनईस जोय, अरु ता ऊपर गुनचास होय। जय पौष सुदी द्वादश जु होय, अरु वार शुक्र जानो जु सोय ।११। जय सेवक बिनवे जोर हाथ, मो मिले अखयपद वेग नाथ। जय चाह रहो नहीं और कोय, भवसिंधु उतारो पार मोय ॥१२॥

सोरठा।

भक्तिभाव उर लाय, करके जिनगुण पाठको।
मंगल आरति गाय, चरणन शीस नवायके ॥१३॥

श्री ह्रीं श्रीशत्रुञ्जयसिद्धक्षेत्रसे तीन पांडव और आठ कोटि मुनि मोक्षपदप्राप्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

गीता छंद।

हरषाय गाय जिनेन्द्र पूजूं, कृत कारित अनुमोदना।
शुभ पुण्य प्रापति अर्थ तिनकी, करी बहु विधि थापना॥
जिनराज धर्म समान जगमें, और नाहीं हित घना।
ताते सु जानो भव्य तुम, नित पाठ पूजन भावना ॥१४॥

इत्याशीर्वादः।

श्रीतारंगागिरि पूजा।

[श्रीयुत पं० दीपचन्दजी परवार कृत]

वरदत्तादिक आठ कोटि मुनि जानिये,
मुक्ति गये तारंगागिरिमे मानिये।
तिन सबका शिरनाय सु पूजा ठानिय,
भवदधि तारन जान सु विरद बखानिये ॥

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसे वरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनि मोक्षपदप्राप्ता अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

अष्टक।

शीतल प्रासुक जल लाय भाजनमें भरके,
जिन चरनन देत चढ़ाय रोग त्रिविध हरके।
तारंगागिरि से जान वरदत्तादि मुनी,
सब ऊंठ कोटि परमान ध्याऊं मोक्षधनी ॥

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं

मलयागिरि चन्दन लाय केशर मांहि घसे,
जिन चरण जजूं चितलाय भव आताप नसे। तारंगा०

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं।

तंदुल अखंड भर थार उज्जल अति लीजे,
अक्षयपद कारणसार पुंज सु ढिग कीजे। तारंगा०

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि० ।

चंपा गुलाब जुहि आदि फूल बहुत लीजे,

पूजों श्रीजिनवर पांव कामविथा छीजे । तारंगा०

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसिद्धक्षेत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०

नाना पकवान बनाय सुवरण थाल भरे,

प्रभुको अरचों चितलाय रोग क्षुधादि टरे । तारंगा०

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०

दीप कपूर जगाय जगमग जोति लसे,

करूं आरति जिन चित लाय मिथ्या तिमिर नसे । तारंगा०

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं नि०

कृष्णागरु धूप सुवास खेऊं प्रभु आगे,

जल जाय कर्मकी राशि ध्यानकला जागे ।तारंगा० ॥

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।

श्रीफल कदली बादाम पुंगीफल लीजे,

पूजों श्रीजिनवर धाम शिवफल पालीजे । तारंगा०॥

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

शुचि आठों द्रव्य मिलाय तिनको अर्घ करो,

मन वच तन देहु चढ़ाय भवतर मोक्ष वरो ।

श्रीतारंगागिरिसे जान वरदत्तादि मुनी,

सब ऊंठ कोटि परमान ध्याऊं मोक्षधनी ॥

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

जयमाला।

सोरठा।

वरदत्तादि मुनीन्द्र, उंठ कोटि मुक्तिहि गये।
वंदत सुर नर इन्द्र, मुक्ति रमनके कारणे ॥ १ ॥

पद्धरी छंद।

गुजरात देशके मध्य जान, इक सोहे ईडर संसथान।
ताकी दिशि पच्छिममें बखान, गिरि तारंगा सोहे महान ॥१॥
तहँते मुनि उंठ करोड़ सोय, हनि कर्म गये सब मोक्ष सोय।
ता गिरपर मंदिर है विशाल, दर्शनतें चित होवे खुशाल ॥२॥
नायक सुमूल संभव अनूप, देखत भवि ध्यावत निज स्वरूप।
पुनि तीन टोंकपर दर्श जान, भविजन वंदत उर हर्ष ठान ॥
तहां कोटि शिला पहली प्रसिद्ध, दूजी तीजी है मोक्ष सिद्ध।
तिनपर जिनचरण विराजमान, दर्शन फल इम सुनिये सुजान॥
जो वंदे भविजन एक बार, मनवांछित फल पावे अपार।
वसु विधि पूजे जो प्रीति लाय, दारिद तिनको क्षणमें पलाय।
सब रोग शोक नाशे तुरंत, जो ध्यावे प्रभुको पुण्यवंत।
अरु पुत्र पौत्र सम्पत्ति सुहोय, भव भवके दुख डारे सुखोय॥
इत्यादिक महिमा है अपार, वर्णन कर कवि को लहे पार।
अब बहुत कहा कहिये बखान, कहें 'दीप' लहें ते मोक्षथान॥

ॐ ह्रीं श्रीतारंगागिरिसे वरदत्तसागरदत्तादि साढ़ेतीन कोटिमुनि मोक्षपदप्राप्तेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

घत्ता।

तारंगा वंदो मन आनन्दो, ध्याऊं मन वच शुद्ध करा।
सब कर्म नशाऊं शिवफल पाऊं, ऊंठ कोटि मुनिराजवरा॥

इत्याशीर्वादः।

श्रीपावागढ़ पूजा।

(श्रीयुत धर्मचन्दजी कृत)

दोहा।

श्रीपावागिरि मुकति शुभ, पांच कोडि मुनिराय।
लाड़ नरेन्द्रको आदि दे, शिवपुर पहुँचे जाय॥ १॥
तिनको आह्वानन करो, मन वच काय लगाय।
शुद्ध भाव कर पूजजो, शिव सन्मुख चितलाय॥ २॥

ॐ ह्रीं श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्र से लाड़ नरेन्द्र आदि पाँच करोड़ मुनि सिद्धपदप्राप्ता अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ. ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत सन्निधिकरणं।

अष्टक।

छंद त्रोटक।

जल उज्ज्वल लीनो प्रासुक कीनो, धार सु दीनो हितकारी।
जिन चरन चढ़ाऊं कर्म नशाऊं, शिवसुख पाऊं बलिहारी॥
पावागिरि वन्दो मन आनन्दो, भव दुख कन्दो चितधारी।
मुनि पांच जु कोडं भवदुख छोडं, शिवसुख जोडं सुखभारी॥

ॐ ह्रीं श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

चन्दन घसि लाऊं गंध मिलाऊं, सब सुख पाऊं हर्ष बढ़ो।
भव बाधा टारो तपत निवारो, शिवसुख कारो मोद बढ़ो॥पा०

ॐ ह्रीं श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं नि०

गजमुक्ता चोखे बहुत अनोखे, लख निरदोखे पुंज करूं।
अक्षयपद पाऊं और न चाऊं, कर्म नशाऊं चरण परूं॥पा०

ॐ ह्रीं श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि०।

शुभ फूल मगाऊं गंध लखाऊं, बहु उमगाऊं भेट धरूं।
मम कर्मनशावो दाह मिटावो, तुम गुनगाऊं ध्यानधरूं॥पा०

ॐ ह्रीं श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय कामबाणविध्वसनाय पुष्पं नि०।

नेवज बहु ताजे उज्ज्वल साजे, सब सुख काजे चरन धरूं।
मो भूख नशावे ज्ञान जगावे, धर्म बढ़ाव चेंन करूं॥पा०॥

ॐ ह्रीं श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०।

दीपककी जोतं तम क्षय होतं, बहुत उद्योतं लाय धरूं।
तुम आरति गाऊं भक्ति बढ़ाऊं, खूब नचाऊं प्रेम भरूं। पा०

ॐ ह्रीं श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकार विध्वंसनाय दीपं नि०।

बहु धूप मँगाऊं गंध लगाऊं, बहु महकाऊं दश दिशिको।
धर अग्नि जलाई कर्म खिपाई, भवजनभाई सब हितको॥पा०

ॐ ह्रीं श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०।

फल प्रासुक लाई भवजन भाई, मिष्ट सुहाई भेट करूं।
शिवपदको आशा मन हुल्लासा, कर खुहलासा मोक्ष वरूं॥

ॐ ह्रीं श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व० ।

वसु द्रव्य मिलाई भवजन भाई, धर्म सहाई अर्घ करूं ।
पूजाको गाऊं हर्ष बढ़ाऊं, खूब नचाऊं प्रेम भरूं ।।पा०।।

ॐ ह्रीं श्रीपावागिरिसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

जयमाला ।

सोरठा ।

करके चोखे भाव, भक्ति भाव उर लायके ।
पूजों श्रीजिनराय, पावागिरि बंदों सदा ।।

चाल जोगीरासाकी ।

श्रीपावागिरि तीर्थ बड़ो है, वंदत शिवसुख होई,
रामचन्द्रके सुत दोय जानो, लाड़ नरेन्द्र जु सोई ।
इनहिं आदि दे पाँच कोटि मुनि, शिवपुर पहुंचे आई,
सेवक दो कर जोर बीनवे, मन वच कर चितलाई ।।१।।

कर्म काट जे मुक्त पधारे, सब सिद्धनमें जोई,
सुख सत्ता अरु बोध ज्ञानमय, राजत सब सुख हाई ।
दर्श अनंतो ज्ञान अनंतो, देखे जाने सोई,
समय एकमें सबही झलके, लोकालोक जु दोई ।।२।।

ज्ञान अतींद्री पूरन तिनके, सुक्ख अनंतो होई,
लोक शिखरपर जाय विराजे, जामन मरन न होई ।
जा पदको तुम प्राप्त भये हो, सो पद मोहि मिलाई,
भक्ति भावकर निशि दिन बन्दों, निशि दिन शीस नवाई

'धर्मचन्द श्रावककी विनती, धर्म बढ़ो हितदाई,
जो कोई भविजन पूजन गावें, तन मन प्रीति लगाई ।
सो तैसो फल जल्दी पावे, पुण्य बढ़े दुख जाई,
सेवकको सुख जल्दी दीजो, सम्यक ज्ञान जगाई ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीपावागढ़से लाड़ नरेन्द्र और पाँच करोड़ मुनि मोक्षपदप्राप्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रोटक छन्द ।

श्रीजिनवरराई करमन भाई, धर्म सहाई दुख छीजे,
पूजा नित चाहूँ भक्ति बढ़ाऊं, ध्यान लगाऊं सुख कीजे ।
सुन भवजन भाई द्रव्य मिलाई, बहु गुन गाई नृत्य करो,
सब ही दुख जाई बहु उमगाई, शिवसुख पाई चरन परो ॥

इत्याशीर्वादः ।

श्रीगजपंथ पूजा ।

[श्रीयुत किशोरीलालजी कृत]

श्रीगजपंथ शिखर जगमें सुखदायजी ।
आठ कोडि मुनिराय परमपद पायजी ॥
और गये बलभद्र सात शिवधामजी ,
आह्वानन विधि करूं त्रिविध धर ध्यानजी ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीगजपंथाचलसे सप्तबलभद्र आदि आठकोडि मुनिसिद्धपद प्राप्ता अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधिकरणं ।

अष्टक।

चाल जोगीरासाकी।

कंचन मणिमय झारी लेके, गंगाजल भर ल्याई,
जन्म जरा मृत नाशन कारन,पूजो गिरि सुखदाई।
बलभद्र सात वसु कोडि मुनीश्वर, यहांपर करम खपाई,
केवल लहि शिवधाम पधारे, जजूँ तिन्हें शिरनाई॥
ॐ ह्रीं श्रीगजपंथसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०।

मलयागिरि चन्दन घसि, केशर सुवरण भृंग भराई।
भव आतापनिवारन कारन, श्रीजिनचरण चढ़ाई॥ बल०॥
ॐ ह्रीं श्रीगजपंथसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि०।

अक्षत उज्ज्वल चन्द्रकिरण सम, कनकथाल भर लाई।
अक्षय सुख भोगनके कारन, पूजूं देह हुलसाई॥ बल०॥
ॐ ह्रीं श्रीगजपंथसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि०।

पुष्प मनोहर रंग सुरंगी, आवे बहु महकाई।
कामवाणके नाशन कारन, जिनपद भेंट धराई॥ बल०॥
ॐ ह्रीं गजपंथसिद्धक्षेत्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०।

घेवर बावर लाडू फेनी,नेवज शुद्ध कराई।
क्षुधावेदनी रोग हरनको, पूजो श्रीजिनराई॥ बल०॥
ॐ ह्रीं श्रीगजपथसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं नि०।

अगर तगर कृष्णागरु लेके, दस गंध धूप बनाई।
खेय अगनिमें श्रीजिन आगे, करमजरें दुखदाई॥ बल०॥

ॐ श्रीगजपंथसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूप नि० ।

फल अति उत्तम पुंगी खारक, श्रीफल आदि सुहाई ।
मोक्ष महाफल चाखन कारन, भेंट धरो गुणगाई ।। बल० ।।

ॐ ह्रीं श्रीगजपंथसिध्दक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

जल फल आदि वसु दरब अति उत्तम, मणिमय थाल भराई ।
नाचनाच गुण गायगायके, श्रीजिनचरन चढ़ाई ।।बल०।।

ॐ ह्रीं श्रीगजपंथसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

जयमाला ।

गीता छन्द ।

गजपंथ गिरिवर शिखर उन्नत, दरश लख सब अघ हरे ।
नर नारि जे नित करत वंदन, तिन सुजश जग विस्तरे ।।
इस थानतें मुनि आठ कोड़ी, परमपदकूं पायके ।
तिनकी अबे जयमाल गाऊँ, सुनो चित हुलसायके । १।।

पद्धरी छन्द ।

जय गजपंथा गिरिशिखर सार, अति उन्नत है शोभा अपार । ताकी दक्षिण दिश नगर जान, मसरूल नाम ताको प्रधान ।। २ ।। तहां धरमशाला बनी महान, ता मध्य लसे जिनवर सुथान । तहां बने शिखर शोभत उतंग, यह चित्र विचित्र नाना सुरङ्ग ।। ३ ।। चारोंदिशि गुमटी लसत चार, चित्राम रोचत नाना प्रकार । तिनके ऊपर ध्वजा फहरात, मानुष बुलावत करत हाथ ।।४।। तहां गुम्मजमें श्रीपारश्वनाथ,

राजत पुनि प्रतिमा है विख्यात । तिन दरशन वंदन करन जात, पूजत हैं नित प्रति भव्य आत ॥ ५ ॥ जिनमन्दिरमें रचना विशेष, आरास रचित अद्भुत अनेक । वेदी उज्ज्वल राजत रङ्गीन, अति ऊँचे सोहे शिखर तीन ॥ ६ ॥ तिनके ऊपर कलशा लसंत, चन्द्रोपम ध्वज दर्पन दिपंत । अथ कटनी खंभा चार माय, इन्द्रनकी छवि वरनी न जाय ॥७॥ ऊपरली कटनी मध्य जान, अन्तिम तीर्थेश विराजमान । भामंडल चँवर सु छत्र तीन, पुनि चरण पादुका द्वय नवीन ॥ ८ ॥ पुनि पद्मावति अरु क्षेत्रपाल, तिष्ठत ता आगे रख-पाल । सन्मुख हस्ती घूमे सदीव, जहां पूजा करते भव्य जीव ॥ ९ ॥ आगे मंडप रचना विशाल, तहां सभा भरे है सदा काल । जहां बांचत पंडित शास्त्र आय, कोई जिनवर गुण मधुर गाय ॥ १० ॥ कोई जाप जपे चरचा करंत, कोई नृत्य करत बाजे बजंत । नौबत झालर घंटा सुझांझ, पुनि होत आरती नित्य सांझ ॥११॥ मंदिर आगे सुन्दर अरन्य, तरु फल फलत दीसे रमन्य । अति सघन वृक्ष शीतल सु छांय, जहां पथिक लेत विश्राम आय ॥ १२ ॥ इस उपवन में बहु विध रसाल, चाखत जात्री होवें खुशाल । नीबू नारङ्गी अनार जाम, सीताफल श्रीफल केल आम ॥ १३ ॥ अमली जामन ककड़ी अरण्ड, कथोड़ी ऊँचे लगे झुंड । सेतूत लेसवो अरु खजूर, खारक अंजीर अरीठ पूर ॥ १४ ॥

फफनेस बोर वड़ नीम जान, पुनि पुष्पवाटिका शोभमान। चंपो जु चमेलि गुलाब कुंज, जाई जु मोगरो भ्रमर गुंज ॥ १५ ॥ गुलमहदी और अनेक वेल, तिन ऊपर पक्षी करत केल। या बाग माहि गंभीर कूप, शीतल जल मिष्ट सु दुग्धरूप ॥१६॥ ता पीवत ही गद सकल नाश, यह अतिशय क्षेत्रतनो प्रकाश। बँगला विशाल रमणीक जान, भट्टारक तिष्ठनको सु थान ॥ १७ ॥ परकाट बनो चउ तरफ सार, मध दरवाजो अति शोभकार। ताके ऊपर नौवत बजंत, सुन के यात्री आनंद लहंत ॥ १८ ॥ यहां दंडकवन की भूमि संत, तसु निकट शहर नासिक बसंत। तहां गंगा नाम नदी पुनीत, वैष्णवजन ठाने धर्म तीर्थ ॥ १९ ॥ पुनि त्रिम्बक सीतागुफा कीन, गजपंथ धाम सबमें प्राचीन। भट्टारकजी हिमकीर्त्ति आय, वंदे गजपन्था शिखर जाय ॥ २० ॥ मंदिर की नीव दई लगाय, पुनि पैड़ी ऊपरको चढ़ाय। दो शतक पिचौत्तर है सिवान, तसु आगे मोटी भींत जान ॥ २१ ॥ इक होद भर्यो निर्मल सु नीर, शीतल सु मिष्ट राजत गंहीर। भवि प्रक्षालित वसु दरव आन, कोई तीर्थ जान कर है सनान ॥ २२ ॥ अथ गुफा मध्य दरशन करन्त, बलभद्र सात तिष्ठत महंत। इक बिम्ब लसत उन्नत विशाल, श्रीपार्श्वनाथ वंदत त्रिकाल ॥ २३ ॥ द्वय मानभद्र इक चरणपाद, पुनि आठ कोडि थल है अनाद। वंदन पूजन

कर धरत ध्यान, निज जन्म सुफल मानत सुजान ॥ २४ ॥ यहां से उतरत गिरितट सु थान, इक कुंड नीर निर्मल बखान । इक छत्री उज्ज्वल है पुनीत, भट्टारकजी खेमेन्द्रकीर्ति ॥ २५ ॥ तिनके सु चरणपादुक रचाय, अवलोकन कर निज थल सु आय । कोई फेरी पर्वतका करन्त, इमि बंदन कर अति सुख लहंत ॥ २६ ॥ श्रीमुनीकीर्ति महाराज आय, श्रावकजनको उपदेश थाय । पुनि नानचंद अरु फतहचंद, शोलापुरवासी धरमकंद ॥ २७ ॥ हूमड़ जैनी उपदेश धार, करवाई प्रतिष्ठा बिम्बसार । संवत् उगणीस अरु तियाल, सुध तेरस माघतनी विशाल ॥ २८ ॥ कल्यान पांच कीनो उछाव, करवाये अति उत्तम सुनाव । श्रीमहावीर अन्तिम तीर्थेश, पधराये वेदी में जिनेश ॥ २९ ॥ भट्टारकजी दियो सूर मंत्र, कीने पुनि जंत्र अनेक तंत्र । मानस सु थम रचिये उतंग, कञ्चन कलशा शोभे उचंग ॥ ३० ॥ बहु संघ जुरे तिनकू बुलाय, भक्ती कीनी उर हरष ल्याय । बहु विधि पकवान बनाय सार, जौनार दई आनंद धार ॥३१॥ सुदि पूनम माघतनी सुजान, पूरण हुतो उत्सव महान । याही तिथिकूं उत्तम सुजोय, यात्रा उत्सव हर साल होय ॥३२॥ पुनि सदावरत नित प्रति बटंत, कोई विमुख जाय नहिं साधुसंत । यहां देश देश के संघ आय, उत्सव करते हैं पूजन कराय ॥३३॥ दे दरब करत भंडार सोय, कोई करत रसोई मुदित

होय। बहु मर्यादा अद्भुत सु ठाठ, आवें यात्री सुख करत पाठ ॥३४॥ संवत उगणीसौ उणचास, बुध अष्टम रवि दिन पौष मास। ये पूजन विधि कीनी बनाय, सज्जन प्रति बिनती यहा भाय ॥ ३५ ॥ जो भूल चूक तुक भंग होय, तुम शुद्ध करो बुधिमान लोय। गजपन्थ शिखर मुनि आठ कोड, बलभद्र सात नमि हाथ जोड़ ॥ ३६ ॥

दोहा।

यह गजपन्था शिखर की, पूज रची सुखदाय।
'लालकिशोरी' तुच्छ बुध, हाथ जोड़ सिर नाय ॥३७॥

ॐ ह्रीं श्रीगजपंथसिद्धक्षेत्रसे सातबलभद्र और आठकरोड़ मुनि मोक्षपदप्राप्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद त्रिभंगी।

जय जय भगवंता श्रीगजपन्था, वंदत संता भाव धरं,
सुर नर खग ध्यावें भगति बढ़ावें, पूज रचावें प्रीति करं।
फल सुरपद पावें अमर कहावें, नरपद पावें शिव पावं,
यह जान सु भाई जात्र कराई, जग जस थाई सुख पावं ॥

इत्याशीर्वादः।

श्री तुङ्गीगिरि पूजा।

(श्रीयुत स्व० पं० सवाईसिंघई गोपालसाहजी कृत)

दोहा।

सिद्धक्षेत्र उत्कृष्ट अति, तुंगीगिरि शुभ थान।
मुकति गये मुनिराज जे, ते तिष्ठहु इत आन ॥

ॐ ह्रीं श्रीमांगीतुंगीसिद्धक्षेत्रसे राम, हनू, सुग्रीव, सुडील, गव, गवाख्य, नील, महानील और निन्यानवेकरोड़ मुनि मोक्षपदप्राप्ता अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

अष्टक।

गंगाजल प्रासुक भर झारी, तुव चरनन ढिग धारों,
परिग्रह तिसना लगी आदिकी, ताको हूँ निरवारों।
राम हनू सुग्रीव आदि जे, तुंगीगिरि थित थाई,
कोडि निन्यानवे मुकत गये मुनि, पूजों मन वच काई॥
ॐ ह्रीं श्रीतुंगीगिरिसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०
चन्दन केशर गार भली विधि, धार देत पद आगे।
भव भरमन आताप जासतें, पूजत तुरतहिं भागे॥राम०॥
ॐ ह्रीं श्रीतुंगीगिरिसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि०
मुक्ताफल सम उज्ज्वल अक्षत, थार धारकर पूजों।
अक्षयपदको प्रापति कारन, या सम और न दूजो। राम०॥
ॐ ह्रीं श्रीतुंगीगिरिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये चन्दनं नि०।
कमल केतकी बेल चमेली, जापर अलि गुंजावे।
पुहुप नसों अरचों तुम चरनन, कामविथा मिट जावे। राम०॥
ॐ ह्रीं श्रीतुंगीगिरिसिद्धक्षेत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं।
गूंजा खाजे व्यंजन ताजे, तुरतहिं घृत उपराजे।
दृग सुख का न सन्मुख धारे, क्षुधावेदनी भाजे॥ राम०॥
ॐ ह्रीं श्रीतुंगीगिरिसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं।

दीप रतनकर सुरपति पूजत, हम कपूर धर खासे ।
नाशे मिथ्यातम अनादिको, ज्ञान भानु परकाशे ॥ राम० ॥
ॐ ह्रीं श्रीतुंगीगिरिसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं।
अगर तगर कृष्णागरु चन्दन, जे सुवास मन भावें ।
खेवत धूप धूमके मिसकर, दुष्ट करम उड़ जावें ॥राम०॥
ॐ ह्रीं श्रीतुंगीगिरिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व० ।
श्रीफल पुंगी शुचि नारंगी, केला आम्र सुवासा ।
पूजत अष्ट करम दल धूजत, पाऊँ पद अविनासी ॥ राम०॥
ॐ ह्रीं श्रीतुंगीगिरिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व० ।
जल फलादि वसु दरव साजके, हेमपात्र भर लाऊं ।
मन वच काय नमूं तुव चरना, बार बार शिर नाऊं ॥राम०
ॐ ह्रीं श्रीतुंगीगिरिसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

जयमाला ।

दोहा ।

राम हनू सुग्रीव आदि जे, तुंगीगिरि थित थाय ।
कोडि निन्यानवे मुकति गये, पूजों मन वच काय ॥१॥
तुम पद प्रापत कारने, सुमरों तुव गुणमाल ।
मति माफक वरनन करों, सार सुभग जयमाल ॥२॥

धन्य धन्य मुनिराज, कठिन व्रतधारी, भव भवमें सेवा चरन मिले मुझ थारी । दो पर्वत हैं अति तुंग चूलिका

भारी, मनो मेरु शिखर उनहार दगन सुखकारो ॥३॥ पहलो है मंगी नाम तुंगी है दूजा, जहाँ चढ़त जीव थक जात करम चिर धूजा। अति सुन्दर मन्दिर लखत भई सुध म्हारी, भव भवमें सवा चरन मिले मुह थारी। धन्य धन्य मुनिराज कठिन व्रत धारी, भव भवमें सेवा चरन मिल मुह थारी ॥४॥ जहां राम हनू सुग्रीव सु खग बलधारी, अरु गव गवाच्च महानील नील अघहारी। इन आदि निन्यानवे कोडि मुनी तप कीना, लया पंचमगतिका वास बहुरि गत रही ना ॥५॥ मे पूजों त्रिकरन शुद्धनसे अघ भारी, भव भवमें सेवा चरन मिले मुह थारी। तुम विरत अहिसा लिया दयाके कारन, ता पापनको वच झूठ किया निरवारन ॥६॥ पुनि भये अदचा वस्तु सरवके त्यागी, नव वाढ़ सहित व्रत ब्रह्मचर्य अनुरागी। चउवीस परिग्रह त्याग भये अनगारी, भव भवमें सेवा चरन मिले मुह थारी ॥७॥ षट्काय दयाके हेतु निरख भू चाले, वच शास्त्र उकति अनुसार असतका टाले। भाजन के षट्चालीस दोष निरवारे, लख जंतु वस्तुको लेय देख भू धारे ॥८॥ पन करन विषै चकचूर भये अविकारी, भव भवमें सेवा चरन मिले मुह थारी। षट् आवश्यक नित करें नियम निरवाहें, तज न्हवन क्रिया जलकाय घात ना चाहें ॥९॥ निज करसों लुञ्चे केश राग तन भागी, बालकवत निर्भय रहें वस्त्रके त्यागी। कबहू दंतधवन नहिं करें दया

व्रतधारी, भव भवमें सेवा चरन मिले सुह थारी ॥१०॥ बिन जांचे भोजन लेय उद्दंड अहारी, लघु भक्ति करें इक बार तपी अधिकारी। जामें आलस न बढ़े राग हू हीना, निशि दिन रस आतम चखे करे विधि छीना ॥११॥ कर घात करम चउ नाश ज्ञान उजियारी, भव भवमें सेवा चरन मिले सुह थारी। दे भव्यनको उपदेश अघाती जारे, भये मुकतिरमाके कंत अष्ट गुन धारे ॥१२॥ तिन सिद्धनिको मैं नमों सिद्धिके काजा, सिधथल में दे सुहवास त्रिजगके राजा। नावत नित माथ 'गुपाल' तुम्हें बहु भारी, भव भवमें सेवा चरन मिले सुह थारी ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीमांगीतुंगी सिद्धक्षेत्रसे राम हनू सुग्रीव सुडील गव गवाख्य नील महानील और निन्यानवे करोड़ मुनि मोक्षपदप्राप्तेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

घत्ता।

तुम गुनमाला परम विशाला, जो पहरे नित्य भव्य गले।
नाशें अघजाला ह्व सुख हाला, नित प्रति मंगल होत भले ॥१४

इत्याशीर्वादः।

श्रीकुन्थलगिरि पूजा ।

[श्रीयुत कन्हैयालालजी कृत]

दोहा ।

तीरथ परम पवित्र अति, कुंथ शल शुभ थान ।
जहांते मुनि शिवथल गये, पूजों थिर मन आन ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थलगिरिसिद्धक्षेत्रसे कुलभूषण देशभूषण मुनि मोक्षपदप्राप्त अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक ।

अडिल्ल ।

उत्तम उज्ज्वल नीर क्षीर सम छानके,
कनक पात्रमें धार देत त्रय आनके ।
पूजों सिद्ध सु क्षेत्र हिये हरषायके,
कर मन वच तन शुद्ध करमवश टारके ॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथलगिरिसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदन दाह निकंदन केशर गारकें ।
अरचों तुम ढिंग आय शुद्ध मन धारकें ॥ पूजों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथलगिरिसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं ।

तंदुल सोम समान अखंडित आनकें ।
हाटक थार भराय जजों शिर नायकें ॥ पूजों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथलगिरिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि० ।

सुरद्रु म सम जे पुष्प सुगंधित लायकें।
दहन काम पन वाण धरों सुख पायकें॥ पूजों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथलगिरिसिद्धक्षेत्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं।

व्यंजन विविध प्रकार पगे घृत खांड के।
अरपत श्रीजिनराज छुधा ढिग छांड़के॥ पूजों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथलगिरिसिद्धक्षेत्राय छुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि०

कनक थार में धार कपूर जलाय के।
बोध लह्यो तम नाश मिथ्या भ्रम जालके॥ पूजों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथलगिरिसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं नि०

अगर आदि दस वस्तु गंध जुत मेल के।
करम दहन के काज दहों ढिग शलके॥ पूजों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थलगिरिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि०।

फल उत्कृष्ट सु मिष्ट जे प्रासुक लायके।
शिवफल प्रापति काज जजों उमगाय के॥ पूजों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथलगिरिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०।

जल फलादि वसु दरब लेय शुति ठान के।
अर्घ जजों तुम पाय हरष मन आनके॥ पूजों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथलगिरिसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि०।

जयमाला।

दोहा।

तुम गुन अगम अपार गुरु, मैं बुधि कर हों बाल।
पै सहाय तुव भक्तिवश, वरनत तुव गुनमाल॥ १ ॥

पद्धरी छंद।

कुल ऊँच राय सुत अति गंभीर, कुलभूषण दिशभूषण भये वीर। लख राज-ऋद्धिको अति असार, वय बाल माहिं तप कठिन धार ॥ २ ॥ द्वादश विधि व्रतकी सहत पीर, तेरह विधि चारित धरत वीर। गुन मूल बीस अरु आठ धार, सहें परीषह दस अरु आठ चार ॥ ३ ॥ भू निरख जंतु कर नित विहार, धर्मोपदेश देते विचार। मुनि भरमत पहुँचे कुंथ शैल, पाहन तरु कंटक कठिन गैल ॥ ४ ॥ निर्जन वन लख भये ध्यान लीन, सुर पूरवअरि उपसर्ग कीन। बहु सिंह सर्प अरु दैत्य आय, गरजत फुंकारत मुख चलाय ॥ ५ ॥ तहां राम लखन सीता समेत, ता दिन थिति कीनी थी अचेत। मुनिपर वेदन यह लखत घोर, दोउ वीर उचारे वच कठोर ॥ ६ ॥ रे देव! दुष्ट तू जाति नीच, मुनि दुखित किये तुझ आई मीच। हम आगे तू कित भाग जाय, तुह देहें दुःकृतकी सजाय ॥ ७ ॥ यह कह दोऊ कर धनुष धार, हरि बल लखि सुर डरपो अपार। तब मान सीस मुनि चरण धार, ता छिन घाते विधि घाति चार ॥ ८ ॥ उपजत केवल सुरकलप आय, रांच गंधकुटी पद शीस नाय। सुन निज भव सुर आनंद पाय, जुग विद्या दे निज थल सिधाय ॥९॥ प्रभु भाषे दो विधि धर्म सार, सुन धारे जिनते भये पार। मुनिराज अघाती घात कीन, गतिपंचम थिति अचलिलीन

॥ १० ॥ पूजा सुर नर निरवान कीन, गति ऊंचतनो फल सुफल लीन। भव भरमत हम बहु दुःख पाय, पूजें तुम चरना चित्त लगा ॥ ११ ॥ अरजी सुन कीजे महर आप, नासों मेरा भव भ्रमन ताप। विनवे अधिको क्या 'कनइलाल', दुख मेट सकल सुख देव हाल ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेशभूषणकुलभूषणमोक्षपदप्राप्तकुन्थलगिरिसिद्धक्षेत्राय पूर्णार्घं निर्वमामीति स्वाहा।

घत्ता।

तुम दुखहर्ता सब सुखकर्ता, भर्ता शिवतिय मोक्षपती।
मैं शरने आया तुम गुन गाया, उमगाया ज्यों हती मती ॥

इत्याशीर्वादः।

श्रीमुक्तागिरि पूजा।

(स्व० कवि जवाहरलालजी कृत)

दोहा।

मुक्तागिरि तारथ परम, सकल सिद्धि दातार।
तातें पावन होत निज, नमों सीस कर धार ॥१॥

गीता छन्द।

येही जम्बूद्वीप मध्य भरतक्षेत्र सा जानिये,
आरज सो खंड मझार, जाके परम सुन्दर मानिये।
ईशान दिशि अचला जु पुरकी, नाम मुक्तागिरि तहां,
कोड़ि साढ़े तीन मुनिवर, शिवपुरी पहुंचे जहां ॥ २ ॥

दोहा।

पारसप्रभुको आदि दे, चौबीसों जिनराय।
पूजों पद जुग पद्म सम, सुर शिवपद सुखदाय॥

ॐ ह्रीं मुक्तागिरिसिद्धक्षेत्रसे साड़ेतीनकरोड़मुनिमोक्षपदप्राप्ता अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक।

परम प्रासुक नीर निर्मल, क्षीर दधि सम लीजिये,
हेम झारी मांहि भरके, धार सुन्दर दीजिये।
तीर्थ मुक्तागिरि मनोहर, परम पावन शुभ कहो,
कोटि साड़े तीन मुनिवर, जहांते शिवपुर लहो॥

ॐ ह्रीं श्रीमुक्तागिरिसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

चंदन सु पावन दुख मिटावन, अति सुगंध मिलाइये।
डार कर कपूर केशर, नीर सों घिस लाइये॥ तीर्थ०॥

ॐ ह्रीं श्रीमुक्तागिरिसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं नि०

विमल तंदुल ले अखंडित, ज्योति निशिपति सम धरे।
कनक थारी मांहि धरके, पूज कर पावन परे॥ तीर्थ०॥

ॐ ह्रीं श्रीमुक्तागिरिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्व०।

सुरवृक्षके सम फूल लेकर, गंधकर मधुकर फिरें।
मदनवाण विनाशवेकों, प्रभु चरन पूजा करें॥ तीर्थ०॥

ॐ ह्रीं श्रीमुक्तागिरिसिद्धक्षेत्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं नि०।

छहों रसकर युक्त नेवज, कनक थारी में भरों।
भाव से प्रभु चरन पूजों, क्षुधादिक मनकी हरों ॥ तीर्थं० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमुक्तागिरिसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निः।
रतनदीप कपूर वाती, जोति जगमग होत है।
मोहतिमिर विनाशवेको, भानु सम उद्योत है ॥ तीर्थं० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमुक्तागिरिसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं नि०
कूट मलयागिरि सो चन्दन, अगर आदि मिलाइये।
ले दशांगी धूप सुन्दर, अगनि मांहि जराइये ॥ तीर्थं० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमुक्तागिरिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि०।
ल्याय एला लोंग दाडिम, और फल बहुते घने।
नेत्र रसना लगे सुन्दर, फल अनूप चढ़ावने ॥ तीर्थं० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमुक्तागिरिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०।
जल गंध आदिक द्रव्य लेके, अर्घ कर ले आवने।
लाय चरन चढ़ाय भविजन, मोक्षफलको पावने ॥ तीर्थं० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमुक्तागिरिसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि०।

दोहा।

मुक्तागिरिके सीसपर, बहुत जिनालय जान।
तिनकी अब जयमालिका, सुनो भव्य दे कान ॥ १ ॥

जयमाला।

पद्धरी छन्द।

श्रीमुक्तागिरि तीरथ विशाल, महिमा जाकी अद्भुत रसाल। जुग पर्वत बीच परे दो कौन, मुक्तागिरि जहां

सुखको सु भौन ॥ २ ॥ चहिय सिवान जहां ऊपर सो भान, दहलाने पर सो सार जान। यात्री जहां डेरा करें आय, अति मुदित ह्वै चित्त उमगाय ॥ ३ ॥ ऊपर शुचि जलसों भरे कुंड, जहं सपरे यात्रिन के सु झुंड। बहु विधि की द्रव्य धरी सो धोय, पूजन का भविजन चले सोय ॥ ४ ॥ जहां मन्दिर बीच बने रसाल, पारसप्रभु की मूरत विशाल। पूजत जहां भविजन हरष धार, भव भवको पुण्य भरे भंडार ॥ ५ ॥ बावन जगह दर्शन जिनेश, पूजत जिनवर को सुर महेश। इक मन्दिर में भुयरो जु सोय, प्रतिमा श्रीशान्तिजिनेश होय ॥ ६ ॥ दर्शन कर नरभव सुफल होय, जहां जन्म-जन्म के पाप खोय। मेंढ़ागिरिकी हैं गुफा भाय, मन्दिर सुन्दर इक माम काय ॥ ७ ॥ प्रतिमा श्रीजिनवर देवराज, दर्शन कर पूरन होंय काज। मेंढ़ागिरि के ऊपर सुजान, द्वय टोंक बनी अति सौम्यमान ॥ ८ ॥ इक पांडे बालक मुनि कराय, इक भागवली का जान रमाय। जहां श्रीजिनवर के चरण सार, बंदत मनवांछित सुखदातार ॥ ९ ॥ बावन मन्दिर जहं शोभकार, महिमा तिनकी अद्भुत अपार। जहं सुर आवत नित प्रति हमेश, स्तुति करते प्रभु तुम दिनेश ॥१०॥ जहं सुर नाचत नाना प्रकार, जै जै जै जै जै धुनि उच्चार। थैं थैं थैं अब नाचत सुचाल, अति हर्ष सहित नित नमत भाल ॥११॥ मुहचंग उपंग सु तूरसजे, मुरली स्वर वीन प्रवीन

बजे । द्रुम द्रुम द्रुम द्रुम बाजत मृदंग, झननननननन नूपुर सु रंग ॥ १२ ॥ तननननननन परे तसु तान, घननन घंटा करत ध्वान । इहि बिधि वादित्र बाजें अपार, सुर गावत अब नाना प्रकार ॥ १३ ॥ अतिशय जाके हैं अति विशाल, जहां केशर अब बरसे त्रिकाल । अनहद नि र बाजें बाजे अपार, गंधादकादिक वर्षा की बहार ॥ १४ ॥ तहां मारुत मंद सुगंध सोय, जिय जात जहां न विरोध होय । अतिशय जहां नाना प्रकार, भविजन हिय में हरष धार ॥ १५ ॥ जहां कोड़ जु साढ़े तीन मान, मुनि मोक्ष गये सुनिये सुजान । वंदत 'जवाहर' अब बार बार, भवसागर से प्रभु तार तार ॥ १६ ॥ प्रभु अशरन शरन अधार धार, सब विघ्न तूल गिरि जार जार । तू धन्य देव कृपानिधान, अज्ञान मिथ्यातम हरन भान ॥ १७ ॥ प्रभु दयासिंधु जै जै महेश, भव बाधा अब मेटो जिनेश । मैं बहुत भ्रम्यो चिरकाल काल, अब हो दयाल मुझ पाल पाल ॥ १८ ॥ तातें मैं तुमरे शरण आय, यह अरज करूं पग शीस नाय । मम कर्म बंध देउ चूर चूर, आनंद अनूपम पूर पूर ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमुक्तागिरिसिद्धक्षेत्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

घत्ता ।

मुक्तागिरि पूजे अति सुख हूजे, ऋद्धि होय है भर पूरी ।
अति कर्म विनाशे ज्ञान प्रकाशे, शिव पदवीको सुखकारी ॥२०॥

दोहा।

अठरा सौ इक्यानवे, वैशाख मास तम लीन।
तिथि दशमी शनिवार की, पूजा समापत कीन ॥२१॥

इत्याशीर्वादः।

श्रीसिद्धवरकूट पूजा।

(श्रीयुत स्व० भट्टारक महेन्द्रकीर्त्तिजी कृत)

दोहा।

सिद्धकूट तीरथ महा, है उत्कृष्ट सुथान।
मन वच काया कर नमों, होय पापकी हान ॥ १ ॥

दोय चक्री मन्मथ जु दस, गये तहँते निर्वान।
पद पङ्कज तिनके नमों, हरे कर्म बलवान् ॥ २ ॥

रेवाजी के तटनतें, हूंठ कोडि मुनि जान।
कर्म काट तहंते गये, मोक्षपुरी शुभ थान ॥ ३ ॥

जग में तीर्थ प्रधान है, सिद्धवरकूट महान।
अल्पमती मैं किमि कहों, अद्भुत महिमा जान ॥ ४ ॥

अडिल्ल छन्द।

इन्द्रादिक सुर जाय, तहाँ बन्दन करें,
नागपति तहँ आय, बहुत शुति उच्चरें।
नरपति नित प्रति जाय, तहां बहु भावसों,
पूजन करहिं त्रिकाल, भगत बहु चावसों॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसे दोचक्री दशकामकुमारादि साढ़े तीन करोड़ मुनि सिद्धपद प्राप्ता अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक।

चाल—नंदीश्वर पूजा की।

उत्तम रेवा जल ल्याय, मणिमय भर झारी,
प्रभु चरनन देउं चढ़ाय, जन्म जरा हारी।
द्वय चक्री दस कामकुमार, भवतर मोक्ष गये,
तातें पूजों पद सार, मन में हरष ठये॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं।

मलयागिरि चन्दन ल्याय, केशर शुभ डारी।
प्रभु चरनन देत चढ़ाय, भवभय दुखहारी॥ द्वय चक्री० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं।

तंदुल उज्ज्वल अविकार, मुकतासम सोहे।
भरकर कंचनमय थाल, सुर नर मन मोहे॥ द्वय चक्री० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि०।

ले पहुप सुगंधित सार, तापर अलि गाजे।
जिन चरनन देत चढ़ाय, कामव्यथा भाजे॥ द्वय चक्री० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसिद्धक्षेत्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०।

नेवज नाना प्रकार, षट्रस स्वाद मई ।
पद पङ्कज देहुं चढ़ाय, सुवरन थार लई ॥ द्वय चक्री० ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०
मणिमय दीपक को ल्याय, कदलीसुत बाती ।
जोती जगमग लहकाय, मोह तिमिर घाती ॥ द्वय चक्री० ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं ।
कृष्णागरु आदिक ल्याय, धूप दहन खेई ।
वसु दुष्ट करम जर जांय, भव भव सुख लेई ।।द्वय चक्री०॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व० ।
श्रीफल दाख बदाम, केला अमृत मई ।
लेकर बहु फल सुख धाम, जिनवर पूज ठई ॥द्वय चक्री०॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।
जल चन्दन अक्षत लेय, सुमन महा प्यारी ।
चरु दीप धूप फल सोय, अरघ करो भारी ॥ द्वय चक्री० ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

जयमाला ।

दोहा ।

सिद्धवर कूट सुथान की, रचना कहूं बनाय ।
अति विचित्र रमनीक अति, कहत अल्प कर भाय ॥१॥

पद्धरी छन्द ।

जय पर्वत अति उन्नत विशाल, तापर त्रय मन्दिर शोभकार । तामें जिनबिम्ब विराजमान, जय रत्नमई प्रतिमा

बखान ॥२॥ ताकी शोभा किमि कहे सोय, सुरपति मन देखत थकित होय। तिन मन्दिरकी दिश चार जान, तिनकूं बरनूं अब प्रीति ठान ॥३॥ ताकी पूरब दिशि ताल जान, तामें सु कमल फूले महान। कमलनपर मधुकर भ्रमे जोय, ता धुनकर पूरित दिशा होय ॥४॥ ता सरवर पर नाना प्रकार, द्रुम फल रहे अति शोभकार। छह ऋतुके वृक्ष फूले फलाय, ऋतुराज सदा क्रीड़ा कराय ॥५॥ मंदिरनकी दच्छिन दिशा सार, सुरनदी बहे रेवा जु सार। ताके तट दोनों अति पवित्र, विद्याधर बहु विधि करें नृत्य ॥६॥ फिर तहँ ते उत्तर दिशा जान, इक कुन्ड बनो है शोभमान। ता कुन्ड बीच यात्री नहाय, तिन बहुत जनमके पाप जाय ॥७॥ ता कुन्ड ऊपर अति विचित्र, इक पांडुशिला है अति पवित्र। तिस थान बीच देवेन्द्र साय, जिनबिम्ब धरे हैं सीस जोय ॥८॥ ताकी पश्चिम दिशि अति विशाल, कावेरी सोहे अति रसाल। इन आदि मध्य जु भूमि जान, जय स्वयंसिद्ध परवत महान ॥९॥ तापर तप धारी दोय चक्रीश, दस कामकुमार भये जगतईश। इन आदि मुनि आहूठ कोड़, तिनको बंदों मैं हाथ जोड़ ॥१०॥ इनको केवल उपज्यो सुज्ञान, देवेन्द्र जु आसन कँपो जान। तब अमरपुरीतें इन्द्र आय, तहँ अष्ट द्रव्य साजे बनाय ॥११॥ तब पूजा ठाने देवइन्द्र, सब मिलके गावें शतक इन्द्र। तहँ यात्री आवें झुण्ड झुण्ड। सब पूज

धरें तंदुल अखंड ॥१२॥ कोई श्रीफल लावे अरु बादाम, कोई पुंगीफलको सु नाम। कोई अमृतफल केला सु लाय, कोई अष्ट द्रव्य ले पूज ठाय ॥१३॥ केई सूत्र पढ़ें अति हर्ष ठान, केई शास्त्र सुनें बहु प्रीति मान। कोई जिनगुन गावें सुर संगीत, कोई नाचें गावें धरें प्रीत ॥१४॥ इत्यादि ठाठ नितप्रति लहाय, वरनन किम मुखतें कह्यो जाय। सुरपति खगपति कौ जु सोय, रचना देखत मन थकित होय ॥१५॥ सुर नर विद्याधर हर्ष मान, जिन गुन गावें हिय प्रीति ठान।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धवरकूटसिद्धक्षेत्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

घत्ता छन्द।

जो सिधवर पूजे, अति सुख हूजे, ता गृह संपति नाहि टरे।
ताको जस सुर नर मिल गावें 'महेन्द्रकीर्त्ति' जिनभक्ति करे॥१६

दोहा।

सिद्धवरकूट सुथानकी, महिमा अगम अपार।
अल्पमती मैं किमि कहौं, सुरगुरु लहैं न पार ॥१७॥

इत्याशीर्वादः।

चूलगिरि (बावनगजा) की पूजा।

[श्रीयुत छगनजी कृत]

छंद शार्दूलविक्रीडित।

आर्या क्षेत्र विहार बोध भवि ये दशग्रीव सुत भ्रातना,
सम्यक्तादि गुणाष्ट प्राप्ति शिव कर्मारि घाती हना।

ता भगवान प्रति प्रार्थना सुध हृदै त्वद्भक्ति मम वासना,
आव्हानन विमुक्तनाथ तु पुनः अत्राय तिष्ठा जिना ॥

ॐ ह्रीं श्रीबड़वानी चूलिगिरिसे इन्द्रजीत कुम्भकर्णादि मुनि सिद्धपदप्राप्ता अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ. ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक।

गीता छन्द।

पश्चम उदधि सम नीर ले, त्रय धार तिन चरणन करा,
चिर रुजग जन्म जरारु अतक, ताहि अब तो परिहरो।
दशग्रीव अंगज अनुज आदि, ऋषीश जहँतें शिव लहो।
सो शैल बड़वानी निकट गिरिचूलकी पूजा ठही॥

ॐ ह्रीं श्रीचूलगिरिसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं।

घसि मलय कुमकुम शुद्ध जा, अलिगण न छोड़े तासको।
सो गंध शीतल कंद सजे, भव विरह हर भवतापको॥दश०॥

ॐ ह्रीं श्रीचूलगिरिसिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चदनं।

शशि वर्ण खंडन मुक्त शोभा, मुक्त नहिं ताकी धरें।
सो शालि तंदुल करन मंगल, वेग भव वन की हरें॥दश॥

ॐ ह्रीं श्रीचूलगिरिसिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्व०।

सुरद्रुम निपज सुरलोकके, बहु वर्ण फूल मगाइये।
अथवा कनक कृत बेल मोगर, चंपकादि चुनाइये॥दश०॥

ॐ ह्रीं श्रीचूलगिरिसिद्धक्षेत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं।

कृत सूपकार अनूप छह रस, युक्त अमृत मान जो।
सो चारु चरु जिन अग्र धर, निज भूख वेदन टारि जो।।द०
ॐ ह्रीं श्रीचूलगिरिसिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं।
बहुमूल्य रत्न उद्यातयुत, भय वायु वरजित जो जगे।
सो दीप कंचन थाल धर. अरि दुष्ट मोहादिक भजे।।द०।।
ॐ ह्रीं श्रीचूलगिरिसिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं।
दशगंध कृष्णागरु कपूरादिक, सुगंधित लावने।
दहि ज्वलन मध्य मनो भवान्तर, सर्वके विधि जालने। द०
ॐ ह्रीं श्रीचूलगिरिसिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०।
सौमनस नंदन वृक्षक युत, मिष्ट ता फल लेयके।
ता देखते दृग प्राण मोहे, मोक्षपुर कूं देयके ॥ दश० ॥
ॐ ह्रीं श्रीचूलगिरिसिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०।
सजि सौंज आठो होयठाढा, हरष बाढ़ा कथन बिन।
हे नाथ भक्तिवश मिलजो, पुर न छूटे एक दिन ॥ द० ॥
ॐ ह्रीं श्रीचूलगिरिसिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि०।

जयमाला।

सोरठा।

करमन कर चकचूर, बसिय शिवालय जाय तुम।
मेरी आशा पूर, बहुत दुखी संसारमें ॥ १ ॥

पद्धरी छंद।

वंदों श्री युगल ऋषीश स्वाम, कर कर्मयुद्ध लहि मोक्ष धाम।
है इन्द्रजीत तुम सत्य नाम, कामेन्द्र मोहको कियो काम ॥

हो कुंभकर्ण सार्थकहि आप, भवकर्ण ज्ञान तुम कुंभ थाप ।
कर्मन कृत बंदों गृह मझार, बलि वासुदेवने दये डार ॥
सत ज्ञान वानि सम्यक्त युक्त, जानों सत चारित आप युक्त ।
विधि रिपु दुखदाई मूल जान, तापै तमने खैंची कमान ॥
औ सर्व जीवसों क्षमा धार, भाई अनुप्रेक्षा परम सार ।
तन आदि अथिर दीखे समस्त, है नेहकरन सम कौन वस्त ।,
अशरण न शरण कहुँ जगतमाहिं, अहमिन्द्रादिक मृत्यू लहाहिं ॥
भववनमें है नहिं सार कुच्छ, तीर्थंकर त्यागें जान तुच्छ ॥
ये जीव भ्रमत एकाकि आप, नहि संग मित्र सुत मात बाप ।
ये देह अन्य फिर कौन सुज्झ, वश मोह परत न हिये सुज्झ ॥
पल रुधिर पीव मल मूत्र आदि, इनकर निपजी तन होय स्वाद ॥
जोगनाह चपलता कर्म द्वार, तिन रोक हिये संवर विचार ॥
तपबल छूटनविधि करमसुक्ख, तिहुँलोक भ्रमत लहि जीवदुक्ख
बिन बोध भ्रम्या चहुँगति मझार, शिवकर्त्ता धर्म कदे न धार ॥
यों चिंतत बहुजन लार लेय, जिनदीक्षा धारी हित करेय ।
अट्ठाइस गुण मुनि मूल धार, चारों आराधना कुं अराध ॥
नाना विधि आसन धार धार, तप करत युद्ध विधि मार मार ।
चउ घाति नाश केवल उपाय, भवि जीव बोधि जिनवृष लगाय
करके विहार भवि सुक्खमाय, बड़वानी आये अन्त आय ।
गिरिचूल तिष्ठ करि कर्मनाश, छिनमें संसार कियो विनाश ॥
अति आनंददायक सिद्धक्षेत्र, पूजें भविजीव निजात्म हेत ।

धन धन्य तिनहिको भाग्य जान, तिन पुण्यबंध होवे महान॥
इन्द्रादि आय उत्सव अनूप, कीनो लहि हर्षित भये भूप।
ता गिरिकी उत्तर दिशि मझार, रेवा सरिता है पूर्ण वार॥
ॐ ह्रीं श्रीबड़वानीचलगिरिसे इन्द्रजीत कुंभकर्णादि मुनि सिद्धपद-प्राप्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

घत्ता।

गिरिराज अनूपं पूजे भूपं, तिन भविकूपं जल दीना।
यामें शक नाहीं कर्म नशाही, 'छगन' मगन होय थुति कीना॥

इत्याशीर्वादः।

श्रीसुदर्शनसिद्धक्षेत्रपटनाकी पूजा।

(बाबू पन्नालालजी कृत)

दोहा।

उत्तम देश बिहार में, पटना नगर सुहाय।
सेठ सुदर्शन शिव गये, पूजों मन वच काय॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्र से सुदर्शन सेठ सिद्धपद प्राप्त अत्र अवतर अवतर संवौषट् आव्हाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक।

नित पूजोरे भाई या श्रावक कुल में आयकें।
नित पूजोरे भाई श्रीपटना नगर सुहावनो॥
गंगाजल अति शुद्ध मनोहर, झारी कनक भराई।
जन्म जरा मृत नाशन कारन, ढारों नेह लगाई॥ नि०

जंबूद्वीप भरत आरज में, देश बिहार सुहाई।
पटना नगरी उपवनमें, शिव सेठ सुदर्शन पाई ॥ नि०
ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०
चंदन चंद्र मिलायसु उज्ज्वल, केशर संग घिसाई।
महक उड़े सब दिशनु मनोहर, पूजों जिनपदराई ॥ नि०
ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं नि०।
शुद्ध अमल शशिसम मुक्ताफल, अक्षत पुंज सुहाई।
अक्षयपद के कारण भविजन, पूजों मन हरषाई ॥ नि०
ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि०।
पांचों विधिके पुष्प सुगंधित, नभलों महक उड़ाई।
पूजो काम विकार मिटावन, श्रीजिनके ढिग जाई ॥ नि०
ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०।
उत्तम नेवज मिष्ट सुधासम, रस संयुक्त बनाई।
भूख निवारन कंचन थारन, भर भर देहु चढ़ाई ॥ नि०
ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०।
मनियम भाजन घृतसे पूरित, जगमग जोति जगाई।
सब मिल भविजन करो आरती, मिथ्या तिमिर पलाई ॥ नि०
ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं नि०।
अगर तगर कपूर सुहावन, द्रव्य सुगंध मँगाई।
खेवो धूप धूम से वसुविधि, करम कलंक जराई ॥ नि०
ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥ ७ ॥
एला केला लोंग सुपारी, नरियल फल सुखदाई।

भर भर पूजों थाल भविकजन, वांछित फल पाई ॥ नि०
ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥ ८ ॥
अष्ट दरव ले पूज रचाओ, सब मिल हर्ष बढ़ाई ।
झालर घंटा नाद बजाओ, 'पन्ना' मंगल गाई ॥ नि०
ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ नि० ॥ ९ ॥

जयमाला ।

दोहा ।

सेठ सुदर्शन जे भये, शीलवान गुणखान ।
तिनकी अब जयमालिका, सुनहु भव्य दे कान ॥१॥

पद्धरी छन्द ।

जै सेठ सुदर्शन शीलवंत, जग छाय रही महिमा अनंत । तिनकी कछु मै जैमाल गाय, उर पूज रचाऊँ हर्ष ठाय ॥ २ ॥ जै भरतक्षेत्र मधि अंग देश, चंपापुर सोहे तहँ विशेष । नृप धात्रीवाहन राज गेह, प्रिय अभयमती सों अति सनेह ॥ ३ ॥ तहँ मुख्य शेठ इक वृषभदास, तिन शेठानी जिनमतिय खास । तिन चाकर ग्वाला सुभग नाम, मुनि देखे वन में एक जाम ॥ ४ ॥ सो महामंत्र नवकार पाय, अति भयो प्रफुल्लित कहि न जाय । पुनि एक दिवस गंगा मंझार, वह डूबत में जापत मंत्र सार ॥ ५ ॥ तुरतहिं मर शेठ घरे विशाल, सुत भयो सुदर्शन भाग्यशाल । सबको सुखदाई मिष्टवैन, निज कपिल यार संग दिवस रैन ॥६॥

पढ़ि खेल कूद भयो अति सबान, तब सेठ मनोरमा संग सुजान। शुभ साइत ब्याह दियो कराय, सो भोगत सुख अति हर्ष ठाय ॥ ७ ॥ पुनि कछुक काल भीतर सुकंत, सुत एक भयो अति रूपवंत। तब शेठ सुदर्शन धीरवान, निज काम करें अति हर्ष ठान ॥ ८ ॥ तब कपिल नारि आसक्त होय, घर सेठ बुलाये तुरत सोय। तहं सेठ नपुंसक मिस बनाय, निज शील लियो ऐसे बचाय ॥६॥ जब खबर सुनी राना तुरंत, मन करी प्रतिज्ञा दीढवंत। मैं भोग करूं वासु सिहाय, तब ही मम जीवन सुफल थाय ॥ १० ॥ इन सेठ अष्टमी कर उपास, मरघटमें ध्यानारूढ़ खास। तहं चेली उनके पास जाय, रानी को हाल दियो सुनाय ॥ ११ ॥ तह सेठ निरुत्तर देखि हाय, निज कन्धेपें धरिके उठाय। फिर पहुँची रानी पास जाय, उन अचल देख तुरतै रिसाय ॥१२॥ यों खबर करी नृपपास जाय, मो शील बिगार्यो सेठ आय। यों सुनत वैन नृप क्रोध छाय, मारनको हुक्म दियो सुनाय ॥ १३ ॥ वहाँ करी प्रतिज्ञा शीलवंत, मुनि पदवी धारूं यदि बचंत। सो देव करी रक्षा सु आय, पुनि दीक्षित ह्वै वनको सिधाय ॥ १४ ॥ सो करत करत कछु दिन विहार, तब आये पंटना नगर सार। तहं देवदत्ता वेश्या रहाय, मिस भोजन मुनि लीने बुलाय ॥१५॥ उन कामचेष्टा कर सिहाय, झट सेठ लिये शय्या बिराय। तब ऐसो मनमें कर विचार,

उपसर्ग मेरो यदि हो निवार ॥ १६ ॥ सम्भाल घरं नगरी न जाऊँ, वन ही बन करत तप फिराऊं । यह देख वेश्या निरुपाय, निशि प्रेतभूमि दीने पठाय ॥ १७ ॥ तहं रानी व्यंतर जोनि पाय, नाना उपसर्ग कियो बनाय । मुनि पुण्यभाव से यक्ष आय, तब लिए सेठ तुरतें बचाय ॥ १८ ॥ सो कठिन तपस्या कर निदान, भयो सेठ जहां केवल सु ज्ञान । सो कछुक काल करकें विहार, उन मुक्ति वरी अति श्रेष्ठ नार ॥ १६ ॥

घत्ता ।

इक ग्वाल गमारा जप नवकारा, सेठ सुदर्शन तन पाई ।
सुत लालबिहारी आज्ञाकारी, 'पद्मा' यह पूजा गाई ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्रीपटनासिद्धक्षेत्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
इत्याशीर्वादः ।

हस्तिनागपुरक्षेत्रपूजा ।

छप्पय छन्द । स्थापना ।

प्रथम द्वीप शुभ क्षेत्र भरत दक्षिण दिश छाजै ।
आर्य खंड मझार देश कुरुजाङ्गल राजै ॥
उत्तम तीर्थ हस्तनागपुर नगर महा जी ।
शांति कुंथु अरनाथ गर्भ तप जन्म लहा जी ॥
मुक्तिथान यह प्रथम जिन थित मल्लिनाथ सम्वादथल ।
पावन त्रिपतिम भूमिनित, जजन करी भव्य जन सकल ॥

ॐ ह्रीं श्रीगजपुरक्षेत्रस्थितजिनालयजिनाः अत्रावतरतावतरत संवौषट आह्वाननं । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट सन्निधिकरणम्

अष्टक ।

चाल नन्दीश्वराष्टक ।

जल सुभग सुरसरीन्याय हाटक कुम्भ भरा,
त्रयधार ढार सुखदाय जरमर जन्म जरा ।
श्री गजपुर नगर सुथान श्री जिन चैत्य महा,
सुर नर नित वंदत आन भव तज मोक्ष लहा ॥

ॐ ह्रीं श्रीगजपुरजिनालयजिनेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं

चंदन कपूर घिसाय कुंकुम संग रला ।
प्रभु पद पूजूं हर्षाय भव आताप दला ॥श्री गजपुर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीगजपुरजिनालयजिनेभ्य: चन्दन नि० ।

वर उत्तम अक्षत श्वेत शशि सम अनियारे ।
जिनवर ढिग पुंज करेय अक्षत विधि धारे ॥ श्रीगजपुर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीगजपुरजिनालयजिनेभ्यो अक्षतं ।

पद्म वर्ण सुगन्ध अनूप कुसुम विविध लाये ।
मनमथ मद हर जगभूप लख पूजन आये ॥श्री गजपुर०॥

ॐ ह्रीं श्रीगजपुरजिनालयजिनेभ्य: पुष्पं नि० ।

मोदक बहु सरस सुहाल गुंजा मिष्ट सुधा ।
नेवज कीजे तत्काल नासैं रोग क्षुधा ॥ श्री गजपुर० ॥

ॐ ह्रीं श्रीगजपुरजिनालयजिनेभ्यो नैवेद्यं नि० ।

मणि दीपक ज्योति उजास अद्भुत अविकारे ।

मिथ्यातम मोह पलाय निज गुण विस्तारे ।।श्रीगजपुर०।।
ॐ ह्रीं श्रीगजपुरजिनालयजिनेभ्यो दीपं नि० ।
अष्टांग दशांग सुचूर गंध हुताशन में ।
खेऊं जिनराज हजूर विध अरि नाशन में ।। श्रीगजपुर०।।
ॐ ह्रीं श्रीगजपुरजिनालयजिनेभ्यो धूपं नि० ।
श्रीफल बादाम छुहार पुंगी दाख खरे ।
एलादिक फल अविकार सुवरण थाल भरे ।।श्रीगजपुर०।।
ॐ ह्रीं श्रीगजपुरजिनालयजिनेभ्यः फलं नि० ।

हरगीता छन्द ।

शुभ गंधवारि अखंड अक्षत पुष्प नेवज धूप जी,
वर दीप उत्तम फल मिलाय बनाय अर्घ अनूप जी ।
जिननाथ चरणाम्बुज सदा भवि जजो चित हर्षाय,
भर थार जटित जवाहर निशदिन शुद्ध मन वच काय जी ।।
ॐ ह्रीं हस्तिनागपुरक्षेत्रस्थजिनालयजिनभ्यो अर्घं नि० ।

जयमाला ।

दोहा ।

वारण पुरवर क्षेत्र की, अर्चन कर हितकार ।
अब जयमाला तास की, सुनो सुबुध चित्त धार ।।१।।

पद्धरी छन्द ।

यह प्रथम जिनेन्द्र आहार नग्र, दानीपति भूप श्रेयांस अग्र ।
षोडश सतरा अठदश जिनेश, अय कल्याणक पूजें सुरेश ।।
अरु समवशरण थित मल्लिदेव, अरु पांडुभूप हू नग्र एव ।
तहां मघवा आये बार बार, सज सेन अमरजुत सपरिवार ।।

अद्भुत रचना हरि करी सार, बहु रत्नवृष्टि नाटक अपार ।
कर कर सहस्रभुज देव ईश, नाटे नटवावत नाय शीश ॥
तिस क्षेत्रतनी महिमा महान, को वर्णसके कवि स्वल्पज्ञान ।
श्री जिनमन्दिर राजत उतङ्ग, अरु शिखर कलश बहु धुज सुरङ्ग॥
वन महा विकट निर्भय विकार, तरु पुष्प बेल फल फलत सार
है कूप नीर जुत मिष्ट मिष्ट, बहु धर्मशाल तहां इष्ट इष्ट ॥
नितप्रति निशिदिन भवि जजन हेत, धर उर प्रमोद संघनसमेत
कर अर्चन श्रीजिनचद्रईश, ते लहत पुण्य अति शुभगरीश ॥
वदत वन में तप टोंकजाय, मन वचन काय आनन्द पाय ।
यह अतिशय बरनन सदाकाल, सब टरत विघन अघके जंजाल
कातिक शुक्ला पूनम सुजोय, उत्सव यात्रा प्रति वर्ष होय ।
आवत श्रावक बहु देश देश, चढ़ि चढ़िवाहन सजि सर्वभेस
रथ गजारूढ जिनबिम्ब सार, मङ्गल जय जय जय जय उचार
बहु भक्ति करत गुण गाय गाय, निरतत संगीतादिक रचाय॥
ढप ताल मुरज धुन करत घोर, संसागृदि सारङ्गी तान शोर ।
करताल बजत टनटन ननाय, बीना तन नननन तन ननाय॥
सैनाय बांसुरी शब्द तूर, सैतार सुरावर श्रवन पूर ।
थेई थेई गत नाचत मनुज नार, गावत मङ्गल गुण गण अपार
मनु आनन्दघरभर लग्योआय, मिथ्यातकलुष ततछिन पलाय
प्राकृत सम्यक्त गुण निजाधीन, सरधाजुत शंकादिक विहीन ॥
नरके प्रसाद नर स्वर्ग जाय, अनुक्रम शिवपुर को राजपाय ॥

यह आनत सुबुध नित नमन ठान, अरचा कीजे बहु गुनगान ।
हम यह निशि वंदत है त्रिकाल, अय जोग जुगतकर धर सुभाल
मन वांछित तरुफल है प्रत्यक्ष, है क्षेत्र जवाहर दानदक्ष ॥

दोहा ।

गजपुर तीरथ राज की, महिमा अगम अपार ।
सुनत लखत परसत बढ़त संचय पुण्य भंडार ॥१६॥

महार्घ ।

जो पूजैं जिन पद कमल, गजपुर क्षेत्र सुजाय ।
धर्म अर्थ लहि काम जुत, मोक्ष रमन सुख पाय ॥१७॥

इत्याशीर्वादः ।

पंचपरमेष्ठी की आरती ।

इहिविधि मंगल आरति कीजै, पंच परमपद भज सुख लीजै ॥ टेक ॥ पहली आरति श्रीजिनराजा, भवदधिपार-उतार जिहाजा ॥ इहिविधि० ॥१॥ दूसरि आरति सिद्धन-केरी, सुमरनकरत मिटै भवफेरी ॥ इहविधि० ॥२॥ तीजी आरति सूर मुनिंदा, जनममरनदुख दूर करिंदा ॥ इहिविधि० ॥ ३ ॥ चौथी आरति श्रीउवझाया, दर्शन देखत पाप पलाया ॥४॥ पांचमि आरति साधु तिहारी, कुमतिविनाशन शिव अधिकारी ॥ इहिविधि० ॥५॥ छट्ठी ग्यारहप्रतिमाधारी, श्रावक वंदों आनंदकारी ॥ इहिविधि० ॥६॥ सातमि आरति श्रीजिनवानी, 'द्यानत' सुरगमुकति सुखदानी ॥

इहविधि मंगल आरति कीजै, पंच परमपद भज सुख लीजै ॥ ७ ॥

आरती श्रीजिनराजकी ।

आरति श्रीजिनराज तिहारी, करमदलन संतन हितकारी ॥ टेक ॥ सुरनरअसुर करत तुम सेवा, तुमही सब देवनके देवा ॥ आरति श्री० ॥१॥ पंचमहाव्रत दुद्धर धारे, रागरोष परिणाम विदारे ॥ आरति श्री० ॥२॥ भवभय भीत शरन जे आये, ते परमारथपथ लगाये ॥ आरति श्री०। ३॥ जो तुम नाथ जपै मनमाहीं, जनममरनभय ताको नाहीं ॥ आरति श्री० ॥ ४ ॥ समवसरनसपूरन शोभा, जीते क्रोधमानछललोभा ॥ आरति श्री० ॥ ५ ॥ तुम गुण हम कैसे कार गावैं, गणधर कहत पार नहिं पावैं ॥ आरति श्री०॥ ६ ॥ करुणासागर करुणा कीजे, 'द्यानत' सेवकको सुख दीजे ॥ आरति श्री० ॥ ७ ॥

आरती श्रीमुनिराजकी ।

आरति कीजै श्रीमुनिराजकी, अधमउधारन आतमकाजकी ॥ आरति० ॥ टक ॥ जा लक्ष्मीके सब अभिलाषी, सो साधुन कर्दमवत् नाखी ॥ आरति० ॥ १ ॥ सब जग जीत लियो जिन नारी, सो साधुन नागिनिवत छारी ॥ आरति० ॥ २ ॥ विषयन सब जगजिय वश कीने, ते साधुन विषवत तज दीने ॥ आरति० ॥३॥ भुविको राज

चहत सब प्रानी, जीरन तृणवत त्यागत ध्यानी ॥ आरति०
॥४॥ शत्रु मित्र सुखदुख सम मानै, लाभ अलाभबराबर जानै
आरति० ॥ ५ ॥ छहों कायरचाव्रत धारें, सबको आप
समान निहारें ॥ आरति० ॥६॥ इह आरति पढै जो गावै,
'द्यानत' सुरगमुकति सुख पावै ॥ आरति० ॥

चौथी आरती ।

किस विधि आरति करौं प्रभु तेरी, आतम अकथ जस
बुध नहिं मेरी ॥ टेक ॥ समुदविजयसुत रजमति छारी,
यों वहि थुति नहि होय तुम्हारी ॥ १ ॥ कोट स्तम्भ वेदि
छवि सारी, समोशरण थुति तुमसे न्यारी ॥२॥ चारि ज्ञान
युत तिनके स्वामी, सेवकके प्रभु अन्तर्यामी ॥ ३ ॥ सुनके
वचन भविक शिव जाहीं, सो पुद्गलमें तुम गुण नाहीं ॥४॥
आतम ज्योति समान बताऊं, रवि शशि दीपक मूढ कहाऊं
॥५॥ नमत त्रिजगपति शोभा उनकी, तुम सोभा तुममें निज
गुणकी ॥६॥ मानसिंह महाराजा गावे, तुम महिमा तुमही
बन आवे ॥७॥

निश्चय आरती ।

इह विधि आरति करौं प्रभु तेरी, अमल अबाधित निज
गुणकेरी ॥ टेक ॥ अचल अखंड अतुल अविनाशी, लोका-
लोक सकल परकाशी ॥ इहविध० ॥ १ ॥ ज्ञानदरशसुखबल
गुणधारी, परमातम अविकल अविकारी ॥ इहविधि० ॥२॥

क्रोधआदि रागादिक तेरे, जन्म जरामृतु कर्म न नेर ।।इहविधि० ।। ३ ।। अवपु अबंधकरण सुखरासी, अभय अनाकुल शिव पदवासी ।। इहविधि० ।। ४ ।। रूप न रेख न भेख न कोई, चिन्मूरति प्रभु तुम ही होई ।। इहविधि० ।। ५ ।। अलख अनादि अनंत अरोगी, सिद्धविशुद्ध सुआतमभोगी ।।इहविधि० ।।६।। गुन अनंत किम वचन बतावै, दीपचंद भवि भावन भावै ।। इहविध० ।। ७ ।।

आरती आत्मा

करों आरती आतम देवा, गुणपरजाय अनंत अभेवा ।। टेक ।। जामें सब जग जो जगमाहीं । वसत जगतमें जग-सम नाहीं ।। करौं० ।। १ ।। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ध्यावें । साधु सकल जिसके गुण गावें ।। करौं० ।। २ ।। बिन जाने जिय चिरभव डोले । जिहँ जानें ते शिवपट खोले ।। करौं० ।। ३ ।। अती अमती वचव्योहारा । सा तिहुंकालकरमसों न्यारा ।। करौं० ।। ४ ।। गुरुशिष उभय वचनकरि कहिये । वचनातीत दशा तस लहिये ।। करौं० ।। ५ ।। स्व परभेदका खेद उछेदा । आप आपमें आप निवेदा ।। करौं० ।। ६ ।। सो परमातम शिव-सुख दाता । होहि 'विहारीदास' विख्याता ।। करौं आरती आतम देवा, गुणपरजाय अनंत अभेवा ।

आरती श्री वर्द्धमानजी

करौं आरती वर्द्धमानकी, पावापुर निर्वाण थानकी ।

करौं० ॥ टेक ॥ राग-बिना सब जग जन तारे, द्वेष बिना सब करम बिदारे ॥ करौं० ॥ १ ॥ शील धुरंधर शिव तिय-भोगी, मनवचकायन कहिये योगी ॥ करौं० ॥ २ रत्नत्रय निधि परिग्रह-हारी, ज्ञानसुधा भोजन व्रतधारी ॥ ३ ॥ लोक अलोक व्याप निजमाहीं, सुखमें इन्द्री सुख दुख नाहीं ॥४॥ पंच कल्याण पूज्य विरागी, विमल दिगम्बर अम्बर त्यागी ॥ ५ ॥ गुणमनि भूषण भूषित स्वामी, तीन लोक के अन्तरयामी ॥६॥ कहैं कहां लों तुम सब जाना, द्यान-तकी अभिलाष प्रमानो ॥ ७ ॥

आरती

मंगल आरती आतमराम, तन मंदिर मन उत्तम ठाम ॥ टेक ॥ सम रस जल चन्दन आनन्द, तन्दुल तत्व स्वरूप अमंद ॥ १ ॥ समयसार फूलनिकी माला, अनुभव सुख नेवज भरि थाला ॥ २ ॥ दीपक ज्ञान ध्यानकी धूप, निर-मल भाव महाफल रूप ॥ ३ ॥ सुगुण भविक जन इकरंग लीन, निहचै नवधाभक्ति प्रवीन ॥ ४ ॥ धुनि उत्साहसु अनहद गान, परम समाधि निरत परधान ॥ ५ ॥ बाहिज आतमभाव बहावै, अन्तर ह्वै परमातम ध्यावै ॥६॥ साहिब सेवक भेद मिटाई, द्यानत एक मेक हो जाई ॥ ७ ॥

ग्रन्थमाला के संरक्षक

दया दीपक प्रकाश जी जैन

सुपुत्र

ला० मुलतान सिंह जी सोनीपत निवासी

पहाड़ी धीरज, देहली ।

ॐ

श्रीजैन सिद्धान्त ग्रन्थमाला

पहाड़ी धीरज, देहली

संसार मे ज्ञान के समान सुख देने वाला कोई पदार्थ नहीं है। वह ज्ञान जिनवाणी अथवा जैन साहित्य के द्वारा ही मिलता है। श्री जिनेन्द्र देव की वाणी ही जन साहित्य है और वह तीर्थंकर के समान ही महान पूज्य है।

वर्तमान में जिनवाणी के उद्धार की अत्यन्त आवश्यकता देखकर उसका उद्धार करने और जन वाणी का सारे संसार मे प्रचार करने के उद्देश्य से ही "श्री जैन सिद्धान्त ग्रन्थमाला" स्थापित की गई है।

इसके निम्नलिखित उद्देश्य हैं:—

१—प्राचीन अप्राप्त जैन ग्रन्थों की खोज करके उन को छपवाना।

२—प्राकृत तथा संस्कृत के उपयोगी ग्रन्थों का संशोधन तथा सरल भाषा मे अनुवाद करा कर छपवाना।

३—प्राचीन जैन आचार्य तथा लेखकों का इतिहास तैयार करना और उनके लिखे उपयोगी साहित्य का प्रकाशन करना।

४—जैन तथा अजैनों को जैनधर्म का सरलता से बोध कराने वाली पुस्तकों का प्रकाशन करना।

५— नवीन जैन साहित्य को छपवाकर धर्म का प्रचार करना।

कार्यकारी मंडल के सदस्य

सभापति— श्रीमान् ला० मनोहरलाल जी जौहरी देहली

उपसभापति— ,, पं० अजितकुमारजी शास्त्री मुलतान वाले

मन्त्री—	”	ला० फूलचन्दजी पहाड़ीधीरज देहली
उपमन्त्री—	”	ला० प्रेमचन्दजी जैन (फर्म ला० श्रीराम बुध्दूमलजी सर्राफ)
प्रकाशनमन्त्री—	”	पं० हीरालालजी जैन "कौशल" (साहित्यरत्न, शास्त्री, न्यायतीर्थ)
कोषाध्यक्ष—	”	ला० राजेन्द्रप्रसादजी जैन (फर्म ला० प्यारेलाल जगन्नाथजी) देहली
सदस्य—	”	बा० दयादीपकप्रकाशजी सोनीपत वाले
”	”	बा० महावीर प्रसादजी B.Sc. (सुपरिन्टेन्डेन्ट एग्रीकल्चर विभाग)
”	”	चौ० मुलतान सिंहजी
”	”	ला० कालूरामजी (फर्म ला० कुन्जलाल कुन्दनलालजी नयाबाजार देहली)
”	”	ला० आशानन्दजी मुलतान वाले(फर्म भोलाराम ऋषभ दासजी देहली)
”	”	ला० मंगत रायजी स्याद्वादी देहली
”	”	बा० बगेश्वरनाथजी रोहतकवाले मैनेजर राजेन्द्र आईस एण्ड कोल्ड स्टोरेज देहली
”		श्रीमान् ला० सागरचन्दजी रोहतक वाले
”	”	ला० मुलतानसिंहजी जैन देहली
”	”	ला० इन्द्रसैनजी देहली
”	”	ला० शिखरचन्दजी
”	”	ला० जयचन्दजी "मस्त" देहली
”	”	ला० रतनलाल जी बजाज देहली

२ सदस्यों का स्थान अभी खाली है।

सहायकगण

संरक्षक—२५१) एक मुश्त प्रदान करने वाले महानुभाव होंगे। जिस पुस्तक के छपने से पहले जो संरक्षक बनेंगे उनका चित्र उस पुस्तक में दिया जायगा तथा ग्रन्थमाला से प्रकाशित हुये ग्रन्थ और आगे प्रकाशित होने वाले ग्रन्थ की १०-१० प्रतियाँ भेंट की जावेंगी।

विशेषसहायक—१०१) एक मुश्त प्रदान करने वाले महानुभाव होंगे और उनको ग्रन्थमाला से प्रकाशित ग्रन्थों की ४-४ प्रतियाँ भेट दी जावेंगी।

सहायक—५१) एक मुश्त प्रदान करने वाले महानुभाव होंगे और उनको ग्रन्थमाला से प्रकाशित ग्रन्थों की २-२ प्रतियां भेट दी जाया करेंगी।

आजीवन सदस्य—२५) एक मुश्त प्रदान करने वाले महानुभाव होंगे और उनको ग्रन्थों की १-१ प्रति भेट दी जाया करेगी

संरक्षक, विशेषसहायक, सहायक तथा आजीवन सदस्यों की नामावली हर ग्रन्थ मे प्रकाशित हुआ करेगी।

इसके सिवाय जो महानुभाव उपरोक्त रकम से कम की सहायता देंगे अथवा अपनी ओर से कोई पुस्तक छपाकर ग्रन्थमाला को भेंट करना चाहेंगे वह भी सहर्ष स्वीकार की जावेगी।

संरक्षक

१. बा० दयादीपक प्रकाश सोनीपत निवासी।
२. ला० नन्हेमल नेमचन्द जी रईस।
३. ला० पदमचन्द शिखरचन्द।

विशेष सहायक

१. ला० कुञ्ज लाल कुन्दनलाल।
२. ,, रघुवीरसिंह प्रेमचन्द (जैना वाच कं०)
३. ,, महावीरप्रसाद एन्ड सन्स।
४. ,, भोलाराम ऋषभदास मुलतानवाले।
५. सेठ परमानन्द मन्त्री जैन शिक्षा प्रचारक सोसायटी।
६. मातेश्वरी ला० राजेन्द्रकुमार जैन वैंकर मिलऔनर नई दिल्ली

सहायक

१ श्री मुन्शी उमरावसिंह महावीरप्रसाद
२ ,, विशम्भरदास एन्ड सन्स
३ ,, निरंजनदास बजनाथ
४. ,, श्रीराम बुद्धूमल सर्राफ
५. ,, जयनारायन पानीपतवाले
६. ,, डा० कैलाशचन्द (राजा टोय कं०)
७. ,, इन्द्रसेन बुलाल
८ ,, पन्नालाल जैनी ब्रदर्स (चाँदनी चौक देहली)
९. ,, सेठ सुन्दरलाल सुरेन्द्रकुमार बीबीवाले
१०. ,, सुखानन्द शंकरदास मुलतानवाले
११. ,, मनोहरलाल मोतीलाल जौहरी
१२. ,, प्यारेलाल जगन्नाथ बजाज
१३. ,, शीतलप्रसाद महावीर प्रसाद बचा
१४. ,, सुन्दरलाल कोयलेवाले
१५. ,, नन्हेमल पन्नालाल कसेरे

श्रीमती स्वर्गीय सेठानी धापा देवी जी

* धर्मपत्नी *

ला० नन्हें मल जी पहाड़ी धीरज, देहली।

(ग्रन्थ माला के संरक्षक श्री ला० नेम चन्द जी की माता जी)

श्री स्वर्गीय ला० भोला नाथ जी जैन

(प्रजानन्ता गरन १४ ८ ली

पहाडी धीरज, देहली।

(ग्र थमाला के सरक्षक ला० पद्म च न्द जी के पिता श्राता)

आजीवन सदस्य

१६. श्री डा० फूलचन्द जैन
१७ „ तुलसनमल जैन
१८. „ न्यादरमल गोविंदप्रसाद कासमवाले
१९ „ बाबूराम हीरालाल सूतवाले
२०. „ मोहनलाल श्रीपाल
२१. „ हजारीलाल सुलतानसिंह
२२ „ हेमचन्द नेमचन्द कलकत्तेवाले
२३ „ जैन कं० सूत वाले
२४. मंगतराय स्याद्वादी
२५ मोती ब्रादर्स आगरेवाले
२६, वशेश्वर नाथ रोहतकवाले
२७, फूलचन्द पदमचन्द पाटनी
२८ „ बसतलाल ललितप्रसाद आगरे वाले
२९ „ करमचन्द जैन
३०, खुशीराम चन्दूलाल जैन
३१. „ कश्मीरीलाल सावलदास जी
३२ „ लालचन्द साईकिल वाले
३३ „ श्रीलाल मदनलाल
३४ „ जयालाल अजितप्रसाद मित्तल
३५. „ चौथराम जयकुमार मुलतानवाले
३६ „ दुड्डामल रामजीलाल (फिरोजपुर)
३७. „ घासीराम गुहाने वाले
३८ „ सूरजभान श्रीकिसन
३९. „ रोहकरमल जैन
४० „ महावीर प्रसाद (ग्लोबफार्मेसी)

४१. श्री मुन्शीलाल एंड सन्स
४२. ,, बालकिशनदास पदमचन्द (आगरा)
४३ ,, रसकीमल गुलाबचन्द (आगरा)
४४. ,, मक्खनलाल मिसरीलाल
४५. ,, वासुदेवप्रसाद महेन्द्रकुमार रईस (टूंडला)
४६. ,, पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतानवाले
४७. ,, जयचन्द "मस्त', पानीपत वाले
४८. ,, कपूरचन्द धूपचन्द (कानपुर)
४९. ,, चुनीलाल शान्तिप्रसाद बजाज
५०. ,, प्रेमचन्द B. Sc. "नश्तर"
५१. ,, प्रकाशचन्द शीलचन्द्र सर्राफ
५२. ,, मोतीलाल मार्फत महावीर प्रसाद एण्डसन्स
५३. ,, चतरसेन मा० महावीर प्रसाद एण्डसन्स
५४. ,, न्यादरमल अमरनाथ कासनवाले
५५. ,, सरदारीलाल त्रिलोकचन्द
५६. ,, रामकिशनदास नेमचन्द कागजी
५७. ,, खजांचीमल मालिक नेहरू होजरी फैक्टरी
५८. ,, कुड़ियामल बनारसीदास सूत वाले
५९. ,, सुमति प्रसाद जैन सर्राफ
६०. ,, बाबूराम हीरालाल हकीम
६१. ,, बाबूलाल विमलप्रसाद बिजलीवाले
६२. ,, प्रकाशचन्द स्याहीवाले
६३. ,, गिरीलाल त्रिलोकचन्द दरीबा
६४. ,, डा० प्रकाशचन्द (डैंटिस्ट)
६५. ,, रतनलाल मादीपुरिये
६६. ,, सीमन्धरदास मोतीलाल कपड़ेवाले

६७. श्री भोलाराम रगूंलाल मुलतानवाले
६८. ,, आसाराम रोहतकवाले
६९. ,, मदनलाल सर्राफ रोहतक वाले
७०. ,, राजकिशन हरीचन्द दरियागंज
७१. ,, डा० राजबहादुर जैन
७२. ,, पीतमचन्द महावीरप्रसाद आगरेवाले
७३. ,, निर्मल कुमार जैन पानीपतवाले
७४. ,, डिप्टीमल नेमचन्द
७५. ,, उलफतराय जैन परमिट ओफीसर
७६. ,, सुमतप्रसाद जैन सर्राफ
७७. ,, दीपचन्द जोतीप्रसाद लोहेवाले बड़ौत
२४. ,, नेमचन्द सुरेशचन्द सुलतानपुरवाले (सहारनपुर)
२५. ,, सागरचन्दजी रोहतकवाले (डिप्टीगंज)
२६. ,, वीरेन्द्र कुमार जैन (फरुक्खाबाद)
२७. ,, सेठ छदामीलाल जैन (फीरोजाबाद)
२८. ,, किशोरीलाल B.कोम सब्जीमन्डी
८३. ,, जयन्तीप्रसाद बहादुरगढ़ वाले
८४. ,, जग्गीमल जयचन्द D c.m.
८५. ,, किसनलाल उम्मेदकुमार जैन
३२. ,, दीपचन्द महावीरप्रसाद
३३. ,, धरम दास अतरसेन
३४. श्री हुन्डीलाल श्यामबिहारीलाल
३५. ,, सोहनलाल ज्ञानचन्द कागजवाले
३६. ,, अतरचन्द जैन B.Sc. सुपरि, कृषि मंत्रालय
३७. ,, सूरजभान सुलतानचन्द
३८. ,, फूलचन्द कस्तूरचन्द
३९. ,, हेमचन्द सुशीलकुमार

९४. श्री स्त्री समाज मन्दिर पहाड़ीधीरज
९५. ,, स्त्री समाज मन्दिर डिप्टीगंज
९६. ,, श्रीमती रामप्यारी हैडमिस्ट्रैस
९७. ,, ,, गणेशीबाई मुलतानवाली
९८. ,, धर्मपत्नी मट्टोमल
९९. ,, ,, डा० चन्द्रभान
१००. ,, ,, अतरसेन
१०१ ,, ,, मोतीराम
१०२. ,, ,, रामचन्द्र
१०३ ,, ,, गिरधारीलाल
१०४ ,, ,, दरोगालाल सूत वाले
१०५. ,, ,, जवारी लाल (रेवाड़ी)
१०६ ,, ,, मक्खनलाल फिरोजीलाल सोनीपत निवासी।

जिनवाणी के उद्धार और उसके प्रचार का कठिन कार्य "श्री जैन सिद्धान्त ग्रन्थमाला" ने अपने ऊपर लिया है। इसको तन, मन, धन, से सहायता करना जैन समाज का धर्म है। इसमें सहायता देने से यश और पुण्य के साथ २ जैन वाणी के उद्धार का महान पुण्यलाभ होगा इसलिये समाज से प्रार्थना है कि अधिक से अधिक इस ग्रन्थमाला के संरक्षक, विशेष सहायक, सहायक तथा आजीवन सदस्य बन कर उपयोगी ग्रन्थों के प्रकाशन और धर्म प्रचार में पूर्ण सहायता देवें।

ग्रन्थमाला संबंधी पत्रव्यवहार निम्न लिखित पते पर कीजिये।

भवदीय,
डा० फूलचन्द जैन
मन्त्री—श्री जैन सिद्धान्त ग्रन्थमाला, पहाड़ी धीरज, देहली।

"श्री चौबीस तीर्थङ्कर के पंच कल्याणक"

हर एक श्रावक नीचे लिखे दिनों में जरूर पूजन और स्वाध्याय करे क्योंकि ऐसा करने से पुण्य और लाभ की प्राप्ति होती है।

नं०	नाम तीर्थङ्कर	गर्भ	जन्म	तप	ज्ञान कल्याण	मोक्ष
१	श्री आदिनाथ जी (श्री ऋषभदेव)	आषाढ़ कृष्ण २	चैत वदी ६	चैत वदी ६	फागुन वदी ११	माघ वदी १४
२	,, अजितनाथ जी	जेठ वदी १५	माघ सुदी १०	माघ सुदी १०	पौष सुदी ४	चैत सुदी ५
३	,, शंभवनाथ जी	फागुन सुदी ८	कातिक सुदी १५	मगसिरसुदी १५	कातिक वदी ४	चैत सुदी ६
४	,, अभिनन्दननाथ जी	बैसाख सुदी ६	माघ वदी १२	माघ सुदी १२	पौष सुदी १४	बैशाख सुदी ६
५	,, सुमतिनाथ जी	सावन सुदी २	चैत्र सुदी ११	चैत सुदी ११	चैत सुदी ११	चैत सुदी ११
६	,, पद्म प्रभ जी	माघ वदी ६	कार्तिक सुदी १३	कार्तिक सुदी १३	चैत सुदी १५	फागुन वदी ४
७	,, सुपार्श्वनाथ जी	भादों सुदी ६	जेठ सुदी १२	जेठ सुदी १२	फागुन वदी ६	फागुन वदी ७
८	,, चन्द्रप्रभ जी	चैत वदी ५	पौष वदी ११	पौष वदी ११	फागुन वदी ७	फागुन सुदी ७
९	,, पुष्पदन्त जी	फागुन वदी ६	मगसिर सुदी १	मगसिर सुदी १	कातिक सुदी २	आसोज सुदी ८
१०	,, शीतलनाथ जी	चैत वदी ८	माघ वदी १२	माघ वदी १२	पौष वदी १४	आसोज सुदी ८

नं०	नाम तीर्थङ्कर	गर्भ	जन्म	तप	ज्ञान कल्याण	मोक्ष
११	,, श्री श्रेयांसनाथ जी	जेठ वदी ८	फागुन वदी ११	फागुन वदी ११	माघ वदी १	सावन सुदी १५
१२	,, वासुपूज्य जी	असाढ़ वदी ६	फागुन वदी ११	फागुन वदी १४	भादो वदी	भादो सुदी १४
१३	,, विमलनाथ जी	जेठ वदी १०	माघ सुदी १४	माघ सुदी १४	माघ सुदी ६	असाढ़ वदी ६
१४	,, अनन्तनाथ जी	कार्तिक वदी १	जेठ वदी १२	जेठ वदी १२	चैत वदी १५	चैत वदी ४
१५	,, धर्मनाथजी	वैसाख सुदी ८	माघ सुदी १३	माघ सुदी १३	पौष सुदी १५	जेठ सुदी १४
१६	,, शान्तिनाथ जी	भादों वदी ७	जेठ वदी ४	जेठ वदी १४	पौष सुदी १०	जेठ वदी १४
१७	,, कुंथुनाथ जी	सावन वदी १०	वैसाख सुदी १	वैसाख सुदी १	चैत सुदी ३	वैसाख सुदी १
१८	,, अरनाथ जी	फागुन सुदी ३	मगसिरसुदी ४	मगसिर सु० १४	कातिक सुदी १२	चैत सुदी ११
१९	,, मल्लिनाथ जी	चैत सुदी १	मगसिर सुदी ११	मगसिर सु० ११	पौष वदी २	फागुन सुदी ५
२०	,, मुनिसुव्रतनाथ जी	सावन वदी २	वैसाख व० १०	वैसाख वदी १०	वैसाख वदी ९	फागुन वदी १२
२१	,, नमिनाथ जी	असोज वदी २	असाढ़ वदी १०	असाढ़ वदी १०	मगसिर सु० ११	वैसाख वदी १४
२२	,, नेमिनाथ जी	कार्तिक सुदी ६	सावन सुदी ६	सावन सुदी ६	असोज सुदी १	असाढ़ सुदी ८
२३	,, पार्श्वनाथ जी	वैसाख वदी २	पौष वदी ११	पौष वदी ११	चैत वदी ४	सावन सुदी १
२४	,, श्री महावीर जी	असाढ़ सुदी ६	चैतसुदी १३	मगसिर व १०	वैसाख सुदी १०	कार्तिक वदी १५

मेरी चाह।

मैं देव नित अरहंत चाहूँ, सिद्ध का सुमिरन करों।
मैं सूरि गुरु मुनि तीन पद ये, साधुपद हिरदय धरों॥
मैं धर्म करुणामय जु चाहूँ, जहाँ हिंसा रंच ना।
मैं शास्त्र ज्ञान विराग चाहूँ, जासुमें परपंच ना॥ १॥

चौबीस श्रीजिनदेव चाहूँ, और देव न मन बसै।
जिन बीस क्षेत्रविदेह चाहूँ, वंदिते पातक नसै॥
गिरनार शिखर समेद चाहूँ, चंपापुर पावापुरी।
कैलास श्रीजिनधाम चाहूँ, भजत भाजै भ्रमजुरी॥ २॥

नवतत्वका सरधान चाहूँ, और तत्व न मन धरों।
षट्‌द्रव्यगुन परजाय चाहूँ, ठीक तासों भय हरों॥
पूजा परम जिनराज चाहूँ, और देव न हूँ, सदा।
तिहुँकाल की मैं जाप चाहूँ, पाप नहिं लागै कदा॥ ३॥

सम्यक्त दर्शन ज्ञान चारित, सदा चाहूँ, भाव सों।
दशलक्षणी मैं धर्म चाहूँ, महा हरख उछावसों॥
सोलह जु कारण दुख निवारण, सदा चाहूँ, प्रीतिसों।
मैं नित अठाई पर्व चाहूँ, महामंगल रीति सों॥ ४॥

मैं वेद चारों सदा चाहूँ, आदि अन्त निबाहसों।
पाये धरम के चार चाहूँ, अधिक चित्त उछाहसों॥
मैं दान चारों सदा चाहूँ, भवनवशि लाहो लहूँ।
आराधना मैं चारि चाहूँ, अन्त में ये ही गहूँ॥ ५॥

भावना बारह जु भाऊँ, भाव निरमल होत हैं।
मैं व्रत जु बारह सदा चाहूँ, त्याग भाव उद्योत हैं॥

प्रतिमा दिगंबर सदा चाहूँ, ध्यान आसन सोहना।
वसुकर्म तें मैं छुटा चाहूँ, शिव लहूँ, जहँ मोह ना॥
मैं साधुजन को संग चाहूं, प्रीति तिनही सों करो।
पर्व के उपवास चाहूं, अवर आरंभ परिहरों॥
इस दुखम पंचम काल माहीं, कुल श्रावक मैं लह्यो।
अरु महाव्रत धरि सकों नाहीं, निबल तन मैंने गह्यो॥ ७॥

आराधना उत्तम सदा चाहूं, सुनो श्री जिनरायजी।
तुम कृपानाथ अनाथ 'द्यानत' दया करना न्याय जी॥
वसुकर्मनाश विकाश ज्ञानप्रकाश मोकों कीजिये।
करि सुगतिगमन समाधिमरन सुभक्ति चरनन दीजिये॥ ८॥

भजन

स्वामी मेरे रे, कर्मों के बन्धन तोड़ दे॥ टेक॥
ध्यान की कमानी, तीर ज्ञान का बनाय कर
मोह बैरी को, निशाना करके फोड़ दे॥ १॥
हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार, परिग्रह, पाँच
दुख दाई रे, पापों का मुँह मोड़ दे॥ २॥
सुमत, विवेक, लज्जा, दया, क्षमा, शीलव्रत
जप तप रे, संयम से नाता जोड़ दे॥ ३॥
मक्खन अपार, भव सिन्धु से उभार पार।
सुख भई रे, मुक्ति में लाकर छोड़ दे॥ ४॥

———

(महावीराय नमः)

卐 आरती श्री महावीर प्रभो 卐

तर्ज: (ओम जय जगदीश हरे)

ॐ जय महावीर प्रभो, स्वामी जय महावीर प्रभो

कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशला नन्द विभो। ॐ जय महावीर०

सिद्धारथ घर जन्मे, वैभव था भारी

बाल ब्रह्मचारी व्रत, पाल्यो तप धारी। ॐ जय महावीर०

आतम ज्ञान वैरागी, सम दृष्टि धारी

माया मोह विनाशक, ज्ञान ज्योति जारी। ॐ जय महावीर०

जग में पाठ अहिंसा, आप ही विस्तार्यो

हिंसा पाप मिटाकर, सुधर्म परचार्यो। ॐ जय महावीर०

यही विधी चाँदन पुर में, अतिशय दरशायो

ग्वाल मनोरथ पूर्यो, दूध गाय पायो। ॐ जय महावीर०

प्राण दान मन्त्री को, प्रभु तुमने दीना

मन्दिर तीन शिखर का, निर्मित है कीना। ॐ जय महावीर०

जयपुर नृप भी तेरे, अतिशय के सेवी

एक ग्राम तिन दीना, सेवा हित यह भी। ॐ जय महावीर०

जो कोई तेरे दर पर, इच्छा कर आवे

धन सुत सब कुछ पावे, संकट मिट जावे। ॐ जय महावीर०

निशि दिन प्रभु मन्दिर में, जगमग ज्योति जले

अशोक कुमार चरणों में, आनन्द मोद भरे। ॐ जय महावीर०

भेंट कर्त्ता
अजना कुमारी जैन
मकान नं २६५/१०/५-ए आई
रघुबर पुरा नं २ गली नं ११ गांधी नगर.

मुद्रक: पापुलर प्रिन्टिंग प्रेस रघुबरपुरा नं २ गली नं ११ गांधी नगर, दिल्ली-३१

ज्योतिष और रत्न

यदि किसी बालिका की आयु ज्यादा हो जाए और उसका विवाह नहीं हो अथवा उसके विवाह में बाधाएं आती हों तो उसे पुखराज रत्न पहनना लाभदायक रहता है क्योंकि पुखराज रत्न पहनने से गृहस्थ सुख मे वृद्धि होती है और गृहस्थ सुख तभी सम्भव है जब उसका विवाह हो जाए। इसलिए पुखराज उसके पूरे जीवन के लिए सहायक रत्न माना गया है जिन पुरुषों के विवाह में बाधाएं आती हैं या गृहस्थ सुख में न्यूनता हो हीरा रत्न पहनना ज्यादा अनुकूल एवं शुभ रहेगा।

यदि किसी व्यक्ति को दिल का दौरा पड़ता हो तो माणिक्य धारण करने से लाभ होता है। इसी प्रकार हिस्टीरिया या मिरगी के रोग मे मोती अत्यन्त अनुकूल पड़ता है। यदि किसी को कमजोरी या रक्त न्यूनता का रोग हो तो भी मूगा पहनने से इस प्रकार का रोग सर्वथा मिटते देखा गया है। दमा की शिकायत होने पर अन्य औषधि के साथ-साथ पन्ना रत्न भी अत्यधिक अनुकूल प्रभाव डालता है। इसी प्रकार जिगर की शिकायत दूर करने के लिए पुखराज धारण करना चाहिए। वीर्य दोष को दूर करने के लिए हीरा रत्न अत्यन्त लाभदायक है।

—पद्मराज शर्मा